वर्णन की गई हो उसको सिद्धान्त वा तन्त्र, और जिसमें राशि ग्रहोंका षड्वंग, काल, दिगादि बल, जातक, आयुर्दाय, राजयोग, नाभसादि योग, ताजिक, प्रश्न, शकुन, वास्तु, स्वर, सामुद्रिक, विवाहादि षोडश संस्कार और यात्रादिके सकल मुहूर्त, अंगस्फुरण, स्वप्न इत्यादि नाना अंगोंका वर्णन किया गया हो उसको होरा कहतेहैं यथा वराहमिहिराचार्यने बृहत्संहितामें लिखाहै "ज्योतिःशास्त्रमनेकभेदविषयं स्कन्धत्रयाधिष्ठितं तत्कात्स्न्योंपनयस्य नाम मुनिभिः संकीर्त्यते संहिता ॥ स्कन्धेऽस्मिन् गणितेन या ग्रहगतिस्तन्त्राभिधानस्त्वसौ होराख्योऽङ्गविनिश्चयश्च कथितः स्कन्धस्तृतीयोऽपरः" इन समग्र तीनों स्कंधोंका जाननेवाला मनुष्य पूर्ण ज्योतिर्विद् भूगोल, खगोल तथा भूत, भविष्यत्, वर्तमान कालकी दशाका यथावद्वर्णन करनेमें समर्थ होताहै । इस प्रकारके महानुभाव पूर्ण ज्योतिर्विद् लोग तो आज कल भारतभूतल पर बहुधा विरलेही विद्यमान हैं और होतेहैं, इसका कारण यह है कि, कराल कलिकालके कुटिल चालचक्रमें जन्म लेनेवाले अल्पायु मानव निजकुटुंब पालन पोषणार्थ सांसारिक कठिन २ कार्योंमें प्रतिदिन फँसे रहने और प्रायः संस्कार तथा भाग्यहीन होनेसे भी अवकाश न मिलनेपर विद्याध्ययनही नहीं करसकते और यदि कुछ अवकाश मिला भी तो अन्य रोगादि नाना विघ्नोंसे उपहत होजातेहैं । इसीसे कोई कोई विरले मनुष्य ज्योतिष् शास्त्रका एक स्कंध और कोई दो स्कंध और कोई तीनों स्कंधका पूर्ण ज्ञाता चमत्कारी पंडित होताहै, परन्तु वर्तमान कालमें प्रायः स्कन्धत्रितयांशांशके जाननेवालेही अधिक हैं और ज्योतिष शास्त्रके अंगभूत बृहन्मुहूर्तग्रंथोंके जानने वालोंकी संख्या स्कंधत्रयांशांशज्ञपुरुषोंसे कुछ विशेष है । तथा मुहूर्तग्रंथज्ञ पुरुषोंसे भी शीघ्रबोध, होडाचक्र, बालबोधादि छोटे २ सरल मुहूर्तग्रंथोंके जाननेवाले इतने अधिकतर हैं कि, शहर २, कसबा २, ग्राम २ में सर्वत्र विद्यमान हैं, परन्तु ऐसे शीघ्रबोधादि लघु सरल पुस्तकज्ञ पुरुष क्लिष्ट संस्कृतके मुहूर्तसंबंधि बृहद्ग्रंथावलोकन न करसकनेके कारण, समस्त मुहूर्तोंके पूर्ण ज्ञानानंदसे सदैव निराश और वंचित रहतेहैं । ऐसे अल्पज्ञ पुरुषोंकी अशापूर्तिरूप उपकारके लिये, बंबई वास्तव्य "श्रीवेंकटेश्वर" यन्त्रालयाधीश श्रीयुक्त सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजीकी प्रेरणासे मैंने इस नातिकठिन सरल अनुपम सांसारिक सकलमुहूर्तागार मुहूर्तगणपति नामक बृहद्ग्रंथकी यह भाषाटीका बडे परिश्रमसे बनाकर और पारितोषिक पाकर श्रीवेंकटेश्वरस्टीम् यन्त्रालयाधिपति श्रीखेमराज श्रीकृष्णदासजीके अर्पण कर दीहै, दूसरे मनुष्य इसको छापने आदिका साहस न करें और विद्वानोंसे प्रार्थना करताहूं कि, यदि इसमें मेरी भूल या प्रमादसे कहीं अशुद्धि होगई हो तो कृपया उसका संशोधन करके क्षमा करें.

सकलविद्वज्जनकृपाकांक्षी–पं० रामदयालुशर्म्मा,
मुकाम दाढोली, पोस्टाफिस–बहजोई जि० मुरादाबाद.

अथ मुहूर्तगणपतिग्रन्थानुक्रमणिका ।

अथ संक्रान्तिप्रकरणम् १२.

अथ गोचरप्रकरणम् १३.

॥ इति मुहूर्तगणपतिविषयानुक्रमणिका समाप्ता ॥

॥ श्रीः ॥

अथ मुहूर्त्तगणपतिः

भाषाटीकासमेतः ।

श्रीमत्या कल्पवल्ल्येव हैमवत्या निरत्ययः ॥ जयत्यालिंगितः कल्पद्रुमः सत्फलदः शिवः ॥ १ ॥ प्रवर्तयति सालोकं लोकं यज्ञादिकर्मसु ॥ यन्मुहूर्ताकरोद्यानं वंदेकं कालमीश्वरम् ॥ २ ॥

उयद्भानुरहर्पतिर्निजकरैर्दूरीप्रकुर्वन्तमः
कञ्जानि प्रतिबोधयँश्च सकलैः कर्म्माणि नः कारयन् ॥
नन्वन् भूतसुखं पुनँस्त्रिभुवनं गच्छँश्च विभ्राजते
सोऽयं श्रीभगवान् सहस्रकिरणो देयात्स्वभक्तिं शुभाम् ॥ १ ॥

गणपतिकृतमेतं ग्रंथमुच्चं मुहूर्त्त-
र्ललितसरलभाषाटीकयालङ्करोमि ॥
अहमपि शिशुबोधप्राप्तये रामपूर्व-
भवति च मम नामैतद्दयाल्वन्तमेव ॥ २ ॥

श्रीमती पर्वतीजीसे आलिङ्गन किये हुए अविनाशी मोक्षादिशुभ फलके देनेवाले शिवजी इस प्रकार जयको प्राप्त हैं जैसे कि, श्रीमती सुवर्णमयी लतासे लिपटा हुआ निर्दोष सत्फलको देनेवाला कल्पवृक्ष जयको प्राप्त होता है ॥ १ ॥ मुहूर्तोंकी खानियोंवाला जिनका उदय समस्त जगत्को प्रकाशके साथ यज्ञादि कर्म्मोंमें लगाता है ऐसे कालरूप ईश्वर सूर्यनारायणको मैं गणपति वन्दना करता हूँ ॥ २ ॥

श्रीविश्वेशं गणेशं गुरुचरणमथो यज्ञमूर्तिं सुकीर्तिं नत्वा पित्रोः पदाब्जं निखिलमुनिवरान्संहितासंप्रणेतॄन् ॥ गर्गात्रिश्रीवसिष्ठांगिरसविरचिताः संहिता मूलभूता ज्ञात्वा

ज्योतिर्निबंधानतिललितपदां रत्नमालां विचिंत्य ॥ ३ ॥ संकेतान्संविहाय व्यवहृतिसुखदं बालबोधाय शीघ्रं ज्योतिर्ग्रंथोदितार्थैः सुगमलघुपदैः सिद्धकार्यैर्मुहूर्तैः ॥ ज्योतिस्सिद्धांतवेत्ता श्रुतिविविधकलाशास्त्रपारीणबुद्धिर्गौडश्चीनेशमान्यः क्षितिपतितिलकेनार्च्यमानश्च भूयः ॥ ४ ॥ श्रीरामदासजनुषो हरिशंकरस्य श्रीरावलस्य तनयो विनयोपपन्नः॥ ग्रंथं मुहूर्तगणपत्यभिधं विधत्ते विद्यानिधिर्गणपतिर्गणितागमज्ञः ॥ ५ ॥

श्रीरामदासजीके पुत्र रावल श्रीहरिशंकरजी तिनका पुत्र गणपति नामवाला गौड ब्राह्मण जो कि, ज्योतिष शास्त्रके सिद्धान्तोंका जाननेवाला, वेद और अनेक कलाशास्त्रोंके पार पहुँचनेवाली बुद्धिवाला, चीनदेशके राजाका मान्य और फिर चक्रवर्ती राजासे भी पूज्यमान, विनयसे युक्त,विद्याओंका निधान,गणितशास्त्रका जाननेवाला है. सो विश्वेश्वर, गणेश, और सुकीर्ति यज्ञमूर्त्ति गुरुचरण और माता पिताके चरण कमल और संहिताओंके बनानेवाले सकल मुनिवरोंको प्रणाम करके तथा गर्ग, अत्रि, श्रीवशिष्ट अंगिरा इनकी रची हुई मूलभूत संहिताओंको जानकर और ज्योतिषग्रंथों तथा अतिललित पदोंवाली रत्नमालाको विचारकर संकेतोंको छोडकर बालकोंको शीघ्र बोध होनेके लिये पुराने ज्योतिष ग्रंथोंमें कहेहुए अर्थोंवाले तथा सरल और छोटे पदोंवाले कार्योंके सिद्ध करनेवाले मुहूर्तोंसे व्यवहारमें सुख देनेवाले मुहूर्त्तगणपति नामक ग्रंथको बनाताहै ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथ संवत्सरानयनम् ।

शाककालः पृथक्संस्थो द्वाविंशत्या२२ हतस्त्वथ॥ भूनंदाब्ध्यब्धि ४२९१ युग्भक्तो बाणशैलगजेंदुभिः१८७५ ॥६ ॥ लब्धियुग्विहृतः षष्ट्या ६० शेषे स्युर्गतवत्सराः॥ बार्हस्पत्येन मानेन प्रभवाद्याः क्रमादमी ॥ ७॥

अव संवत्सर लानेका प्रकार लिखते हैं-शाकेको दो स्थानमें अलग२ धरै एक स्थानमें (द्वाविंशति)२२से गुणाकरके उसमें भू १ नंद ९अश्वि२ अब्धि ४ अर्थात् ४२९१ जोडदे इस जोडेहुएमें वाण ५ शैल ७ गज८ इंदु १ अर्थात् १८७५ का भागदे ॥ ६ ॥ जो फल मिलै सो दूसरे स्थानमें धरेहुए शाकेमें जोडदे, उसमें साठि ६० का भाग देनेसे जो शेप वचै सो गत संवत्सर जाने और उसके आगेका वर्त्तमान संवत्सर होता है इस प्रकार वृहस्पतिके मानसे क्रमकरके प्रभवादिक संवत्सर होते हैं ॥ ७ ॥

(उदाहरण)जैसे कि, वर्त्तमान संवत् १९६४ में शाका १८२९ है इसको दो स्थानोंमें लिखा एक जगह २२ से गुणा किया तो ४०२३८ हुए इनमें ४२९१ जोडे तो ४४५२९ हुए, इनमें १८७५ का भाग दिया तो लब्ध २३ मिले. इनको दूसरी जगह धरे हुए शाकमें जोडा तो १८५२ हुए इनमें ६० साठिका भाग दिया तो शेप ५२ रहे। वावनवाँ कालयुक्तनाम संवत्संर तक गत हो चुके और इसके आगेका ५३ वां सिद्धार्थी नाम संवत्सर वर्त्तमान है ऐसा जानना—

शाका

१८२९
२२
———
३६५८
३६५८
———
४०२३८ यह गुणनफल हुआ
४२९१ जोड़े तो
———
४४५२९ इतने हुए
———
१८७५ का भाग दिया तो

१८७५) ४४५२९ (२३ लब्ध मिले
३७५०
———
७०२९
५६२५
———
१४०४

भागदिया

शाका
१८२९
२३ लब्ध जोडे
———
६०) १८५२ (३०
१८०
———
शेप ५२ वाँ

गत संवत्सर हुआ इसके आगेका ५३ वां वर्तमान है ॥

अथ षष्टिसंवत्सरनामानि ।

प्रभवो १ विभवः २ शुक्लः ३ प्रमोदो ४ ऽथ प्रजापतिः ५ अंगिराः ६ श्रीमुखो ७ भावो ८ युवा ९ धाता १० तथेश्वरः ११ ॥ ८ ॥ बहुधान्यः १२ प्रमाथी १३ च विक्रमो १४ वृषवत्सरः १५ ॥ चित्रभानुः १६ सुभानुश्च १७ तारणः १८ पार्थिवो १९ ऽव्ययः २० ॥ ९॥ सर्वजित् २१ सर्वधारी च २२ विरोधी २३ विकृतिः २४ खरः २५ ॥ नंदनो २६ विजयश्चैव २७ जयो २८ मन्मथ २९दुर्मुखौ ३० ॥ १० ॥ हेमलंवी ३१ विलंबी च ३२ विकारी ३३ शार्वरी ३४ प्लवः ३५ ॥ शुभकृ ३६ च्छोभकृत् ३७ क्रोधी ३८ विश्वावसु ३९ पराभवौ ४० ॥ ११ ॥ प्लवंगः ४१ कीलकः ४२ सौम्यः ४३ साधारण४४ विरोधकृत् ४५ ॥ परिधावी ४६ प्रमाथी ४७ स्यादानंदो ४८ राक्षसो ४९ ऽनलः ५० ॥ १२ ॥ पिंगलः ५१ कालयुक्तश्च ५२ सिद्धार्थी ५३ रौद्र ५४ दुर्मती ५५ ॥ दुंदुभी ५६ रुधिरोद्गारी ५७ रक्ताक्षी ५८ क्रोधनः ५९ क्षयः ६० ॥ १३ ॥ षष्टिसंवत्सरा ह्येते क्रमेण परिकीर्तिताः ॥ स्वाभिधानसमं ज्ञेयं फलमेषां मनीषिभिः ॥ १४ ॥

अब साठि संवत्सरोंके नाम वर्णन करते हैं—प्रभव १, विभव २, शुक्ल ३, प्रमोद ४, प्रजापति ५, अंगिरा ६, श्रीमुख ७, भाव ८, युवा ९ धाता १०, ईश्वर ११, वहुधान्य १२, प्रमाथी १३, विक्रम १४, वृष १५, चित्रभानु १६, सुभानु १७, तारण १८, पार्थिव १९, अव्यय २०, सर्वजित् २१, सर्वधारी २२, विरोधी २३, विकृति २४, खर २५, नंदन २६, विजय २७, जय २८, मन्मथ २९, दुर्मुख ३०, हेमलम्बी ३१, विलम्बी ३२, विकारी ३३, शार्वरी ३४, प्लव ३५, शुभकृत ३६, शोभनकृत् ३७,

क्रोधी ३८, विभावसु ३९, पराभव ४०, प्लवंगम ४१, कीलक ४२, सौम्य ४३, साधारण ४४, विरोधकृत् ४५, परिधावी ४६, प्रमाथी ४७, आनंद ४८, राक्षस ४९, अनल ५०, पिंगल ५१, कालयुक्त ५२, सिद्धार्थी ५३, रौद्र ५४, दुर्मति ५५, दुंदुभी ५६, रुधिरोद्गारी ५७, रक्ताक्षी ५८, क्रोधन ५९, क्षय ६०, पंडितोंने यह साठि संवत्सर क्रमसे कहेहैं। इनका फल अपने २ नामके समान जानना चाहिये ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

अथ रेवादक्षिणभागे संवत्सरानयनम् ।

शाको द्वादशभि१२र्युक्तः षष्टि६०हृद्वत्सरो भवेत् ॥ रेवाया दक्षिणे भागे मानवाख्यः स्मृतो बुधैः ॥ १५ ॥ स एव नवभि९र्युक्तो नर्मदायास्तथोत्तरे ॥ जैवा वाचस्पतेर्मध्यराशिभोगेन कथ्यते ॥ १६ ॥

अब रेवा नदीके दक्षिण भागमें संवत्सर लानेका प्रकार कहतेहैं– शाकेमें १२ जोडकर ६० का भाग देनेसे जो बचे सो रेवाके दक्षिण भागमें मानवनाम संवत्सर पंडितोंने कहा है ॥ १५ ॥ और यदि उसमें ९ जोडदिये जायँ तो रेवाके उत्तर भागमें जैवनाम संवत्सर कहाता है। जो कि, बृहस्पतिकी मध्यम गति करके राशि भोगकरनेसे होताहै। जैसा कि, लघुवासिष्ठसिद्धान्तमें लिखाहै कि, "मध्यगत्या भभोगेन गुरोर्गौरववत्सराः" इति ॥ १६ ॥

अथ प्रभवसंवत्सरारंभः ।

माघे मासि धनिष्ठायाः प्रथमे चरणे गुरुः ॥ यदोदेति तदा श्रेष्ठः प्रभवो वत्सराग्रणीः ॥ १७ ॥

अब प्रभव संवत्सरका आरम्भ जाननेका प्रकार वर्णन करतेहैं– जब माघके महीनेमें धनिष्ठाके प्रथमचरणपर बृहस्पति उदय होतेहैं तब सब संवत्सरोंमें पहिला प्रभवनाम श्रेष्ठ संवत्सर होताहै ॥ १७ ॥

अथ संवत्सराणां युगसंज्ञादि ।

आदौ संवत्सरो ज्ञेयो युगस्यानलदेवता ॥ भानुमदैवतः प्रोक्तो द्वितीयः परिवत्सरः ॥१८॥ इडावत्सरसंज्ञश्च तृतीयः सोमदैवतः ॥ अनुवत्सरकस्तुर्यः प्राजापत्यः समीरितः ॥ १९ ॥ तथैव वत्सरो गौरीदैवतः स तु पंचमः ॥ युगं तैः पंचभिर्वर्षैः षष्टिर्द्वादशभिर्युगैः ॥ २० ॥ तदीशा वह्निजीवेंद्रपावकत्वष्टृसंज्ञकाः ॥ अहिर्बुध्न्यश्च पितरो विश्वेदेवा निशाकरः ॥ पुरुहूतानलौ दस्रौ भगश्चैते क्रमात्स्मृताः ॥२१॥

अब संवत्सरोंकी युगादिसंज्ञा वर्णन करतेहैं–युगकी आदिमें संवत्सर जानना, जिसका देवता अग्निहै. दूसरा परिवत्सर जानना, ॥ १८ ॥ जिसका देवता सूर्य है. तीसरा इडावत्सर नामक जानना, जिसका देवता चंद्रमा है. चौथा अनुवत्सर जानना, जिसका देवता प्रजापतिहै ॥ १९॥ पांचवां इद्वत्सर जानना, जिसकी देवता गौरीहै. इन पांच वर्षोंसे एक युग और बारह युगोंसे साठि संवत्सर होतेहैं ॥ ॥ २० ॥ तिन बारहयुगोंके क्रमसे यह स्वामी कहेहैं कि, अग्नि १, बृहस्पति २, इंद्र ३, पावक ४, त्वष्टा ५, अहिर्बुध्न्य ६, पितर ७, विश्वेदेवा ८, चंद्रमा ९, इंद्राग्नी १०. अश्विनीकुमार ११ भग १२॥ २१॥

अथायनगोलसंज्ञे ।

मकराद्राशिषट्केक प्रोक्तं चैवोत्तरायणम् ॥ तदेवदिवसस्तत्र शुभं कार्यं प्रशस्यते ॥ २२॥ षट्सु कर्कादितो ज्ञेयं दक्षिणं ह्ययनं रवेः ॥ देवरात्रिस्तदेवात्र प्रोक्तं कार्यं प्रसिद्ध्यति ॥ ॥ २३ ॥ मेषादुत्तरगोलस्तु दक्षिणाख्यो घटादितः ॥२४॥

अब अयनसंज्ञा वर्णन करतेहैं–मकरसे लेकर छह राशिमें सूर्य होवे तो उत्तरायण कहाताहै, सो देवताओंका दिनहै; उसमें शुभकार्य करना श्रेष्ठ होताहै ॥ २२॥ और कर्कसे लेकर छह राशियोंमें सूर्य

दक्षिणायन कहाताहे, सो देवताओंकी रात्रिहे, इसमें जो कार्य करना कहा है सो सिद्ध होताहै ॥ २३ ॥ मेषसे लेकर छह राशि उत्तर गोल और तुलासे लेकर छह राशि दक्षिण गोल कहाताहै॥२४॥

अथ ऋतुसंज्ञा।

वसंतो ग्रीष्मसंज्ञश्च तद्वद्वर्षास्ततःशरत् ॥ हेमंतः शिशिरश्चैव षडेते ऋतवः स्मृताः ॥ २५ ॥ मीनमेषगते सूर्ये वसंतः परिकीर्तितः ॥ वृषभे मिथुने ग्रीष्मो वर्षा सिंहेथ कर्कटे ॥ २६ ॥ कन्यायां च तुलायां च शरदृतुरुदाहृतः ॥ हेमंतो वृश्चिकद्वंद्वे शिशिरो मृगकुंभयोः ॥ २७ ॥

अब ऋतुओंके नाम कहतेहैं—वसन्त १, ग्रीष्म २, वर्षा ३, शरद ४, हेमन्त ५, शिशिर ६ यह छह ऋतु कहेहैं ॥२५॥ मीन मेषके सूर्यमें वसन्त, वृष मिथुनके सूर्यमें ग्रीष्म, कर्क सिंहके सूर्यमें वर्षा ॥ २६ ॥ कन्या तुलाके सूर्यमें शरद, वृश्चिक धनुके, सूर्यमें हेमंत और मकर कुंभके सूर्यमें शिशिर ऋतु कहातीहै ॥ २७ ॥

अथ माससंज्ञा।

मासश्चैत्रोथ वैशाखो ज्येष्ठ आषाढसंज्ञकः ॥ ततस्तु श्रावणो भाद्रपदोथाश्विनसंज्ञकः ॥२८ ॥ कार्त्तिको मार्गशीर्षश्च पौषो माघोथ फाल्गुनः ॥ २९ ॥

अब महीनोंके नाम वर्णन करतेहैं—चैत्र १, वैशाख २, ज्येष्ठ ३, आषाढ ४, श्रावण ५, भाद्रपद ६, आश्विन ७॥२८॥ कार्त्तिक ८, मार्गशीर्ष ९, पौष, १०, माघ ११, फाल्गुन १२, यह बारह महीनेहैं ॥ २९ ॥

अथ चैत्रादीनां संज्ञा।

मधुश्च१ माधव२श्चैव शुक्रः ३ शुचि४रथो नभः ५ ॥ नभस्य६श्चेष ऊर्जश्च ॥ ८ सहश्चा९थ सहस्यकः १०॥३०॥

तप११स्तथा तपस्यश्च १२ माससंज्ञाः क्रमादमूः ॥ मासो दर्शावधिश्चांद्रः सौरः संक्रमणाद्रवेः ॥ ३१ ॥ त्रिंशद्दिनः सावनिको नाक्षत्रो विधुसंभ्रमात् ॥ प्रोक्तकार्ये त्विमे मासा विज्ञेयाः कोविदैः सदा ॥ ३२ ॥ सौरे कार्यं विवाहादि ग्रहवारादिकं तथा ॥ सावने गर्भवृद्ध्यादि नाक्षत्रे मेघगर्भजम् ॥ ३३ ॥ व्रतयज्ञादिकं चांद्रे मासे परिणयः क्वचित् ॥ चांद्रस्तु द्विविधो मासो दर्शांतः पौर्णिमांतिमः ॥ ३४ ॥ देवार्थे पौर्णिमास्यंतो दर्शांतः पितृकर्मणि ॥ ३५ ॥

अब चैत्रादि महीनोंके अन्य नाम वर्णन करतेहैं—चैत्रका नाम मधु १, वैशाखका नाम माधव २, ज्येष्ठका शुक्र ३, आषाढका शुचि ४, श्रावणका नभ ५, भादोंका नभस्य ६, क्वारका इष ७, कार्त्तिकका ऊर्ज, मार्गशीर्षका सह ९, पौषका नाम सहस्य १०, ॥३०॥माघका तप ११,फाल्गुनका तपस्य १२ ये क्रमसे मासोंके नाम जानने. शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर अमावास्यातक चांद्र मास होताहै और सूर्यकी संक्रांतिसे संक्रान्ति पर्यन्त सौर मास होताहै॥३१॥ और तीस दिनका सावनिक मास होताहै। सावन नाम एक दिनका है. नक्षत्रोंपर चंद्रमाकी गतिचालसे नाक्षत्र मास होताहै पंडितोंको ये महीने उक्त कार्योंमें सदैव विचारने चाहिये ॥ ३२ ॥ सौर मासमें विवाहादि कर्म्म, ग्रहचार, वारप्रवृत्ति आदिका विचारकरै. सावन मासमें गर्भोंकी वृद्धयादिका विचार. नाक्षत्र मासमें मेघगर्भका विचार ॥ ३३ ॥ तथा चांद्रमासमें व्रत यज्ञादि करना चाहिये और कहीं २ चांद्र मासमें विवाह करनाभी कहा है ।, चांद्र मास दो प्रकारका होताहै एक तो शुक्लप्रतिपदासे अमावास्या

१ इन महीनोंका व्यवहार सूर्यसिद्धान्तमें विशेष करके प्रतिपादन कियाहै ।

पर्यन्त और दूसरा कृष्णप्रतिपदासे पूर्णिमा पर्यन्त ॥ ३४ ॥ देवकर्म्ममें पौर्णमास्यन्त और पितृकर्म्ममें अमावास्यान्त मासका ग्रहण होताहै ॥ ३५ ॥

अथ पक्षसंज्ञा।

शुक्लकृष्णावुभौ पक्षौ देवे पित्र्ये च कर्मणि॥ ग्राह्यौ तथा शुभं सर्वं शुक्लपक्षे प्रशस्यते ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ संवत्सरादिप्रकरणं प्रथमम् ॥ १ ॥

अब पक्षसंज्ञा वर्णन करतेहैं–शुक्ल और कृष्ण दो पक्ष होतेहैं। देवकर्म्ममें शुक्लपक्ष और पितृकर्म्ममें कृष्णपक्ष ग्रहण करना चाहिये. तथा सकल शुभकर्म्म शुक्ल पक्षमें श्रेष्ट होतेहैं ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीमद्गूर्ज्जरगौडविप्रवंशावतंसपंडितवर्यवेणीरामशर्म्मात्मजपंडितरामदयालुकृतभाषाटीकासमलंकृतं संवत्सरादिप्रकरणं प्रथमम् ॥ १ ॥

अथ तिथिप्रकरणम्।

प्रतिपच्च द्वितीया च तृतीया तदनंतरम् ॥ चतुर्थी पंचमी षष्ठी सप्तमी चाष्टमी ततः ॥ १ ॥ नवमी दशमी चैवैकादशी द्वादशी ततः ॥ त्रयोदशी ततः प्रोक्ता ततो ज्ञेया चतुर्दशी ॥ २ ॥ पूर्णिमा शुक्लपक्षेंत्या कृष्णपक्षे त्वमा स्मृता ॥

अव इसके पश्चात् तिथिप्रकरण लिखाजाता है-प्रतिपत् १' द्वितीया २, तृतीया ३, चतुर्थी ४, पंचमी ५, षष्ठी ६, सप्तमी ७, अष्टमी ८, नवमी ९, दशमी १०, एकादशी ११, द्वादशी १२, त्रयोदशी १३, चतुर्दशी १४ ॥ २ ॥ शुक्लपक्षके अन्तमें पूर्णिमा और कृष्णपक्षके अन्तमें अमावस्या जाननी ॥

तिथीशा वह्निधात्रंबाहेरंबोरगषण्मुखाः ॥ ३ ॥ रवीशांबा यमो विश्वे हरिस्मरशिवेंदवः ॥ अमावास्यातिथेरीशाः पितरः संप्रकीर्तिताः ॥ ४ ॥

अव तिथियोंके स्वामी कहते हैं-अग्नि १, ब्रह्मा २, पार्वती ३, गणेश ४, सर्प ५, स्वामि कार्त्तिकेय ६ ॥ ३ ॥ सूर्य ७, शिव ८, दुर्गा ९, यम १०, विश्वेदेव ११, विष्णु १२, कामदेव १३, शिव १४ चंद्रमा १५ ये क्रमसे प्रतिपदासे पौर्णमासी तकके स्वामीहैं और अमावास्याके स्वामी पितर हैं ॥ ४ ॥

नंदाभद्राजयारिक्तापूर्णाश्च प्रतिपन्मुखाः ॥ षष्ठ्याद्याश्च क्रमाज्ज्ञेयास्तथैवैकादशीमुखाः ॥ ५ ॥

अव तिथियोंकी नंदादिसंज्ञा कहते हैं-प्रतिपदासे पंच, मीतक और षष्ठीसे दशमीतक और एकादशीसे पूर्णिमा अथवा-अमावास्या तक पाँच२तिथियोंकी क्रमसे नंदा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा संज्ञा जाननी ॥ ५ ॥

असन्मध्यं शुभं शुक्ले तिथीनांपंचकं क्रमात् ॥ कृष्णपक्षे शुभं मध्यं नेष्टं ज्ञेयं शुभेसदा ॥ ६ ॥

अव इनकी अशुभ शुभ मध्य संज्ञा कहते हैं-) शुक्लपक्षमें प्रतिपदासे लेकर पाँच २ तिथि क्रमसे सदैव शुभ कर्म्ममें अशुभ-

मध्य, शुभ और कृष्णपक्षमें शुभ, मध्यम, अशुभ जाननी ॥ ६ ॥ इन श्लोकोंका भावार्थ नीचे लिखे चक्रमें स्पष्ट समझलेना चाहिये ॥

अथ तिथिसंज्ञाचक्रम्।

तिथयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५-३०
स्वामिनः	अग्नि	ब्रह्मा	पार्वती	गणेश	सर्प	कार्तिकेय	सूर्य	शिव	दुर्गा	यम	विश्वेदेवा	विष्णु	कामदेव	शिव	चंद्रमा पितर
नंदादि संज्ञा	नंदा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	नंदा-	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	नंदा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
शुक्लपक्षे अशुभादि संज्ञा	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	मध्यम	मध्यम	मध्यम	मध्यम	मध्यम	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ
कृष्णपक्षे शुभादि संज्ञा	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ	मध्यम	मध्यम	मध्यम	मध्यम	मध्यम	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ

अथ नंदादितिथिकृत्यम् ।

गीतं नृत्यं तथा क्षेत्रं चित्रोत्सवगृहादिकम् ॥ वस्त्रालंकारशिल्पादि नंदाख्यासु शुभं स्मृतम् ॥ ७ ॥ विवाहोपनयौ यात्राभूषाशिल्पकलादिकम् ॥ गजाश्वरथकृत्यं च भद्रातिथिषु सिद्धिदम् ॥ ८ ॥ सैन्यं संग्रामशस्त्रादि यात्रोत्सवगृहादिकम् ॥ भैषज्यं चैव वाणिज्यं सिद्धयेत्सर्वं जयासु च ॥ ९ ॥ शत्रूणां वधबंधादि विषशस्त्राग्नियोजनम् ॥ कर्तव्यं तच्च रिक्तायां नैव सन्मंगलं क्वचित् ॥ १० ॥ व्रतबंधविवाहादि यात्राराजाभिषेचनम् ॥ शांतिकं पौष्टिकं कर्म पूर्णासु किल सिद्धयति ॥ ११ ॥

अब नंदादि तिथियोंमें कृत्य वर्णन करते हैं-गीत, नृत्य, खेतकरना, उत्सव करना, गृहादिक बनाना, वस्त्र सिलाना, पहिरना, कारीगरी सीखना इत्यादि कार्य नंदासंज्ञक १ । ६ । ११ तिथियोंमें शुभ कहे हैं ॥ ७ ॥ विवाह, यज्ञोपवीत, यात्रा, आभूषण बनवाना, पहरना, कारीगरीकी कला सीखना, हाथी, घोडा, रथका चलाना, चढना, ये सब कार्य भद्रासंज्ञक २ । ७ । १२ तिथियोंमें सिद्धिके देनेवाले होते हैं ॥ ८ ॥ सेनाको चलाना, सिखाना, युद्ध करना, शस्त्रादि चलाना, बनवाना, यात्रा, उत्सव, गृहादि, औषधि बनाना, वाणिज्य करना ये कार्य जयातिथि ३ । ८।१३ योंमें सिद्ध होतेहैं ॥९॥ शत्रुओंको मारना, बाँधना, विष देना, शस्त्र चलाना, अग्नि लगाना, इत्यादि कार्य रिक्तातिथियों ४ । ९ । १४ में करै किन्तु कोई शुभ मंगलकार्य नहीं करै ॥ १०॥ यज्ञोपवीत, विवाहादि, यात्रा, राज्याभिषेक, शान्तिक तथा पौष्टिक कर्म पूर्णातिथियों ५ । १० । १५ में सिद्ध होतेहैं ॥ ११ ॥

अथ सामान्यतः शुभाशुभतिथय उच्यंते।

द्वितीया पंचमी चैव तृतीया सप्तमी तथा॥ दशम्येकादशी कृष्णप्रतिपच्च त्रयोदशी ॥ १२ ॥ पूर्णिमा तिथयो ह्येताः सर्वकार्ये शुभावहाः ॥ अन्यास्तु तिथयो नेष्टाः प्रोक्तकृत्ये शुभा मताः॥ १३ ॥ कृष्णा चतुर्दशी शुक्ला प्रतिपद्दर्शसंज्ञका ॥ एताः शुभेषु कार्येषु वर्जनीयाः प्रयत्नतः ॥ १४ ॥

अब सामान्य रीतिसे शुभाशुभ तिथियोंका वर्णन करते हैं–द्वितीया, पंचमी, तृतीया, सप्तमी, दशमी, एकादशी कृष्णपक्षकी प्रतिपदा, त्रयोदशी ॥ १२ ॥ पौर्णमासी ये सब तिथि शुभ कार्योंमें शुभ करनेवाली हैं और अन्य तिथियें शुभ नहीं हैं। किन्तु उनमें जोजो कृत्य करना कहाहै उसमें शुभ मानी गई हैं ॥ १३ ॥ कृष्णपक्षकी चतुर्दशी, शुक्लपक्षकी प्रतिपदा, अमावास्या ये तिथि शुभ कार्योंमें यत्नपूर्वक वर्जित करनी चाहिये ॥ १४ ॥

अथ पक्षरंध्रतिथयः।

चतुर्थीरसवस्वंकद्वादशीशक्रसंमिताः । ४ । ६ । ८ । ९ । १२ । १४ ॥ तिथयः पक्षरंध्राख्यास्त्याज्याः सर्वेषु कर्मसु॥१५॥एतासु वसुनंदेन्द्रतत्त्वदिक्छरसंमिताः ८ । ९ । १४ २५ । १० । ५ ॥ हेयाः स्युरादिमा नाड्यः क्रमाच्छेपास्तु शोभनाः ॥ १६ ॥

अथ पक्षरंध्रतिथिचक्रम्।

४	६	८	९	१२	१४	पक्षरंध्रतिथयः
८	९	१४	२५	१०	५	त्याज्यनाड्यः

अब पक्षरंध्र तिथियोंका वर्णन करतेहैं–चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, द्वादशी, चतुर्दशी ये पक्षरंध्र नाम तिथि सब शुभ कर्म्मोंमें त्याज्य हैं ॥ १५ ॥ इन तिथियोंके आदिकी आठ, नौ, चौदह, पच्चीस, दश, पांच घटी क्रमसे त्याग देनी चाहिये, और शेष घटी शुभ होती हैं ॥ १६ ॥

अथाशुभाख्यास्तिथयः ।

मेषादीनां चतुर्णां हि चतस्रः प्रतिपन्मुखाः ॥ तिथयस्तच्चतुष्कस्य पंचमी परिकीर्तिता ॥ १७ ॥ सिंहकन्यातुलालीनां षष्ठ्याद्यास्तिथयः क्रमात् ॥ दशम्येतच्चतुष्कस्य तथा चैकादशीमुखाः ॥ १८ ॥ चतस्रो धनुरादीनामेतेषां पूर्णिमास्यमा ॥ पापयुक्तस्य राशेर्या तिथिः सा न शुभावहा ॥ १९ ॥

अब शुभ नामक तिथियोंका वर्णन करतेहैं-मेषादि चार राशियोंकी प्रतिपदादि चार तिथि हैं अर्थात् मेष, वृष, मिथुन, कर्ककी क्रमसे प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी तिथि हैं और इन प्रतिपदादि चार तिथियोंकी पंचमी पूर्णातिथि कहीहै ॥ १७ ॥ और सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक राशियोंकी क्रमसे षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी तिथि हैं, इन षष्ठ्यादि चार तिथियोंकी दशमी पूर्णा तिथि है । तथा धनु, मकर, कुंभ, मीन इन राशियोंकी क्रमसे एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी तिथि हैं और इन एकादश्यादि चार तिथियोंकी १५ पौर्णमासी तथा अमावास्या पूर्णातिथि है। जो तिथि पापग्रह युक्त राशियोंकी होय सो शुभकारक नहीं होती है ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथ शुभाख्यतिथिचक्रम्

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
तिथि	१	२	३	४	६	७	८	९	११	१२	१३	१४
पूर्णा तिथि	५	५	५	५	१०	१०	१०	१०	१५	१५	१५	१५
संख्या	१	२	३	४	१	२	३	४	१	२	३	४

अथ प्रत्येकतिथिकृत्यम् ।

विवाहोत्सवयात्रा च प्रतिष्ठा वास्तुकर्म च॥ कुर्याच्चौलादिकं कृष्णे न शुक्ले प्रतिपत्तिथौ ॥ २० ॥ राज्यकार्यं विवाहादिमंगलं वास्तुभूषणम् ॥ व्रतबंधः प्रतिष्ठा च द्वितीयायां तिथौ स्मृतम् ॥ २१ ॥ अन्नप्राशनसंगीतविद्यासीमंत शिल्पकम् ॥ द्वितीयाप्रोक्तमखिलं तृतीयायां प्रशस्यते ॥ ॥ २२ ॥ शत्रूणां वधबंधादिविषशस्त्राग्नियोजनम् ॥ कर्तव्यं तच्चतुर्थ्यां तु नैव सन्मंगलं क्वचित् ॥ २३ ॥ शुभकर्माणि सर्वाणि स्थिराणि च चराणि च ॥ ऋणदानं विना यांति सुसिद्धं पंचमीदिने ॥२४॥ दंतकाष्ठगमाभ्यंगांस्त्यक्त्वाथो शिल्पकर्म च ॥ रणवास्तुविभूषादि षष्ठ्यां सिद्ध्यति मंगलम् ॥ २५ ॥ गजकृत्यं विवाहादि संगीतं वस्त्रभूषणम् ॥ यात्राप्रवेशसंग्रामाः सिद्ध्येयुः सप्तमीतिथौ ॥ २६ ॥ नृत्यं स्त्रीरत्नभूषादि संग्रामः शस्त्रधारणम् ॥ वास्तुशिल्पादिकं कार्यमष्टम्यां सिद्धिमाप्नुयात् ॥ २७ ॥ विग्रहः कलहद्यूतमद्यमाखेटकस्तथा ॥ विषाग्निशस्त्रकृत्यं च नवम्यां सिद्धिमाप्नुयात् ॥ २८ ॥ विवाहादिशुभं कार्यं भूपायात्राप्रवेशनम् ॥ गजाश्वनृपकार्याणि सिद्ध्यंति दशमीदिने ॥ २९ ॥ व्रतबंधो विवाहादि रणः शिल्पं सुरोत्सवः ॥ गमागमौ विभूषादि ह्येकादश्यां प्रशस्यते ॥३०॥ चरस्थिराणि कार्याणि विवाहव्रतबंधनम् ॥ द्वादश्यां तत्प्रकुर्वीत तैलयात्रादिकं त्यजेत् ॥ ३१ ॥ यात्राप्रवेशसंग्रामवस्त्रभूषणमंगलम् ॥ व्रतबंधं विनाऽन्यत्र शुभा शुक्लत्रयोदशी ॥ ३२ ॥ विषबंधाग्निशस्त्रादि प्रकुर्याद्दुष्टकर्म च ॥ चतुर्दश्यां शुभं कर्म क्षौरं यात्रां विवर्जयेत् ॥३३॥ मांगल्यं

भूषणं शिल्पं प्रतिष्ठा यज्ञकर्म च ॥ संग्रामो गृहकृत्यं-च पौर्णमास्यां प्रसिद्धयति ॥ ३४ ॥ अग्न्याधानं महा-दानं पितृयागादिकं च यत ॥ प्रोक्तं कर्म प्रकर्तव्यं दर्शे नान्या शुभा क्रिया ॥ ३५ ॥

अब प्रत्येक तिथिमें कृत्यको वर्णन करते हैं–विवाह, उत्सव, यात्रा, देवप्रतिष्ठा, वास्तुकर्म (गृहादि बनाना) शान्ति करना, मुंडनादिकर्म्म ये सब कृष्णपक्षकी प्रतिपदामें करै और शुभ पक्षकी प्रतिपदामें नहीं करै ॥ २० ॥ राजकार्य, विवाहादि मंगल कार्य, वास्तुकर्म्म, आभूषण बनवाना, यज्ञोपवीत, देवप्रतिष्ठा, ये कार्य द्वितीया तिथिमें श्रेष्ठ होते हैं ॥ २१ ॥ अन्नप्राशन (बालकको प्रथमहीप्रथम अन्न चटाना) संगीत विद्या, सीमन्त कर्म्म, शिल्प कर्म्म और जो द्वितीयामें करने कहेहैं सो सब कर्म्म तृतीयामें श्रेष्ठ होते हैं ॥ २२ ॥ शत्रुओंको मारना, बांधना, विष देना, शस्त्र मारना, अग्नि लगाना इत्यादि क्रूर कर्म्म चतुर्थीमें करने चाहिये और शुभ मंगल कर्म्म कोई नहीं करना चाहिये ॥ २३ ॥ सब शुभ कर्म्म, स्थिर, तथा चर कर्म्म पंचमीमें सिद्ध होते हैं परन्तु ऋण देना श्रेष्ठ नहीं है ॥ २४ ॥ दतौन करना, आनाजाना, उवटना इन कर्म्मोंको त्याग कर शिल्प कर्म्म, युद्ध, गृहारंभ, आभूषण गढवाना, मंगल कार्य षष्ठीमें सिद्ध होतेहं ॥ २५ ॥ हाथीपर चढना, हाथीको चलाना सिखाना, बेचना, खरीदना, विवाहादि संगीतकर्म्म, वस्त्र, आभूषण बनवाना और पहिरना, यात्रा, गृहप्रवेश, वधूप्रवेश, संग्राम ये कार्य सप्तमी तिथिमें सिद्ध होते हैं ॥ २६ ॥ नृत्य, स्त्री, भूषणादि धारण करना, संग्राम, शस्त्र धारण, वास्तु शिल्पादि कार्य अष्टमीमें सिद्ध होते हैं ॥ २७ ॥ विग्रह, लडाई, कलह, जुआ खेलना, मद्य बनाना, शिकार खेलना, विष देना, अग्नि लगाना, शस्त्र बनवाना, चलाना,

इत्यादि कार्य नवमीमें सिद्धिको प्राप्त होतेहैं ॥ २८ ॥ विवाहादि शुभ कर्म्म, आभूषण बनवाना, यात्रा, प्रवेश, हाथी घोडोंका कार्य, राजकार्य, दशमीके दिन सिद्ध होते हैं ॥ २९ ॥ यज्ञोपवीत, विवाहादि, युद्ध, कारीगरी सीखना, करना, मद्य बनाना, उत्सव करना, जाना आना, आभूषण बनवाना, पहिरना, इत्यादि कार्य एकादशीमें शुभ होतेहैं ॥ ३० ॥ चर और स्थिर कार्य, विवाह, यज्ञोपवीत द्वादशीमें करै, किन्तु तैलमर्दन, यात्रादि कर्म्मोंको त्याग देवे ॥ ३१ ॥ यात्रा, प्रवेश, संग्राम, वस्त्र, आभूषण बनवाना और पहिरना, मंगल कार्य और यज्ञोपवीत, इनको छोडकर अन्य कर्म्मोंमें शुक्लपक्षकी त्रयोदशी शुभ होती है ॥ ३२ ॥ विष देना, बांधना, अग्नि लगाना, शस्त्र चलाना आदि दुष्ट कर्म्म चतुर्दशीमें शुभ होतेहैं । परन्तु शुभकर्म्म और क्षौर यात्रादि कर्म्म वर्जित करै ॥ ३३ ॥ मंगल कार्य, भूषण, शिल्प, प्रतिष्ठा, यज्ञकर्म्म, संग्राम, गृहकृत्य पौर्णमासीमें सिद्ध होते हैं ॥ ३४ ॥ हवनादिकर्म्म, महादान, पितृयज्ञ और जो कर्म्म अमावस्यामें करने कहेहैं सो सब अमावास्याके दिन करे । किन्तु अन्य शुभ कर्म्म नहीं करने चाहिये ॥ ३५ ॥

अथ दंतधावने निषिद्धातिथयः ।

अमायां च तथा षष्ठ्यामेकादश्यां रवेर्दिने ॥ प्रतिपद्युत्तरे यामान्न कुर्यादन्तधावनम् ॥ ३६ ॥

अब दंतधावन कर्म्ममें निषिद्ध तिथियोंका वर्णन करतेहैं—अमावास्या, षष्ठी, एकादशी, रविवार, प्रतिपदा, पहर दिन चढे पीछे दतौन नहीं करै ॥ ३६ ॥

अथामलकस्नाने निषिद्धाः ।

दशमीसप्तमीदर्शद्वितीयानवमीदिने ॥ त्रयोदश्यां तथा नैव स्नायादामलकैर्नरः ॥ ३७ ॥

अब आमलक स्नानमें निषिद्ध तिथियोंका वर्णन करतेहैं- दशमी, सप्तमी, अमावास्या, द्वितीया, नवमी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें पुरुष आमलेके जलसे स्नान न करे ॥ ३७॥

अथोक्तकार्ये निषिद्धाः ।

क्षौरे चतुर्दशीं चैव षष्ठीं तैले पलेऽष्टमीम् ॥ दर्शं स्त्रीसेवने जह्याद्यदीच्छेद्दीर्घजीवितम् ॥ ३८ ॥

अब उक्त कार्योंमें निषिद्ध तिथियोंको कहते हैं-जो मनुष्य दीर्घ कालतक जीना चाहे तो क्षौर कर्म्ममें चतुर्दशी, तैल खाने वा मलनेमें षष्ठी, मांस खानेमें अष्टमी, स्त्रीसेवनमें अमावास्याको त्याग देवे ॥ ३८ ॥

अथ प्रतिपदादिदर्शान्तासु षोडशतिथिषु वर्ज्यानि ।

त्यजेत्प्रतिपदाद्यासु कूष्मांडं बृहतीफलम् ॥ लवणं मूलकं चैव पनसं तैलसेवनम् ॥ ३९ ॥ धात्रीफलं नारिकेलं फलं तुंब्याः पटोलकम् ॥ निष्पावान्नं मसूरांश्च वृंताकं माक्षिकं क्रमात् ॥ ४० ॥ अमायां सुरतं चैव पौर्णमास्यां दुरोदरम् ॥ ४१ ॥

अब प्रतिपदासे अमावास्यातक १६ सोलह तिथियोंमें त्याज्य वस्तुओंका वर्णन करतेहैं-प्रतिपदामें पेठा, द्वितीयामें कटेरीका फल, तृतीयामें लवण, चतुर्थीमें मूली, पंचमीमें कटहल, षष्ठीमें तैलसेवन ॥ ३९ ॥ सप्तमीमें आमला, अष्टमीमें नारियल, नवमीमें तुंबी (दो प्रकारका काशी फल, तोरई) दशमीमें परवल, एकादशीमें दलिया, द्वादशीमें मसूर, त्रयोदशीमें बैंगन, चतुर्दशीमें शहत ॥ ॥ ४० ॥ अमावास्यामें स्त्रीसंगम, पौर्णमासीमें जुआ खेलना वर्जित है ॥ ४१ ॥

अथ प्रसंगाद्युगादिमन्वादितिथयः ।

नवमी कार्त्तिके शुक्ला वैशाखे च तृतीयका ॥ त्रयोदश्याश्विने कृष्णा तथा दर्शश्च फाल्गुने ॥ ४२ ॥ कार्त्तिकेभूत्कृतारंभस्त्रेतारंभस्तु माधवे ॥ फाल्गुने द्वापरारंभ आरंभश्चाश्विने कलेः ॥ ४३ ॥ क्रमाच्छंभुर्हरिर्वेधाः पितरस्तत्र देवताः ॥ तिलाँल्लवणसौवर्णगाश्च दद्याद्युगादिषु ॥ ४४ ॥ एते युगादयः पुण्याः शुभे वर्ज्या मनीषिभिः ॥ तत्राक्षय्यतृतीयास्तु सर्वकार्येतिशोभना ॥ ४५ ॥ आश्विने नवमी शुक्ला माघमासे तु सप्तमी ॥ भाद्रे चैत्रे तृतीया च कार्त्तिके द्वादशी तथा ॥ ४६ ॥ आषाढे दशमी प्रोक्ता ज्येष्ठमासे तु पूर्णिमा ॥ आषाढी फाल्गुनी चैत्री कार्त्तिकी पूर्णिमा तथा ॥ ४७ ॥ भाद्रे कृष्णाष्टमी प्रोक्ता पौषे त्वेकादशी सिता ॥ अमा भाद्रपदे मासि मन्वाद्यास्तिथयस्त्विमाः ॥ ४८ ॥ अत्र मासास्तु एकांता विज्ञेया गणकोत्तमैः ॥ ४९ ॥

अब प्रसंगवशसे युगादि और मन्वादि तिथियोंका वर्णन करतेहैं— कार्त्तिक शुक्लपक्षकी नवमी, वैशाख शुक्लपक्षकी तृतीया, अश्विन कृष्णपक्षकी त्रयोदशी, फाल्गुनकी अमावास्या युगादि तिथि हैं॥४२॥ कार्त्तिक मासमें सत्ययुगका प्रारम्भ हुआथा, वैशाखमें त्रेतायुगका आरंभ हुआ,फाल्गुनमें द्वापरका आरम्भ हुआ,आश्विनमें कलियुगका आरम्भ हुआ है ॥ ४३॥ शिव, विष्णु, ब्रह्मा, पितर क्रमसे ये चारों युगोंके देवता हैं. युगादि तिथियोंमें तिल, लवण, सुवर्ण, गो इनका दान करना चाहिये ॥ ४४ ॥ ये युगादि तिथि (पुण्य) पवित्र हैं. परन्तु पंडितोंको शुभकर्म्ममें त्याग देना चाहिये और इन युगादि चार तिथियोंमें वैशाखशुक्लपक्षकी अक्षय तृतीया तो सर्वकार्य्योंमें अतिशुभ है ॥ ४५ ॥ आश्विन मासके शुक्लपक्षमें नवमी, माघशु-

क्रमें सप्तमी, भाद्रपद और चैत्र शुक्लपक्षमें तृतीया, कार्त्तिक शुक्ल पक्षमें द्वादशी ॥ ४६ ॥ आषाढ शुक्लपक्षमें दशमी, ज्येष्ठ शुक्लपक्षमें पूर्णिमा और आषाढ, फाल्गुन, चैत्र, कार्त्तिक इन मासोंकी पूर्णिमा ॥ ४७ ॥ तथा भाद्रपदकी कृष्णाष्टमी, पौषकी कृष्णा एकादशी, भाद्रपदकी अमावास्या ये तिथि मन्वादिक हैं ॥ ४८ ॥ यहांपर ज्योतिषियोंको ये महीने तो इन्हींमें जान लेने चाहिये ॥ ४९ ॥

अथार्धोदययोगः ।

माघे मासि रवौ दर्शे व्यतीपाते श्रवान्विते ॥ अर्धोदयाभिधो योगः सूर्यपर्वशताधिकः॥अयमुक्तो दिवा योगः किंचिन्न्यूनो महोदयः ॥ ५० ॥

अव अर्द्धोदय योग कहतेहैं-माघके महीनेमें रविवारकी अमावास्या, व्यतीपात योग और श्रवण नक्षत्रसे युक्त हो तो अर्द्धोदय नाम योग, सो सूर्यपर्वोंसेभी अधिक फलदायक होता है और ये योग दिनमें होना कहा है, रात्रिमें नहीं । यदि इस योगमें कुछ न्यूनताभी हो तो महोदय योग होता है ॥ ५० ॥

अथ गजच्छाया ।

पितृपक्षे त्रयोदश्यां हस्तेऽर्केऽब्जे मघागते॥ गजच्छायाभिधो योगः श्राद्धेक्षय्यफलप्रदः ॥ ५१ ॥

अव गजच्छाया योग कहते हैं-आश्विन मासके पितृपक्षकी त्रयोदशीके दिन हस्त नक्षत्रपर सूर्य और मघापर चंद्रमा हो तो गजच्छाया नाम योग श्राद्धमें अक्षय फलका देनेवाला होता है ॥ ५१ ॥

अथ कपिलाषष्ठी ।

आश्विने कृष्णपक्षे च षष्ठ्यां भौमोऽथ रोहिणी ॥ व्यतीपातस्तदा षष्ठी कपिलाऽनंतपुण्यदा ॥ ५२ ॥

अव कपिलाषष्ठी योग कहते हैं-आश्विन मासके कृष्णपक्षकी

'षष्ठी, मंगल वार, रोहिणी नक्षत्र, व्यतीपात योग युक्त हो ते कपिला षष्ठी कहातीहै अनन्त पुण्यकी देनेवाली है ॥ ५२ ॥

अथ प्रसंगादगस्त्योदयः ।

अष्टघ्नपलभासंख्यैरंशैर्युक्ता वसुग्रहाः ॥ तादृशेऽर्के मुनेर्ज्ञेय उदयः कुंभजन्मनः ॥ ५३ ॥

इति श्रीदैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ तिथिप्रकरणं द्वितीयम् ॥ २ ॥

अब प्रसंगवशसे अगस्त्यका उदय लिखते हैं–अपने देशकी पलभाको आठसे गुणा करनेसे अंश होते हैं, उनमें अट्ठानवे ९८ जोडकर तीस ३० का भाग देनेसे जो लब्ध मिलै सो सूर्य की राशि और शेष बचै सो अंश जानै उसी सूर्यके उतने अंशोंपर अगस्त्यका उदय होताहै ।

उदाहरण–जैसे स्वदेशी पलभा ५।४५ को आठसे गुणा किया तो ४६।०० अंश हुए, इनमें ९८ जोडे तो १४४ हुए, इन १४४ में तीसका भाग दिया तो ४ लब्ध मिले २४ शेष बचे अर्थात् सिंहके सूर्यके २४ अंशपर अगस्त्यका उदय जनाना ॥ ५३ ॥

इति श्रीदैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामशर्म्मात्मजपंडितरामदयालुशर्म्म-कृतभाषाटीकासमलंकृतं तिथिप्रकरणं द्वितीयम्॥२॥

अथ वारप्रकरणम् ।

आदित्यश्चंद्रमा भौमो बुधश्चाथ बृहस्पतिः ॥शुक्रः शनैश्चरश्चैते वासराः परिकीर्तिताः ॥ १ ॥ शिवो दुर्गा गुहो विष्णुर्ब्रह्मेंद्रः कालसंज्ञकः ॥ सूर्यादीनां क्रमादेते स्वामिनः परिकीर्तिताः ॥ २ ॥ गुरुश्चंद्रो बुधः शुक्रः शुभा वाराः शुभे स्मृताः ॥ क्रूरास्तु क्रूरकृत्येषु ग्राह्या भौमार्कसूर्यजाः ॥ ३ ॥

स्थिरः सूर्यश्चरश्चंद्रो भौमश्चोग्रो बुधः समः ॥ लघुर्जीवो मृदुः शुक्रः शनिस्तीक्ष्णः समीरितः ॥ ४ ॥

इसके पश्चात् वारप्रकरण लिखतेहैं—रवि१, चंद्रमा२, मंगल ३, बुध ४, बृहस्पति ५, शुक्र ६, शनैश्चर ७ ये सात वार कहेहैं ॥ १ ॥ शिव १, दुर्गा २, कार्त्तिकेय३, विष्णु ४, ब्रह्मा ५, इंद्र ६, काल ७ क्रमसे ये सूर्यादिवारोंके स्वामी कहेहैं ॥ २ ॥ बृहस्पति, चंद्रमा, बुध, शुक्र ये शुभ वारहैं शुभकार्यमें ग्रहण करने कहेहैं और मंगल, सूर्य, शनैश्चर ये क्रूर वारहैं क्रूरकर्म्मोंमें ग्रहण करने योग्य हैं ॥ ३ ॥ सूर्य स्थिर है, चंद्रमा चर है, मंगल उग्र है, बुध सम है, बृहस्पति लघु है, शुक्र कोमल है और शनि तीक्ष्ण है ॥ ४ ॥

अथ वारसंज्ञाचक्रम् ।

वाराः	सूर्य	चंद्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
स्वामिनः	शिव	दुर्गा	कार्त्तिकेय	विष्णु	ब्रह्मा	इंद्र	काल
स्वभावः	स्थिर	चर	उग्र	सम	लघु	मृदु	तीक्ष्ण

अथ प्रत्येकवारकृत्यम् ।

राजाभिषेकमांगल्यं यानमंत्रास्त्रमौषधम् ॥ रणः पण्याग्निसेवाद्यं सुवर्णादि रवौ स्मृतम् ॥ ५ ॥ शंखमौक्तिकरौप्यादि भूषा गीतं क्रतुः कृषिः ॥ भोज्यं स्त्रीक्षुविकारांभःकर्मोक्तं सोमवासरे ॥ ६ ॥ भेदस्तेयानृतं शाठ्यं विषशस्त्राग्निघातनम् ॥ प्रवालकरहेमाद्यमेतत्कुर्यात्कुजेहनि ॥ ७ ॥ कलानैपुण्यवाणिज्यं संधिव्यायामसेवनम् ॥ वेदाध्ययनलिप्यादि विदध्याद्बुधवासरे ॥ ८ ॥ यज्ञो धर्मः क्रिया विद्या मांगल्यं पौष्टिकं गृहम् ॥ यात्राभैषज्यभूषाद्या विधेया गुरुवासरे ॥ ९ ॥ गीतं स्त्रीरत्नशय्यादि वस्त्रं भूषोत्सव-

क्रियाः ॥ भूपण्यकृपिकोशाद्याः सर्वे सिद्ध्यंति भार्गवे ॥ ॥ १० ॥ गृहप्रवेशदीक्षादि गजबंधः स्थिरक्रियाः ॥ दासशस्त्रानृतं स्तेयमेतत्सिद्ध्येच्छनैश्चरे ॥ ११ ॥ खेटस्योपचयस्थस्य वारे कार्यं शुभावहम् ॥ तदेवापचयस्थस्य यत्नेनापि न सिद्ध्यति ॥ १२ ॥

अब प्रत्येक वारमें कृत्यका वर्णन करते हैं—राजाका गद्दीपर बैठना, मंगल कार्य करना, सवारी बनवाना, उसपर चढना, अथवा जाना, मंत्र सिद्ध करना, अस्त्र चलाना और बनाना, औषधि बनाना और खाना, युद्ध करना, दुकान करना, अग्नि लगाना, सेवा करना, सुवर्णका आभूषण बनवाना और पहिरना, इत्यादि कार्य रविवारमें करने कहेहैं ॥ ॥ ५ ॥ शंख, मोती, चांदी आदिका आभूषण धारण करना और बनवाना, गीत, यज्ञ, खेती, भोजन कार्य, स्त्रीसेवन, इक्षुविकार (खांड गुडादि) बनाना, जलकर्म्म ये सब चंद्रवारमें शुभ होतेहैं॥६॥ भेदकरना, चोरी करना, झूंठ बोलना, छिपकर बुराकाम करना, विष देना, शस्त्र चलाना, अग्नि लगाना, मारना, मूंगा पहिरना, कर बाँधना और लेना, स्वर्णका काम करना, मंगलवारमें शुभ होता है ॥ ७ ॥ कलाओंका सीखना, चतुरता करना, व्यापार करना, मिलाप, कसरत, नौकरी करना, वेदका पढ़ना, लिखना इत्यादि कार्य बुधवारमें शुभ होते हैं ॥ ८ ॥ यज्ञ, धर्म, शुभ कर्म्म, विद्या, मंगल कार्य, पौष्टिक कर्म्म, गृहारंभ, यात्रा, औषध बनाना, सेवन करना, आभूषण धारण करना इत्यादि कर्म्म बृहस्पतिवारमें करने चाहिये ॥ ९ ॥ गाना, स्त्रीसेवन, रत्न पहिरना, शय्यादि बनाना, वस्त्र, आभूषण धारण, उत्सवक्रियाभूमिका कार्य, दुकानदारी, खेती, खजाना इत्यादि कार्य शुक्र, वारमें सिद्ध होते हैं ॥ १० ॥ गृहप्रवेश, मंत्रदीक्षादि, हाथीका बाँधना, स्थिर कर्म्म, नौकर होना, शस्त्र चलाना, मिथ्या

स्थिरः सूर्यश्चरश्चंद्रो भौमश्चोग्रो बुधः समः ॥ लघुर्जीवो मृदुः शुक्रः शनिस्तीक्ष्णः समीरितः ॥ ४ ॥

इसके पश्चात् वारप्रकरण लिखतेहैं—रवि१,चंद्रमा२,मंगल ३,बुध ४, बृहस्पति ५, शुक्र ६, शनैश्चर ७ ये सात वार कहेहैं ॥ १ ॥ शिव १,दुर्गा २,कार्त्तिकेय३, विष्णु ४, ब्रह्मा ५, इंद्र ६, काल ७ क्रमसे ये सूर्यादिवारोंके स्वामी कहेहैं ॥ २ ॥ बृहस्पति, चंद्रमा, बुध, शुक्र ये शुभ वारहैं शुभकार्यमें ग्रहण करने कहेहैं और मंगल, सूर्य, शनैश्चर ये क्रूर वारहैं क्रूरकर्म्मोंमें ग्रहण करने योग्य हैं ॥ ३ ॥ सूर्य स्थिर है, चंद्रमा चर है,मंगल उग्र है, बुध सम है,बृहस्पति लघु है, शुक्र कोमल है और शनि तीक्ष्ण है ॥ ४ ॥

अथ वारसंज्ञाचक्रम् ।

वाराः	सूर्य	चंद्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि
स्वामिनः	शिव	दुर्गा	कार्त्तिकेय	विष्णु	ब्रह्मा	इंद्र	काल
स्वभावः	स्थिर	चर	उग्र	सम	लघु	मृदु	तीक्ष्ण

अथ प्रत्येकवारकृत्यम् ।

राजाभिषेकमांगल्यं यानमंत्रास्त्रमौषधम् ॥ रणः पण्याग्निसेवाद्यं सुवर्णादि रवौ स्मृतम् ॥ ५ ॥ शंखमौक्तिकरौप्यादि भूषा गीतं क्रतुः कृषिः ॥ भोज्यं स्त्रीक्षुविकरांभःकर्मोक्तं सोमवासरे ॥ ६ ॥ भेदस्तेयानृतं शाठ्यं विषशस्त्राग्निघातनम् ॥ प्रवालकरहेमाद्यमेतत्कुर्यात्कुजेहनि ॥ ७ ॥ कलानैपुण्यवाणिज्यं संधिव्यायामसेवनम् ॥ वेदाध्ययनलिप्यादि विदध्याद्बुधवासरे ॥ ८ ॥ यज्ञो धर्मः क्रिया विद्या मांगल्यं पौष्टिकं गृहम् ॥ यात्राभैषज्यभूषाद्या विधेया गुरुवासरे ॥ ९ ॥ गीतं स्त्रीरत्नशय्यादि वस्त्रं भूपोत्सव-

क्रियाः ॥ भूपण्यकृपिकोशाद्याः सर्वे सिद्ध्यंति भार्गवे ॥ ॥ १० ॥ गृहप्रवेशदीक्षादि गजवंधः स्थिरक्रियाः ॥ दासशस्त्रानृतं स्तेयमेतत्सिद्ध्येच्छनैश्चरे ॥ ११ ॥ खेटस्योपचयस्थस्य वारे कार्यं शुभावहम् ॥ तदेवापचयस्थस्य यत्नेनापि न सिद्ध्यति ॥ १२ ॥

अव प्रत्येक वारमें कृत्यका वर्णन करते हैं–राजाका गद्दीपर वैठना, मंगल कार्य करना, सवारी वनवाना, उसपर चढना, अथवा जाना, मंत्र सिद्ध करना, अस्त्र चलाना और वनाना, औषधि वनाना और खाना, युद्ध करना, दुकान करना, अग्नि लगाना, सेवा करना, सुवर्णका आभूषण वनवाना और पहिरना, इत्यादि कार्य रविवारमें करने कहेहैं ॥ ॥ ५ ॥ शंख, मोती, चांदी आदिका आभूषण धारण करना और वनवाना, गीत, यज्ञ, खेती, भोजन कार्य, स्त्रीसेवन, इक्षुविकार (खांड गुडादि) वनाना, जलकर्म्म ये सव चंद्रवारमें शुभ होतेहैं॥६॥ भेदकरना, चोरी करना, झूंठ वोलना, छिपकर वुराकाम करना, विष देना, शस्त्र चलाना, अग्नि लगाना, मारना, मूंगा पहिरना, कर वाँधना और लेना, स्वर्णका काम करना, मंगलवारमें शुभ होता है ॥ ७ ॥ कलाओंका सीखना, चतुरता करना, व्यापार करना, मिलाप, कसरत, नौकरी करना, वेदका पढ़ना, लिखना इत्यादि कार्य वुधवारमें शुभ होते हैं ॥ ८ ॥ यज्ञ, धर्म, शुभ कर्म्म, विद्या, मंगल कार्य, पौष्टिक कर्म्म, गृहारंभ, यात्रा, औषध वनाना, सेवन करना, आभूषण धारण करना इत्यादि कर्म्म वृहस्पतिवारमें करने चाहिये ॥ ९ ॥ गाना, स्त्रीसेवन, रत्न पहिरना, शय्यादि वनाना, वस्त्र, आभूषण धारण, उत्सवक्रियाभूमिका कार्य, दुकानदारी, खेती, खजाना इत्यादि कार्य शुक्र, वारमें सिद्ध होते हैं ॥ १० ॥ गृहप्रवेश, मंत्रदीक्षादि, हाथीका वाँधना, स्थिर कर्म्म, नौकर होना, शस्त्र चलाना, मिथ्या वोलना

चोरी करना, इतने कार्य शनिवारमें सिद्ध होते हैं ॥ ११ ॥ लग्नसे तीसरा, छठा, दशवां, ग्यारहवां घर उपचय कहाताहे और लग्न, दूसरा, चौथा, पांचवाँ, सातवाँ, आठवाँ, नौवाँ, वारहवाँ घर अपचय कहाताहे. उपचय स्थानमें स्थित ग्रहके वारमें कियाहुआ कार्य शुभकारक होताहे और यदि वहही ग्रह अपचय स्थानमें हो तो कार्य यत्न करनेसे भी सिद्ध नहीं होता ॥ १२ ॥

अथ तात्कालिकवारकृतार्थं होरा प्रोच्यते ।

स्वदेशान्मध्यरेखांतर्योजनैः पादवर्जितैः ॥ तावत्पलैर्युतोनाः स्युस्तिथयः १५ परपूर्वतः ॥ १३ ॥ तद्दिनार्द्धांतरपलैरूनाधिक्ये दिनार्द्धतः ॥ ऊर्ध्वं चाधः क्रमाद्वारप्रवेशस्त्तपनोदयात् ॥ १४ ॥ वारारंभाद्गतानाड्यो द्विघ्नाः २ पंचविभाजिताः ॥ लब्धांके गतहोराः स्युर्वासरेशादितः क्रमात् ॥ १५ ॥ रविः शुक्रो बुधश्चंद्रः शनिर्जीवस्ततः कुजः ॥ एवं क्रमेण विज्ञेयाः कालहोरेश्वरा ग्रहाः ॥ १६ ॥ यस्मिन्वारे तु यत्कृत्यं पूर्वाचार्यैरुदाहृतम् ॥ तत्कृत्यं तस्य खेटस्य होरायां खलु सिद्धयति ॥ १७ ॥ वारदोषाश्च ये प्रोक्ता रात्रौ न प्रभवंति ते ॥ शनिभौमार्कवारेषु विशेषादिति केचन ॥ १८ ॥

अव तात्कालिक वारमें कर्त्तव्यकर्म्मार्थ होराका वर्णन करतेहैं- अपना देश और मध्यरेखाके[1] वीचमें जितने योजनोंका अन्तर होय उनमेंसे उनकाही चौथा भाग घटायकर जो शेष वचै सो पल होते हैं. उन पलोंको पर या पूर्व देश होनेसे क्रमसे १५

[1] भूमध्यरेखाके देश इस श्लोकसे जाने जातेहैं-पुरी रक्षसा देवकन्याऽथ काची सितः पर्वतः पर्य्यली वत्सगुल्मम् ॥ पुरी. चोज्जयिन्याह्विका गर्गराट कुरुक्षेत्रमेरू भुवो मध्यरेखा ॥ १ ॥ अथवा-याऽक्षोज्जयिनीपुरोपरिकुरुक्षेत्रादिदेशान् स्पृशत्सूत्रं मेरुगन बुधैर्निगदिता सा मध्यरेखा भुव ॥ २ ॥ इति ॥

पंद्रहमें जोड़े और घटावै ॥ १३ ॥ भावार्थ यह है कि,भूमध्यरेखासे अपना देश पश्चिममें हो तो पलोंको १५ पंद्रहमें जोडदेवे और जो मध्यरेखासे अपना देश पूर्वमें होय तो पंद्रहघडियोंमें पलोंकों घटाय देवे इस प्रकार करनेसे जो अंक मिलें सो ध्रुवांक कहातेहैं. जिस दिनका वारप्रवेश जानना होय उसी दिवसके दिनार्द्धका और ध्रुवांकका अन्तर करै अर्थात् जिसमेंसे जो घट सकै उसे घटाय देवे शेष बचै सो वारप्रवेशकी घट्यादि जानै. तात्पर्य यह है कि, दिनार्द्धमेंसे ध्रुवांक घट गया हो तो सूर्योदयसे (ऊर्द्ध्व) उतनी घटी पल दिन चढ़े वारप्रवेश हुआ जानै और जो ध्रुवांकमेंसे दिनार्द्ध घट गया हो तो सूर्योदयसे (अधः) उतनी घटी पल पहिले वारप्रवेश हुआ जानै.

उदाहरण-जैसे कि,भूमध्यरेखा लंकासे कुरुक्षेत्रपर होती हुई सुमेरु पर्वततक सीधी चली गईहै ऐसा देवज्ञोंने मानाहै और कुरुक्षेत्रसें ठीक पूर्वमें ३१ योजनपर हमारा ग्राम ढाडोली है, आज सं. १९६४ मार्गशीर्ष शुक्ल तृतीया रविवारके दिन वारप्रवेश जानना है आज दिनमान २६।४ है तो३१योजनका चौथाई७।४५हुआ इनको३१मेंसे घटाया तो २३।१५ शेष बचे. ये पल और विपल हैं, इन पल विपलोंको १५ घडियोंमेंसे घटाया क्यों कि, हमारा देश मध्यरेखासे पूर्वमें है तो शेष १४।३६।४५ बचे यहही वारप्रवेशका ध्रुवांक है और दिनार्द्ध १३।२ है यहांपर ध्रुवांकमें दिनार्द्ध घटताहै तो शेष १।३४।४५ बचतेहैं बस यही वारप्रवेशकी घट्यादि हैं अब जानलो कि, आज सूर्योदयसे १ घटी ३४ पल ४५ विपल पहिले वारप्रवेश हुआहै॥ १४ ॥ वारप्रवेशसे इष्टतक जितनी घड़ी वीती होंय उनको दूना करके पांच ५ का भाग देनेसे जो अंक लब्ध मिले सोही वर्त्तमान वारसे गत होरा इस क्रमसे होतेहैं, जैसे रविवारके दिन प्रथम तो सूर्यकाही होरा, फिर शुक्रका, फिर बुधका, उसके आगे

चन्द्रमाका, तब शनिका, तब बृहस्पतिका इसी क्रमसे काल होराके स्वामी ग्रह जान लेने चाहिये ॥ १६ ॥ पूर्वाचार्योंने जो कार्य जिस वारमें करना कहाहै वह कार्य उसी वारके होरामें भी सिद्धिको प्राप्त होताहै अर्थात् आवश्यक कार्यमें वार न मिलसके तो उस वारकी होरामें उस कार्यको करलेवे ॥ १७ ॥ वारोंमें जो दोष कहेहैं सो रात्रिमें बली नहीं होतेहैं और कोई आचार्य ऐसा कहतेहैं कि, शनि, मंगल, रविवारोंमें जो दोष कहेहैं सो रात्रिमें बली नहीं होतेहैं ॥ १८ ॥

तैलाभ्यंगे वारफलम् ।

रविस्तापं शशी कांतिं मृतिं भौमो बुधः श्रियम् ॥ वित्त-हानिं गुरुः शुक्रो विपत्तिं च सुखं शनिः ॥ १९ ॥ तैला-भ्यंगो मनुष्याणां कुरुते नात्र संशयः ॥ रवौ भौमे व्यती-पाते संक्रांतौ वैधृतावपि ॥ २० ॥ षष्ठ्यष्टम्योश्च विष्टयां च तैलाभ्यंगो न पर्वसु ॥ २१ ॥

अब तेल लगानेमें वारोंका फल कहतेहैं-तैलाभ्यंगमें रविवार तापको करताहै, चन्द्रमा कांतिको, मंगल मृत्युको, बुध लक्ष्मीको, बृह-स्पति धनकी हानिको, शुक्र विपत्तीको, शनि सुखको करताहै ॥१९॥ इस वारफलमें किसी प्रकारका संशय नहीं है और रवि, मंगल, व्यतीपात, संक्रान्ति, वैधृति योग ॥ २० ॥ षष्ठी, अष्टमी तिथि, भद्रा, पर्व (ग्रहण अमावास्यादि) इनमें तैलाभ्यंग नहीं करना चाहिये ॥ २१ ॥

अथ तैलाभ्यंगे दोषापवादः ।

तैलाभ्यंगो न दोषाय प्रत्यहं क्रियते च यः ॥ उत्सवे वात-रोगे वा यत्र वाचनिकोपि वा ॥ २२ ॥ भार्गवे गोमयं भौमे मृदं दूर्वां बृहस्पतौ ॥ रवौ पुष्पं निधायांतस्तैलाभ्यं-

गो न दोषकृत् ॥ २३ ॥ मंत्रितं कथितं तैलं सार्षपं पुष्पवासितम् ॥ द्रव्यांतरयुतं वापि नैव दुष्येत्कदाचन ॥२४॥
इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ वारप्रकरणं तृतीयम् ॥ ३ ॥

अव तैलाभ्यंगमें दोषका अपवाद लिखते हैं जो तैलाभ्यंग प्रतिदिन किया जाताहै अथवा उत्सवमें, वातरोगमें, पुण्याहवाचनमें किया जाताहै उसका दोष नहीं होता ॥ २२ ॥ दूसरा परिहार है कि, शुक्रवारमें गोवर, मङ्गलवारमें मिट्टी, बृहस्पतिको दूव, रविको फूल तेलमें डालकर लगानेसे दोष नहीं करता ॥ २३ ॥ मंत्रसे शुद्ध किया-हुआ, अथवा अग्निसे पकाया हुआ, वा फूलोंसे सुगन्धित कियाहुआ, अथवा द्रव्यान्तर (औषधियोंसे) मिलाहुआ और सरसोंका तैल मलनेमें कभी दूषित नहीं होताहै ॥ २४ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्य्यवेणीरामशर्मात्मजपंडितरामदयालुकृतभाषाटीकासमलंकृतं वारप्रकरणं तृतीयम् ॥ ३ ॥

अथ नक्षत्रप्रकरणम् ।

अश्विनी भरणी चैव कृत्तिका रोहिणी मृगः ॥ आर्द्रा पुनर्वसू पुष्यस्तथाऽश्लेषा मघा तथा ॥ १ ॥ पूर्वाफाल्गुनिका तस्मादुत्तराफाल्गुनी ततः ॥ हस्तश्चित्रा तथा स्वाती विशाखा तदनंतरम् ॥ २ ॥ अनुराधा ततो ज्येष्ठा ततो मूलं निगद्यते ॥ पूर्वाषाढोत्तराषाढा त्वभिजिच्छ्रवणस्ततः ॥ ३ ॥ धनिष्ठा शतताराख्यं पूर्वाभाद्रपदा ततः ॥ उत्तराभाद्रपाचैव रेवत्येतानि भानि च ॥ ४ ॥

अब नक्षत्रप्रकरण लिखतेहैं-अश्विनी १, भरणी २, कृत्तिका-३, रोहिणी ४, मृगशिरा ५, आर्द्रा ६, पुनर्वसु ७, पुष्य ८, आश्लेषा ९, मघा १०, पूर्वाफाल्गुनी ११, उत्तराफाल्गुनी १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाति १५, विशाखा १६, अनुराधा १७, ज्येष्ठा १८, मूल १९, पूर्वाषाढा २०, उत्तराषाढा २१, अभिजित् २२, श्रवण २३, धनिष्ठा २४, शतभिषा २५, पूर्वाभाद्रपदा २६, उत्तराभाद्रपदा २७, रेवती २८ ये २८ नक्षत्र हैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथ नक्षत्रेशाः ।

अश्विनी दस्रदैवत्या भरणी यमदेवता ॥ आग्नेयी कृत्तिका प्रोक्ता विधाता रोहिणीश्वरः ॥ ५ ॥ मृगशीर्षेश्वरश्चंद्रस्तथैवार्द्रेश्वरः शिवः ॥ अदितिस्तु पुनर्वस्वोः पतिः पुष्यस्य वाक्पतिः ॥ ६ ॥ आश्लेषाधिपतिः सर्पो मघेशाः पितरः स्मृताः ॥ भगश्च पूर्वाफाल्गुन्या उफायाः पतिरर्यमा ॥७॥ हस्तस्याधिपतिः सूर्यस्त्वष्टा चित्राभिधस्य च ॥ स्वातेश्च दैवतं वायुर्विशाखेंद्राग्निदेवता ॥ ८ ॥ अनुराधेश्वरो मित्रो ज्येष्ठाया इंद्र उच्यते ॥ मूलस्य दैवतं रक्षः पूर्वाषाढेश्वरो जलम् ॥ ९ ॥ उपाया दैवतं विश्वे विधिश्चाभिजितोधिपः श्रवणाधिपतिर्विष्णुर्धनिष्ठा वसुदेवता ॥ १० ॥ वरुणः शततारायाः पूभेशः कथितोऽजपात् ॥ अहिर्बुध्न्यस्तथोभायाः पूषोक्तो रेवतीपतिः ॥ ११ ॥

अब नक्षत्रोंके स्वामी कहतेहैं-अश्विनीका अश्विनीकुमार, भरणीका यम देवताहै, कृत्तिकाका अग्नि, रोहिणीका विधाता स्वामीहै ॥ ५ ॥ मृगशिरका चंद्रमा, आर्द्राका शिव, पुनर्वसुका अदिति, पुष्यका बृहस्पति ॥ ६ ॥ आश्लेषाका सर्प, मघाके पितर, पूर्वाफाल्गुनीका भग, उत्तराफाल्गुनीका अर्यमा ॥ ७ ॥ हस्तका सूर्य, चित्राका त्वष्टा, स्वातीका वायु, विशाखाका इंद्राग्नी ॥ ८ ॥

अनुराधाका मित्र, ज्येष्ठाका इंद्र, मूलका राक्षस, पूर्वाषाढाका जल ॥ ९ ॥ उत्तराषाढाका विश्वेदेव, अभिजितका ब्रह्मा, श्रवणका विष्णु, धनिष्ठाका वसु ॥ १० ॥ शतभिषाका वरुण, पूर्वाभाद्रपदका अजपात्, उत्तराभाद्रपदका अहिर्बुन्ध्य, रेवतीका पूषा देवता स्वामी है ॥ ११ ॥

अथ सामान्यतः शुभाशुभनक्षत्राणि ।

रोहिण्यश्विमृगाः पुष्यो हस्तश्चित्रोत्तरात्रयम् ॥ रेवती श्रवणश्चैव धनिष्ठा च पुनर्वसुः ॥ १२ ॥ अनुराधा तथा स्वाती शुभान्येतानि भानि च ॥ सर्वाणि शुभकार्य्याणि सिद्ध्यंत्येषु च भेषु च ॥ १३ ॥ पूर्वात्रयं विशाखा च ज्येष्ठार्द्रामूलमेव च ॥ शतताराभमेतेषु कृत्यं साधारणं स्मृतम् ॥ ॥ १४ ॥ भरणी कृत्तिका चैव मघाश्लेषे तथैव च ॥ अत्युग्रं दुष्टकार्यं यत्प्रोक्तमेषु विधीयते ॥ १५ ॥

अब सामान्यतासे शुभाऽशुभ नक्षत्रोंका वर्णन करते हैं–रोहिणी, अश्विनी, मृगशिर, पुष्य, हस्त, चित्रा, तीनों उत्तरा, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु ॥ १२ ॥ अनुराधा, स्वाती ये नक्षत्र शुभ हैं इनमें सब शुभकार्य सिद्ध होते हैं ॥ १३ ॥ तीनों पूर्वा, विशाखा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा ये साधारण नक्षत्रहैं इनमें साधारणकार्य शुभ होते हैं ॥ १४ ॥ भरणी, कृत्तिका, मघा, आश्लेषा ये अतिउग्र नक्षत्रहैं इनमें अतिउग्र कार्य दुष्टकार्य और जो कार्य इनमें करने कहे हैं सो सब किये जातेहैं ॥ १५ ॥

अथ प्रत्येकनक्षत्रकृत्यम् ।

यात्रौषधविभूषाश्च विद्याशिल्पकलादिकम् ॥ गजकार्यं विवाहांगं मांगल्यं चाश्विभे चरेत् ॥ १६ ॥ साहसं दारुणं शत्रुनाशनं विषबंधनम् ॥ भरण्यां कूपकृष्याद्यमग्निदाहादिकं चरेत् ॥ १७ ॥ कृत्तिकायां सदा कुर्यात्साहसाग्नि-

परिग्रहम् ॥ रिपोर्वधं विवाहं च लोहमण्योश्च कर्म तु ॥
॥ १८ ॥ रोहिण्यां पौष्टिकं कुर्याद्विवादं धनसंग्रहम् ॥
प्रासादं सुरकृत्यं च मांगल्यं भूषणादिकम् ॥ १९ ॥ विवा-
होपनयौ यात्रा मृगशीर्षे तु शोभनम् ॥ सुरसंस्थापनं
वास्तुक्षेत्रारंभादि सिद्ध्यति ॥ २० ॥ आर्द्रायां विग्रहं
कुर्याद्बंधनं छेदनं वधम् ॥ विषसंध्यग्निविद्याद्यं दारुणो-
च्चाटने तथा ॥ २१ ॥ शांतिकं पौष्टिकं यात्राभूषावास्तु-
व्रतादिकम् ॥ वाहनं कृषिविद्याद्यं पुनर्वस्वोर्विधीयते ॥
॥ २२ ॥ चरस्थिराणि कार्याणि शांतिकं पौष्टिकोत्सवम्॥
विवाहं वर्जयित्वाऽन्यत्समस्तं पुष्यभे चरेत् ॥ २३ ॥
आश्लेषायां रिपोर्घातं वाणिज्यं साहसं तथा ॥ विषसर्पादि
कृत्यं च स्तेयं कापट्यमाचरेत् ॥ २४ ॥ मघायां पैतृकं
कार्यं तथा सस्यादिरोपणम् ॥ जलाश्रयं विवाहं च कुर्या-
द्युद्धादिसाहसम् ॥ २५ ॥ बंधनं दारुणं शिल्पं कापट्यं
रणकर्म च ॥ पूर्वाफाल्गुनिकायां तु चित्रकर्मादि साधयेत् ॥
॥ २६ ॥ विवाहो व्रतबंधश्च स्थिरकर्म विभूषणम् ॥ उत्तरा-
फाल्गुनीभे स्याद्गृहारंभप्रवेशनम् ॥ २७ ॥ यात्राविद्यावि-
वाहादिविभूषांबरभेषजम् ॥ गृहारंभं प्रतिष्ठां च विदध्या-
द्धस्तभेऽखिलम् ॥ २८ ॥ शांतिकं पौष्टिकं शिल्पं वास्तु-
भूषांबरादिकम् ॥ व्रतबंधं स्थिरं कार्यं चित्रायां कृषिकर्म
च ॥ २९ ॥ सुरसद्मविधानं च मंगलांबरभूषणम् ॥ बीजा-
रोपं च संग्रामं शस्त्राद्यं स्वातिभे चरेत् ॥ ३० ॥ वस्तुसं-
ग्रहणं भूषां शिल्पं चित्रं प्रहारकम् ॥ रथकार्यं विशाखायां
कुर्यादौषधसेवनम् ॥ ३१ ॥ पाणिग्रहं व्रतं यात्रां गजा-
श्वांबरभूषणम् ॥ चरं स्थिरं शुभं कुर्यादनुराधाऽभिषेऽखि-

लम् ॥ ३२ ॥ रिपूणां हनने भेदे प्रहारे लोहकर्मणि ॥ शिल्पे स्नेहविधौ चित्रे ज्येष्ठा चैव समीरिता ॥ ३३ ॥ मूलभे च वनारामाः संग्रामाः संधिविग्रहौ ॥ वापीकूपतडागाद्या विधेयाः कृपयोपि च ॥ ३४ ॥ वापीकूपादिकं कृष्यं विग्रहं बंधमोक्षणम् ॥ क्रूरकार्यं द्रुमच्छेदं पूर्वाषाढाभिधे चरेत् ॥ ३५ ॥ स्थापनं मंडनं वास्तुनिवेशं च प्रवेशनम् ॥ बीजारोपविभूषाद्यमुत्तराषाढभे चरेत् ॥ ३६ ॥ देवतास्थापनं गेहं पौष्टिकं शिल्पकर्म च ॥ मांगल्योपनयं चित्रं शांतिकं श्रवणे चरेत् ॥ ३७ ॥ चौले चोपनये युद्धे गजाश्वोष्ट्रादिकर्मणि ॥ गेहोद्यानविभूषासु धनिष्ठा कथितोत्तमा ॥ ३८ ॥ गजाश्वरथनौकानां रौप्यमुक्ताफलस्रजाम् ॥ वास्तुसंग्रामशस्त्राणां कार्यं तच्छतभे चरेत् ॥ ॥ ३९ ॥ पूर्वाभाद्रपदे शिल्पं साहसं छेदनं कृषिम् ॥ विक्रयं महिषोष्ट्राणां जलयंत्रादिकं शुभम् ॥ ४० ॥ विवाहो व्रतबंधश्च देवतास्थापनं गृहम् ॥ वास्तुकर्माभिषेकश्चोत्तराभाद्रपदे भवेत् ॥ ४१ ॥ गेहं देवालयं भूषा विवाहो व्रतबंधनम् ॥ जलस्थलादिकं कार्यं रेवत्यां सिद्धिमाप्नुयात् ॥४२॥

अब प्रत्येक नक्षत्रमें कृत्य कहतेहैं—यात्रा, औषध बनाना और खाना, आभूषण बनवाना और पहिरना, विद्या पढ़ना, कारीगरी कला आदि सीखना, हाथीका कार्य, विवाह, मंगलकर्म ये सब अश्विनी नक्षत्रमें करै ॥ १६ ॥ साहस और भयानक कर्म्म, शत्रुका मारना, विष देना, बाँधना, कूप बनाना, खेती करना, अग्निलगाना इत्यादि कार्य भरणी नक्षत्रमें करै ॥ १७ ॥ साहस, अग्निपरिग्रह, शत्रुमारण, विवाह करना, लोह और मणिका कर्म्म ये सब कार्य कृत्तिकामें करै ॥ १८ ॥ पौष्टिक कर्म्म, विवाद, धनका संग्रह,

(प्रासाद) राजगृह- देवगृह वनवाना, देवकार्य करना, मांगलिक कर्म, भूषणादि धारण कर्म्म, रोहिणी नक्षत्रमें करै ॥ १९ ॥ विवाह, यज्ञोपवीत, यात्रा, देवस्थापन, वास्तुकर्म्म, क्षेत्रका वनवाना इत्यादि कार्य मृगशिरानक्षत्रमें शुभ होतेहैं ॥ २० ॥ लडाई करना, बाँधना, काटना, विषदेना, मिलाप करना, अग्नि लगाना, विद्या सीखना, दारुण कर्म्म- उच्चाटन कर्म ये सब आर्द्रा नक्षत्रमें करै ॥ २१ ॥ शांति कर्म, पौष्टिक कर्म, यात्रा, आभूषण, मकान बनवाना, व्रतादि करना, वाहनकार्य, खेती करना, विद्या सीखना ये सर्व कार्य पुनर्वसु नक्षत्रमें करै ॥ २२ ॥ चर और स्थिर कार्य, शांतिक, और पौष्टिक कर्म्म, उत्सव, विवाहको छोडकर अन्य सब शुभकर्म पुष्यनक्षत्रमें करै ॥ २३ ॥ शत्रुका मारना, व्यापार करना, साहस कर्म, विष देना, सर्पादिका कार्य, चोरी, कपटता ये सब आश्लेषा नक्षत्रमें करै ॥ २४ ॥ पितृकार्य, खेती, वाडी वोना, जलाश्रय बनवाना, विवाह, युद्धादि साहस कर्म्म मघा नक्षत्रमें करै ॥ २५ ॥ बांधना, दारुण कर्म करना, कारीगरी करना, कपट करना, युद्धकर्म, चित्र बनाना इत्यादि कार्य पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें करै ॥ २६ ॥ विवाह, यज्ञोपवीत, स्थिरकर्म, आभूषण धारण, गृहारंभ, गृहप्रवेश ये सब कार्य उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें करै ॥ २७ ॥ यात्रा करना, विद्या सीखना, विवाहादि करना, आभूषण वस्त्र पहिरना, औषधि बनाना और खाना, गृह बनवाना, प्रतिष्ठा करना ये सब काम हस्त नक्षत्रमें करै ॥ २८ ॥ शान्तिक, पौष्टिक कर्म्म, शिल्प कर्म्म, वास्तु कर्म्म, आभूषण वस्त्रादि धारण कर्म, यज्ञोपवीत, स्थिर कर्म, कृषि कर्म्म ये सब चित्रा नक्षत्रमें करै ॥ २९ ॥ देवगृह बनाना, मंगल कार्य करना वस्त्र, भूषण पहिरना, बीज बोना, संग्राम करना,

शस्त्रादि बनाना और धारण करना,इत्यादि कार्य स्वाति नक्षत्रमें करै ॥ ३० ॥ वस्तुओंका संग्रह, आभूषण धारण करना, शिल्प कार्य करना, चित्र कार्य, प्रहार करना, रथकार्य, औषध सेवन विशाखा नक्षत्रमें करै ॥ ३१ ॥ विवाह, व्रत, यात्रा, हाथी और घोडे सम्बन्धी कार्य वस्त्र और आभूषणका धारण करना, चरकार्य, स्थिरकार्य और शुभकार्य ये सब अनुराधा नक्षत्रमें करना ॥ ३२ ॥ शत्रुओंका मारना, भेद करना, प्रहार करना, लोहेका कर्म, शिल्प कर्म्म, तैल अतर आदिका बनाना, चित्रकारी करना, इन सब कर्म्मोंमें ज्येष्ठा नक्षत्र शुभ कहा है ॥ ३३ ॥ वन, बगीचा आदि लगाना, युद्ध, मिलाप, विग्रह करना, बावडी कूप तडागादि बनवाना, खेती करना ये सब कार्य मूल नक्षत्रमें करै ॥ ॥ ३४ ॥ बावडी कूपादि बनाना, खेती, लडाई, बांधना, छोडना, क्रूर कर्म्म करना, वृक्ष काटना ये कार्य पूर्वाषाढ नक्षत्रमें करै॥ ३५॥ देवस्थापन, सजाना, गृह बनाना, गृहप्रवेश, बीज बोना, आभूषणादि पहिरना ये कार्य उत्तराषाढा नक्षत्रमें करै ॥ ३६ ॥ देवताका स्थापन करना, गृह बनाना, पौष्टिक कर्म, शिल्प कर्म्म, मांगलिक कर्म, यज्ञोपवीत, चित्र कर्म, शान्ति कर्म्म ये सब श्रवण नक्षत्रमें करै ॥ ३७ ॥ मुंडन, यज्ञोपवीत, युद्ध, हाथी घोडा ऊंटों आदिका कर्म, घर बनाना, बगीचा लगाना, आभूषण पहिरना इतने कार्योंमें धनिष्ठा नक्षत्र उत्तम कहाहै ॥ ३८ ॥ हाथी, घोडा, रथ, नावका कर्म, चांदी, मोती, माला आदिका कर्म, गृहारंभ, संग्राम, शस्त्रका कार्य ये सब शतभिषा नक्षत्रमें करै ॥ ३९ ॥ शिल्प कर्म, साहस कर्म, काटना, खेती करना, भैंसे ऊटोंका बेचना, जलयंत्रादिका बनाना ये सब कार्य पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रमें शुभ होतेहैं ॥ ४० ॥ विवाह, यज्ञोपवीत, देवस्थापन, देवगृहारंभ, वास्तुकर्म, राज्याभिषेक ये कार्य

उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें करै ॥ ४१ ॥ मकान, देवगृह वनाना, भूषण पहिरना, विवाह, यज्ञोपवीत, जलस्थलादिके कार्य रेवती नक्षत्रमें सिद्धिको प्राप्त होते हैं ॥ ४२ ॥

अथ पुष्यप्रशंसा ।

पापैर्विद्धे युते हीने चंद्रताराबलेऽपि च ॥ पुष्ये सिद्ध्यंति सर्वाणि कार्याणि मंगलानि च ॥ ४३ ॥

अव पुष्य नक्षत्रकी प्रशंसा लिखतेहैं—चन्द्रमा और तारा बलहीन हो पापग्रहोंसे विद्ध हो अथवा युक्त हो तोभी पुष्य नक्षत्रमें सव मंगल कार्य सिद्ध होतेहैं ॥ ४३ ॥

अथ नक्षत्राणां विशेषसंज्ञा तत्कृत्यं च ।

ध्रुवं स्थिरमिति ख्यातं रोहिणी चोत्तरात्रयम् ॥ तत्रामरगृहग्रामाऽभिषेकाद्याः स्थिरक्रियाः ॥ ४४ ॥ मृगश्चित्राऽनुराधा च रेवती मृदुमैत्रकम् ॥ तत्र गीतं रतिं कुर्याद्भूपामांगल्यमंवरम्॥४५॥पुष्याश्विन्यभिजिद्धस्तं लघु क्षिप्रमुदाहृतम्॥ तत्र भूषौषधज्ञानं गमनं शिल्पकं रतिः ॥ ४६ ॥ ज्येष्ठार्द्रा मूलमाश्लेषा तीक्ष्णं दारुणमुच्यते ॥ तत्र भेदो वधो वंधो मंत्रभूतादिसाधनम् ॥ ४७ ॥ श्रवणादित्रिभं स्वातिपुनर्वसु चरं चलम् ॥ तस्मिन्वाजिगजारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ ४८ ॥ भरणी च मघा पूर्वा क्रूरमुग्रमुदाहृतम् ॥ विषशस्त्राग्निघातादि तत्र च्छेदविनाशनम् ॥ ४९ ॥ विशाखा कृत्तिका चैव मिश्रं साधारणं स्मृतम् ॥ नीलोत्सर्गोऽग्निकार्यं च मिश्रं तत्र च सिद्ध्यति ॥ ५० ॥

अव नक्षत्रोंकी विशेष संज्ञा और उनमें कृत्यका वर्णन करते हैं—रोहिणी, तीनों उत्तरा अर्थात् उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा ये नक्षत्र ध्रुव और स्थिर संज्ञक हैं इनमें देवगृह

बनाना, ग्राम वसाना, राजगद्दीपर वैठना, स्थिरकार्य करना इत्यादि शुभ होतेहैं ॥ ४४ ॥ मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती ये नक्षत्र मृदु और मैत्र संज्ञक हैं. इनमें गाना, स्त्रीसंगम, आभूषण धारण, मांगलिक कर्म, वस्त्र धारण ये सब कार्य करै ॥४५॥ पुष्य, अश्विनी अभिजित, हस्त ये नक्षत्र लघु और क्षिप्र संज्ञक हैं. इनमें आभूषण धारण, औषध सेवन, ज्ञान, गमन, कारीगरी, स्त्रीसंगम इतने कार्य शुभ होतेहैं ॥ ४६ ॥ ज्येष्ठा, आर्द्रा, मूल, आश्लेषा ये नक्षत्र तीक्ष्ण और दारुण संज्ञक हैं. इनमें भेदन, मारण, बंधन, मंत्रसाधन, भूतादि साधन शुभ होते हैं ॥ ४७ ॥ श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाति, पुनर्वसु ये नक्षत्र चर और चल संज्ञक हैं.इनमें हाथी घोडोंपर चढना, फुलवाडी लगाना, जाना इत्यादि कार्य शुभ होतेहैं ॥ ४८ ॥ भरणी, मघा, तीनों पूर्वा ये नक्षत्र क्रूर, और उग्र संज्ञक हैं। इनमें विषदेना, शस्त्र चलाना, अग्नि लगाना, मारना, काटना, विनाश करना इत्यादि कार्य सिद्ध होतेहैं॥४९॥ विशाखा, कृत्तिका ये दो नक्षत्र मिश्र तथा साधारण संज्ञक हैं. इनमें वृषोत्सर्ग, अग्निकार्य, मिश्रकार्य सिद्ध होतेहैं ॥ ५० ॥

अथाधऊर्ध्वतिर्यङ्मुखनक्षत्राणि तत्कृत्यानि च।

मूलाश्लेषामघापूर्वाविशाखाभरणीद्वयम् ॥ अधोमुखानि भान्यत्र कर्म सिद्ध्येदधोमुखम् ॥ ५१ ॥ वापीकूपतडागादि खातस्तत्र विधीयते ॥ निधिक्षेपोद्धृती रंध्रप्रवेशो गणितं तथा ॥ ५२ ॥ पुनर्वस्वनुराधाख्यं ज्येष्ठाहस्तत्रयं मृगः ॥ रेवतीद्वितयं तिर्यग्वक्त्रं तस्मिँस्तथाक्रियाः ॥ ५३ ॥ गजाश्वरथतंत्रीणां नौकायाश्च गमादिकम् ॥शिविकाहलयंत्राणां कार्यं तिर्यङ्मुखे तु भे ॥ ५४ ॥ उत्तरा रोहिणी चैव पुष्या-

द्रौश्रवणत्रयम् ॥ एतान्यूर्ध्वमुखान्यत्र कर्मोक्तं तादृशं बुधैः ॥ ५५ ॥ प्रासादश्च ध्वजच्छत्रप्राकारगृहतोरणम् ॥ नृपाभिषेक आराम उत्साहस्तूर्ध्ववक्त्रभे ॥ ५६ ॥

अब अधोमुख, ऊर्ध्वमुख,तिर्यङ्मुख नक्षत्र और उनमें कृत्यका वर्णन करतेहैं–मूल, आश्लेषा, मघा, तीनों पूर्वा, विशाखा, भरणी, कृत्तिका ये नक्षत्र अधोमुख संज्ञक हैं. इनमें अधोमुख कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ५१ ॥ वावडी; कुआँ, तालाव आदिका खोदना, पृथ्वीमें धन रखना और खोदना, गुफा प्रवेश करना, गणितविद्या सीखना इतने कार्य अधोमुख नक्षत्रोंमें करने चाहिये ॥ ५२ ॥ पुनर्वसु, अनुराधा, ज्येष्ठा, हस्त, चित्रा, स्वाति, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी ये नक्षत्र तिर्यङ्मुख संज्ञक हैं. इनमें तिर्यङ्मुख कार्य सिद्ध होतेहैं ॥ ५३ ॥ हाथी, घोडा, रथ, नावका चलाना, वीणा वनाना, पालकीपर चढना, हल चलाना, यंत्रोंका कार्य करना, ये सब कार्य शुभ होतेहैं ॥ ५४ ॥ तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, आर्द्रा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा ये नक्षत्र ऊर्द्धमुख संज्ञक हैं. इनमें ऊर्द्धमुख संज्ञक कार्य सिद्ध होतेहैं ॥ ५५ ॥ राजगृह, देवगृह, वनाना, ध्वजा बांधना, छत्र धारण करना,परकोटा घेरना,तोरण बांधना, राज्याभिषेक करना,बाग लगाना,उत्साह करना ये सब कार्य ऊर्द्धमुख नक्षत्रोंमें शुभ होतेहैं ५६

अथाश्विन्यादिभानां तारकासंख्या ।

राम ३ रामा ३ ग ६ बाणा ५ ग्नि ३ भू १ वेदा ४ ऽग्नि-३ शराः ५ शराः ५ ॥ नेत्रा २ श्वि २ बाण ५ भू १ चंद्रा १ वेद ४ वेदा ४ ग्नि ३ शंकराः ११ ॥ ५७ ॥ दृग २-श्वि २ रामा ३ रामा ३ विध ४ शतं १०० नेत्रे २ क्षणं २ रदाः ३२ ॥ अश्विनीप्रमुखानां तु तारासंख्या यथाक्रमम् ॥ ५८ ॥

अब अश्विन्यादि नक्षत्रोंकी तारासंख्या लिखतेहैं—राम ३, राम ३, अंग ६, बाण ५, अग्नि ३, भू १, वेद ४, अग्नि ३, शर ५, शर ५, नेत्र २, अश्वि २, बाण ५, भू १, चंद्र १, वेद ४, वेद ४, अग्नि ३, शंकर ११,॥५७॥द्वकू २,अश्वि २राम ३, राम ३,अब्धि ४, शत १००, नेत्र २, ईक्षण २, रद ३२ ये क्रमसे अश्विन्यादि नक्षत्रोंके ताराओंकी संख्या हैं अर्थात् अश्विनीके तीन तारा हैं, भरणीके तीन तारा हैं, कृत्तिकाके छह तारा हैं, इत्यादि सब जानलेने चाहिये ॥ ५८ ॥

अथ नक्षत्राणां स्वरूपाणि ।

अश्विन्यश्विमुखाकारा भरणी भगसन्निभा ॥ कृत्तिका च क्षुराकारा रोहिणी शकटाकृतिः ॥ ५९ ॥ मृगो मृगमुखाकारस्तथार्द्रा मणिसन्निभा ॥ पुनर्वसुर्गृहाकारो पुष्यो बाणसमाकृतिः ॥ ६० ॥ चक्राकृतिरथाश्लेषा मघा शालोपमा स्मृता ॥ पूफा तु शयनाकारा तथैवोत्तरफाल्गुनी ॥६१ ॥ ज्ञेयो हस्ताकृतिर्हस्तश्चित्रा मौक्तिकसन्निभा ॥ प्रवालसदृशी स्वाती विशाखा तोरणाकृतिः ॥ ६२ ॥ बलितुल्याऽनुराधाख्या ज्येष्ठा कुंडलसन्निभा ॥ सिंहपुच्छनिभं मूलं पूर्वाषाढा तु तल्पवत् ॥ ६३ ॥ उत्तरा गजदंताभा त्रिकोणं चाभिजित्स्मृतम् ॥ श्रवणस्त्रिपदाकारो धनिष्ठा मर्दलाकृतिः ॥ ६४ ॥ शतभं वर्त्तुलाकारं यमाभा पूर्वभाद्रपात् ॥ उत्तरा शयनाकारा मर्दलाभा तु रेवती ॥ ६५ ॥

अब नक्षत्रोंका स्वरूप वर्णन करतेहैं—अश्विनी नक्षत्र घोडेके मुखके समान है,भरणी नक्षत्र भगके समानहै,कृत्तिका क्षुराके आकारका है, रोहिणी गाडीके आकारका है ॥ ५९ ॥ मृगशिरा मृगके मुखके

आकारका है, आर्द्रा मणिके समान है, पुनर्वसु गृहके आकारका है, पुष्य वाणके समान है, आश्लेपा चक्राकार है ॥ ६० ॥ मघा शालाके समान है, पूर्वाफाल्गुनी शय्याके समान उत्तरा फाल्गुनी शय्याके आकार है ॥ ६१ ॥ हस्त हाथके आकारसा है, चित्रा मोतीके समान है, स्वाति मूंगाके समान है, विशाखा तोरणके आकारकी है ॥ ६२ ॥ अनुराधा बलिके समान है, ज्येष्ठा कुंडलके समान है, मूल सिंहकी पूँछके समान है; पूर्वाषाढा शय्याके समान है ॥ ६३ ॥ उत्तराषाढा हाथी दांतके समान है, अभिजित् त्रिकोणाकार है, श्रवण तीन चरणके आकारका है, धनिष्ठा मृदंगके समान है ॥ ६४ ॥ शतभिषा गोलाकर है, पूर्वाभाद्रपात् यमके समान है, उत्तराभाद्रपात् शय्याके समान है, रेवती मृदंगके समान है ॥ ६५ ॥

अथ नक्षत्रशरः ।

पूर्वाषाढाद्वयं मूलानुराधार्द्रा मृगः करः ॥ ज्येष्ठा पुनर्वसू चैषां तारा दक्षिणगाः सदा ॥ ६६ ॥ रोहिणीकृत्तिकाऽश्लेषारेवतीश्रवणत्रयम् ॥ पुष्यश्चित्रा नवैतानि मध्यचारीणि भानि हि ॥ ६७ ॥ अश्विनीद्वितयं स्वातीविशाखाफाल्गुनीद्वयम् ॥ मघाभाद्रपदायुग्ममेतान्युत्तरगाणि च ॥ ६८ ॥

अब नक्षत्रोंका शर वर्णन करतेहैं-पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, मूल, अनुराधा, आर्द्रा, मृगशिरा, हस्त, ज्येष्ठा, पुनर्वसु इन नक्षत्रोंके तारा सदैव दक्षिणचारी हैं ॥ ६६ ॥ रोहिणी, कृत्तिका, आश्लेपा, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शताभिषा, पुष्य, चित्रा ये नौ नक्षत्र मध्यमचारी हैं ॥ ६७ ॥ अश्विनी, भरणी, स्वाति, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, मघा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा ये नक्षत्र उत्तरचारी हैं ॥ ६८ ॥

आकाशेदिक्-चारः	आकृतिः	तारा संख्या	अधोमुखादि संज्ञा	ध्रुवादि-संज्ञा	नक्षत्राणां शुभाशुभादिता	नक्षत्रस्वामिनः	नक्षत्रनामानि
उत्तरचारी	अश्वमुखाकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	लघु क्षिप्र	शु.	अश्विनीकुमार	अ.
उत्तरचारी	मृगाकार	[illegible]	अधोमुख	क्रूर उग्र	उग्र	यम	भ.
मध्यमचारी	क्षुराकार	[illegible]	अधोमुख	मिश्र साधार.	उग्र	अग्नि	कृ.
मध्यमचारी	शकटाकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	ध्रुव स्थिर	शु.	ब्रह्मा	रो.
दक्षिणचारी	मृगमुखाकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	मृदु मैत्र	शु.	चंद्रमा	मृ.
दक्षिणचारी	मणिवद्रश	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	तीक्ष्ण दारुण	साधारण	शिव	आ.
दक्षिणचारी	गृहाकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	चर चल	शु.	अदिति	पु.
मध्यमचारी	बाणाकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	लघु क्षिप्र	शु.	बृहस्पति	पु.
मध्यमचारी	चक्राकार	[illegible]	अधोमुख	तीक्ष्ण दारुण	उग्र	सर्प	आश्लेषा
उत्तरचारी	शालाकार	[illegible]	अधोमुख	क्रूर उग्र	उग्र	पितर	म.
उत्तरचारी	शय्याकार	[illegible]	अधोमुख	क्रूर उग्र	साधारण	भग	पू.
उत्तरचारी	शय्याकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	ध्रुव स्थिर	शु.	अर्यमा	उ.
दक्षिणचारी	हस्ताकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	लघु क्षिप्र	शु.	सूर्य	ह.
मध्यमचारी	मुक्ताकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	मृदु मैत्र	शु.	त्वष्टा	चि.
उत्तरचारी	प्रवालाकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	चर चल	शु.	वायु	स्वा.
उत्तरचारी	तोरणाकार	[illegible]	अधोमुख	मिश्रसाधारण	साधारण	इंद्राग्नी	वि.
दक्षिणचारी	बलिमदृश	[illegible]	तिर्यङ्मुख	मृदु मैत्र	शु.	मित्र	अनु.
दक्षिणचारी	कुंडलाकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	तीक्ष्ण दारुण	साधारण	इंद्र	ज्ये.
दक्षिणचारी	सिंहपुच्छाका.	[illegible]	अधोमुख	तीक्ष्ण दारुण	साधारण	राक्षस	मू.
दक्षिणचारी	शय्याकार	[illegible]	अधोमुख	क्रूर उग्र	साधारण	जल	पू. षा.
दक्षिणचारी	गजदंताकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	ध्रुव स्थिर	शु.	विश्वेदेवा	उ. षा.
••	त्रिकोणाकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	लघु क्षिप्र	शु.	ब्रह्मा	अभिजित्
मध्यमचारी	चरणत्रयाका.	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	चर चल	शु.	विष्णु	श्र.
मध्यमचारी	मृदंगाकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	चर चल	शु.	वसु	धनिष्ठा.
मध्यमचारी	गोलाकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	चर चल	साधारण	वरुण	श.
उत्तरचारी	यमाकार	[illegible]	अधोमुख	क्रूर उग्र	साधारण	अजपात्	पू. भा.
उत्तरचारी	शय्याकार	[illegible]	ऊर्ध्वमुख	ध्रुव स्थिर	शु.	अहिर्बुध्न्य	उ. भा.
मध्यमचारी	मृदंगाकार	[illegible]	तिर्यङ्मुख	मृदु मैत्र	शु.	पूषा	रेवती.

अथ नभोमध्यमादुदयर्क्षज्ञानम् ।

विशाखादित्रयं पूर्वाषाढाश्लेषार्द्रभे यदा ॥ रोहिणीभं नभोमध्ये तदा चाष्टमभोदयः ॥ ६९ ॥ नवमर्क्षोदयो मूले मृगे चांबरमध्यगे॥शेषे मध्यगते व्योम्नः सप्तमर्क्षोदयो भवेत् ॥७०॥

अब मध्याकाशस्थ नक्षत्रसे उदय नक्षत्रका जानना लिखतेहैं- विशाखा,अनुराधा,ज्येष्ठा,पूर्वाषाढा,आश्लेषा,आर्द्रा रोहिणी ये, नक्षत्र आकाशके मध्यमें स्थित हों तो आठवें नक्षत्रका उदय होताहै अर्थात् इनमेंसे जो नक्षत्र आकाशके मध्यमें होय उससे आठवें नक्षत्रका उदय होताहै ॥ ६९ ॥ और मूल तथा मृगशिरा आकाशके मध्यमें होय तो नवम नक्षत्रका उदय होताहै और यदि शेष नक्षत्र आकाशके मध्यमें गत हों तो सातवें नक्षत्रका उदय होताहै ॥ ७० ॥

अथ रविभान्मध्यमादुदयभाद्गतरात्रिज्ञानम् ।

रविभादस्तभं व्येकं मध्यमं चाष्टहीनकम् ॥ उदयर्क्षं तिथि १५ हीनं वा नख२०घ्नं नव९भाजितम् ॥ ७१ ॥ लब्धं रात्रेर्गता नाड्यः शेषं लब्धं पलानि च ॥ ७२ ॥

अब सूर्यके नक्षत्रसे और मध्य नक्षत्रसे तथा उदयके नक्षत्रसे गतरात्रि जाननेकी रीति लिखतेहैं-सूर्यके नक्षत्रसे अस्तनक्षत्रकी जो संख्या होय उसमें एक घटावे. और सूर्य नक्षत्रसे आकाशके मध्यमनक्षत्रकी जो संख्या होय उसमें आठ घटावे, इसी प्रकार सूर्यके नक्षत्रसे उदयके नक्षत्रकी जो संख्या होय उसमें १५ पन्द्रह घटावे ऐसा करनेसे तीनों स्थानमें समानांकही शेष बचेंगे, उस शेषको वीस २० गुणा करके नौका भाग देनेसे जो लब्ध मिले, सो रात्रिकी गतघटी और शेष बचे सो पल जानलेने चाहिये ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

अथवा ।

अस्तभादर्कभं तिथ्या १५ हीनं मध्यमतोऽष्टभिः ॥ उदय-
र्क्षात्तथा व्येकं १ विंशतिघ्नं २० ग्रहै९र्भजेत ॥ ७३ ॥
लब्धाद्यघ्रादिका ज्ञेया शेषा रात्रिस्फुटाथ वा ॥ सप्त ७
ष्ट ८ नवहीनं च ह्यस्तोदयप्रमाणतः ॥ मध्यमे तु विशेषो
ऽयं ज्ञेया युक्ता विचक्षणैः ॥ ७४ ॥

अब दूसरी रीतिसे गत रात्रिका ज्ञान कहते हैं)अथवा अस्तके नक्षत्रसे सूर्यके नक्षत्रकी जितनी संख्या होय उसमें पन्द्रह१५घटावे और अस्तके नक्षत्रसे आकाशके मध्य नक्षत्रकी जो संख्या होय उसमें आठ घटावे और अस्तके नक्षत्रसे उदय नक्षत्रकी जो संख्या होय उसमें एक घटावे ऐसा करनेसे तीनों जगह एकसेही अंक शेष वचेंगे उसको वीसगुणा करके ९ का भाग देनेसे जो लब्ध मिलै सो गत रात्रिकी घटी और जो शेष वचै उसको६०साठिगुणा करके ९ नौका भाग देनेसे जो लब्ध मिलै सो पल जानलेने चाहिये ॥ ७३ ॥ और आकाशके मध्य नक्षत्रमें तो पंडितोंको यह विषय जानना योग्य है कि, अस्त और उदयके प्रमाणसे क्रमकरके सात ७ आठ ८ नौ ९ घटावे और पूर्वोक्त क्रिया करनेसे गतरात्रिका ज्ञान होताहै अर्थात् मध्य नक्षत्रसे अस्तनक्षत्रकी जो संख्या होय उसमें सात ७ घटावे और उदयनक्षत्रकी जो संख्या होय उसमेंसे आठ ८ घटावे और सूर्यनक्षत्रकी जो संख्या होय उसमेंसे नौ ९ घटावे तीनों जगह समानांकही शेष वचेंगे, पूर्वोक्त क्रिया करनेसे गतरात्रिकी घटी पल जानलेने चाहिये ॥ ७४ ॥

अथ पंचकम् ।

धनिष्ठार्द्धोत्तरं पंचऋक्षेष्वेषु त्यजेद्बुधः ॥ याम्यदिग्गमनं
शय्यापूर्णकं गेहगोपनम् ॥ ७५ ॥ स्तंभोच्छ्रायं प्रेतदाहं

तृणकाष्ठादिसंग्रहम् ॥ भवेत्पंचगुणं चात्र जातं लब्धं मृतं गतम् ॥ ७६ ॥

अब पंचक लिखतेहैं-धनिष्ठाके उत्तरार्द्धसे लेकर पांच नक्षत्र अर्थात् धनिष्ठोत्तरार्द्ध, शतभिषा,पूर्वाभाद्रपदा,उत्तराभाद्रपदा, रेवती, इन पांच नक्षत्रोंमें दक्षिण दिशाका जाना, खाटका बुनना, घरका छावना॥७५॥ खंभगाडना, मृतकका जलाना, तृण काष्ठादिका संग्रह करना ये सब कार्य त्याग देवे इन नक्षत्रोंमें उत्पन्न हुई वस्तु, लाभ हुई वस्तु, मृत्य हुई वस्तु, गई हुई वस्तु पांच गुणी होजातीहै अर्थात् पंचकोंमें जो कोई उत्पन्न हुआ हो तो पांच औरभी उत्पन्न होंगे, यदि किसीवस्तुका लाभ, हुआ हो तो पांच औरभी मिलेंगे, यदि कोई मरगया हो तो पांच औरभी मरेंगे, यदि कुछ खोयागया वा जातारहाहो तो पांच खोये जावें वा जातेरहेंगे ऐसा कहे ॥ ७६ ॥

अथ नक्षत्राणामंधादिसंज्ञा ।

अंधकं मंदनेत्रं च मध्यचक्षुः सुलोचनम ॥ गणयेद्रोहिणी-पूर्वं सप्तावृत्त्या पुनःपुनः ॥ ७७ ॥ अंधर्क्षे शीघ्रलाभः स्याद्यत्नतो मंदलोचने ॥ श्रवणं मध्यनेत्रे तु नैव लाभः सुलोचने ॥ ७८ ॥ अंधे प्राच्यां गतं वस्तु मंदनेत्रे तु दक्षिणे ॥ पश्चिमे मध्यनेत्रे स्यादथोदीच्यां सुलोचने ॥७९॥

अब नक्षत्रोंकी अंधादि संज्ञा लिखतेहैं-रोहिणीसे लेकर चारचार नक्षत्रोंकी सात आवृत्ति करके गिने तो अंधक, मंदनेत्र, मध्य-चक्षु, सुलोचन ये चार संज्ञाके नक्षत्र होतेहैं ॥ ७७ ॥ यदि अंधे नक्षत्रमें कोई वस्तु चोरी या खोई गई हो तो शीघ्रही मिले और मंदलोचन नक्षत्रमें चोरीगई हो तो यत्नसे मिले और यदि मध्यनेत्र नक्षत्रमें चोरी गई हो तो सुननेमें आवे परन्तु मिले नहीं और सलोचनमें गई हो तो कभी नहीं मिले ॥ ७८ ॥ अंध नक्षत्रमें

अथान्धादिनक्षत्रचक्रम्।

अंधलोचन.	मंदलोचन.	मध्यलोचन.	सुलोचन.
रोहिणी	मृगशि०	आर्द्रा	पुनर्वसु
पुष्य	आश्लेषा	मघा	पूर्वाफाल्गुनी
उत्तराफाल्गुनी	हस्त	चित्रा	स्वाति
विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल
पूर्वाषाढा	उत्तराषाढा	अभिजित्	श्रवण
धनिष्ठा	शतभिषा	पूर्वाभाद्रपद	उत्तराभाद्रप.
रेवती	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका

गई वस्तु पूर्व दिशामें बतावै, मंदनेत्रमें गई वस्तु दक्षिण दिशामें, मध्यनेत्रमें गई वस्तु पश्चिम दिशामें और सुलोचनमें गई वस्तु उत्तर दिशामें गईहै ऐसा कहै ॥ ७९ ॥

अथ दिवारात्रौ पंचदश मुहूर्त्ताः।

शिवोऽहिर्मित्रपितरो वस्वंभोविश्ववेधसः ॥ विधिरिंद्रोथ शक्राग्नी रक्षोऽब्धीशोर्यमा भगः ॥ ८० ॥ मुहूर्त्तेशा इति प्रोक्ता दिवा पंचदश क्रमात् ॥ मुहूर्त्ता रजनौ शंभुरजैकचरणाग्नयः ॥ ८१ ॥ दास्रात्पंचादितिर्जीवो विष्णवर्कौ तक्षमारुतौ ॥ दिनमानस्य तिथ्यंशो रात्रेरपि मुहूर्त्तकः ॥८२॥ नाक्षत्रनाथतुल्येस्मिन्कार्यं कुर्यात्स्वभोदितम् ॥ दिनमध्येभिजित्संज्ञे दोषसंघेषु सत्स्वपि ॥ ८३ ॥ सर्वं कुर्याच्छुभंकर्म याम्यदिग्गमनं विना ॥ ८४ ॥

अथ दिवारात्रौ पंचदश मुहूर्ताः।

६	९	१७	१०	२४	२०	२२	२३	४	१८	१६	१९	२५	१२	११	दि मु.
६	२६	२७	२८	१	२	३	४	५	७	८	२३	१३	१४	१५	रा. मु.

अव दिन और रात्रिके १५ पंद्रह मुहूर्त्तोंका वर्णन करतेहैं–शिव १, सर्प २, मैत्र३, पितर ४, वसु ५, जल ६,विश्वेदेव७, ब्रह्मा ८, इन्द्र १०, इन्द्राग्नी ११,राक्षस १२, वरुण १३,अर्यमा १४,भग १५,॥८०॥ ये दिनकी पन्द्रह१५ मुहूर्तोंके स्वामी क्रमसे कहेहैं। शिव १, अजैकपात् २,अहि-

वुँध्न्य ३, पूषा ४ ॥ ८१ ॥ अश्विनीकुमार ५, यम ६, अग्नि ७, ब्रह्मा ८, चंद्रमा ९, अदिति १०, बृहस्पति ११, विष्णु १२, सूर्य १३, तक्ष १४, पवन १५ ये रात्रिके मुहूर्त्तोंके स्वामी हैं ॥८१॥ दिनमानका पन्द्रहवां भाग और रात्रिकाभी पंद्रहवां भाग मुहूर्त होताहै ॥ ८२ ॥ नक्षत्रमें कहाहुआ कार्य नक्षत्रके स्वामीकी मुहूर्त में करै। भावार्थ यह है कि, यदि नक्षत्र न मिले तो उस नक्षत्रके स्वामीकी मुहूर्तमेंभी उस कार्यको करलेवे यदि दिनमें अभिजित्संज्ञक मुहूर्त हो तो दोषोंका समूह होनेपरभी सव शुभकार्य करै, परन्तु दक्षिण दिशाको न जावे ॥ ८३ ॥ ८४ ॥

अथ मुहूर्त्तस्वामिचक्रम् ।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	मुहूर्त्त-संख्या
शिव	सर्प	मित्र	पितर	वसु	जल	विश्वेदे	ब्रह्मा	ब्रह्मा	इन्द्र	इन्द्राग्नि	राक्षस	वरुण	अर्यमा	भग	दिवामुहूर्त्ताः
आर्द्रा	आश्लेषा	अनुराधा	मघा	धनिष्ठा	पूर्वाषाढ	उत्तरा षाढ	अभिजित्	रोहिणी	ज्येष्ठा	विशाखा	मूल	शतभिषा	उत्तरा फा.	पूर्वा फाल्गु	नक्षत्राणि
शिव	अजैकपात्	अहिर्बुध्न्य	पूषा	अश्विनीकु.	यम	अग्नि	ब्रह्मा	चंद्र	अदिति	बृहस्पति	विष्णु	सूर्य	तक्ष	पवन	रात्रि-मुहूर्त्ताः
आर्द्रा	पूर्वा भाद्र-पदा	उत्तरा भाद्रपदा	रेवती	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिर	पुनर्वसु	पुष्य	श्रवण	हस्त	चित्रा	स्वाति	नक्षत्राणि

अथ रव्यादिवारेषु त्याज्यमुहूर्ताः ।

अर्यमा भानुमद्वारे चंद्रेह्नि विधिराक्षसौ ॥ पित्र्याग्नी कुजवारे तु चंद्रपुत्रे तथाऽभिजित् ॥ ८५ ॥ पित्र्यब्रह्मौ भृगोर्वारेर क्षसार्पौ गुरोर्दिने ॥ रौद्रसार्पौ शनेरह्नि त्याज्याश्चैते मुहूर्तकाः ॥ ८६ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ नक्षत्रप्रकरणं चतुर्थम् ॥ ४ ॥

अब सूर्यादिवारोंमें त्याज्य मुहूर्तोंका वर्णन करतेहैं—रविवारके दिन अर्यमा, चंद्रवारके दिन ब्रह्मा और राक्षस, मंगलवारके दिन पितर और अग्नि, बुधवारके दिन अभिजित् ॥ ८५ ॥ शुक्रवारके दिन पित्र्य और ब्रह्म, बृहस्पतिके दिन राक्षस और जल, शनैश्चरके दिन रौद्र और सार्प ये मुहूर्त्त त्याग देने चाहिये ॥ ८६ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहारिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्त-
गणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामद-
यालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं नक्षत्र-
प्रकरणं चतुर्थम् ॥ ४ ॥

अथ योगप्रकरणम् ।

विष्कंभः प्रीतिरायुष्मान्सौभाग्यः शोभनाभिधः॥अतिगंडः सुकर्माख्यो धृतिः शूलाभिधानकः ॥ १ ॥ गंडो वृद्धिर्ध्रुवश्चाथ व्याघातो हर्षणाह्वयः ॥ वज्रं सिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान्परिघः शिवः ॥ २ ॥ सिद्धिः साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्मा चैंद्रोऽथ वैधृतिः ॥ योगानां ज्ञेयमेतेषां स्वनामसदृशं फलम् ॥ ३ ॥

अब योगप्रकरण लिखतेहैं—विष्कुंभ १, प्रीति २, आयुष्मान् ३, सौभाग्य ४, शोभन ५, अतिगंड ६. सुकर्म्मा ७, धृति ८, शूल ९ ॥ १ ॥ गण्ड १०, वृद्धि ११, ध्रुव १२, व्याघात १३, हर्षण १४, वज्र १५, सिद्धि १६, व्यतीपात १७, वरीयान् १८, परिघ १९; शिव २० ॥ २ ॥ सिद्धि २१, साध्य २२, शुभ २३, शुक्ल २४, ब्रह्म २५; ऐंद्र २६, वैधृति २७ ये सत्ताईस योग हैं इनका फल अपने नामके समान जानना चाहिये अर्थात् जो इन नामोंके अर्थ हैं सोई फल जानो ॥ ३ ॥

अथ विरुद्धयोगानां त्याज्यांशाः ।

वैधृतिव्यतिपाताख्यौ संपूर्णं वर्जयेच्छुभे ॥ वज्रविष्कंभयो-श्चैव घटिकात्रयमादिमम् ॥ ४ ॥ परिघार्धं पंच शूले व्याघाते घटिकानवम्॥ गंडातिगंडयोः षट् च हेयाः सर्वेषु कर्मसु ॥ ५ ॥ एतेषामपि योगानां शेषं साधारणं स्मृतम्॥ एके विरुद्धयोगानां पादमाद्यं त्यजंति हि ॥ ६ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ योगप्रकरणं पञ्चमम् ॥ ५ ॥

अब विरुद्ध योगोंके त्याज्य भागका वर्णन करतेहैं—शुभ-कार्यमें वैधृति और व्यतीपात योगको संपूर्ण त्याग देवे और वज्र तथा विष्कम्भ योगके आदिकी तीन घडी त्यागदेवे ॥४॥परिघ योगका पूर्वार्द्ध, शूल योगकी पांच घडी, व्याघातकी नौ घडी; गंड और अतिगंडकी छह छह घडी सब शुभकर्मोंमें त्याग देवे ॥ ५ ॥ और इन योगोंका शेष भाग भी साधारण कहा है, कोई आचार्य विरुद्ध योगके आदिका चतुर्थ भाग त्याग देने कहतेहैं॥६॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त-गणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामद-यालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं योगप्रक-रणं पंचमम् ॥ ५ ॥

अथ करणप्रकरणम् ।

करणानि चराख्यानि ववबालवकौलवम्॥तैतिलं गरवाणिज्ये विष्टिरेतानि सप्त च ॥ १ ॥ गताश्च तिथयो द्वाभ्यां २ निघ्नाः शुक्लादितः क्रमात् ॥ ववाच्च करणं पूर्वे ज्ञेयं सैकं परे दले ॥ २ ॥ परे कृष्णचतुर्दश्यां दले च शकुनिर्भवेत् ॥ दर्शे चतुष्पदं नागं पूर्वापरविभागयोः ॥ ३ ॥ शुक्ले प्रति-

पदः पूर्वे दले किंस्तुघ्नसंज्ञकम् ॥ एतेषां करणानां हि चतुष्कं स्थिरसंज्ञकम् ॥ ४ ॥

अब करणप्रकरण लिखतेहैं—बव १, बालव २, कौलव ३, तैतिल ४, गर ५, वाणिज्य ६, विष्टि ७ ये सात करण चरसंज्ञक हैं ॥ १ ॥ शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर गत तिथियोंको दोसे गुणा करे जो अंक होय सो क्रमसे बवादिक करण तिथिके पूर्वार्द्धमें होतेहैं और यदि तिथिके परार्द्धमें करण जानना हो तो दूनी कीहुई गत तिथियोंमें १ एक जोडकर क्रमसे बवादिक करण जानले और विदित हो कि, प्रत्येक तिथिके दो करण भोगतेहैं॥२॥ कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके परार्द्धमें शकुनि करण होताहै और अमावास्याके पूर्व और परभागमें क्रमसे चतुष्पद और नाग करण होताहै अर्थात् पूर्व भागमें चतुष्पद और परभागमें नाग करण होताहै॥ ३॥ शुक्लपक्षकी प्रतिपदाके पूर्वदलमें किंस्तुघ्न करण होताहै इन चारों करणोंकी स्थिर संज्ञा है ॥ ४ ॥

अथ करणानां स्वामिनः ।

इंद्रो ब्रह्मा तथा मित्रश्चार्यमाभूरमायमाः ॥ कल्पधर्मक्षनागाजः करणानामधीश्वराः ॥ ५ ॥ बवे पौष्टिककार्याणि विप्रकर्माणि बालवे ॥ कौलवे स्त्रीसुहृत्कर्म तैतिले सुभगाप्रियम् ॥६॥ गरे बीजाश्रितं कुर्याद्वाणिज्यं वणिजे चरेत्॥ दाहपातादिकं विष्ट्यां न शुभं तत्र किंचन ॥७॥ शकुनावौषधं मंत्रसाधनं पौष्टिकं चरेत् ॥ राज्यं गोविप्रयोः कर्म पितृकार्यं चतुष्पदे ॥ ८ ॥ सौभाग्यं दारुणं नागे किंस्तुघ्ने मंगलं चरेत् ॥ ९ ॥

अब करणोंके स्वामी लिखतेहैं—इंद्र १, ब्रह्मा २, मित्र३, अर्यमा ४, पृथ्वी ५, लक्ष्मी ६, यम ७, कलि ८, वृष ९, सर्प १०, वायु ११ ये क्रमसे बवादि करणोंके स्वामी हैं ॥५॥ बव करणमें पौष्टिक-

कर्म, वालवमें ब्राह्मणोंके कर्म; कौलवमें स्त्री और मित्रके कर्म्म, तैतिलमें सौभाग्यवती स्त्रीका प्रिय कर्म करे ॥ ६ ॥ और गर करणमें वीज वोना और जोतना, वणिजमें व्यापार कर्म्म करे (विष्टिकरण) भद्रामें अग्नि लगाना, गिराना आदि दुष्टकर्म्म करे और कोई शुभकर्म नहीं करे ॥ ७ ॥ शकुनी करणमें औषध-सेवन, मंत्रसाधन, पौष्टिककर्म करे, चतुष्पदमें राज्यकर्म, गौ ब्राह्मण कर्म, पितृकर्म करे ॥ ८ ॥ नागमें सौभाग्यकर्म तथा दारुणकर्म और किंस्तुघ्नमें मंगलकर्म करे ॥ ९ ॥

अथ भद्रायां विशेषः ।

एकादश्यां चतुर्थ्यां च शुक्ले भद्रा परे दले ॥ अष्टम्यां पौर्णिमायां च भद्रा पूर्वदले स्मृता ॥ १० ॥ तृतीयायां दशम्यां च कृष्णपक्षे परे दले ॥ सप्तम्यां च चतुर्दश्यां भद्रा पूर्वदले भवेत् ॥ ११ ॥

अथ करणचक्रम्

शुक्लपक्ष तिथि ३०					कृष्णप० ति० ३०				नामानि	स्वामी
पूर्वदल		उत्तर दल		स्थिरादि संज्ञा	पूर्वदल		उत्तर दल		करण नाम	•
१	००	००	००	स्थिर	००	००	००	००	किंस्तुघ्न	वायु
५	१२	१९	१५	चर	४	११	७	००	बव	इंद्र
२	९	५	१२	चर	१	८	४	११	बालव	ब्रह्मा
६	१३	२	९	चर	५	१२	१	८	कौलव	मित्र
३	१०	६	१३	चर	२	९	५	१२	तैतिल	सूर्य
७	१४	३	१०	चर	६	१३	२	९	गर	भूमि
४	११	७	१४	चर	३	१०	६	१३	वणिज	लक्ष्मी
८	१५	४	११	चर	७	१४	३	१०	विष्टि	यम
०	०	०	०	स्थिर	०	०	०	१४	शकुनि	कलि
०	०	०	०	स्थिर	०	३०	०	००	चतुष्पद	रुद्र
०	०	०	०	स्थिर	०	०	०	३०	नाग	सर्प

अव भद्रामें विशेष लिखतेहैं—शुक्लपक्षकी एकादशी और चतुर्थीके दिन (परदल) परार्द्धमें भद्रा रहती है और शुपक्लक्षकी अष्टमी तथा पौर्णमासीके दिन पूर्वदलमें भद्रा होती है ॥ १० ॥ और कृष्ण·

पक्षकी तृतीया तथा दशमीके दिन परदलमें भद्रा होतीहै और कृष्णपक्षकी सप्तमी तथा चतुर्दशीके दिन पूर्वदलमें भद्रा होती है ॥ ११ ॥

अथ भद्राया अंगविभागस्तत्फलम् ।

पंच नाड्यो मुखे चैका कंठे तु हृदये दश ॥ पंच नाभौ कटौ षट् च विष्टेः पुच्छं घटित्रयम् ॥ १२ ॥ कार्यनाशो मृतिर्लक्ष्म्या नाशो बुद्धेर्हतिः कलिः ॥ ज्ञेयं क्रमात्फलं विष्टेरिदमंगसमुद्भवम् ॥ १३ ॥ कार्येऽत्यावश्यके विष्टेर्मुखमात्रं परित्यजेत् ॥

अब भद्रामें अंगविभाग और उसका फल लिखते हैं–पांच ५ घटी मुखमें, एक १ कंठमें, दश १० हृदयमें, पांच नाभिमें, छह६ कमरमें, तीन ३ पुच्छमें इस प्रकार तीस घडियोंके विभागसे भद्राके छह अंग जानलेने चाहिये ॥ १२ ॥ कार्यनाश, मृत्यु, लक्ष्मीनाश, बुद्धिनाश, कलह, जय इस प्रकार क्रमसे भद्राके छहों अंगोंका फल जानलेना चाहिये ॥ १३ ॥ अत्यावश्यक कार्यमें भद्राका मुखमात्र त्यागदेवे ॥

अथ भद्राया दिङ्मुखं च ।

शक्राष्टमुनितिथ्यब्धिदिगिंद्राग्निमिते तिथौ ॥ १४ ॥ प्रथमादिषुयामेषु दिक्षु पूर्वादितः क्रमात् ॥ विष्टेर्मुखं विजानीयाच्छुभं पृष्टेऽग्रतोऽशुभम् ॥ १५ ॥

अब भद्राके दिशामुख लिखते हैं–(शक्र)चतुर्दशी,(अष्ट)अष्टमी, (मुनि) सप्तमी (तिथि) पौर्णमासी, (अब्धि) चतुर्थी, (दिक्) दशमी,(ईश) एकादशी,(अग्नि) तृतीया इन आठ तिथियोंके प्रथमादि आठों प्रहरोंमें क्रमसे पूर्वादि आठ दिशाओंमें भद्राका मुख जानलेना चाहिये,जैसे चतुर्दशीके प्रथम प्रहरके आदिकी पांच ५ घडी

भद्राका मुख पूर्वदिशामें और अष्टमीको द्वितीय प्रहरके आदिकी पांच घडी भद्राका मुख आग्नेयदिशामें और सप्तमीको तृतीयप्रहरके आदिकी पांच घडी भद्राका मुख दक्षिणदिशामें होता है इसी प्रकारसे सब जानलेने चाहिये भद्राका मुख पीठमें शुभ और सामने में अशुभ होता है ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ भद्रापुच्छम् ।

चतुर्थ्याश्चाष्टमे यामे प्रथमे चाष्टमेहनि ॥ एकादश्यास्तथा षष्ठे पौर्णमास्यास्तृतीयके ॥ १६ ॥ प्रान्ते घटीत्रयं पुच्छं कृष्णपक्षे त्वथोच्यते ॥ सप्तमे स्यात्तृतीयायाः सप्तम्यास्तु द्वितीयके ॥ १७ ॥ दशम्याः पंचमे यामे चतुर्दश्याश्चतुर्थके ॥ विष्टिपुच्छे जयो युद्धे कार्यमन्यन्न शोभनम् ॥ १८ ॥

अब भद्राके पुच्छका वर्णन करते हैं-शुक्लपक्षकी चतुर्थीके आठवें प्रहरके और अष्टमीके प्रथम प्रहरके अन्तकी तीनतीन घडी भद्राकी पुच्छ संज्ञक होतीहैं. एकादशीके दिन छठे प्रहरके अन्तकी तीन घडी और पौर्णमासीके दिन तीसरे प्रहरके अन्तकी तीन घडी भद्राकी पुच्छ संज्ञक होती हैं॥१६॥और कृष्णपक्षकी तृतीयाके दिन सातवें प्रहरके अन्तकी तीन घडी और सप्तमीके दिन द्वितीय प्रहरके अन्तकी तीन घड़ी ॥१७॥ और दशमीके दिन पांचवें प्रहरके अन्तकी तीन घडी और चतुर्दशीके दिन चौथे प्रहरके अन्तकी तीन घड़ी भद्राकी पुच्छ होतीहैं. भद्राके पुच्छमें युद्ध करना शुभ होताहै अन्य कार्य शुभ नहीं होता ॥ १८ ॥

अथ भद्रास्वरूपम् ।

पुरा देवासुरे युद्धे शंभुकायाद्विनिर्गता ॥ दैत्यघ्नी रासभास्या च विष्टिर्लांगूलिनी त्रिपात् ॥ १९ ॥ सिंहग्रीवा शवा

रूढा सप्तहस्ता कृशोदरी ॥ अमरैः श्रवणप्रांते सा नियुक्ता शिवाज्ञया ॥ २० ॥ महोग्रा विकरालास्या पृथुदंष्ट्रा भयानका ॥ कार्यघ्नी भुवमायाति वह्निज्वालासमाकुला ॥ २१ ॥

अब भद्राका स्वरूप कहतेहैं—पहिले समयमें देव और दैत्योंके युद्धमें शिवजीके शरीरसे भद्रा निकलीथी जो कि, दैत्योंकी मारनेवाली गधेकासा मुखवाली पूँछवाली, तीन पैरोंवाली ॥ १९ ॥ सिंहकीसी ग्रीवावाली, मुर्दापर चढी, सात हाथ ऊंची, पतले पेटवाली; शिवजीकी आज्ञासे देवतोंने कानके समीपमें रखी हुई ॥ २० ॥ महाउग्ररूपिणी, विकराल मुखवाली, मोटी-मोटी डाढोंवाली, भय देनेवाली, कार्योंका नाश करनेवाली, अग्निकी लपटोंसे भरीहुई पृथ्वीपर आईथी ॥ २१ ॥

अथ भद्राया दोषापवादमाह ।

तिथेः पूर्वार्द्धजा रात्रौ दिने भद्रा परार्द्धजा ॥ भद्रादोषो न तत्र स्यात्कार्येत्यावश्यके सति ॥ २२ ॥ अजत्रयेऽलिगे च भद्रा स्वर्लोकचारिणी ॥ कन्याद्वये धनुर्युग्मे चंद्रे भद्रा रसातले ॥ २३ ॥ कुंभे मीने तथा, कर्के सिंहे चंद्रे भुवि स्थिता ॥ भूर्लोकस्था सदा त्याज्या स्वर्गपातालगा शुभा ॥ २४ ॥ वैधृतिर्व्यतिपातश्च विष्टिश्च भौमवासरः ॥ तथैव दुष्टताराः स्युर्मध्याह्नात्परतः शुभाः ॥ २५ ॥

अब भद्राके दोषका अपवाद लिखते हैं—तिथिके पूर्वार्धकी भद्रा रात्रिमें और परार्द्धकी भद्रा दिनमें आजावे तो आवश्यक कार्यमें भद्राका दोष नहीं होताहै ॥ २२ ॥ मेष, वृष, मिथुन, वृश्चिकके चंद्रमामें भद्रा स्वर्ग लोकमें और कन्या, तुला, धनु, मकरके चंद्रमासें भद्रा पाताल लोकमें ॥ २३ ॥ कुंभ, मीन, कर्क, सिंहके

चंद्रमामें भद्रा पृथ्वीपर रहती है. भूलोंककी भद्रा सदैव त्याज्य है और स्वर्ग और पाताल लोककी सदैव शुभहै ॥ २४ ॥ वैधृति योग, व्यतीपात, भद्रा, मंगलवार, दुष्टतारा ये सब मध्याह्नके पश्चात् शुभ होतेहैं ॥ २५ ॥

अथ भद्राविशेषे कस्यचिन्मते विशेषः ।

शुक्ले तु वृश्चिकी भद्रा कृष्णपक्षे भुजंगमा ॥ सा दिवा सर्पिणी रात्रौ वृश्चिकी चापरे जगुः ॥ २६ ॥ मुखं त्याज्यं तु सर्पिण्या वृश्चिक्याः पुच्छमेव च ॥ खराश्वाप्रसवे दुर्ग-पूजने दानकर्मणि ॥ दाहघातादिके भद्रा शस्ता नान्यत्र शोभना ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशङ्करसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्त-गणपतौ करणप्रकरणं षष्ठम् ॥ ६ ॥

अब भद्राके विषयमें किसी २ आचार्यका मत विशेष है सो

॥ अथ भद्राचक्रम् ॥

पक्ष	तिथि		घडी संख्या	स्थानफल	चन्द्रमा	लोकवास	फल
कृष्ण पक्ष	३ १०	इन तिथियोंके उत्तरार्धमें भद्रा रहती है सर्पिणी नाम.	३	पुच्छ विजय	मेष वृषभ मिथुन वृश्चिक	स्वर्गलोक	सौख्य
शुक्ल पक्ष	४ ११	इन तिथियोंके परार्द्धमें भद्रा रहती है वृश्चिकी नाम.	६	कटि बुद्धिनाश			
कृष्ण पक्ष	७ १४	इन तिथियोंके पूर्वार्द्धमें भद्रा रहती है सर्पिणी नाम.	५	नाभि बुद्धिनाश	कन्या तुला धन मकर	पाताल लोक	धन प्राप्ति
शुक्ल पक्ष	८ १५	इन तिथियोंके पूर्वार्द्धमें भद्रा रहती है वृश्चिकी नाम.	१०	हृदय लक्ष्मीनाश	कुंभ मीन कर्क सिंह	भूलोक	अशुभ
			११	कंठ मृत्यु			
			५	मुख कार्यनाश			

कहतेहैं-शुक्लपक्षकी भद्रा वृश्चिकी और कृष्णपक्षकी सर्पिणी कहाती है और कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि, दिनकी भद्रा सर्पिणी और रात्रिकी वृश्चिकी नामवाली है ॥ २६ ॥ सर्पिणी भद्राका मुख और वृश्चिकी भद्राका पुच्छ त्याग देना चाहिये, गधा और घोडाके जन्ममें, किलाके पूजनमें, दान कर्ममें, दाह घातादि कर्ममें भद्रा शुभ होतीहै अन्य कार्यमें शुभ नहीं है ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्त-गणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरास-दयालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं करण-प्रकरणं षष्टम् ॥ ६ ॥

अथ चंद्रतारावलप्रकरणम् ।

सपादर्क्षद्वयं भोगो मेषादीनामनुक्रमात् ॥ १ ॥

अब चंद्र और तारबल प्रकरण लिखतेहैं-मेषादि बारह राशियोंका भोग अनुक्रमसे सवादोदो नक्षत्रका होता है अर्थात् सवादो नक्षत्र भोगनेसे एक राशि पूरी हो जाती है ॥ १ ॥

अथ नक्षत्राणां प्रत्येकराशेर्भोगः ।

अश्विनी भरणी सर्वा कृत्तिकाप्रथमांघ्रिकम् ॥ मेषस्यात्कृत्तिकापादत्रितयं रोहिणी तथा ॥ २ ॥ वृषभो मृगपूर्वार्द्धं तदंत्यार्द्धं तथार्द्रभम् ॥ पादत्रयं पूनर्वस्वोः स राशिर्मिथुनाभिधः ॥ ३ ॥ तदंत्योंघ्रिस्तथा पुष्यो ह्याश्लेषा कर्कटाभिधः ॥ मघा पूर्वोत्तराद्योंघ्रिः सिंहस्तच्चरणत्रयम् ॥ ४ ॥

हस्तश्चित्राभपूर्वार्द्धं कन्या चित्रोत्तरं दलम् ॥ स्वातिभं च विशाखाद्यचरणत्रितयं तुला ॥ ५ ॥ तदंत्यांघ्र्यनुराधाख्यो ज्येष्ठाभं वृश्चिकः स्मृतः ॥ मूलं पूर्वोत्तराषाढाप्रागंघ्रिः कथितं धनुः ॥ ६ ॥ उत्तरांघ्रित्रयं कर्णो धनिष्ठाप्रथमं दलम् ॥ मकराख्यो धनिष्ठांत्यं दलं च शततारका ॥ ७ ॥ पूभापादत्रयं कुंभस्तदंत्यश्चरणस्तथा ॥ उभा च रेवती चैव मीनराशिः प्रकीर्तितः ॥ ८ ॥

अब नक्षत्रोंकी प्रत्येक राशिका भोग वर्णन करते हैं—समस्त अश्विनी और समस्त भरणी,कृत्तिकाका प्रथम चरण मेष राशि होती है ।कृतिकाके तीन चरण ॥२॥ समस्त रोहिणी, मृगशिरका पूर्वार्द्ध वृष राशि होतीहै। मृगशिरके पिछले दोचरण, समस्त आर्द्रा और पुनर्वसुके तीन चरण मिथुन राशि होती है ॥ ३ ॥ पुनर्वसुका (अन्त्य) चौथा चरण समस्त पुष्य और आश्लेषा कर्क राशि होतीहै। समस्त मघा और पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनीका पहिला चरण सिंह राशि होतीहै। उत्तराफाल्गुनीके पिछले तीन चरण ॥ ४ ॥ समस्त हस्त, चित्राके पहिले दो चरण कन्या राशि होतीहै। चित्राके पिछले दो चरण,समस्त स्वाति, विशाखाके पहिले. तीन चरण तुला राशि होतीहै ॥ ५ ॥ विशाखाका पिछला एक चरण, समस्त अनुराधा और ज्येष्ठा वृश्चिक राशि होतीहै। समस्त मूल और पूर्वाषाढा, उत्तराषाढाका पहिला एक चरण धनु राशि होतीहै ॥ ६ ॥ उत्तराषाढाके पिछले तीन चरण, समस्त श्रवण और धनिष्ठाके पहिले दो चरण मकर राशि होतीहै। धनिष्ठाके पिछले दो चरण, समस्त शतभिषा ॥ ७ ॥ पूर्वाभाद्रपदाके पहिले तीन चरण कुंभ राशि होतीहै पूर्वाभाद्रपदाका पिछला एक

चरण, समस्त उत्तराभाद्रपदा तथा समस्त रेवती मीन राशि होतीहै ॥ ८ ॥

अथावकहडादिचक्रानुसारेण नक्षत्रचरणानां वर्णाः ।

अश्विनी तु चुचेचोला लीलूलेलो भरण्यपि ॥ कृत्तिका स्यादईऊए रोहिण्योवाविबु स्मृता ॥ ९ ॥ वेवोकाकी मृगश्चार्द्रा कूघङछाः प्रकीर्तिताः ॥ केकोहाही पुनर्भं स्यात् हूहेहोडा च पुष्यभम् ॥ १० ॥ आश्लेषा तु डिडूडेडो मामीमूमे मघाह्वयम् ॥ मोटाटीटू तु पूर्वाख्या टेटोपपि च उत्तरा ॥ ११॥ प्रोक्तः पूषणठो हस्तः पेपोरारी तु चित्रका॥ रूरेरोता तथा स्वाती तीतुतेतो विशाखिका ॥ १२ ॥ अनुराधा नानिनूने ज्येष्ठा नोयायियू मता ॥ तथा येयोभभी मूलं पूर्वापाढा भुधाफढा ॥ १३ ॥ भेभोजाज्युत्तरापाढा जूजेजोखस्तथाभिजित् ॥ खीखूखेखो श्रवो ज्ञेयो गागीगूगे धनिष्ठिका ॥ १४ ॥ गोसासीसु शताख्यं तु पूभा सेसोददी मता ॥ उभा दूथझञ ज्ञेया देदोचाची तु रेवती ॥ १५ ॥

अब अवकहडादि चक्रानुसार नक्षत्र चरणोंका वर्णन करते हैं–चूचेचोला अश्विनी, लीलूलेलो भरणी, अईऊए कृत्तिका, ओवाविवू रोहिणी ॥ ९ ॥ विवोकाकि मृगशिरा, कूघङछ आर्द्रा, केकोहही पुनवसु, हूहेहोडा पुष्य ॥ १० ॥ डिडूडेडो आश्लेपा, मामीमूमे मघा, मोटाटीटू पूर्वाफाल्गुनी, टेटोपपि उत्तराफाल्गुनी ॥ ११ ॥ पूपणठ हस्त, पेपोरारि चित्रा, रूरेरोता स्वाति, तीतूतेतो विशाखा ॥ १२ ॥ नानिनूने अनुराधा, नोयायीयू ज्येष्ठा, येयोभभी मूल, भूधाफाढा पूर्वापाढा ॥ १३ ॥ भेभोजाजि उत्तरापाढा, जूजेजोख अभिजित, खीखुखेखो श्रवण, गगिगूगे धनिष्ठा ॥ १४ ॥

गोसासीसु शतभिषा, सेसोददी पूर्वाभाद्रपदा, दूथझञ उत्तराभाद्रपदा, देदोचाची रेवती ॥ १५ ॥

अथावकहडादिचक्रम्

चू चे चो ला	अश्विनी	हू हे हो डा	पुष्य	रू रे रो ता	स्वाती	जू जे जो खा	अभिजित्
ली लू ले लो	भरणी	डी डू डे डो	आश्लेषा	ती तू ते तो	विशाखा	खी खू खे खो	श्रवण
आ ई उ ए	कृत्तिका	मा मी मू मे	मघा	ना नी नू ने	अनुराधा	गा गी गू गे	धनिष्ठा
ओ वा वी वू	रोहिणी	मो टा टी टू	पूर्वाफाल्गुनी	नो या यी यू	ज्येष्ठा	गो सा सी सू	शतभिषा
वे वो का की	मृगशिरा	टे टो पा पी	उत्तराफाल्गु.	ये यो भा भी	मूल	से सो दा दी	पूर्वाभाद्रपदा
कू घ ङ छ	आर्द्रा	पू ष ण ठ	हस्त	भू ध फ ढ	पूर्वाषाढा	दू थ झ ञ	उत्तराभाद्रपदा
के को हा ही	पुनर्वसु	पे पो रा री	चित्रा	भे भो जा जी	उत्तराषाढा	दे दो चा ची	रेवती

अथ चंद्रस्य शुभाशुभफलम्।

स्वजन्मराशिमारभ्य चंद्रराशिस्थितं फलम्॥ १६॥ चंद्रे जन्मस्थिते पुष्टिर्द्वितीये नो सुखं भवेत्॥ तृतीये धनलाभश्च चतुर्थे रोगसंभवः॥ १७॥ पंचमे कार्यनाशश्च षष्ठे द्रव्यागमो महान्॥ सप्तमे भूपसम्मानस्त्वष्टमे मरणं ध्रुवम्॥१८॥ नवमे च भयं ज्ञेयं दशमे कार्यसंपदम्॥ एकादशेऽर्थलाभश्च द्वादशे विविधापदः॥ १९॥

अथ राशिचक्रम्.

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
चू	ई	क	ही	मा	टो	रा	तो	ये	भो	गू	दी
चे	उ	की	हू	मी	पा	री	ना	यो	जा	गे	दु
चो	ए	कु	हे	मू	पी	रू	नी	भ	जी	गो	थ
ला	ओ	घ	हो	मे	पू	रे	नू	भी	खू	सा	झ
ली	वा	ङ	डा	मो	ष	रो	ने	भू	खे	सी	ञ
लू	वी	छ	डी	टा	ण	ता	नो	ध	खो	सू	दे
ले	वू	के	डू	टी	ठ	ती	या	फ	गा	से	दो
लो	वे	को	डे	टू	पे	तू	यी	ढ	गी	सो	च
अ	वो	ह	डो	टे	पो	ते	यू	भे	खू खे खो गा गि	द	ची

अब चंद्रमाका शुभाशुभ फल लिखतेहैं—अपनी जन्मराशिसे लेकर चंद्रमाकी राशितकका फल कहतेहैं॥ १६॥ चंद्रमा जन्मराशिपर स्थित हो तो पुष्टि, दूसरा हो तो सुख नहीं होय, तीसरा हो तो धनलाभ, चौथा हो तो रोगोत्पत्ति॥ १७॥ पांचवां हो तो कार्यनाश, छठा हो तो महान् द्रव्यागम, सातवाँ हो तो राजसम्मान,

आठवां हो तो मरण ॥ १८ ॥ नौवां हो तो भय, दशवाँ हो तो कार्यसंपत्ति, ग्यारहवां हो तो द्रव्यलाभ, बारहवां हो तो अनेक आपत्ति होती हैं ॥ १९ ॥

अथ शुक्लपक्षे विशेषः ।

द्वितीयः पंचमश्चंद्रो नवमश्च शुभप्रदः ॥ शुक्लपक्षे विशेषोयं तुल्यमन्यत्तथोभयोः ॥ २० ॥ चंद्रस्यैव बलं शुक्ले न तु ताराप्रधानता ॥ रात्रौ कान्ते बलोपेते स्वातंत्र्यं न च योषितः ॥ २१ ॥ कृष्णपक्षे तु ताराया बलं ग्राह्यं सदा यतः ॥ क्षीणे वा प्रोषिते कांते गार्हस्थ्यं गेहिनी चरेत् ॥ २२ ॥

अब शुक्लपक्षमें विशेष कहते हैं-शुक्लपक्षमें इतना विशेष है कि, दूसरा, पाँचवां, नौवां चंद्रमा शुभदायक होताहै और इनसे अन्य चन्द्रमा दोनों पक्षोंमें समान फलदायक है ॥ २० ॥ शुक्लपक्षमें चंद्रमाकाही बल प्रधान होता है ताराका बल प्रधान नहीं होता क्यों कि, रात्रिमें पतिके बलवान् होनेसे स्त्रीकी स्वतंत्रता नहीं रहती ॥ २१ ॥ और कृष्णपक्षमें सदैव ताराका बल ग्रहण करना चाहिये क्यों कि जब पति क्षीण होताहै अथवा विदेशको चला जाता है तो घरका कार्य घरवाली स्त्रीही करती है ॥ २२ ॥

अथावश्यककृत्ये पक्षचंद्रबलम् ।

शुभः पक्षस्तु दुष्टेऽब्जे पक्षादौ कृष्णपक्षके ॥ शुक्ले तु शुभदे चंद्रे शुभः पक्षोऽतिसंकटे ॥ २३ ॥

अब आवश्यक कृत्यमें पक्षचंद्रमाका बल लिखते हैं-कृष्ण पक्षकी प्रतिपदाको दुष्ट चंद्रमा हो तो समस्त कृष्णपक्ष शुभ रहता है और शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको शुभ फलदायक चंद्रमा होय,

तो समस्त शुक्लपक्ष अतिसंकटमें भी शुभ रहता है (विवाह यात्रा, यज्ञादि संकट कहातेहैं) ॥ २३ ॥

अथ ताराबलम्।

जन्मभाद्दिनभं यावत्तारा ज्ञेया नवोद्धृता ॥ जन्मसंपद्विपत्क्षेमाः पापा सिद्धा वधा क्रमात् ॥ २४ ॥ मित्रातिमित्रसंज्ञा च नामतुल्यफलाश्च ताः ॥ द्विचतुःषड्नवाष्टम्य २। ४। ६। ९। ८ स्ताराश्चैवोत्तमा मताः ॥ २५ ॥ जन्माख्या मध्यमा ज्ञेया नेष्टास्त्वन्याः ३। ५। ७ प्रकीर्तिताः ॥२६॥

अब ताराका बल कहते हैं—जन्मनक्षत्रसे दिनके नक्षत्रतक गिनै नौका भाग दे जो शेष बचे सो तारा जाननी चाहिये. एक बचे तो जन्मतारा, २ दो बचे तो संपत्, ३ तीन बचे तो विपत्, ४ चार बचे तो क्षेम, ५ पांच बचे तो पाप, ६ छः बचे तो सिद्धि, ७ सात बचै तो वध, ॥ २४ ॥ ८ आठ बचे तो मित्र और कुछ न बचे तो अतिमित्र संज्ञक तारा होतीहै और जानना चाहिये कि, ताराओंकी तीन आवृत्ति होतीहैं और इन ताराओंका फल नामके तुल्य होता है। दूसरी, चौथी, छठी, आठवीं, नौवीं, तारा शुभ मानीहैं ॥ २५ ॥ जन्मतारा मध्यम है। और अन्य तारा ३। ५। ७ अशुभ हैं ॥ २६ ॥

अथावश्यके कृत्ये दुष्टताराणां त्याज्यांशाः।

तारां पूर्णां त्यजेदाद्यावर्तपंचत्रिसप्तिकाम् ॥ ५।३।७।३७। द्वितीये चैव तत्पादाँस्तुर्यादिमतृतीयकान् ॥ तृतीये तु शुभाः सर्वाः कार्येत्यावश्यके स्मृताः ॥ २७ ॥

अब आवश्यक कृत्यमें दुष्ट ताराओंका त्याज्यांश वर्णन करतेहैं— (आद्यावृत्तौ) प्रथमावृत्तिमें, पांचवीं, तीसरी, सातवीं, तारा संपूर्ण त्याज्य हैं और दूसरी आवृत्तिमें, पांचवीं ताराका चौथा चरण,

तीसरीका पहिला और सातवींका तीसरा चरण त्याज्य है । तीसरी आवृत्तिमें सब तारा शुभ होतेहैं । इसका विचार आवश्यक कार्यमें करना चाहिये ॥ २७ ॥

अथ दुष्टतारासु दानम् ।

सप्तम्यां तारकायां च दद्यात्स्वर्णं तिलानपि ॥ गुडं तृतीयतारायां पंचम्यां लवणं तथा ॥ दोषापनुत्तये तासां दद्याच्छाकं त्रिजन्मसु ॥ २८ ॥

अब दुष्ट ताराका दान लिखतेहैं-सातवीं तारामें सुवर्ण और तिल दान करै, तीसरी तारामें गुडदान करै, पांचवीं तारामें लवण दान करै, ताराओंका दोष दूर करनेके लिये तीसरी आवृत्तिकी जन्मतारामें शाक दान करै ॥ २८ ॥

अथ चंद्रावस्था ।

प्रवासोथ विनाशश्च मरणं जयहास्यके ॥ रतिः क्रीडा तथा सुप्ता भुक्ता चाथ ज्वराभिधा ॥ २९ ॥ कंपिता सुस्थिरावस्था द्वादशैता विधोः स्मृताः ॥ तासां मानं सपादैकादशनाडीमितं स्मृतम् ॥ ३० ॥ मेषादितः प्रवासाद्या नामतुल्यफलप्रदाः ॥ ३१ ॥

अब चंद्रमाकी अवस्थाओंका वर्णन करतेहैं-प्रवास१, विनाश २, मरण ३, जय ४, हास्य ५, रति ६, क्रीडा, सुप्ता ८, भुक्ता ९, ज्वरा १०, ॥ २९, ॥ कंपिता ११, सुस्थिरा १२ चंद्रमाकी ये बारह अवस्था कहीहैं ॥ ३० ॥ मेषादि राशियोंसे प्रवासादि अवस्था गिनी जानीहैं और नामके तुल्य फल देतीहैं ॥ ३१ ॥

अथ तासां क्रमस्योदाहरणम ।

मेषराशौ प्रवासाद्या नाशाद्या वृषभे विधौ ॥ मृताद्या मिथुने चैवं क्रमाद्द्वादशराशिषु ॥ ३२ ॥

अब अवस्थाओंके क्रमका उदाहरण लिखतेहैं—मेष राशिमें प्रवासादिक अवस्था गिनीजातीहैं, वृष राशिके चंद्रमामें नाशादि और मिथुनके चंद्रमामें मरणादि अवस्था गिनी जातीहैं, इसी प्रकार बारहों राशियोंमें क्रमसे जान लेना ॥ ३२ ॥

अथ मेषादिराशीनामवस्थाचक्रम् ।

राशयः	मेष	वृष	मिथु.	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चि.	धनु	मकर	कुंभ.	मीन
अवस्था	प्रवास	नाश	मरण	जय	हास्य	रति	क्रीडा	सुप्ता	भुक्ता	ज्वरा	कम्प	स्थिरा

अथ कार्यविशेषे ग्रहबलं सर्वचन्द्रबलं च ।

उद्वाहे चोत्सवे जीवः सूर्यो भूपालदर्शने ॥ संग्रामे धरणीपुत्रो विद्याभ्यासे बुधो बली ॥ ३३ ॥ यात्रायां भार्गवः प्रोक्तो दीक्षायां च शनैश्वरः ॥ चंद्रमाः सर्वकार्येषु प्रशस्तो गृह्यते बुधैः ॥ ३४ ॥

अब कार्यविशेषमें ग्रहबल और सबमें चंद्रबल कहतेहैं— विवाह और उत्सवमें बृहस्पतिका बल, राजदर्शनमें सूर्यका बल, संग्राममें मंगलका बल, विद्याभ्यासमें बुधका बल॥३३॥ यात्रामें शुक्रका बल, दीक्षामें शनैश्वरका बल और सर्व कार्योंमें चंद्रमाका बल प्रशस्त है ये पंडितोंसे ग्रहण किया जाता है ॥ ३४ ॥

अथ चंद्रबले कश्चन विशेषः ।

शुभश्चंद्रोप्यसत्पापात्सप्तमः पापयुक्तथा ॥ पापमध्यगतः क्षीणो नीचगः शत्रुवर्गगः ॥ ३५ ॥ अशुभोपि शुभश्चंद्रो गुरुणालोकितो युतः ॥ स्वक्षोंचस्थः शुभांशे वा स्वाधिमित्रांशके तथा ॥ ३६ ॥

अब चंद्रबलमें कुछ विशेष कहतेहैं-पापग्रहसे सातवें घरमें चंद्रमा होय अथवा पापग्रहके साथ होय अथवा पापग्रहोंके मध्यमें होय अथवा क्षीण होय, वा नीचका होय, शत्रुवर्गका होय तो शुभ चंद्रमाभी अशुभही होताहै ॥ ३५॥ यदि चंद्रमा बृहस्पतिसे दृष्ट वा युक्त हो अथवा अपनी कर्कराशिका हो अथवा उच्चका हो, शुभग्रहके नवांशामें हो अथवा अपने अधिमित्रके नवांशामें हो तो अशुभ चंद्रभी शुभ होजाताहै ॥ ३६ ॥

अथावश्यककृत्ये दुष्टतिथिवारर्क्षचंद्रतारादीनां दानम्।

तंडुलांश्च तिथौ दुष्टे वारे रत्नं सकांचनम् ॥ गामृक्षे कनकं योगे करणे धान्यमेव च ॥ ३७ ॥ शंखं रौप्ययुतं चंद्रे तारायां सैंधवं तथा॥ नाड्यां हेम नृपो दद्यात्कार्येत्यावश्यके सति ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ चंद्रतारावलप्रकरणं सप्तमम् ॥ ७ ॥

अब आवश्यक कृत्यमें दुष्ट तिथि, वार, नक्षत्र, चंद्रमा, तारादिका दान लिखतेहैं-दुष्ट तिथिमें चावलोंका दान करे, दुष्ट वारमें सुवर्णसहित रत्नका दान करे, दुष्ट नक्षत्रमें गौका, दुष्ट योगमें सुवर्णका, दुष्ट करणमें धान्यका ॥ ३७ ॥ दुष्ट चंद्रमामें शंख और चांदीका, दुष्ट तारामें सैंधवका, दुष्ट नाडीमें सुवर्णका दान करे. यदि आवश्यक कार्य होय तो राजा उक्त वस्तुओंका दान करे ॥ ३८ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं चंद्रतारावलप्रकरणं सप्तमम् ॥ ७ ॥

अथ शुभाऽशुभप्रकरणम् । तत्र तिथिवारोत्थ-शुभाऽशुभयोगाः ।

नंदा भृगौ बुधे भद्रा मंदे रिक्ता कुजे जया ॥ गुरौ पूर्णा खिले कार्ये सिद्धियोगाः शुभावहाः ॥ १ ॥ नंदा भद्रा तथा नंदा जया रिक्ताथ भद्रिका ॥ पूर्णाः सूर्यादिवारेषु वसिष्ठादिमतेऽशुभाः ॥ २ ॥

अब शुभाऽशुभप्रकरण लिखतेहैं–तहाँ प्रथम तिथिवारोत्थ शुभयोग कहतेहैं–शुक्रके दिन नंदा, बुधके दिन भद्रा, शनैश्चरको जया, बृहस्पतिके दिन पूर्णा तिथि होय तो सिद्धयोग होताहै, सर्व कार्योंमें शुभ कारक होताहै ॥ १ ॥ नंदा, भद्रा, नंदा, जया, रिक्ता, भद्रा, पूर्णा ये तिथि सूर्यादि वारोंमें क्रमसे होंय तो वशिष्ठादि ऋषियोंने अशुभ योग मानाहै ॥ २ ॥

अथ सिद्धियोगचक्रम् ।

सू	च	म	बु	बृ	शु	श	वारा
००	००	३।८।१३	२।७।१२	५।१०।१५	१।६।११	४।९।१४	नियमः सिद्धि
१।६।११	२।७।१२	१।६।११	३।८।१३	४।९।१४	२।७।१२	५।१०।१५	नियमःअशुभ

अथ नक्षत्रवारोत्था योगास्तत्रादावमृतसिद्धियोगाः ।

अर्के हस्तो मृगश्चंद्रे गुरौ पुष्योऽश्विनी कुजे ॥ अनुराधा बुधे शुक्रे रेवती रोहिणी शनौ ॥ ३ ॥ अमृतः सिद्धियोगः स्यात्सर्वकार्यार्थसिद्धिदः ॥ यथा सूर्यस्तमो हंति दोपसंघाँस्तथा त्वयम् ॥ ४ ॥

अब नक्षत्रवारोत्थ योग लिखतेहैं–तहां प्रथम अमृत सिद्धियोग कहतेहैं–रविवारको हस्त, चंद्रवारको मृगशिर, बृहस्पतिको पुष्य, मंगलको अश्विनी, बुधको अनुराधा, शुक्रको रेवती, शनिको

रोहिणी ॥ ३ ॥ नक्षत्र होय तो अमृतसिद्धियोग होताहै । यह सब कार्य और प्रयोजनोंकी सिद्धिका देनेवाला है जिस प्रकार सूर्य अंधकारको नाश करदेतेहैं इसीप्रकार यह अमृत सिद्धियोग दोषसमूहोंका नाश करदेताहै ॥ ४ ॥

अथ नक्षत्रवारोत्थसिद्धियोगचक्रम् ।

सू	चं	मं	बु	बृ	शु	श	वाराः
हस्त	मृग	अश्विनी	अनुराधा	पुष्य	रेवती	रोहिणी	नक्षत्राणि

अत्र कुत्रचिदमृतसिद्धियोगस्यापि त्याज्यत्वम् ।

पंचम्यादितिथौ त्याज्या हस्तार्काद्याः क्रमाच्छुभे ॥ योगा-श्चामृतसिद्ध्याख्या अन्ये सर्वार्थसाधकाः ॥ ५ ॥ उद्वाहे गुरुपुष्यं च प्रवेशे तु कुजाश्विनी ॥ त्यजेदेतत्प्रयत्नेन प्रयाणे शनिरोहिणीम् ॥ ६ ॥

कहीं अमृतसिद्धियोगभी त्याग दिया जाताहै-पंचम्यादि तिथि-योंमें क्रमसे पूर्वोक्त हस्त सूर्यादि जो अमृतसिद्धि नामक योग सो शुभकर्ममें त्याग देना चाहिये।अर्थात् पंचमीको हस्त युक्त रविवार, षष्ठीको मृगशिरयुक्त चंद्रवार, सप्तमीको अश्विनीयुक्त मंगलवार, अष्टमीको अनुराधायुक्त बुधवार, नवमीको पुष्ययुक्त बृहस्पतिवार ये अमृत सिद्धयोग शुभ कर्ममें त्याज्यहैं, इनसे अन्य जो अमृतसिद्धि योग सो सब कार्योंके सिद्धि करनेवाले होतेहैं ॥ ५ ॥ विवाहमें बृह-स्पति वारके दिन पुष्य, गृहप्रवेशमें मंगलके दिन अश्विनी, यात्रामें शनिवारके दिन रोहिणी इनको यत्न पूर्वक त्याग देवे ॥ ६ ॥

अथ दोषसंघहरो रवियोगः ।

सूर्यभाद्दशमे षष्ठे तुर्ये विंशे त्रयोदशे ॥ नवमे चंद्रनक्षत्रे रवियोगः शुभप्रदः ॥ अनेकदोषसंघानां ध्वंसकोय-मुदाहृतः ॥ ७ ॥

अब दोषसमूहका हरनेवाला रवियोग लिखतेहैं—सूर्यके नक्षत्रसे चंद्रमाका नक्षत्र दशवां, छठा, चौथा, वीसवां, तेरहवां, नौवां हो तो रवियोग होताहै यह शुभदायक है और अनेक दोषोंके समूहका नाशक कहाहै ॥ ७ ॥

अथानंदादियोगाः ।

आनंदः कालदंडोथ धूम्राऽक्षोथ प्रजापतिः ॥ सौम्यध्वांक्षध्वजाश्चैव श्रीवत्सो वज्रमुद्गरौ ॥८॥ छत्रं मित्रं क्रमेणैव मानसः पद्मलुंबकौ ॥ उत्पातमृत्युकाणाख्याः सिद्धिश्चैव शुभामृतौ ॥ ९ ॥ मुसलं च गदाख्यश्च मातंगो राक्षसश्चरः ॥ स्थिरः प्रवर्द्धमानश्च नामतुल्यफला अमी ॥ १० ॥ भानुवारेश्विनक्षत्रात्साभिजित्कैश्च सर्वभैः ॥ भवंति क्रमशो योगा अष्टाविंशतिसंख्यकाः ॥ ११ ॥ मृगादारभ्य रात्रीशे श्लेषातः कुजवासरे ॥ हस्ताद्बुधेनुराधाभाद्गुरुवारे तथैव च ॥ १२ ॥ उत्तरापाढतः शुक्रे शततारादितः शनौ ॥ १३ ॥

अथानंदादियोगाः—आनंद १, कालदंड २, धूम्राक्ष ३, प्रजापति ४, सौम्य ५, ध्वांक्ष ६, ध्वज ७, श्रीवत्स ८, वज्र ९ मुद्गर १० ॥ ८ ॥ छत्र ११, मित्र, १२ मानस १३, पद्म १४, लुंबक १५, उत्पात १६, मृत्यु १७, काण १८, सिद्धि १९, शुभ २०, अमृत २१ ॥ ९ ॥ मुसल २२, गद २३, मातंग २४, राक्षस २५, चर २६, स्थिर २७, प्रवर्द्धमान २८ ये अट्ठाईस योग अपने २ नामके तुल्य फल देनेवाले हैं ॥ १० ॥ रविवारके दिन अश्विनी नक्षत्रसे लेकर वर्त्तमान नक्षत्रतक गिनकर जो संख्या होय सो क्रमसे आनंदादि योग जाने और अभिजित् सहित सब नक्षत्र गिननेसे २८ अट्ठाईस आनंदादि योग होतेहैं ॥ ११ ॥ चंद्रवारके दिन मृगशिरासे, मंगलके दिन आश्लेषासे, बुधके दिन हस्तसे, बृहस्पतिके दिन अनुराधासे॥ १२॥

शुक्रके दिन उत्तराषाढासे, शनिके दिन शतभिषासे गिनकर आनंदादि योग जानै ॥ १३ ॥

अथोत्पातादियोगचतुष्कस्यैव ज्ञानम् ।

क्रमाच्चतुष्टये भानां विशाखातो रवेर्दिने ॥ पूर्वाषाढाभिधाच्चंद्रे धनिष्ठातः कुजेहनि ॥ १४ ॥ रेवत्याश्च बुधे ज्ञेया रोहिणीतो बृहस्पतौ ॥ पुष्याच्छुक्रे तथा मंदे उफातश्च भवंत्यमी ॥ १५ ॥ योगाश्चत्वार उत्पातमृत्युकाणाख्यसिद्धयः ॥ १६ ॥

अब उत्पातादि चारोंयोगोंको जाननेके लिये लिखतेहैं—रविवारके दिन विशाखासे चार नक्षत्र अर्थात् विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल होय तो क्रमसे उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि ये चार योग होते हैं. इसी प्रकार चंद्रवारके दिन पूर्वाषाढ़ासे, मंगलके दिन धनिष्ठासे ॥ १४ ॥ बुधके दिन रेवतीसे, बृहस्पतिके दिन रोहिणीसे, शुक्रके दिन पुष्यसे, शनिके दिन उत्तराफाल्गुनीसे ॥ १५ ॥ चारचार नक्षत्र गिननेसे उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि ये चार योग क्रमसे होतेहैं. जैसा कि, नीचे चक्रमें स्पष्ट लिखाहै ॥ १६ ॥

अथोत्पातादियोगचतुष्टयचक्रम् ।

सू.	चं.	मं	बु.	बृ.	शु.	श	वाराः
विशाखा	पूर्वाषाढ	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उत्तराफा.	उत्पात
अनुरा०	उत्तराषा	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिर	आश्लेषा	हस्त	मृत्यु
ज्येष्ठा	अभिजि	पूर्वाभाद्र	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	काण
मूल	श्रवण	उत्तराभा	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा	स्वाति	सिद्धि

अथ दुर्योगानां त्याज्यघटिकाः ।

ध्वांक्षमुद्गरवज्राणां घटीपंचकमादिषु ॥ काणमौसलयोर्द्वंद्वे चतस्रः पद्मलुंबयोः ॥ १७ ॥ एका धूम्रे गदे सप्त चरे तिस्रो

घटीस्त्यजेत् ॥ त्यजेत्सर्वाञ्छुभे मृत्युकालोत्पाताख्यराक्षसान्॥ १८॥

अब दुष्ट योगोंकी त्याज्य घड़ियोंको कहतेहैं—ध्वांक्ष, मुद्गर, वज्र इन योगोंके आदिकी पांच२ घडी, और काण मौसलके आदिकी दो२ घडी, पद्म और लुंबकके आदिकी चार २ घडी ॥ १७॥ धूम्रके आदिकी एक घडी, गदके आदिकी सात ७ घटी शुभकार्यमें त्याग देवे ॥ १८॥

अथ वारनक्षत्रोद्भवः सिद्धियोगः।

मूलमर्के श्रवश्चंद्रे भौमे चोत्तरभाद्रपात्॥ कृत्तिका बुधवारे तु गुरुवारे पुनर्वसू ॥ पूफा शुक्रे शनौ स्वाती सिद्धियोग उदाहृतः ॥ १९॥

अब वारनक्षत्रसे उत्पन्न सिद्धियोगोंको लिखतेहैं—रविवारको मूल, चंद्रवारको श्रवण, मङ्गलवारको उत्तराभाद्रपद, बुधवारको कृत्तिका, बृहस्पतिवारको पुनर्वसु, शुक्रको पूर्वाफाल्गुनी, शनिको स्वाति नक्षत्र होय तो सिद्धियोग होताहै ॥ १९॥

अथ तिथिवारोत्था दुष्टयोगाः।

द्वादश्यर्के विधौ षष्ठी भौमे सप्ताष्टमी बुधे॥ दश शुक्रे शनौ रुद्रा गुरौ नव हुताशनः ॥ २०॥ द्वादश्यर्के विधौ रुद्रा भौमे पंच बुधेत्रयः॥ गुरौ षष्ठ्यष्टमी शुक्रे दग्धाख्यो नवमी शनौ ॥२१॥ चतुर्थ्यर्के विधौ षष्ठी द्वितीया ज्ञेष्टमी गुरौ॥ नव शुक्रे विषाख्या च सप्तमी कुजमंदयोः ॥ २२॥ शनौ षष्ठी भृगौ सप्ताऽष्टमी जीवे बुधे नव॥ कुजे दश विधौ रुद्राः क्रकचो द्वादशी रवौ॥ २३॥ प्रतिपज्ज्ञे रवौ सप्त संवर्त्तो योग ईरितः ॥ दग्धादींस्तिथिवारोत्थांस्त्यजेद्योगाञ्छुभे सदा ॥ २४॥

अब तिथिवारोंसे उत्पन्न दुष्टयोगको लिखतेहैं—रविवारकी द्वादशी चंद्रवारकी षष्ठी,मंगलवारकी सप्तमी,बुधवारकी अष्टमी,शुक्रकी दशमी, शनैश्चरकी एकादशी, बृहस्पतिकी नवमी तिथि होय तो हुताशन योग होताहै ॥ २० ॥ रविवारके दिन द्वादशी, चंद्रवारके दिन एकादशी, मंगलके दिन पंचमी, बुधके दिन तृतीया, बृहस्पतिके दिन षष्ठी, शुक्रके दिन अष्टमी शनिके दिन नवमी, तिथि होय तो दग्धनाम योग होताहै ॥ २१ ॥ रविकी चतुर्थी, चंद्रवारकी षष्ठी, बुधकी द्वितीया, बृहस्पतिकी अष्टमी, शुक्रकी नवमी, मंगल और शनैश्चरकी सप्तमी तिथि होय तो विषनामक योग होता है ॥ २२ ॥ शनैश्चरकी षष्ठी, शुक्रकी सप्तमी, बृहस्पतिकी अष्टमी, बुधकी नवमी, मंगलकी दशमी, चंद्रवारकी एकादशी, रविवारकी द्वादशी तिथि होय तो क्रकच योग होताहै ॥ २३ ॥ बुधवारको प्रतिपदा, रविवारको सप्तमी तिथि होय तो संवर्त्त योग होताहै. तिथिवारोंसे उत्पन्न हुए दग्धादि योग सदैव शुभ कार्यमें त्याग देवे ॥ २४ ॥

अथ तिथिवारोत्थयोगचक्रम् ।

योगनामानि	सू.	चं	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	वाराः
हुताशनयोगः	१२	६	७	८	९	१०	११	तिथयः
दग्धयोगः	१२	११	५	३	६	८	९	तिथयः
विषयोगः	४	६	७	२	८	९	७	तिथयः
क्रकचयोगः	१२	११	१०	९	८	७	६	तिथयः
संवर्त्तयोगः	७	००	००	१	००	००	००	तिथयः

अथ तिथिनक्षत्रोत्पन्नः सांत्ययययोगः ।

द्वितीयामनुराधायां मघायां पंचमीतिथिम् ॥ एकादशीं च रोहिण्यां तृतीयां त्र्युत्तरे त्यजेत् ॥ २५ ॥ नवमीं कृत्ति-

कार्यां च चित्रास्वात्योस्त्रयोदशीम् ॥ त्यजेत्पष्ठीं च रोहिण्यां पूर्वाभाद्रपदेऽष्टमीम् ॥ २६ ॥

अब तिथि नक्षत्रोंसे उत्पन्न त्याज्ययोगोंको लिखतेहैं—अनुराधा नक्षत्रमें द्वितीया तिथि, मघामें पंचमी तिथि, रोहिणीमें एकादशी, तीनों उत्तराओंमें तृतीया ॥ २५ ॥ कृत्तिकामें नवमी चित्रा और स्वातिमें त्रयोदशी, रोहिणीमें षष्ठी,पूर्वाभाद्रपदमें अष्टमी, तिथि होय तो शुभकार्य न करै ॥ २६ ॥

अथ चक्रम् ।

नक्ष-त्राणि	अनुराधा	मघा	रोहिणी	तीनों उत्तरा	कृत्ति	स्वाति	चित्रा	रोहि.	पूर्वाभाद्र
तिथय	२	५	११	३	९	१३	१३	६	८

अथ नक्षत्रवारोत्थाऽष्टयोगाः, तत्रादौ यमघण्टयोगः ।

अर्के मघा विशाखेंदौ ज्ञे मूलं कृत्तिका गुरौ ॥ आर्द्रा भौमे शनौ हस्तो रोहिणी भृगुवासरे ॥ २७ ॥ यमघंटाख्ययोगोयं सर्वकार्यविनाशकः ॥ २८ ॥

अब नक्षत्रवारोंसे उत्पन्न और योगोंको लिखतेहैं—तिसके आदिमें यमघंटकयोगको लिखतेहैं—रविवारके दिन मघा, चंद्रवारके दिन विशाखा, बुधके दिन मूल, बृहस्पतिके दिन कृत्तिका, मंगलके दिन आर्द्रा, शनिके दिन हस्त, शुक्रके दिन रोहिणी ॥२७॥ नक्षत्र होय तो यमघंट नाम योग होताहै। सब कार्योंका विनाश करनेवाला है ॥ २८ ॥

अथ मृत्युयोगः ।

अनुराधा रवौ सोमे उत्तराषाढसंज्ञका ॥ बुधेऽश्विनी मृगो जीवे शुक्रेऽश्लेषा शनौ करः ॥ भौमे शतभिषक् चायं मृत्युयोगोऽर्थनाशकः ॥ २९ ॥

अब मृत्युयोग लिखतेहैं- रविके दिन अनुराधा, सोमवारके दिन उत्तराषाढा, बुधके दिन अश्विनी, बृहस्पतिके दिन मृगशिरा, शुक्रके दिन आश्लेषा, शनिके दिन हस्त, मंगलके दिन शतभिषा नक्षत्र होय तो मृत्यु योग होताहै । सर्व कार्योंका नाश करनेवाला है ॥ २९ ॥

अथ दग्धयोगः ।

भरण्यर्के विधौ चित्रा जीवे चोत्तरफाल्गुनी॥भौमे चैवोत्तरापाढा धनिष्ठा बुधवासरे ॥ ३० ॥ शुक्रे ज्येष्ठांत्यभं मंदे त्यजेदेतद्धि दग्धभम् ॥ ३१ ॥

अब दग्ध योग लिखतेहैं-रविके दिन भरणी, चंद्रवारके दिन चित्रा, बृहस्पतिके दिन उत्तराफाल्गुनी, मंगलके दिन उत्तराषाढा, बुधके दिन धनिष्ठा ॥ ३० ॥ शुक्रके दिन ज्येष्ठा, शनिके दिन रेवती नक्षत्र होय तो यह दग्ध योग होताहै ॥ ३१ ॥

अथ यमघंटकादियोगत्रयचक्रम् ।

वाराः	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु	श.
यमघंट.	मघा	विशाखा	आर्द्रा	मूल	कृत्तिका	रोहिणी	हस्त
मृत्युयोग	अनुराधा	उत्तरा-षाढा	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त
दग्धयोग	भरणी	चित्रा	उत्तरा-षाढा	धनिष्ठा	उत्तरा फाल्गुनी	ज्येष्ठा	रेवती

अथ शुभे त्याज्यं त्रिविधं गंडांतम् ।

नक्षत्रतिथिराशीनां गंडांतं त्रिविधं त्यजेत् ॥ नवपंचचतुर्थ्यांत्ये द्व्येकार्द्धघटिका २ । १ । ०-३० मितम् ॥ तावन्मितं ततोऽग्र्याणामादावपि परित्यजेत् ॥ ३२ ॥

अब शुभकार्योंमें त्याज्य त्रिविध गंडान्त लिखतेहैं—नक्षत्र,तिथि, राशि इनका तीन प्रकारका गंडान्त होताहै। अर्थात् नक्षत्रगण्डान्त, तिथिगण्डान्त, लग्नगण्डान्त. नवमी, पंचमी, चतुर्थी इन तिथियोंके अंतकी क्रमसे दो २, एक १, आधी घडी गडान्त होतीहैं। अर्थात् नवमीके अन्तकी२,पंचमीके अन्तकी१,चतुर्थीके अन्तकी आधी घडी गंडान्त संज्ञक त्याज्य है। इसी प्रकार आगेके नक्षत्र और लग्नोंके आदिकी गंडान्तघडी त्याज्यहैं ॥ ३२ ॥

अथ नक्षत्रगण्डान्तम्।

ज्येष्ठामूलर्क्षयोः संधौ रेवत्यश्विभयोस्तथा ॥ आश्लेषामघ-
योरन्तराले नाडीचतुष्टयम् ॥ ३३ ॥

अब नक्षत्रगण्डान्त दिखातेहैं—ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रकी संधिमें चार घडी गण्डान्त होतीहैं, अर्थात् ज्येष्ठाके अन्तकी दो घडी और मूलके आदिकी दो घडी इसी प्रकार रेवतीके अन्तकी और अश्विनीके आदिकी दो दो घडी और आश्लेषाके अन्तकी दो घडी और मघाके आदिकी दो घडी गंडान्त होतीहैं ॥ ३३ ॥

प्रकारान्तरेण तिथिगण्डान्तम्।

अंतरे पंचमीषष्ठ्योः पूर्णिमाद्याह्वयोरपि॥दशम्येकादशीसंधौ
गंडांतं घटिकाद्वयम् ॥ ३४ ॥

अब अन्य प्रकारसेभी तिथिगंडान्त कहतेहैं—पंचमी और षष्ठीकी संधिमें दो घडी गंडान्त होतीहैं, अर्थात् पंचमीके अन्तकी एक घडी और षष्ठीके आदिकी एकघडी तथा दशमीके अन्तकी और एकादशीके आदिकी एक २ घडी गंडान्त होतीहै ॥ ३४ ॥

अथ लग्नगण्डान्तम्।

कर्कसिंहाख्ययोर्मीनमेषयोरंतरे तयोः ॥ वृश्चिकाख्यधनुः-
संधौ लग्नस्यैकं घटीमितम् ॥ ३५ ॥

अथ लग्नगंडान्त कहतेहैं-कर्क और सिंह लग्नके मध्यकी एक घडी गंडान्त होतीहैं,अर्थात् कर्कके अन्तकी आधी घडी और सिंहके आदिकी आधी घडी गंडान्त होतीहैं । इसी प्रकार मीनके अन्तकी और मेषके आदिकी आधी २, वृश्चिकके अन्तकी और धनुके आदिकी आधी २ घडी गंडान्त होतीहैं ॥ ३५ ॥

अथार्द्धयामाः ।

अर्द्धयामाः परित्याज्या वेदसप्तद्विपंचमाः ॥ अष्टत्रिषष्ठ-
संख्याकाः क्रमतो रविवासरात् ४।७।२।५।८।३।६ ॥३६॥

अथ अर्द्धयाम लिखते हैं-रविवारादि सातवारोंके क्रमसे ४।७।२।५।८।३।६ ॥ इन प्रहरोंका आधा २ प्रहर शुभकर्ममें त्याज्यहै ॥ ३६ ॥

अथार्द्धयामचक्रम् ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	वाराः
४	७	२	५	८	३	६	यामाः
३।।।	३।।।	३।।।	३।।।	२।।।	२।।।	१।।।	अर्द्धयाम घटिकाः

अथ कुलिककंटककालवेलायमघण्टाख्या-स्त्याज्यमुहूर्ताः ।

मन्वर्कदशनागर्त्तुवेदनेत्रमिताः १४।१२।१०।८।६।४।२
क्षणाः ॥ कुलिकास्ते रवेर्वारात्क्रमतः कंटका बुधात् ॥३७॥
गुरोस्ते कालवेलाख्याः शुक्रात्ते यमघण्टकाः ॥ त्यजे-
देतान्छुभे कार्ये निशि व्येकान्मुहूर्त्तकान् ॥ ३८ ॥

अथ कुलिक कंटककालवेला यमघंट सम्बन्धी त्याज्य मुहूर्त्त लिखतेहैं-रविवारादि सप्तवारोंके क्रमसे १४ । १२ । १० । ८ । ६।४ । २

ये मुहूर्त्त कुलिक संज्ञक होतेहैं और बुधवारके क्रमसे येही उक्त मुहूर्त्त कन्टक संज्ञक होतेहैं ॥३७॥ और बृहस्पति वारके क्रमसे कालवेला संज्ञक होतेहैं और शुक्रवारके क्रमसे उक्त मुहूर्त्त यमघंट संज्ञक होतेहैं, ये दिनके मुहूर्त्त कहेहैं और इन्हीं मुहूर्त्तोंमेंसे एक घटा देनेसे रात्रिके मुहूर्त्त होतेहैं सो नीचे चक्रमें स्पष्ट लिखतेहैं—शुभ कार्यमें ये सब मुहूर्त्त त्याग देने चाहिये ॥ ३८ ॥

अथ दिने कुलिकादिचक्रम् ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	वाराः
१४	१२	१०	८	६	४	२	कुलिक
६	४	२	१४	१२	१०	८	कंटक
८	६	४	२	१४	१२	१०	कालवेला
१०	८	६	४	२	१४	१२	यमघंटक

रात्रौ कुलिकादिचक्रम् ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	वाराः
१३	११	९	७	५	३	१	कुलिक
५	३	१	१३	११	९	७	कंटक
७	५	३	१	१३	११	९	कालवेला
९	७	५	३	१	१३	११	यमघंटक

अथ दुष्टक्षणः ।

क्षणश्चतुर्दशः सूर्ये नवमद्वादशौ ९ । १२ विधौ ॥ सप्तम्यो निशि भौमेऽह्नि तुर्य ४ श्चाथ बुधेऽष्टमः ८ ॥ ३९ ॥ षष्ठद्वादशकौ ६ । १२ जीवे चतुर्थनवमौ ४ । ९ भृगौ ॥ शनौ चाद्यद्वितीयौ च १ । २ त्याज्या दुष्टक्षणा इमे॥४०॥

अब दुष्टक्षण लिखतेहैं—रविवारको चौदहवां मुहूर्त, सोमवारको नौवां और बारहवां मुहूर्त, और मंगलवारको रात्रिमें सातवां तथा चौथा मुहूर्त्त, बुधको आठवां ॥ ३९ ॥ बृहस्पतिको छठा और बारहवां, शुक्रको चौथा और नौवां, शनिको पहिला और दूसरा मुहूर्त्त दुष्टक्षण होताहै ये सब शुभकर्म्ममें त्याज्यहैं ॥ ४० ॥

अथैतेषामेव सुबोधार्थं पुना रव्यादिषु त्याज्यक्षणा लिख्यंते ।

रवौ षड्दशसप्ताष्टमनुसंख्यमुहूर्त्तकाः ६ । १० । ७ । ८ । १४॥
चंद्रेब्धिवसुषड्विश्वेमनुखेटार्कसंमिताः ४ । ८ । ६ । १३ ।

१४ । ९।१२ ॥ ४१ ॥ भौमे द्वित्रिचतुःषष्ठदशसंख्या क्षणाः २ । ३ । ४ । ६ । १० स्मृताः ॥ बुधे वेदाश्विवस्वंकमनुदिक्प्रमिताः ४ । २ । ८ । ९ । १४ । १० क्षणाः ॥४२॥ जीवे भूपाश्वितिथ्यांगमनुसूर्यमिताश्च १६ । २ । १५ । ६ । १४ । १२ ते ॥ शुक्रे पंचांकषड्वेददिगर्कमनु ५ । ९। ६ । ४ । १० । १२।१४ संमिताः ॥ ४३ ॥ मंदे भूनेत्ररुद्राष्ट १ । २ । ११ । ८ षोडशांशाः क्षणा इमे ॥ ४४ ॥

अब इसके सुबोधार्थ फिर रव्यादि वारमें त्याज्य क्षण लिखतेहैं–रविवारको छठा, दशवां, सातवां, आठवां, चौदहवां मुहूर्त्त त्याज्य हैं और सोमवारको चौथा, आठवां, छठा, तेरहवां, चौदहवां, नौवाँ वारहवां मुहूर्त्त त्याज्यहैं । शुक्रवारके दिन पांचवां, नौवां, छठा, चौथा, दशवां, वारहवां, चौदहवां, मुहूर्त्त त्याज्यहैं ॥ ४३ ॥ शनिके दिन पहिला, दूसरा, ग्यारहवां आठवां मुहूर्त्त त्याज्यहैं । जानना चाहिये कि, दिन मानका शोलहवां भाग मुहूर्त्त कहाताहै ॥ ४४ ॥

सू	च	म	बु	गु	शु	श	वार
६	४	२	४	१६	५	१	त्याज्यमुहूर्ताः
१०	८	३	२	२	९	२	
७	६	४	८	१५	६	११	
८	१३	६	९	६	४	८	
१४	१४	१०	१४	१४	१०		
	९		१०	१२	१२		
	१२				१४		

अथ यमघंटकुलिकक्षणयोर्देशविशेषे त्याज्यत्वम् ।

विंध्यहेमागयोर्मध्ये मगधे यमघंटकः॥ अंगांध्रे मत्स्यदेशे वा दोषकृन्नेतरत्र सः॥४५॥ काश्मीरे कुलिकस्त्याज्यस्त्वर्द्धयामस्तु सर्वतः ॥ ४६ ॥

अब यमघंटक, कुलिक और यामार्धका देश विशेषसे त्याज्यत्व लिखतेहैं–विंध्याचल और हिमालय पर्वतका मध्यदेश तथा मगधदेश, अंगदेश, आंध्रदेश, मत्स्यदेश इन सब देशोंमें यमघंटक योग दोषकारक होताहै । अन्य देशोंमें नहीं ॥ ४५ ॥

काश्मीरदेशमें कुलिकयोग त्याज्यहै और अर्द्धयाम दोष सब देशोंमें त्याज्यहै ॥ ४६ ॥

अथ संक्रांतौ त्याज्यकालः।

अयने विषुवे त्याज्यं पूर्वं मध्यं परं दिनम् ॥ शेषसंक्रमणे २। ५। ८। ११। ३। ६। ९। १२ पूर्वं पश्चात्षोडशनाडिकाः ॥ ४७ ॥

अब संक्रान्तियोंमें त्याज्य काल लिखतेहैं-दक्षिणायन अर्थात् कर्ककी संक्राति लगनेसे पहिला एकदिन और मकरकी संक्राति लगनेका वर्त्तमान दिन और (विषुव) अर्थात् तुला मेषकी संक्रांतिसे पिछलादिन शुभकार्यमें त्याज्यहै और शेष संक्रांतियोंमें पहिली और पिछली सोलह २ घडी त्याज्य हैं ॥ ४७ ॥

अथ तिथिक्षयवृद्धिदोषः।

तिथीनां त्रितयं वार एकः स्पृशति यत्र वै ॥ अवमं तद्दिनं ज्ञेयं शुभकर्मसु संत्यजेत् ॥ ४८ ॥ वाराणां त्रितयं यत्र तिथिरेका स्पृशेद्यदा॥ त्रिद्युःस्पृक् चेति सा ख्याता न ग्राह्या मंगलादिषु ॥ ४९ ॥

अब तिथिक्षयवृद्धिदोष लिखतेहैं-जब कभी तीन तिथियोंको एकही वार स्पर्श करे तो वह दिन (अवम) तिथिक्षय जानना चाहिये ये शुभकर्ममें त्याज्य है ॥ ४८ ॥ और जबकभी तीन वारोंका एकही तिथि स्पर्श करे तो वह तिथि त्र्यहःस्पृक् कहातीहै।अर्थात् तिथिकी वृद्धि होजातीहै। मंगलादि कार्योंमें नहीं ग्रहण करनी चाहिये ॥ ४९ ॥

अथ मासशून्यतिथिनक्षत्रलग्नानि, अत्र दर्शांता मासा ग्राह्याः-

चैत्रेऽष्टमीनवम्यौ ८। ९ च वैशाखे द्वादशी तिथिः १२॥ श्रावणे द्वितृतीये २। ३। च भाद्रे भूनेत्रसंमिते १। २।

॥ ५० ॥ दशम्येकादशी १० । ११ । त्वीपे सप्तनागौ ७ । ८ । च मार्गके ॥ चतुर्थी पंचमी ४ । ५ पौषे शून्यास्ताः पक्षयोर्द्वयोः ॥ ५१ ॥ कार्त्तिके पंचमी ५ कृष्णा तथा शुक्ला चतुर्दशी १४॥आषाढे बहुला षष्ठी ६ शुक्लपक्षे तु सप्तमी ७ ॥ ५२ ॥ चतुर्थी ४ फाल्गुनी कृष्णा शुक्लपक्षे तृतीयका ३ ॥ ज्येष्ठे चतुर्दशी कृष्णा १४ शुक्ले चैव त्रयोदशी १३ ॥ ५३ ॥ कृष्णा तु पंचमी ५ माघे षष्ठी ६ शुक्ले प्रकीर्तिता ॥ ५४ ॥

अब मासशून्य तिथि नक्षत्र लग्न लिखतेहैं—यहाँ दर्शान्त मास ग्रहण करना, चैत्रके महीनेमें अष्टमी और नवमी, वैशाखमें द्वादशी, श्रावणमें द्वितीया और तृतीया, भाद्रपदमें प्रतिपदा और द्वितीया ॥ ५० ॥ आश्विनमें दशमी और एकादशी, मार्गशीर्षमें सप्तमी और अष्टमी, पौषमें चतुर्थी और पंचमी ये तिथि दोनों पक्षोंमें शून्य होतीहैं ॥ ५१ ॥ कार्त्तिकके कृष्णपक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी चतुर्दशी, आषाढके कृष्णपक्षकी षष्ठी और शुक्लपक्षकी सप्तमी ॥ ५२ ॥ फाल्गुनके कृष्णपक्षकी चतुर्थी और शुक्लपक्षकी तृतीया और ज्येष्ठ कृष्णपक्षकी चतुर्दशी, शुक्लपक्षकी त्रयोदशी ॥ ५३ ॥ माघके कृष्णपक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी षष्ठी ये शून्य तिथिहैं ॥ ५४ ॥

अथ मासशून्यनक्षत्राणि ।

अश्विनी रोहिणी चैत्रे चित्रा स्वाती च माधवे ॥ ज्येष्ठे पुष्योत्तराषाढे धनिष्ठाभगभे शुचौ ॥ ५५ ॥ श्रावणे श्रवणोपाख्ये पूर्वाभाद्रपदाश्विने ॥ रेवतीशतभं भाद्रे कार्त्तिके कृत्तिका मघा ॥ ५६ ॥ मार्गे चित्रा विशाखा च पौषे त्वार्द्राश्विनीकराः ॥ फाल्गुने भरणी ज्येष्ठा माघे मूलं

श्रवस्तथा ॥ एतानि मासशून्यानि भानि प्रोक्तानि कोविदैः ॥ ५७ ॥

अब मासशून्य नक्षत्र लिखतेहैं—चैत्रके महीनेमें अश्विनी और रोहिणी, वैशाखमें चित्रा और स्वाति, ज्येष्ठमें पुष्य और उत्तराषाढा, आषाढमें धनिष्ठा और रोहिणी ॥ ५५ ॥ श्रावणमें श्रवण और उत्तराषाढा, आश्विनमें पूर्वाभाद्रपदा, भाद्रपदमें रेवती और शतभिषा, कार्तिकमें कृत्तिका और मघा ॥ ५६ ॥ मार्गशीर्षमें चित्रा और विशाखा, पौषमें आर्द्रा, अश्विनी, हस्त. फाल्गुनमें भरणी, ज्येष्ठा, माघमें मूल, श्रवण पंडितोंने ये नक्षत्र महीनोंमें शून्य कहेहैं ॥५७॥

अथ मासशून्यराशयः।

कुंभो मीनो वृषश्चैव मिथुनं मेषकन्यके॥ वृश्चिकोऽथ तुला धन्वी कर्कों मकरसिंहकौ ॥ ५८ ॥ चैत्रादिषु क्रमादेते कथिताः शून्यराशयः ॥ ५९ ॥

अब मासशून्यराशि लिखतेहैं—कुंभ, मीन, वृष, मिथुन, मेष, कन्या, वृश्चिक, तुला, धनु,कर्क, मकर, सिंह ये राशि क्रमसे चैत्रादि महीनोंमें शून्य कहीहैं ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

अथ मासशून्यतिथिनक्षत्रलग्नचक्रम्।

चैत्र	वैशा.	ज्येष्ठ	आषा.	श्राव	भाद्र.	आश्वि.	कार्ति.	मार्ग.	पौष	माघ	फाल्गु.	मासाः
८।९	१२	००	००	२।३	१।२	१०।११	००	०७।८	४।५	००	००	उभयपक्ष-शून्यतिथयः
००	००	१४	६	००	००	००	५	००	००	५	४	कृष्णपक्ष-शून्यतिथयः
००	००	१३	७	००	००	००	१४	००	००	६	३	शुक्लपक्ष-शून्यतिथयः
अश्विनी रोहिणी	चित्रा स्वाति	पुष्य उ. षाढा.	धनिष्ठा रोहिणी	श्रवण उ. षाढा.	रेवती शतभि.	पूर्वाभा-द्रपद	कृत्तिका मघा	चित्रा विशाखा	आ. अ. हस्त	मूल श्रवण	भरणी ज्येष्ठा	नक्षत्राणि शून्यानि
कुंभ	मीन	वृष	मिथुन	मेष	कन्या	वृश्चिक	तुला	धनु	कर्क	मकर	सिंह	राशयः शून्याः

अथौजतिथिषु शून्यलग्नानि ।

आद्ये तिथौ तुलानक्रौ तृतीये मृगसिंहकौ ॥ पंचम्यां मिथुनं कन्या सप्तम्यां कर्कटो धनुः ॥ ६० ॥ एकादश्यां धनुर्मीनौ नवम्यां सिंहकर्कटौ ॥ वृषो मीनस्त्रयोदश्यां शून्यलग्नमिदं त्यजेत् ॥ ६१ ॥

अब विषमतिथिमें शून्यलग्न लिखतेहैं—प्रतिपदामें तुला, मकर; तृतीयामें मकर, सिंह; पंचमी तिथिमें मिथुन, कन्या;सप्तमीमें कर्क; धनु ॥६०॥ एकादशीमें धनु, मीन; नवमीमें सिंह, कर्क; त्रयोदशीमें वृष, मीन ये लग्न शून्य होतीहैं। इन्हें शुभकार्यमें त्यागदेवे ॥ ६१ ॥

अथौजतिथिषु शून्यलग्नानां चक्रम् ।

१	३	५	७	९	११	१३	ओजतिथयः
तुला मकर	मकर सिंह	मिथुन कन्या	कर्क धनु	सिंह कर्क	धनु मीन	वृष मीन	शून्यलग्नानि

अथ शून्यतिथ्यादीनां देशविशेषत्याज्यत्वमाह ।

नक्षत्रतिथिलग्नानि मासशून्यानि यानि च ॥ मध्यदेशे त्यजेत्तानि शुभे नान्यत्र कुत्रचित् ॥ ६२ ॥

अब शून्यतिथ्यादिकोंको देश विशेष करके त्याज्यत्व लिखतेहैं—मासोंमें नक्षत्रशून्य, तिथिशून्य, लग्नशून्य, राशिशून्य ये सब शुभकार्यमें मध्यदेशमें त्याज्य हैं और अन्यत्र कहीं नहीं त्याज्य हैं॥६२॥

अथावश्यके योगानामपवादाः ।

तिथिवारोद्भवान्योगान्दुष्टाख्यांश्च भवारजान् ॥ तिथिभोत्थाँस्त्रितयजान्हूणे वंगे खशे त्यजेत् ॥ ६३ ॥ नान्यदेशे

निषिद्धास्ते गुणवत्तिथिभादिषु ॥ उत्पातमृत्युकाणाख्यान्न-
क्षोदग्धाख्यकालकान् ॥ ६४ ॥ क्रकचं यमघंटादीञ्छस्ते
चंद्रे शुभाञ्जगुः॥मध्याह्नोत्तरमित्येके यामोत्तरमथापरे॥६५॥
यात्रातिरिक्तकार्येन्ये लग्नशुद्धया शुभाञ्जगुः ॥ कुयोगः
सिद्धियोगश्च यदि स्यातामुभावपि ॥ ६६ ॥ सुयोगो हंति
दुर्योगं कार्यसिद्धये शुभावहः ॥ ६७ ॥

अब आवश्यक कृत्यमें योगोंके अपवाद लिखतेहैं—तिथिवारो-त्पन्न और नक्षत्रवारोत्पन्न तथा तिथिनक्षत्रोत्पन्न ये तीन प्रकारके दुष्टयोग हूण और वंग तथा खश देशमें त्याज्य हैं ॥ ६३ ॥ यदि तिथिनक्षत्रादिक सब गुणयुक्त हों तो वह तीनों दुष्टयोग अन्य देशमें निषिद्ध नहीं हैं और यदि चंद्रमा शुभ होय तो उत्पात, मृत्यु, काण, दग्ध, काल, क्रकच, यमघंटक आदि कुयोग शुभ हो जातेहैं ऐसा पंडितोंने कहाहै और कोई आचार्योंने ऐसा माना है कि, मध्याह्नके पश्चात् उक्त कुयोग शुभ हो जातेहैं. तथा कोई अन्य आचार्योंने ऐसा कहाहै कि, प्रहरके पश्चात् शुभ होतेहैं ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ और कुछ पंडितोंने ऐसा कहाहै कि, यात्रा विना अन्य कार्योंमें लग्न शुद्ध होय तो कुयोग शुभ होतेहैं और कुयोग तथा सिद्धियोग दोनों एकही समयं होंय तो सिद्धियोग कुयोगोंका नाश करदेताहै और कार्यकी सिद्धि कराताहै ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

अथ शुभाऽशुभकार्ये त्रिपुष्करयमलयोगौ ।

भद्रातिथौ शनीज्यारवारे चेद्विपमांघ्रिभम्॥ तदा त्रिपुष्करो
योगो यमलो युग्मपादभे ॥ ६८ ॥

अब शुभाऽशुभ कार्यमें त्रिपुष्कर और यमलयोग लिखते हैं—यदि भद्रातिथि २।७।१२में और शनि, बृहस्पति, मंगलवारमें (विष-

मांघ्रि नक्षत्र) कृत्तिका, पूनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा, उत्तरापाढा, पूर्वाभाद्रपदा होंय तो त्रिपुष्कर नाम योग होता है और इन्ही तिथियोंमें (युग्मपाद नक्षत्र) मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा होंय तो यमल योग होताहै ॥ ६८ ॥

अथ सुबोधार्थं रव्यादिवारेषु शुभाशुभयोगाः ।

रवौ हस्तोऽश्विनी मूलं धनिष्ठा चोत्तरात्रयम् ॥ पुष्यस्तथाष्टमी चैव सिद्धियोगा इमे स्मृताः ॥ ६९ ॥ विशाखा भरणी सूर्ये मघा ज्येष्ठाऽनुराधिका ॥ सप्तमी द्वादशी तद्वद्विरुद्धा स्याच्चतुर्दशी ॥ ७० ॥ चंद्रे च श्रवणः पुष्योऽनुराधा रोहिणी मृगः ॥ दशमी नवमी वापि सिद्धियोगः शुभावहः ॥ ७१ ॥ पूर्वापाढोत्तरापाढा स्वातीचित्रे विशाखिका ॥ सोमे चैकादशी षष्ठी वर्जनीया त्रयोदशी ॥ ७२ ॥ भौमेऽश्लेषाऽश्विनी मूलं मृगशीर्षस्त्रयोदशी ॥ तृतीया चाष्टमी षष्ठी सिद्धिदा कीर्तिता बुधैः ॥ ७३ ॥ उत्तरापाढभं चार्द्रा धनिष्ठात्रितयं तथा ॥ द्वितीया दशमी भौमे वर्जनीया प्रयत्नतः ॥ ७४ ॥ बुधे पुष्योऽनुराधा च कृत्तिका रोहिणी मृगः ॥ द्वितीया सप्तमी चैव द्वादशी च शुभप्रदा ॥ ७५ ॥ धनिष्ठा भरणी मूलमश्विनी रेवती बुधे ॥ तृतीया प्रतिपद्वापि विरुद्धा नवमी स्मृता ॥ ७६ ॥ गुरौ पुष्योऽनुराधा च विशाखाऽश्विपुनर्वसु ॥ रेवती दशमी चैव पूर्णिमा शुभदा स्मृता ॥ ७७ ॥ जीवे षष्ठ्यष्टमी नेष्टा चतुर्थी शततारका ॥ कृत्तिकादिचतुष्कं च तथा चोत्तरफाल्गुनी ॥ ७८ ॥ शुक्रे पूपाऽश्विनी चित्रा रेवती च पुनर्वसू ॥ श्रवणः प्रतिपत्षष्ठी सिद्धा चैकादशी तथा ॥ ७९ ॥ भार्गवे रोहिणी ज्येष्ठा पुष्याऽश्लेपा मघा तथा ॥ द्वितीया सप्तमी चैव विरुद्धा सर्वकर्मसु ॥ ८० ॥ शनौ स्वाती श्रवः पूर्वाफाल्गुनी रोहिणी

मृगः ॥ चतुर्थी नवमी वापि तिथिः सिद्धा चतुर्दशी ॥८१॥ पूर्वाषाढोत्तराषाढा चित्रा हस्तोऽथ रेवती ॥ उत्तराफाल्गुनी षष्ठी निषिद्धा सप्तमी शनौ ॥ ८२ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त-गणपतौ शुभाशुभप्रकरणमष्टमम् ॥ ८ ॥

अब सुबोधार्थ रव्यादि वारोंमें शुभाऽशुभयोगलिखतेहैं-रविवारके दिन हस्त, अश्विनी, मूल, धनिष्ठा, तीनों उत्तरा, पुष्य ये नक्षत्र और अष्टमी तिथि होय तो ये सब मिलकर सिद्धियोग होताहै ॥ ६९ ॥ रविवारके दिन विशाखा, भरणी, मघा, ज्येष्ठा, अनुराधा ये नक्षत्र और सप्तमी, द्वादशी चतुर्दशी ये तिथि होय तो विरुद्धयोग होताहै ॥७०॥ चंद्रवारके दिन श्रवण, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, मृगशिरा ये नक्षत्र और दशमी, नवमी तिथि होय तो शुभकारक सिद्धियोग होता है ॥ ७१ ॥ सोमवारके दिन पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, स्वाति, चित्रा, विशाखा नक्षत्र और एकादशी, षष्ठी, त्रयोदशी तिथि होय तो वर्जित करने योग्य दुष्टयोग होता है ॥ ७२ ॥ मंगलके दिन आश्लेषा, अश्विनी, मूल, मृगशीर्ष नक्षत्र, त्रयोदशी, तृतीया, अष्टमी, षष्ठी तिथि होय तो पंडितोंने सिद्धिदायक योग कहाहै ॥ ७३ ॥ मंगलके दिन उत्तराषाढा, आर्द्रा, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र, तथा द्वितीया, दशमी तिथि होय तो यत्नसे वर्जित करने योग्य दुष्टयोग होता है ॥ ७४ ॥ बुधके दिन पुष्य, अनुराधा, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा ये नक्षत्र और द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी तिथि होय तो शुभदायक होताहै ॥ ७५ ॥ बुधके दिन धनिष्ठा, भरणी, मूल, अश्विनी, रेवती नक्षत्र और तृतीया, प्रतिपदा, नवमी तिथि होय तो विरुद्ध योग होताहै ॥ ७६ ॥ बृहस्पतिके दिन पुष्य, अनुराधा, विशाखा, अश्विनी, पुनर्वसु, रेवती नक्षत्र. दशमी, पूर्णिमा

तिथि होय तो शुभदायक योग होताहै ॥ ७७ ॥ बृहस्पतिके दिन षष्ठी, अष्टमी, चतुर्थी तिथि और शतभिषा, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र होय तो नेष्टयोग होताहै ॥ ७८ ॥ शुक्रके दिन पूर्वाषाढा, अश्विनी, चित्रा, रेवती पुनर्वसु, श्रवण नक्षत्र और प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी तिथि होय तो सिद्धियोग होताहै ॥ ७९ ॥ शुक्रके दिन रोहिणी, ज्येष्ठा, पुष्य, आश्लेषा, मघा नक्षत्र और द्वितीया, सप्तमी तिथि होय तो विरुद्ध-योग होताहै सब कार्योंमें त्याज्य है ॥ ८० ॥ शनिके दिन स्वाती, श्रवण, पूर्वाफाल्गुनी, रोहिणी, मृगशिरा नक्षत्र और चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी तिथि होय तो सिद्धियोग होताहै ॥ ८१ ॥ शनिके दिन पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, चित्रा, हस्त, रेवती, उत्तरा-फाल्गुनी नक्षत्र और षष्ठी, सप्तमी तिथि होय तो निषिद्धयोग होताहै ॥ ८२ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्त-गणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितराम-दयालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलङ्कृतं शुभा-ऽशुभप्रकरणमष्टमम् ॥ ८ ॥

अथ त्याज्यप्रकरणम् ।

तिथिनक्षत्रवाराणां दुष्टयोगान्परस्परम् ॥ व्यतीपातादिदु-र्योगान्विष्टिदर्शार्कसंक्रमान् ॥ १ ॥ जन्मर्क्षतिथिमासांश्च तिथ्य-र्द्धित्त्ववमं दिनम् ॥ पापैर्मुक्तं युतं भोग्यं विद्धं लत्तितमृक्षकम् ॥ ॥ २ ॥ उत्पातग्रहभिन्नं च खग्रासे ग्रहणर्क्षकम् ॥ षण्मा-सावधि मासेषु त्रिषु ग्रासेऽर्द्धके सति ॥ ३ ॥ मासमेकं तु

तुर्यांशे ग्रस्ते चंद्रे च भास्करे ॥ त्र्यहं प्राग्ग्रहणात्सप्तदिनानि ग्रहणोत्तरम् ॥ ४ ॥ ग्रस्तास्ते तु त्र्यहं पूर्वं त्र्यहं ग्रस्तोदये परम् ॥ पूर्णे ग्रासे त्विदं ज्ञेयं खंडग्रासेऽनुपाततः ॥ ५ ॥ गंडांतं त्रिविधं दुष्टं क्षीणेंदुःपापकर्त्तरी ॥ पापहोरां खले वारे यामार्द्धं कुलिकादिकान्॥६॥ चंद्रपापयुतं लग्नमंशं वा कुनवांशकम् ॥ जन्मराशिविलग्नाभ्यामष्टमं लग्नमेव च ॥ ७ ॥ दिनमेकं तु मासान्ते नक्षत्रांते घटीद्वयम् ॥ घटीमेकां तु तिथ्यंते लग्नांते घटिकार्द्धकम् ॥ ८ ॥ विषाख्या नाडिका भानां पातमेकार्गलं तथा ॥ दग्धाहं क्रांतिसाम्यं च लग्नेशं रिपुमृत्युगम् ॥९॥ दिनार्द्धे च रजन्यर्द्धे सन्धौ च पलविंशतिम्॥ मलमासं कवीज्यास्तं बालवार्द्धक्यमेव च ॥१०॥ जन्मेशास्तं मनोभंगं सूतकं मातुरार्त्तवम् ॥ रोगोत्पाताद्यरिष्टानि शुभेष्वेतानि संत्यजेत् ॥ ११ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशङ्करसूरिसूनुगणपतिकृतमुहूर्त्तगणपतौ त्याज्यप्रकरणं नवमम् ॥ ९ ॥

अब त्याज्य प्रकरण लिखतेहैं–तिथि, वार, नक्षत्रोंसे परस्पर उत्पन्न हुए दुष्टयोग और व्यतीपातादि दुर्योग, भद्रा, अमावास्या, सूर्यकी संक्रान्ति ॥ १ ॥ जन्मनक्षत्र,जन्मतिथि,जन्ममास,तिथिवृद्धि, तिथिक्षय और पापग्रहोंसे भोग कर त्यागाहुआ नक्षत्र और पापग्रहोंसे युक्त नक्षत्र और पापग्रहोंके भोग्य नक्षत्र अर्थात् जिस नक्षत्रपर पापग्रह जानेवाले हैं, पापग्रहोंसे विद्ध नक्षत्र, पापग्रहोंकी लत्तायुक्त नक्षत्र ॥ २ ॥ उत्पातका नक्षत्र, ग्रहसे भेदन कियाहुआ नक्षत्र त्याज्य होताहै । खग्रासमें ग्रहणका नक्षत्र छह महीनेतक और अर्द्धग्रास ग्रहण होय तो ग्रहणका नक्षत्र तीन महीनेतक ॥३॥ और चंद्रमा तथा सूर्यका चौथाई ग्रहण होय तो ग्रहणका नक्षत्र एक महीनेतक त्याज्य होताहै । ग्रहणसे पहिले तीन दिन और

ग्रहणसे पिछले सात दिन ॥ ४ ॥ ग्रस्तास्तमें पहिले तीन दिन और ग्रस्तोदयमें पिछले तीन दिन और पूर्णग्रासमें पहिले और पिछले तीन तीन दिन और इसी तीन दिनके हिसाबसे त्रैराशिक करके खंडग्रासमें भी पहिले और पिछले दिन त्याज्य-जानलेने चाहिये ॥ ५ ॥ तीन प्रकारका गण्डान्त अर्थात् तिथि-गण्डान्त, नक्षत्रगण्डान्त, लग्नगण्डान्त और दोषयुक्त तथा क्षीण चंद्रमा, पापकर्त्तरी दोष, पापग्रहके वारमें पापग्रहकी होरा, यामार्द्ध, कुलिक ॥ ६ ॥ चंद्रमा और पापग्रहोंसे युक्त लग्न, पापग्रहोंसे युक्त नवांशा, पापग्रहोंका नवांशा और जन्मलग्न तथा जन्मराशिसे आठवीं लग्न ॥ ७ ॥ मासान्तमें एक दिन, नक्षत्रान्तमें दो घडी, तिथ्यन्तमें एक घडी, लग्नान्तमें आधी घडी ॥ ८ ॥ नक्षत्रोंकी विष-घडी ये सब त्याज्यहैं। पातदोष, एकार्गल, दग्धतिथि, क्रान्ति-साम्य, छठे आठवें स्थानमें स्थित लग्नेश ॥९॥ मध्याह्न और अर्द्ध-रात्रिकी संधिमें वीस २ पल, मलमास, शुक्रऔर बृहस्पतिका अस्त, तथा शुक्र बृहस्पतिका बालत्व और वृद्धत्व ये सब त्याज्यहैं॥१०॥जन्मे-शका अस्त, मनका भंग, सूतक, माताका ऋतुसमय, रोग उत्पा-तादिक अरिष्ट, ये सब दोष शुभकार्यमें त्यागदेवे ॥ ११ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवेणीरामात्मजपंडि-तरामदयालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं त्याज्यप्रकरणं नवमम् ॥ ९ ॥

अथ लग्नप्रकरणम् ।

मेषो वृषोऽथ मिथुनं कर्कः सिंहोऽथ कन्यका ॥ तुलाथ वृश्चिको धन्वी मकरः कुंभमीनकौ ॥ १ ॥ राशयस्तु

क्रमादेते पुंस्त्रियौ क्रूरसौम्यकौ ॥ ज्ञेयश्चरस्थिरश्चैव द्विस्वभावः क्रमात्पुनः ॥ २ ॥ पृष्टोदया धनुर्मेषो मकरो वृषकर्कटौ ॥ उभयोदयवान्मीनस्ततोन्ये मस्तकोदयाः ॥ ३ ॥ मेषो वृषो धनुर्युग्मं कर्कनक्रौ निशाबलाः ॥ दिवाबलास्तु तेभ्योन्ये स्वस्वकाले बलाधिकाः ॥ ४ ॥

अब लग्न प्रकरण लिखतेहैं—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, मीन ये बारह राशि हैं। ये सब राशि क्रमसे पुरुष और स्त्री, क्रूर और सौम्यहैं। तथा क्रमसे चर, स्थिर, द्विस्वभावभी जाननी ॥ १ ॥ २ ॥ धनु, मेष, वृष, मकर, कर्क, ये राशि पृष्टोदय हैं। मीनराशि उभयोदय है। इनसे अन्य राशि अर्थात् मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ मस्तकोदय हैं ॥ ३ ॥ मेष, वृष, धनु, मिथुन, कर्क, मकर ये राशि रात्रिबलीहैं। इनसे अन्य राशि दिवाबली हैं। अपने २ कालमें अधिक बली होतीहैं ॥ ४ ॥

अथ राशिस्वामिनः।

मेषवृश्चिकयोर्भौमो बुधो मिथुनकन्ययोः ॥ तुलावृषभयोः शुक्रः कर्कटस्य तु चंद्रमाः ॥ ५ ॥ सिंहस्याधिपतिः सूर्यः शनिर्मकरकुंभयोः ॥ धनुर्मीनभयोर्जीवश्चैते राशीश्वराः स्मृताः ॥ ६ ॥

अब राशिस्वामीको लिखतेहैं—मेष, वृश्चिकका स्वामी मंगलहै. मिथुन, कन्याका स्वामी बुध. तुला, वृषका शुक्र. कर्कका चंद्रमा ॥ ५ ॥ सिंहका सूर्य. मकर, कुंभका शनि. धनु, मीनका बृहस्पति स्वामी है ये राशीश्वर कहेहैं ॥ ६ ॥

अथ राशिसंज्ञाचक्रम् ।

मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	राशयः
पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पुंस्त्री संज्ञा
क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूरसौम्यसं.
चर	स्थिर	द्विस्व भाव	चर	स्थिर	द्विस्व भाव	चर	स्थिर	द्विस्व भाव	चर	स्थिर	द्विस्व भाव	चरादि संज्ञा
पृष्ठोदय	पृष्ठोदय	मस्तको दय	पृष्ठो दय	मस्तको दय	मस्तको दय	मस्तको दय	मस्तको दय	पृष्ठोदय	पृष्ठोदय	मस्तको दय	उभयो दय	पृष्ठोद यादिसं.
रात्रि बली	रात्रि बली	रात्रि बली	रात्रि बली	दिवा बली	दिवा बली	दिवा बली	दिवा बली	रात्रि बली	रात्रि बली	दिवा बली	दिवा बली	रात्रिदिनबलसं.
मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ	स्वामिनः

अथ ग्रहोच्चानि ।

मेषो वृषस्तथा नक्रः कन्याकर्कझषास्तुला ॥ सूर्यादीनां क्रमादेते कथिता उच्चराशयः ॥ ७ ॥ परमोच्चांशकाः सूर्याद्दिशो १० रामा ३ गजाश्विनः २८ ॥ बाणचंद्राः १५ शराः ५ शैलदशः २७ खाश्वि २० मिताः क्रमात् ॥ ८ ॥

अब ग्रहोच्च लिखतेहैं—मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन, तुला ये राशि क्रमसे सूर्यादि ग्रहोंके उच्च कहीहैं ॥ ७ ॥ दश १०, तीन ३, अट्ठाईस २८, पंद्रह १५, पांच ५, सत्ताईस २७, वीस २० ये क्रमसे सूर्यादि ग्रहोंके परमोच्चांश हैं ॥ ८ ॥

अथ नीचम् ।

सूर्यादीनां जगुर्नीचं स्वोच्चभाद्यच्च सप्तमम् ॥ राहोस्तु कन्यका गेहं मिथुनं स्वोच्चभं स्मृतम् ॥ ९ ॥

अब नीच लिखतेहैं—सूर्यादि ग्रहोंकी उच्चराशिसे सातवीं २ राशि नीच कहीहै और राहुकी कन्या राशि गृह और मिथुन उच्च कहीहै ॥ ९ ॥

अथ मूलत्रिकोणम्।

सिंहो वृषभमेषौ च कन्याधन्वितुलाघटाः ॥ रव्यादीनां क्रमान्मूलत्रिकोणा राशयः स्मृताः ॥ १० ॥

अब मूलत्रिकोण लिखतेहैं—सिंह, वृष, मेष, कन्या, धन, तुला, कुंभ ये राशि क्रमसे सूर्यादि ग्रहोंके त्रिकोण कहीहैं ॥ १० ॥

अथ ग्रहाणामुच्चादिसंज्ञाचक्रम्।

अथ रव्यादिग्रहाः	सू	चं	मं	बु	बृ	शु	श	रा
उच्चराशयः	१	२	१०	६	४	१२	७	३
नीचराशयः	७	८	४	१२	१०	६	१	९
परमोच्चांशाः	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	०
मूलत्रिकोणराशयः	५	२	१	६	९	७	११	०

अथ मेषादिलग्नकृत्यानि।

आकरो धातुकर्माणि भूमिपालाभिषेचनम् ॥ विरोधः साहसं चैतन्मेषलग्ने प्रसिद्ध्यति ॥ ११ ॥ क्षेत्रकूपादिकं दानं कुमारीवरणं ध्रुवम् ॥ गृहप्रवेश उद्वाहः सिद्ध्येदेतद्वृषोदये ॥ १२ ॥ कलाविभूषाविज्ञानं यत्कार्यं वृषभोदये ॥ तत्सर्वं मिथुने प्रोक्तं होराशास्त्रविचक्षणैः ॥ १३ ॥ वारिबंधनमोक्षं च पौष्टिकं चरकर्म च ॥ वापीकूपतडागादि कर्कटे कथितं बुधैः ॥ १४ ॥ राजसेवा कृषिः पण्यं परयोगो वणिक्पथः ॥ सिंहे सिद्ध्यति तत्सर्वं मेषलग्नोदितं च यत् ॥ १५ ॥ भूषणं शिल्पविज्ञानमौषधं पौष्टिकं तथा ॥ चरं स्थिरं तु यत्किंचित्कन्यालग्ने प्रसिद्ध्यति ॥ १६ ॥ वाणिज्यं कर्षणं सेवा यात्रा भांडतुलाश्रयम् ॥ तुलालग्ने समाख्यातं मुनि-

भिस्तत्त्ववेदिभिः ॥ १७ ॥ राजसेवाभिषेकौ च साहसं दारुणं तथा ॥ उग्रचौर्यं स्थिरं कर्म कर्त्तव्यं तत्सरीसृपे ॥ १८ ॥ उद्वाहपौष्टिकं यात्रा वाहनाग्निपरिग्रहौ ॥ धनुर्लग्ने चरं कर्म कथितं पूर्वसूरिभिः ॥ १९ ॥ दासीचतुष्पदोष्ट्रादेरंभसो बंधमोक्षणम् ॥ तथा क्षेत्राश्रयं यात्रा पयसो मकरोदये ॥ २० ॥ बीजस्य संग्रहं नौकाचर्या वारिगमादिकम् ॥ तथा ध्रुवं चरं कार्यं कुंभे कुर्यात्सदा सुधीः ॥ २१ ॥ उद्वाहश्चाभिषेकश्च विद्यालंकरणादिकम् ॥ पशुकर्माबुकार्यं च मीनलग्ने प्रकीर्तितम् ॥ २२ ॥ मेषादिष्वेषु शुद्धेषु यथोक्तं कर्म सिद्ध्यति ॥ पापेक्षितयुतेष्वेषु क्रूरं सिद्ध्येन्न चेतरम् ॥ २३ ॥

अब मेषादि लग्नकृत्य लिखतेहैं–खानका खोदना, धातुका कर्म करना, राजाका अभिषेक करना, विरोध करना, साहसकर्म करना ये सब मेषलग्नमें सिद्ध होतेहैं ॥ ११ ॥ क्षेत्र और कूपादिका बनाना, दानकरना, कुमारीका वरण, गृहप्रवेश, विवाह ये सब कार्य वृषलग्नमें सिद्ध होतेहैं ॥ १२ ॥ कला और आभूषणोंका विज्ञान जानना और जो वृष लग्नमें कहेहैं वे सब कार्य मिथुन लग्नमें सिद्ध होतेहैं ऐसा होराशास्त्रके जाननेवाले पंडितोंने कहा है ॥१३॥ जलका बांधना, छोडना, पौष्टिककर्म, चरकर्म, बापी कूप तडागादि बनाना पंडितोंने कर्क लग्नमें शुभ कहाहै ॥ १४ ॥ राजाकी सेवा, खेती, दुकान, परके साथ मिलना, बाजार लगाना और जो मेष लग्नमें कहेहैं वे सब कार्य सिंह लग्नमें सिद्ध होतेहैं ॥ १५ ॥ भूषणपहिरना, कारीगरी सीखना, औषध खाना, पौष्टिककर्म, चर और स्थिरकर्म ये सब कन्यालग्नमें सिद्ध होतेहैं ॥ १६ ॥ व्यापार करना, खेती करना, सेवा, यात्रा, वर्तन और तराजूका कार्य ये सब तुला लग्नमें सिद्ध होतेहैं । ऐसा तत्त्ववेदी

मुनिनोंने कहा है ॥ १७ ॥ राजसेवा, राज्याभिषेक, साहस और दारुणकर्म्म, उग्रकर्म, चोरीकर्म, स्थिरकर्म ये सब वृश्चिक लग्नमें करने चाहिये ॥ १८ ॥ विवाह, पौष्टिककर्म, यात्रा, वाहनकर्म, (अग्नि परिग्रह) अग्नि धारण करना, चरकर्म धनु लग्नमें शुभ होतेहैं ऐसा पूर्वाचार्योंने कहाहै ॥ १९ ॥ दासी और ऊंट आदि चौपायें खरीदना, जलका बांधना छोडना, क्षेत्र स्थानका बनाना, यात्रा, दूधका कर्म ये सब मकर लग्नमें सिद्ध होतेहैं ॥२०॥ बीज इकट्ठा करना, नौका चलाना, जलयात्रा करना, ध्रुव और चर कार्य करना, ये सब कुंभ लग्नमें करै ॥२१॥ विवाह, राज्याभिषेक, विद्या सीखना, आभूषण पहिरना, पशुकर्म जलकर्म, ये सब कार्य मीन लग्नमें करने कहे हैं ॥ २२ ॥ ये मेषादिक लग्न शुद्ध होयँ तो पूर्वोक्तकर्म सिद्ध होतेहैं और यदि पापग्रहोंसे दृष्ट वा युक्त हों तो क्रूरकर्म सिद्ध होतेहैं, अन्य शुभकार्य सिद्ध नहीं होते ॥ २३ ॥

अथ षड्वर्गः।

षड्वर्गो गृहहोराख्यो द्रेष्काणोथ नवांशकः ॥ द्वादशांशस्तथा त्रिंशांशकः स शुभजः शुभः ॥२४॥ त्रिंशदंशा ३० गृहं राशेरर्द्धं होरेति कथ्यते ॥ द्रेष्काणः स्यात्तृतीयोंशो १० नवमांशो नवांशकः ॥ २५॥ द्वादशांशो द्विपड्भाग २।३० स्त्रिंशांश-१ स्त्रिंशदंशकः ॥ लग्नराशिपतिः खेटो ग्रहेशः परिकीर्तितः ॥ २६ ॥ चंद्रभान्वोः समे राशौ विषमे रविचंद्रयोः ॥ द्रेष्काणेशाः क्रमादाद्यपंचांक १।५।९ भवनेश्वराः ॥ २७ ॥ धनुः सिंहोऽथ मेषश्च मेषाद्यास्तु नवांशकाः॥ मकरो वृषभः कन्या मकराद्याः प्रकीर्तिताः ॥ २८ ॥ तुलामिथुन-कुंभाख्यास्तुलाद्याः कथिता बुधैः ॥ कर्काद्यास्ते तु विज्ञेया मीनवृश्चिककर्कटाः ॥ २९ ॥ द्वादशांशो यथासंख्यो विज्ञातव्यः स्वराशितः ॥ विषमर्क्षे तु बाणा ५ऽक्ष ५ वसु ८

शैल ७ शराः ५ क्रमात् ॥ ३० ॥ भौमार्कीज्यज्ञशुक्राणां त्रिंशांशाः परिकीर्तिताः ॥ समर्क्षे तु शर ५ अव ७ वसु- ८ बाण ५ शरां ५ शकाः ॥ ३१ ॥ शुक्रसौम्यांगिरोमंद- भौमानां च यथाक्रमम् ॥ ३२ ॥

अब षड्वर्ग लिखतेहैं–(गृह) लग्नादि बारह स्थान १, होरा २, द्रेष्काण ३, नवांश ४, द्वादशांश ५, त्रिंशांश ६ ये छह वर्ग कहातेहैं और शुभग्रहका वर्ग शुभ होताहै ॥ २४ ॥ तीस अंशका एक गृह अर्थात् राशि होतीहै और राशिका आधाभाग होरा कहाताहै, अर्थात् राशिके १५ पंद्रह २ अंशकी दो होरा होतीहैं और राशिका तीसरा भाग अर्थात् दश १० अंशका द्रेष्काण होताहै । इसी प्रकार प्रत्येक राशिके दश २ अंशके तीन द्रेष्काण होतेहैं । तीन ३ अंश और बीश २० कलाका एक नवांशक होताहै ॥ ॥ २५ ॥ और राशिका बारहवां भाग दो२ अंश तीस ३० कलाका द्वादशांश होताहै और तीस ३० अंशका त्रिंशांशक होताहै । लग्नराशिका स्वामी ग्रह गृहेश कहाताहै ॥ २६ ॥ सम राशिमें प्रथम चंद्रमाकी फिर सूर्यकी और विषम राशिमें प्रथम सूर्यकी फिर चंद्र- माकी होरा होतीहै । पहिली और पांचवीं तथा नौवीं राशिके स्वामी ग्रह क्रमसे पहिले, दूसरे, तीसरे द्रेष्काणके स्वामी होतेहैं ॥ २७ ॥ धनु, सिंह, मेष इन राशियोंका नवांश मेषसे गिना जाताहै । और मकर, वृष, कन्या इन राशियोंका नवांश मकरसे ॥ २८ ॥ तुला, मिथुन, कुंभका नवांशक तुलासे गिना जाताहै. ऐसा पंडितोंने कहाहै । और मीन, वृश्चिक, कर्क इन राशि- योंका नवांश कर्कसे गिना जाताहै ॥ २९ ॥ अपनी राशिसे यथा- संख्यक बारह भागोंके स्वामी गिननेसे द्वादशांश जानना, विषम राशिमें पांच ५, पांच ५, आठ ८, सात ७, पांच ५ इतने अंश

क्रमसे ॥ ३० ॥ मंगल, शनैश्चर, बृहस्पति, बुध, शुक्र इन ग्रहोंके त्रिंशांशक होतेहैं। और सम राशिमें पांच ५, सात ७, आठ ८, पांच ५, पांच ५ ॥ ३१ ॥ इतने अंश क्रमसे शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर, मंगल इन ग्रहोंके त्रिंशांशक होतेहैं ॥ ३२ ॥

अथ होराचक्रम्।

मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी	राशयः
सू	चं	सू	चं	सू	चं	सू	चं	सू	च	सू	च	अंश १५
चं	सू	चं	सू	चं	सू	चं	सू	चं	सू	चं	सू	अंश ३०

अथ द्रेष्काणचक्रम्।

राशयः	मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी
१ द्रे. १०	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ
२ द्रे. २०	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं
३ द्रे. ३०	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं

नवांशचक्रम्।

अंश	कला	मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी
३	२०	मं	श	शु	चं	मं	श	शु	चं	मं	श	शु	चं
६	४०	शु	श	मं	सू	शु	श	मं	सू	शु	श	मं	सू
१०	००	बु	बृ	बृ	बु	बु	बृ	बृ	बु	बु	बृ	बृ	बु
१३	२०	चं	मं	श	शु	चं	मं	श	शु	चं	मं	श	शु
१६	४०	सू	शु	श	मं	सू	शु	श	मं	सू	शु	श	मं
२०	००	बु	बु	बृ	बृ	बु	बु	बृ	बृ	बु	बु	बृ	बृ
२३	२०	शु	चं	मं	श	शु	चं	मं	श	शु	चं	मं	श
२६	४०	मं	सू	शु	श	मं	सू	शु	श	मं	सू	शु	श
३०	००	बृ	बु	बु	बृ	बृ	बु	बु	बृ	बृ	बु	बु	बृ

द्वादशांशचक्रम् ।

अंश कला	मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी
२ ३०	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ
५ ००	शु	बु	चं	सू	बु	शु	म	बृ	श	श	बृ	मं
७ ३०	बु	च	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ	मं	शु
१० ००	चं	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु
१२ ३०	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं
१५ ००	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं	सूं
१७ ३०	शु	मं	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु
२० ००	म	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं	सु	बु	शु
२२ ३०	बृ	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	म
२५ ००	श	श	बृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	बृ
२७ ३०	श	बृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	बृ	श
३० ००	बृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	बृ	म	श

अथ विषमत्रिंशांशचक्रम् ।

अंशाः	मे	मि	सि	तु	ध	कु
५	मं	मं	मं	मं	मं	म
५	श	श	श	श	श	श
८	बृ	बृ	बृ	बृ	बृ	बृ.
७	बु	बु	बु	बु	बु	बु
५	शु	शु	शु	शु	शु	शु

समत्रिंशांशचक्रम् ।

अंशाः	वृ.	क	क	वृ	म	मी
५	शु	शु	शु	शु	शु	शु
७	बु	बु.	बु	बु.	बु.	बु.
८	बृ.	बृ	बृ	बृ	बृ	बृ.
५	श	श	श	श	श.	श.
५	मं	मं	म	मं	मं	मं

अथ तन्वादिद्वादशभावसंज्ञा ।

तनु १ धनं २ सहोत्थाख्यं ३ सुहृ ४ त्पुत्रा ५ रि ६ यो-
पितः ॥ ७ निधनं ८ धर्म ९ कर्मा १० य ११ व्यया १२

भावास्तनोः क्रमात् ॥ ३३ ॥ केंद्रं १।४।७।१० पणफरं २।५।८।११ चापोक्लिमं ३।६।९।१२ लग्नात्पुनः पुनः ॥ नवमं पंचमं स्थानं ९।५ त्रिकोणं परिकीर्तितम् ॥ ३४ ॥ त्रिदशैकादशं षष्ठं प्रोक्तं चोपचयाह्वयम् ॥ जामित्रं ७ सप्तमं द्यूनं द्यूतं च मदनाभिधम् ॥ ३५ ॥ रिःफं तु द्वादशं १२ ज्ञेयं दुश्चिक्यं स्यात्तृतीयकम् ॥ चतुरस्रं तुरीयाष्टसंख्यं रंध्रमथाष्टमम् ॥ ३६ ॥

अब तन्वादि द्वादश भावसंज्ञा लिखतेहैं–तनु१, धन२, (सहोत्थ) भ्रातृ ३, सुहृत् ४, पुत्र ५, शत्रु ६, स्त्री ७, मृत्यु ८, धर्म ९, कर्म १०, लाभ ११, व्यय १२ ये लग्नसे लेकर, क्रमसे वारह भाव हैं ॥ ३३ ॥ लग्नसे लेकर केंद्र, पणफर, वापोक्लिम इस प्रकार चार वार गिननेसे वारहों स्थानोंकी संज्ञा जानी जातीहै। अर्थात्–१।४।७।१० ये स्थान केंद्रसंज्ञक हैं, २।५।८।११ ये स्थान पणफर और ३।६।९।१२ ये स्थान पापोक्लिम संज्ञक हैं और नौवां, पांचवाँ स्थान त्रिकोण कहाताहै ॥३४॥ तीसरा, दशवां, ग्यारहवां,छठा स्थान उपचय संज्ञक कहाहै। सातवां घर जामित्र और द्यून, द्यून तथा मदन संज्ञक है ॥३५॥ वारहवां घर रिष्फ संज्ञक जानना। तीसरा स्थान दुश्चिक्य संज्ञक है। चौथा, आठवां स्थान चतुरस्र संज्ञक है। आठवां रन्ध्र संज्ञक है ॥ ३६ ॥

अथ वर्गोत्तमनवमांशाः।

आद्यश्चरे नवांशः स्यात्स्थिरे राशौ तु पंचमः ॥ नवमो द्विःस्वभावाख्ये शुभो वर्गोत्तमो ह्ययम् ॥ ३७ ॥

अब वर्गोत्तम नवांश लिखते हैं–चर लग्नमें पहिला नवांशक वर्गोत्तम होताहै, स्थिरराशिमें पांचवां और द्विस्वभाव राशिमें नौवां नवांशक वर्गोत्तम होताहै ॥ ३७ ॥

अथ साधारणशुभकार्ये लग्नग्रहबलं च ।

सर्वेषु शुभकार्येषु नेष्टाः खेटा व्ययाष्टगाः ॥ लग्ने पापा रिपौ सौम्याः पापाः केंद्रत्रिकोणगाः ॥ ३८ ॥ सौम्याः केंद्रत्रिकोणस्थाः पापास्तु त्रिषडायगाः ॥ ते सर्वे लाभगाः खेटाः श्रेष्ठाः स्युः शुभकर्मणि ॥ ३९ ॥ भावः स्वपतिना सौम्यैर्दृष्टो युक्तो बलाधिकः ॥ पूर्णं फलं निजं धत्ते व्यस्तं पापैर्युतेक्षितः ॥ ४० ॥ लग्ने षड्वर्गसंशुद्धे प्रोक्तस्थानस्थिते ग्रहे ॥ शुभर्क्षतिथिवारेषु कार्याः सर्वाः शुभाः क्रियाः ॥ ४१ ॥ एतत्सामान्यतः प्रोक्तं ग्रहलग्नबलादिकम् ॥ विशेषस्तु यथाशास्त्रं ज्ञेयस्तत्तन्मुहूर्तके ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ लग्नप्रकरणं दशमम् ॥ १० ॥

अब साधारण शुभकार्यमें लग्नमें ग्रहबल लिखतेहैं—समस्त शुभ कार्योंमें बारहवें, आठवें घरमें सब ग्रह अशुभ होतेहैं और लग्नमें पापग्रह, छठे स्थानमें शुभग्रह, केंद्र और त्रिकोणमें पापग्रह नेष्ट होतेहैं ॥ ३८ ॥ केंद्र और त्रिकोणमें सौम्यग्रह, तथा तीसरे, छठे, ग्यारहवें घरमें पापग्रह और ग्यारहवें घरमें सब पाप और शुभग्रह होय तो शुभकर्ममें श्रेष्ट होतेहैं ॥ ३९ ॥ जो जो भाव अपने स्वामीसे अथवा शुभग्रहोंसे दृष्ट अथवा युक्त हो सो अधिक बलवान् होताहै और अपना पूर्ण फल धारण करताहै और जो भाव पापग्रहोंसे दृष्ट वा युक्त हो सो विपरीत अर्थात् निर्बल होताहै न्यून फल करताहै ॥ ॥ ४० ॥ लग्नमें षडर्ग शुद्ध होय, उक्त शुभ स्थानोंमें ग्रह स्थित होय, नक्षत्र,तिथि,वार शुभ होय तो समस्त शुभकर्म करने चाहिये॥ ४१ ॥

यहांपर ग्रह और लग्नका बलादिक सामान्यतासे कहाहै और विशेष फलादिक तो तिस २ मुहूर्त्तमें जानलेना चाहिये ॥ ४२ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं लग्नप्रकरणं दशमम् ॥ १० ॥

अथ नूतनांबरालंकारधारणप्रकरणम् ।

हस्तादिपंचके पुष्ये धनिष्ठारेवतीद्वयोः ॥ त्र्युत्तरे च पुनर्वस्वो रोहिण्यां च शुभे तिथौ ॥ १ ॥ बुधे शुक्रेज्यवारेषु नूतनांबरधारणम् ॥ सौवर्णं रत्नरूप्यादिभूषणानां धृतिः शुभा ॥ २ ॥ प्रागुक्तधिष्ण्यवारे च स्वर्णाद्याभरणादिकम् ॥ रक्तं वासो बुधैर्धार्यं भौमभास्करयोरपि ॥ ३ ॥

अब नूतन वस्त्र और अलंकारका प्रकरण लिखते हैं—हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, पुष्य, धनिष्ठा, रेवती, अश्विनी, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, रोहिणी ये नक्षत्र और शुभतिथि ॥ १ ॥ बुध, शुक्र, बृहस्पतिवार इनमें नवीन वस्त्र पहिरना शुभ होताहै. तथा सुवर्ण, रत्न, चांदी आदिका आभूषण पहिरनाभी शुभ होताहै ॥ २ ॥ और पूर्वोक्त नक्षत्रवारोंमें सुवर्णादिके आभूषण पहिरने शुभ होते हैं ॥ और लालवस्त्र बुध, मंगल, रविवारके दिन पहिरना शुभ होताहै ॥ ३ ॥

अथ वारफलम् ।

जीर्णमर्कों विधुश्चार्द्रं भौमः शोकं बुधो धनम् ॥ गुरुर्ज्ञानं प्रयाणार्त्तिं भार्गवो मलिनं शनिः ॥ ४ ॥ कुर्वंति वासरास्त्वेते नूतनांबरधारणात् ॥ ५ ॥

अब वारफल लिखतेहैं–नवीन वस्त्र पहिरनेसे रव्यादिक वार ऐसा फल करतेहैं कि, सूर्य तो शीघ्रही वस्त्रको जीर्ण करतेहैं, चंद्रमा गीला करताहै, मंगल शोकको करताहै, बुध धनको, बृहस्पति ज्ञानको, शुक्र यात्रा और लाभको, शनि मलीनताको करता है ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथ नक्षत्रफलम् ।

वस्त्रप्राप्तिरथाश्विन्यां भरण्यां तद्विनाशनम् ॥ कृत्तिकाऽग्निभयं कुर्याद्रोहिण्यां सर्वसंपदः ॥ ६ ॥ मृगे मूपकभीतिः स्यादार्द्रायां निधनं भवेत ॥ पुनर्वस्वोस्तथा पुष्ये धनधर्ममहोत्सवः ॥ ७ ॥ आश्लेषायां भवेच्छोको मघायां मरणं ध्रुवम् ॥ राज्ञो भयं तु पूफायामुफायां च धनागमः ॥ ८ ॥ कर्मसिद्धिस्तु हस्तर्क्षे चित्रायामिष्टसंपदः ॥ मिष्टभोजनदा स्वाती विशाखानंददायिनी ॥ ९ ॥ मित्राप्तिरनुराधायां ज्येष्ठायां वाससां क्षतिः ॥ जलप्लुतिश्च मूलर्क्षे पूर्वापाढातिरोगदा ॥ १० ॥ मिष्टान्नदोत्तरापाढा श्रवणो नयनार्तिकृत् ॥ धान्यागमो धनिष्ठायां विषभीतिः शताभिधे ॥ ११ ॥ पूर्वाभाद्रे जलाद्भीतिरुत्तरायां धनागमः ॥ रत्नावाप्तिस्तु रेवत्यां भवेद्वस्त्रस्य धारणात् ॥ १२ ॥

अब नक्षत्रफल लिखतेहैं–अश्विनी नक्षत्रमें वस्त्र धारण करै तो फिरभी वस्त्र मिले, भरणीमें वस्त्रका विनाश, कृत्तिकामें अग्निभय, रोहिणीमें सब संपदा ॥ ६ ॥ मृगशिरमें मूपकका भय, आर्द्रामें मृत्यु, पुनर्वसु तथा पुष्यमें धन और धर्म्मका महोत्सव ॥ ७ ॥ आश्लेषामें शोक, मघामें मरण, पूर्वाफाल्गुनीमें राजका भय, उत्तराफाल्गुनीमें धनागम ॥ ८ ॥ हस्तमें कार्यकी सिद्धि, चित्रामें इष्ट संपदाकी प्राप्ति होतीहै, स्वाती मीठे भोजन देनेवाली, विशाखा

आनंद देनेवाली है ॥ ९ ॥ अनुराधामें मित्रकी प्राप्ति होय, ज्येष्ठामें वस्त्रोंकी चोरी होय, मूलमें जलमें डूबजाय, पूर्वाषाढा अतिरोगकी देनेवाली है ॥ १० ॥ उत्तराषाढा मिष्टान्नकी देनेवाली है, श्रवण नेत्र-पीडाकारक है, धनिष्ठामें धान्यकी प्राप्ति होतीहै, शतभिषामें विषकी भय होतीहै ॥ ११ ॥ पूर्वाभाद्रपदमें जलकी भय, उत्तराभाद्रपदमें धनकी प्राप्ति, रेवतीमें रत्नोंकी प्राप्ति होतीहै, इन नक्षत्रोंमें वस्त्र धारण करनेसे पूर्वोक्त फल होताहै ॥ १२ ॥

अथ वस्त्राभरणादिधारणे स्त्रीणां विशेषः ।

अश्विन्यां च धनिष्ठायां रेवत्यां करपंचके ॥ सुवर्णरत्नदंता-
दिवस्त्राणां धारणं स्त्रियः ॥ १३ ॥

अब स्त्रियोंके वस्त्राभरणादि धारणमें विशेष लिखतेहैं—अश्विनी, धनिष्ठा, रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें स्त्रीको सुवर्ण, रत्न, दंतादि तथा वस्त्र धारण करना शुभ होताहै ॥ १३ ॥

अथ कज्जलादर्शकृत्यम् ।

चित्राचतुष्टयेऽश्विन्यां धनिष्ठारेवतीमृगे ॥ शुक्रेर्केह्नि शनौ
स्त्रीणां दर्पणांजनयोर्धृतिः ॥ १४ ॥

अब कज्जलादर्श कृत्य लिखतेहैं—चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा, रेवती, मृगशिर ये नक्षत्र और शुक्र, रवि, शनि वारमें स्त्रियोंको. दर्पण और अंजनका धारण करना शुभ होताहै ॥ १४ ॥

अथ सौभाग्यवत्या निषेधः ।

रोहिण्यां त्र्युत्तरे पुष्ये पुनर्वस्वोः कदाचन ॥ न दध्या-
त्सुभगा भूषावस्त्राण्यन्ये कुजेपि न ॥ १५ ॥

अथ सौभाग्यवतीके निषेध लिखतेहैं-रोहिणी, तीनों उत्तरा, पुष्य, पुनर्वसु इन नक्षत्रोंमें सौभाग्यवती स्त्री आभूषण और वस्त्र न पहिरै और कोई आचार्य कहतेहैं कि, मंगलके दिन भी न पहिरै ॥ १५ ॥

अथ नववस्त्रविकृतौ फलम् ।

वाससो नवधाभागे चतुष्कोणेषु देवताः ॥ मध्यत्र्यंशस्थितं रक्षो नराः पार्श्वदशांशयोः ॥ १६ ॥ दग्धे जीर्णे नवे वस्त्रे लिप्ते वा कर्दमादिभिः ॥ ज्ञेयं रक्षोंशके नेष्टं शुभं देव-नरांशके ॥ सर्वप्रांत्येष्वसच्चैवं शयनासनपादुके ॥ १७ ॥

अब नव वस्त्रविकृतिमें फल लिखतेहैं-नवीन वस्त्रके नौ भाग मानि लेय चारों कोणोंमें देवता स्थापित करे और मध्यके तीन भागोंमें राक्षस (और पार्श्व) करवटके दोनों भागोंमें मनुष्य स्थापन करे ॥ १६ ॥ राक्षसके भागमें नवीन वस्त्र जल जाय वा फट जाय अथवा जीर्ण होजाय वा कीचड आदिसे सन जाय तो शुभ नहीं होता और यदि देवता अथवा मनुष्यके भागमें पूर्वोक्त दग्धादि बात होजाय तो शुभ होताहे और यदि सब भागोंमें दग्धादि होजाय तो अशुभ होताहै । इसी प्रकार शय्या, आसन, खडाऊंमेंभी विचारे ॥ १७ ॥

अथ मुहूर्तं विनापि कुत्रचिद्वस्त्रधारणम् ।

राज्ञा प्रीत्यार्पितं वस्त्रं विवाहे चोत्सवादिषु ॥ तथा विप्राज्ञया धार्यं निन्द्ये धिष्ण्येपि वासरे ॥ १८ ॥

अथ मुहूर्तविना भी कहींपर वस्त्र धारण लिखतेहैं-राजाने प्रीतिसे दियाहुआ तथा विवाहमें और उत्सवमें और ब्राह्मणकी आज्ञासे नवीनवस्त्र निन्दित नक्षत्र और वार होय तो भी पहिर लेना चाहिये ॥ १८ ॥

अथ वस्त्रविशेषे विशेषः,तत्र श्वेतपीतकर्बुर-रक्तवस्त्रधारणम् ।

शुक्लं वस्त्रोक्तभे धार्यं रवौ शुक्रे गुरौ बुधे ॥ विशुक्रे कर्बुरं पीतं सभौमे रक्तमम्बरम् ॥ १९ ॥

अब वस्त्रविशेषमें विशेष लिखतेहैं–तहां प्रथम श्वेत, पीत, कर्बुर, रक्त वस्त्रधारण लिखतेहैं–वस्त्र धारणमें कहे हुए नक्षत्र और रवि, शुक्र, बृहस्पति, बुध वार इनमें श्वेत वस्त्र धारण करना शुभ है और शुक्र विना उक्त मुहूर्तमें कबरा और पीत वस्त्र धारण करना, तथा मंगलसहित उक्त मुहूर्तमें लाल वस्त्र धारण करना शुभ होताहै ॥ १९ ॥

अथ कृष्णनीलम् ।

पुनर्वसुधनिष्ठाख्येऽश्विभे हस्ताच्चतुष्टये ॥ पूर्वोत्तरे शनौ सूर्ये नीलकृष्णांबरं शुभम् ॥ २० ॥

अब कृष्ण नील वस्त्र धारण लिखतेहैं–पुनर्वसू, धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें और शनि, रविवारोंमें नीला तथा काला वस्त्र धारण करना शुभ होताहै ॥ २० ॥

अथ पट्टदुकूलम् ।

जीवेर्के च बुधे शुक्रे वस्त्रोक्तर्क्षे श्रवान्विते॥स्थिरेङ्गे सद्ग्रहैर्युक्ते पट्टकूलस्य धारणम् ॥ २१ ॥

अब पट्टदुकूल लिखतेहैं–बृहस्पति, रवि, बुध, शुक्र इन वारोंमें श्रवणसहित वस्त्र धारणोक्त नक्षत्रोंमें शुभग्रहोंसे युक्त स्थिर लग्नमें रेशमीन वस्त्र धारण करना शुभ होताहै ॥ २१ ॥

अथ कौशेयम् ।

अश्विनीरेवतीहस्ते रोहिण्यां श्रवणत्रये॥ पूर्वोत्तरे पुनर्वस्वोः

स्वात्यां पुष्ये मघाभिधे॥२२॥रवौ चंद्रे गुरौ धार्यं कौशेयं वसनं जनैः ॥ २३ ॥

अब कौशेयवस्त्र धारण लिखतेहैं—अश्विनी, रेवती, हस्त, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वा तीनों, उत्तरा तीनों, पुनवसु, स्वाती, पुष्य, मघा इन नक्षत्रोंमें ॥ २२ ॥ रवि, चंद्र, बृहस्पति वारोंमें मनुष्योंको रेशमीन वस्त्र धारण करना चाहिये ॥ २३ ॥

अथ रोमजं वस्त्रम् ।

नीलवस्त्रोदिते धिष्ण्ये रेवतीपुष्ययोरपि ॥ शुक्रे शनैश्चरेर्के च धारयेद्रोमजांबरम् ॥ २४ ॥

अब रोमज वस्त्र धारण लिखतेहैं—नील वस्त्रोंके धारण करनेमें कहे जो नक्षत्र और रेवती, पुष्य नक्षत्रमें शुक्र, शनि, रविवारोंमें ऊनका वस्त्र धारण करे ॥ २४ ॥

अथ सतूलकंचुकधारणम् ।

पुष्योत्तरानुराधांत्ये धनिष्ठाश्विकरत्रये ॥ रोहिण्यां गुरुशुक्राब्जे देहदुर्गधृतिः शुभा ॥ २५ ॥

अब सतूल कंचुक धारण लिखतेहैं—पुष्य, अनुराधा, रेवती, धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, रोहिणी नक्षत्रोंमें और बृहस्पति, शुक्र, चंद्रवारोंमें रुईका कोट धारण करना शुभ होताहै ॥ २५ ॥

अथ सुवर्णरजतमिश्रतंतुसंभववस्त्रपरिधानम् ।

सुवर्णतंतुसंमिश्रं वासो धार्यं रवौ कुजे ॥ राजतं तद्विशुक्रेब्जे वस्त्रधारणभे शुभम् ॥ २६ ॥

अब सुवर्ण रजतामिश्र तन्तुसंभव वस्त्र परिधान लिखतेहैं—सुवर्णके तारोंसे मिलाहुआ वस्त्र रवि और मंगलवारके दिन और चाँदीके

तारकसीका वस्त्र शुक्रविना चंद्रवारके दिन तथा वस्त्रधारणोक्त नक्षत्रोंमें धारण करना शुभ होताहै ॥ २६ ॥

अथ वस्त्रनिर्माणम्।

रोहिणीरेवतीचित्राऽनुराधामृगभोत्तरे ॥ शनिं हित्वा कुविंदानां तंतुभिः पट्टसाधनम् ॥ २७ ॥

अब वस्त्रनिर्माण लिखतेहैं—रोहिणी, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें और शनिवर्जित वारोंमें जुलाहों से सूतोंका वस्त्र बुनवाना शुभ होताहै ॥ २७ ॥

अथ कुसुंभादिवस्त्ररंजनम्।

पुनर्वसुद्वये हस्तात्पंचके श्रवणद्वये ॥ अश्विभेर्के कवीज्यारे वाससां रंजनं शुभम् ॥ २८ ॥

अब कुसुंभादि वस्त्ररंजन लिखतेहैं—पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, अश्विनी नक्षत्र और रवि, शुक्र, बृहस्पति, मंगल इन वारोंमें वस्त्र रंगवाना शुभ होताहै ॥ २८ ॥

अथ सूचीकर्म।

मृगश्चित्राऽनुराधाश्विपुष्यांत्य रोहिणी करः ॥ ज्येष्ठा सद्वासराः सार्काः सूचीकर्मणि संमताः ॥ २९ ॥

अब सूचीकर्म लिखतेहैं—मृग, चित्रा, अनुराधा, अश्विनी, पुष्य, रेवती, रोहिणी, हस्त, ज्येष्ठा ये नक्षत्र और शुभवार तथा रविवार वस्त्र सिलवानेमें शुभ मानेहैं ॥ २९ ॥

अथ नवीनवस्त्रक्षालनम्।

पुनर्वसुद्वयेश्विन्यां धनिष्ठाहस्तपंचके ॥ हित्वार्कार्किबुधान्रिक्तां पष्ठीं श्राद्धदिनं तथा ॥ ३० ॥ व्रतं पर्व च वस्त्राणि क्षालयेद्रजकादिना ॥ ३१ ॥

अब नवीन वस्त्र क्षालन लिखतेहैं-पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी, धनिष्ठा, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें धोबी आदिसे वस्त्र धुलवाना शुभ होताहै । परन्तु रवि, शनि, बुधवार, रिक्ता ४ । ९ । १४ षष्ठी तिथि, श्राद्धका दिन, व्रत और पर्वका दिन इन सबको छोडकर वस्त्र क्षालन करावे ॥ ३० ॥ ३१ ॥

अथोपानत्परिधानं चर्मकृत्यं च ।

चित्रापूर्वानुराधार्द्राज्येष्ठाश्लेषामघामृगे ॥ विशाखाकृत्तिकामूले रेवत्यां ज्ञार्कसूर्यजे ॥ उपानत्परिधानं च चर्मकर्मापि शस्यते ॥ ३२ ॥

अब उपानत्परिधान और चर्मकृत्य लिखतेहैं-चित्रा, तीनों पूर्वा, अनुराधा, आर्द्रा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, मृगशिर, विशाखा, कृत्तिका, मूल, रेवती इन नक्षत्रोंमें और बुध, रवि, शनि इन वारोंमें जूता पहिरना तथा चमडेका काम करनाभी शुभ होताहै ॥ ३२ ॥

अथ वितानतूलिकोपधानादिनिर्माणं वितानबंधनं च ।

कुर्याद्वस्त्रोदिते धिष्ण्ये तूलिकामुपधानकम् ॥ वितानाद्यं च बध्नीयादूर्ध्वमूर्द्ध्वमुखोडुषु ॥ ३३ ॥

अब वितान तूलिका उपधानादि निर्माण और वितान बंधन लिखतेहैं-वस्त्रधारणोक्त नक्षत्रोंमें रुईका काम, तकिया बनवाना, चँदोवा आदि बांधना शुभ होताहै और ऊर्द्ध्वकर्म ऊर्द्ध्वमुख नक्षत्रोंमें शुभ होताहै ॥ ३३ ॥

अथ वस्त्रमयगेहादिनिर्माणम् ।

श्रवत्रयेऽश्विनीपुष्येऽनुराधारोहिणीमृगे ॥ हस्तत्रये पुनर्भेन्त्ये त्र्युत्तरे पटवेश्म सत् ॥ ३४ ॥

अब वस्त्रमय गेहादि निर्माण लिखतेहैं-श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा,

स्वाती, पुनर्वसु, रेवती, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें वस्त्रका घर अर्थात् डेरा वनवाना शुभ होताहै ॥ ३४ ॥

अथ सुगंधभोगः ।

श्रवत्रयेऽश्विनीपुष्ये पूर्वाषाढानुराधयोः॥ हस्तत्रये पुनर्भेन्त्ये मृगभे च शुभेहनि ॥ ३५ ॥ चन्दनागरुकस्तूरीपुष्पाणां धारणं शुभम् ॥ ३६ ॥

अब सुगंधभोग लिखतेहैं-श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी पुष्य, पूर्वाषाढा, अनुराधा, हस्त, चित्रा, स्वाती, पुनर्वसु, रेवती, मृगशिरा ये नक्षत्र और शुभ वारोंमें ॥ ३५ ॥ चंदन, अगरु, कस्तूरी, पुष्प इनका धारण करना शुभ होताहै ॥ ३६ ॥

अथ शय्यासनादिभोगः ।

श्रवणे चानुराधायां त्र्युत्तरे रोहिणीमृगे ॥ पुनर्वसुद्वये हस्ते चित्रायां रेवतीत्रये ॥ भोगः शय्यासनादीनां शुभे वारे शुभे तिथौ ॥ ३७ ॥

अब शय्यासनादिभोग लिखतेहैं-श्रवण, अनुराधा, तीनों उत्तर, रोहिणी, मृगशिर, पुनर्वसू, पुष्य, हस्त, चित्रा, रेवती, अश्विनी, भरणी इन नक्षत्रोंमें, शुभवार और शुभ तिथिमें शय्या और आस, नादिका भोग शुभ होताहै ॥ ३७ ॥

अथ भूषणघट्टनम् ।

त्रिपुष्कराभिधे योगे त्र्युत्तरे रेवतीद्वये ॥ श्रवत्रये मृगे पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ हस्तत्रयेथ रोहिण्यां भूषा कार्या शुभेहनि ॥ ३८ ॥

अब भूषणघट्टन लिखतेहैं–त्रिपुष्करयोगमें और तीनों उत्तरा रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृगशिर, पुष्य

वसु, अनुराधा, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, रोहिणी नक्षत्र और शुभ दिनमें आभूषण गढवाना शुभ होताहै ॥ ३८ ॥

अथ रत्नयुक्तभूपाघट्टनम्।

कृत्तिकादित्रये हस्तपंचके रेवतीद्वये ॥ श्रवत्रये पुनर्वस्वोः पुष्ये भे चोत्तरात्रये ॥ कुजेऽर्के रत्नयुग्भूपाघट्टनं शुभवासरे ॥ ३९ ॥

अव रत्नयुक्त भूपाघट्टन लिखतेहैं-कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, पुष्य, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें तथा मंगल, रवि, और शुभ वारमें रत्नयुक्त आभूषण गढवाना शुभ होताहै ॥ ३९ ॥

अथ रौप्यमयमुक्तावज्रयुक्तभूपणनिर्माणम् ।

रत्नयुग्भूपणं ऋक्षे विशाखां कृत्तिकां विना ॥ शुक्रेज्ये भूपणं रौप्यवज्रमुक्तामयं हि सत् ॥ ४० ॥

अव रौप्यमयमुक्ता वज्रयुक्त भूपण निर्म्माण लिखतेहैं-रत्नयुक्त आभूपण बनवानेमें जो नक्षत्र कहेहैं उनमेंसे विशाखा, और कृत्तिकाको त्यागकर शेप नक्षत्रोंमें तथा शुक्र, बृहस्पतिके दिन चांदी, हीरा, मोतीके जडाऊका आभूपण बनवाना शुभ होताहै ॥ ४० ॥

अथ पात्रभोगः ।

रोहिणीयुगुले हस्तत्रितये रेवतीद्वये ॥ श्रवणत्रितये पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ ४१ ॥ त्र्युत्तरे बुधशुक्रेज्यवारे चामृतयोगके ॥ सुवर्णरौप्यपात्रेपु भोजनादिशुभप्रदम् ॥ ४२ ॥

अव पात्रभोग लिखतेहैं-रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाति, रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य, पुनर्वसु,

अनुराधा, ॥ ४१ ॥ तीनों उत्तरा ये नक्षत्र; बुध, शुक्र, बृहस्पति वार अमृतयोग इनमें सुवर्ण, चांदीके पात्रोंमें भोजन बनाना, खाना, शुभदायक होताहै ॥ ४२ ॥

अथ श्मश्रुकर्म।

श्रवणत्रितये हस्तत्रितये रेवतीद्वये ॥ ज्येष्ठायां मृगशीर्षे च पुनर्वसुद्वये तथा ॥ ४३ ॥ क्षुरकर्म बुधैः प्रोक्तं त्यक्त्वा भौमं शनिं रविम् ॥ अनुराधामुफां चैव कृत्तिकां रोहिणीं मघाम् ॥ ४४ ॥

अब श्मश्रुकर्म लिखतेहैं-श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, चित्रा, स्वाति, रेवती, अश्विनी, ज्येष्ठा, मृगशीर्ष, पुनर्वसु, पुष्य, इन नक्षत्रोंमें पंडितोंने क्षुरकर्म करना शुभ कहाहै परन्तु भौम, शनि, रविवार और अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, कृत्तिका, रोहिणी, मघा नक्षत्र त्याग देवे ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अथ क्षुरकृत्ये वारफलम्।

भानुर्मासं शनिः सप्त भौमोऽष्टौ नाशयेत्सुखम् ॥ वर्धयेद्बोधनः पंच मासान्सप्त निशापतिः ॥ शुक्रस्त्वेकादश क्षेमं क्षौरे वाचस्पतिर्दश ॥ ४५ ॥

अब क्षुरकृत्यमें वारफल लिखतेहैं-रविवारको क्षौर बनवावे तो एक महीनेका और शनि सात महीनेका, मंगल आठ महीनेका सुख नाश करदेतेहैं। और बुध पांच महीनेका चंद्रमा सात महीनेका, शुक्र ग्यारह महीनेका और बृहस्पति दश महीनेका सुख बढातेहैं ॥ ४५ ॥

अथ क्षौरकार्ये त्याज्यास्तिथयः।

अष्टमी प्रतिपत्षष्ठी रिक्ता पर्वाणि संत्यजेत् ॥ चतुर्दशी त्वमावास्या क्षौरे त्याज्या तु सर्वथा ॥ ४६ ॥

अब क्षौरकार्यमें त्याज्य तिथिको लिखतेहैं–आठैं, पडवा, छठि, रिक्ता ४ । ९ । १४ पर्व ये सब क्षौरकार्यमें त्याग देने चाहिये और चतुर्दशी, अमावास्या विशेष करके सर्वथा त्याज्य है ॥ ४६ ॥

अथ निन्द्यतिथिनक्षत्राणां दुष्टफलम् ।

पंचकृत्वो मघायां च षट्कृत्वः कृत्तिकास्वपि ॥ त्रिवारं चानुराधायां रोहिण्यामष्टवारकम् ॥ ४७ ॥ उत्तराफाल्गुनी-संज्ञे चतुर्वं क्षौरमाचरेत् ॥ स वेधसा समानोपि यावदब्दं न जीवति ॥ ४८ ॥

अब निन्द्यतिथि और नक्षत्रोंका दुष्टफल लिखतेहैं–मघामें पांचवार, कृत्तिकामें छहवार, अनुराधामें तीनवार, रोहिणीमें आठवार ॥ ४७ ॥ उत्तराफाल्गुनीमें चारवार क्षौर वनवानेसे ब्रह्माके समान होय तोभी वर्षभर नहीं जीवताहै ॥ ४८ ॥

अथ क्षौरनिषेधेपि तदपवादः ।

आज्ञया विप्रराज्ञोर्वाग्न्याधाने वंधमोक्षणे ॥ मृताशौचे च दीक्षायां मुंडनं सर्वभेष्वपि ॥ ४९ ॥

अब क्षौरनिषेधमें भी उसका अपवाद लिखतेहैं–ब्राह्मण और राजाकी आज्ञासे, अग्न्याधानमें, वन्धनसे छूटनेमें, मृतकके आशौचमें, मंत्रदीक्षामें मुंडन कराना सब नक्षत्रोंमें ग्राह्यहै ॥ ४९ ॥

अथ राज्ञां श्मश्रुकर्म ।

क्षौरभस्योदये राज्ञः पंचमेऽहनि चैव हि ॥ श्मश्रुकर्म समाख्यातं निषिद्धा तारका न चेत् ॥ ५० ॥

अब राजाका श्मश्रुकर्म लिखतेहैं–क्षौर वनवानेमें जो नक्षत्र कहेहैं तिनमें और सदैव पांचवें दिनमें राजाके लिये (क्षौर) हजामत वनवाना कहाहै यदि निषिद्धा तारा नहीं होय तो ॥ ५० ॥

अथ नखदंतकृत्यम् ।

ऋक्षेषु क्षौरकर्मोक्तं येषुयेषु मनीषिभिः॥ तेषुतेषु च कर्त्तव्या नखदंतादिकाः क्रियाः ॥ ५१ ॥

अब नखदंत कृत्य लिखतेहैं–जिनजिन नक्षत्रोंमें पंडितोंने क्षौरकर्म कहाहै उन उन नक्षत्रोंमें नख और दंत आदिकी क्रिया करनी चाहिये ॥ ५१ ॥

अथ क्षौरनिषेधः ।

भुक्तोऽभ्यक्तो व्रती यात्रारणोद्योगी कृताह्निकः ॥ उत्कटाभरणो रात्रौ संध्ययोरुभयोरपि ॥ ५२ ॥ शुभेप्सुर्नवमे चाऽह्नि क्षुरकर्म न कारयेत् ॥ प्राग्वयाः स्नातको राजा योगींद्रो गर्भिणीपतिः ॥ सजीवत्पितृको नैते मुंड्याः प्राक्कथिता अपि ॥ ५३ ॥

अब क्षौरनिषेध लिखतेहैं–भोजन और उबटन करनेके पीछे, व्रतमें, यात्रा और युद्धके समय, आह्निक कर्म करनेके पीछे (उत्कट) कठोर आभूषण पहिरे हुए, रात्रिमें, दोनों संध्याओंमें तथा हजामतके दिनसे नौवें दिनमें शुभ चाहने वाला मनुष्य क्षौरकर्म न करावे (प्राग्वयाः) पहिली अवस्थावाला अर्थात् थोडी उमरका अस्नातक, राजा, योगींद्र, गर्भिणीका पति, जिसका पिता जीताहो और प्रथम कहेहुए मनुष्यभी इन सबको संपूर्ण शिरोमुण्डन कराना नहीं चाहिये ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

अथ क्षुरकर्मणि शुभावहं वाक्यम् ।

केशवमानर्त्तपुरं पाटलिपुत्रं पुरीमहिच्छत्रां च ॥ दितिमदितिं च स्मरतां क्षौरविधौ भवति कल्याणम् ॥ ५४ ॥

अब क्षुरकर्ममें शुभावह वाक्य लिखतेहैं–केशव, आनर्त्तपुर, पाटलिपुत्र, अहिच्छत्रापुरी, दिति, अदिति इन सबोंका क्षौर करानेके समय स्मरण करनेसे क्षौरकरानेवाले पुरुषोंका कल्याणहोताहै ॥ ५४ ॥

अथ विद्यारंभः ।

मृगादिपंचके मूले हस्तादित्रितयेश्विभे ॥ श्रवणत्रयपूर्वासु विद्यारंभः प्रशस्यते ॥ ५५ ॥ रवौ शुक्रे बुधे जीवे वारे लग्नबले शुभे ॥ दशम्यादित्रिके षष्ठीतृतीयापंचमीषु च ॥ ५६ ॥ विद्यारंभे गुरुः शुक्रो बुधः सर्वार्थसिद्धिदः ॥ मध्योर्को जाड्यकृच्चंद्रो भौमार्की मृत्युदौ स्मृतौ ॥ ५७ ॥

अब विद्यारंभ लिखतेहैं-मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मूल, हस्त, चित्रा, स्वाती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों पूर्वा इन नक्षत्रोंमें विद्यारम्भ श्रेष्ठ कहाहै ॥ ५५ ॥ रवि, शुक्र, बुध, बृहस्पति वार और बलवान शुभ लग्न. दशमी, एकादशी, द्वादशी, षष्ठी, तृतीया, पंचमी तिथि इन सबमें विद्यारम्भ शुभ होताहै । ॥ ५६ ॥ विद्यारम्भमें बृहस्पति, शुक्र, बुध सर्वार्थसिद्धिके देनेवालेहैं । रविवार मध्यम है । चंद्रवार जडता करनेवालाहै । मंगल, शनैश्चर मृत्यु देनेवालेहैं ॥ ५७ ॥

अथ गणितारंभः ।

शतद्वयेऽनुराधार्द्रारोहिणीरेवतीकरे ॥ पुष्ये जीवे बुधे कुर्यात्प्रारंभं गणितादिषु ॥ ५८ ॥

अब गणितारम्भ लिखतेहैं-शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, अनुराधा, आर्द्रा, रोहिणी, रेवती, हस्त, पुष्य नक्षत्र और बृहस्पति, बुधवारके दिन गणितादिके पढनेका प्रारम्भ करे ॥ ५८ ॥

अथ व्याकरणारंभः ।

रोहिणीपंचके हस्तात्पुनर्भे मृगभेऽश्विभे ॥ पुष्ये शुक्रेऽथविद्वारे शब्दशास्त्रं पठेत्सुधीः ॥ ५९ ॥

अब व्याकरणारंभ लिखतेहैं-रोहिणी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, मृगशिरा, अश्विनी, पुष्य नक्षत्र और शुक्र,

बृहस्पति, बुधवारमें बुद्धिमान् (शब्दशास्त्र) व्याकरण पढनेका प्रारंभ करै ॥ ५९ ॥

अथ न्यायादिशास्त्रारंभः ।

त्र्युत्तरे रोहिणी पुष्ये पुनर्भे श्रवणे करे ॥ अश्विन्यां शतभे स्वातौ न्यायशास्त्रादिकं पठेत् ॥ ६० ॥

अब न्यायादिशास्त्रारंभ लिखतेहैं—तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, पुनर्वसु,श्रवण, हस्त, अश्विनी, शतभिषा, स्वाती इन नक्षत्रोंमें न्याय शास्त्रादिको पढे ॥ ६० ॥

अथ धर्मशास्त्रपुराणारंभः ।

हस्तादिपंचके पुष्ये रेवतीद्वितये मृगे ॥ श्रवत्रये शुभारंभो धर्मशास्त्रपुराणयोः ॥ ६१ ॥

अब धर्मशास्त्र पुराणारंभ लिखतेहैं—हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, पुष्य,रेवती, अश्विनी, मृगशिरा,श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें धर्मशास्त्र और पुराणका आरंभ शुभ होताहै ॥ ६१ ॥

अथ वैद्यविद्यागारुडीविद्यारंभः ।

हस्तत्रयेऽनुराधायां पुनर्भे श्रवणत्रये ॥ मूले चांत्येऽश्विनी-पुष्ये ज्येष्ठाश्लेषार्द्रभे मृगे ॥ वैद्यविद्याकुजेज्जेर्के ज्येष्ठाही-नेत्र गारुडी ॥ ६२ ॥

अब वैद्यविद्या और गारुडीविद्यारंभ लिखतेहैं—हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, रेवती, अश्विनी, पुष्य, ज्येष्ठा, आश्लेषा, आर्द्रा, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें वैद्यविद्याका आरंभ शुभ होताहै और मंगल, सोमवार, रविवार, और ज्येष्ठाविना शेष इन्हीं नक्षत्रोंमें गारुडी विद्या सर्पोंके पकडने और खिलाने, विष झाडनेकी विद्याका प्रारम्भ करै ॥ ६२ ॥

अथ जैनविद्यारंभः ।

श्रवत्रये मघापूर्वानुराधारेवतीत्रये ॥ पुनर्भे स्वातिभे सूर्ये शुक्रे जैनागमं पठेत् ॥ ६३ ॥

अब जैन विद्यारंभ लिखतेहैं—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मघा, पूर्वा तीनों, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, भरणी, पुनर्वसू, स्वाति नक्षत्र और रवि शुक्रवारमें जैनशास्त्रको पढे ॥ ६३ ॥

अथ पारशीतुरुष्कशास्त्रारंभः ।

ज्येष्ठाश्लेपामघापूर्वारेवतीभरणीद्वये ॥ विशाखार्द्रोत्तरापाढा-शतभे पापवासरे ॥ ६४ ॥ लग्ने स्थिरे सचंद्रे च पारसी-मारबीं पठेत् ॥

अब पारसी तुरुष्क शास्त्रारंभ लिखतेहैं—ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, पूर्वा तीनों, रेवती, भरणी, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा, उत्तराषाढा, शतभिषा,इन नक्षत्रोंमें और पापग्रहोंके वारोंमें ॥ ६४ ॥ चंद्रमायुक्त स्थिरलग्नमें पारसी, अरबी, तुर्की विद्याके पढनेका आरंभ करे ॥

अथ लिप्यारंभः ।

शुभे तिथौ शुभे वारे रेवतीयुगुले तथा ॥ श्रवणे चानुरा-धायां तथैवार्द्रादिषु त्रिषु ॥ ६५ ॥ हस्तादित्रितये कुर्या-ल्लेखनारंभणं सुधीः ॥ ६६ ॥

अब लिप्यारंभ लिखतेहैं—शुभतिथि, शुभवार, रेवती, अश्विनी, श्रवण, अनुराधा, आर्द्रा, पुनर्वसू, पुष्य ॥ ६५ ॥ हस्त, चित्रा, स्वाती नक्षत्र इन्होंमें बुद्धिमान् लिखनेका आरंभ करे ॥ ६६ ॥

अथ रत्नपरीक्षा ।

पुनर्भे शतहस्तर्क्षे श्रवोज्येष्ठे परीक्षणम् ॥ रत्नानामष्टमीं भूतां हित्वा भौमं शनैश्चरम् ॥ ६७ ॥

अब रत्नपरीक्षा लिखतेहैं—पुनर्वसु, शतभिषा, हस्त, श्रवण, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें रत्नोंकी परीक्षा करै परन्तु अष्टमी चौदश तिथि और मंगल, शनिवारको त्यागदेवे ॥ ६७ ॥

अथ शिल्पविद्यारंभः ।

हस्तत्रये श्रवद्व्यर्क्षे त्र्युत्तरे रोहिणीमृगे ॥ रेवत्यामश्विनीपुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ हस्ते तिथौ शुभे वारे शिल्पविद्यां समारभेत् ॥ ६८ ॥

अब शिल्पविद्यारंभ लिखतेहैं—हस्त, चित्रा, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसू, अनुराधा, हस्त नक्षत्र शुभतिथि शुभवारमें शिल्पविद्याका आरंभ करै ॥ ६८ ॥

अथ राजदर्शनम् ।

त्र्युत्तरे श्रवणद्वंद्वे मृगे पुष्याऽनुराधयोः ॥ रोहिण्यां रेवतीयुग्मे चित्राहस्ते शुभेहनि ॥ बलिन्यर्केर्कवारेपि राजदर्शनमीरितम् ॥ ६९ ॥

अब राजदर्शन लिखतेहैं—तीनों उत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिर, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, अश्विनी, चित्रा, हस्त नक्षत्र. बलवान् सूर्य तथा रविवारमें राजाका दर्शन करना कहाहै ॥ ६९ ॥

अथ राजसेवा ।

हस्तद्वयेऽनुराधायां रेवतीयुगुले मृगे ॥ पुष्ये बुधे गुरौ शुक्रे सत्तिथौ रविवासरे ॥ ७० ॥ योनिराशिपयोर्मैत्र्यां स्वामी सेव्योऽनुजीविभिः ॥

अब राजसेवा लिखतेहैं—हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिरा, पुष्य नक्षत्र. बुध, बृहस्पति, शुक्र, रविवार तथा शुभ

तिथिमें ॥ ७० ॥ और योनि तथा राशिके स्वामियोंकी मित्रता होय तो सेवकोंके लिये स्वामीकी सेवा करना उचित होताहै ॥

अथ दासीसंग्रहः ।

उत्तरासु च रोहिण्यां दासदास्यादिसंग्रहः ॥ ७१ ॥

अब दासीसंग्रह लिखतेहैं—उत्तरा तीनों, रोहिणी नक्षत्रमें दास दासियोंका संग्रह करना शुभ होताहै ॥ ७१ ॥

अथ राज्ञां छत्रचामरसिंहासनादिकृत्यम् ।

चामरच्छत्रदोलादीन्द्वीपिसिंहासनादिकम् ॥ पट्टाभिषेकभे सर्वं विदध्याच्छोभने दिने ॥ ७२ ॥

अब राजाओंका छत्र, चामर, सिंहासनादिकृत्य लिखतेहैं—चँवर, छत्र, हिंडोला इत्यादि गेंडेके आकारका आसन वा सिंहासन इत्यादि सब कार्य राजगद्दीमें कहे हुए नक्षत्रोंमें तथा शुभ दिनमें करे ॥ ७२ ॥

अथ मुद्राकरणम् ।

त्र्युत्तरे चानुराधायां श्रवणत्रितये तथा ॥ पुनर्वसुद्वये हस्त-त्रितये रेवतीयुगे ॥ ७३ ॥ मृगशीर्षे च रोहिण्यामष्टमीपंच-मीदिने ॥ तृतीयायां त्रयोदश्यां दशम्यां पूर्णिमातिथौ ॥ ७४ ॥ त्यक्त्वा शनैश्चरं सोमं मुद्राकार्यं प्रशस्यते ॥ ७५ ॥

अब मुद्राकरण लिखतेहैं—तीनों उत्तरा, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसू, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाति, रेवती, अश्विनी ॥ ७३ ॥ मृगशिरा, रोहिणी, नक्षत्र; अष्टमी, पंचमी, तृतीया, त्रयोदशी, दशमी, पूर्णिमा तिथिमें और शनैश्चर, सोमवारको छोडकर अन्य वारोंमें (मुद्रा) टकसालमें रुपया ढालना शुभ होता है ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

अथ गजाश्वाद्यारोहणम् ।

रेवतीयुगुले हस्तत्रये कर्णत्रये मृगे ॥ पुनर्वसुद्वये कुर्याच्छनिभौमान्यवासरे ॥ गजाश्वरथमुख्यानामारोहं च शुभे तिथौ ॥ ७६ ॥

अब गजाश्वाद्यारोहण लिखतेहैं—रेवती, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृगशिरा, पुनर्वसू पुष्य नक्षत्र और शनि, मंगल विना अन्य वारोंमें, शुभ तिथियोंमें हाथी घोडे रथ आदिपर चढना शुभ होताहै ॥ ७६ ॥

अथ शिविकारोहणं तत्कृत्यं च ।

उत्तरारेवतीयुग्मे त्रिभे हस्तात्रिभे श्रुतेः ॥ पुनर्वस्वोस्तथा पुष्येऽनुराधाद्वितये मृगे ॥ रोहणं शिविकायास्तु सल्लग्ने घटनं तथा ॥ ७७ ॥

अब शिविकारोहण और उसका कृत्य लिखतेहैं—तीनों उत्तरा, रेवती, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसू, पुष्य, अनुराधा, ज्येष्ठा, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें पालकीपर चढना तथा इन्ही नक्षत्रों और शुभ लग्नमें पालकीका बनवाना शुभ होताहै ॥ ७७ ॥

अथ गजकृत्यम् ।

श्रवणादित्रये हस्तत्रये वा रेवतीद्वये ॥ मृगे पुष्येऽनुराधायां रोहिण्यां त्र्युत्तरे तथा ॥७८॥ पुनर्वस्वोः शुभे वारे गजकार्यं शनेर्दिने ॥ ७९ ॥

अब गजकृत्य लिखतेहैं—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, चित्रा, स्वाती, रेवती, अश्विनी, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, तीनों उत्तरा ॥ ७८ ॥ पुनर्वसू इन नक्षत्रोंमें तथा शुभवार और शनिवारमें भी गजकार्य शुभ होताहै ॥ ७९ ॥

अथ गजस्यांकुशः ।

शुभवारे शुभे लग्ने शुभांशे शोभने तिथौ ॥ अंकुशाः करिणां योज्याः शनेर्लग्ने शनेर्दिने ॥ ८० ॥

अब गजके अंकुशके कृत्य लिखतेहैं-शुभवार, शुभलग्न, शुभ, नवांशक, शुभ तिथिमें तथा शनिकी लग्न (मकर, कुंभ) और शनिवारमें हाथियोंका अंकुश बनवाना और चलाना शुभ होताहै ॥ ८० ॥

अथाश्वकृत्यम् ।

शुभेहनि तथा हस्ते धनिष्ठारेवतीयुगे ॥ पुनर्वसुद्वये स्वातिमृगशीर्षे शताभिधे ॥ वर्जयित्वा कुजं रिक्तामश्वकार्यं शुभावहम् ॥ ८१ ॥

अब अश्वकृत्य लिखतेहैं-शुभ तिथिमें तथा हस्त, धनिष्ठा, रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, स्वाती, मृगशीर्ष, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें और रिक्ता तथा मंगलको छोडकर अन्य वारोंमें अश्वकार्य शुभकारक होताहै ॥ ८१ ॥

अथ पल्याणादिनिर्माणम् ।

श्रवणे शतभे हस्ते पुष्ये मूले मृगेश्विभे ॥ पुनर्वस्वोर्गजाश्वोष्ट्रपल्याणकरणं शुभम् ॥ ८२ ॥

अब पल्याणादि निर्माण लिखतेहैं-श्रवण,शतभिषा, हस्त, पुष्य, मूल, मृगशिरा, अश्विनी, पुनर्वसू इन नक्षत्रोंमें हाथी, घोडा ऊंटका पलान बनवाना शुभ होताहै ॥ ८२ ॥

अथाश्वस्य विशेषकृत्यानि ।

चौलोक्ते खरकृत्यादि शिक्षाविद्योक्तभादिषु ॥ वासग्रासादिकं त्वन्नाशनोक्तर्क्षेषु वाजिनाम् ॥ ८३ ॥

अब अश्वका विशेष कृत्य लिखतेहैं-मुंडनकर्ममें जो नक्षत्रादि कहेहैं तिनमें गधेका कार्य करना चाहिये और विद्यारंभमें जो

नक्षत्रादि कहेहैं तिनमें घोडेका (शिक्षा) सिखाना शुभ होताहै और अन्न प्राशनोक्त नक्षत्रोंमें घोडोंको घास दाना आदि खिलाना शुभ होताहै ॥ ८३ ॥

अथ रथकृत्यम्।

पुष्ये पुनर्वसूज्येष्ठाऽनुराधारेवतीद्वये ॥ श्रवणादित्रिभे हस्तत्रितये रोहिणीमृगे ॥ ८४ ॥ सार्के सौम्यदिने सौम्यविलग्ने रथकर्म सत् ॥ ८५ ॥

अब रथकृत्य लिखतेहैं—पुष्य, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त चित्रा, स्वाति, रोहिणी, मृगशिर ॥ ८४ ॥ रवि तथा शुभ वार और शुभलग्नमें रथका कर्म शुभ होताहै ॥ ८५ ॥

अथ शस्त्रघट्टनम्।

कृत्तिकायां विशाखायां भौमार्कशनिवासरे ॥ सँल्लग्ने घटितं शस्त्रं नृपाणां जयदायकम् ॥ ८६ ॥

अब शस्त्र घट्टन लिखतेहैं—कृत्तिका, विशाखा नक्षत्र. मंगल, रवि, शनि वार. शुभलग्न इनमें शस्त्र बनवाना राजाओंके लिये जयदायक होताहै ॥ ८६ ॥

अथ शस्त्रधारणम्।

पुनर्वसुद्वये हस्ते चित्रायां रोहिणीद्वये ॥ विशाखादित्रये कुर्यान्त्युत्तरे रेवतीद्वये ॥ ८७ ॥ रिक्तां विना तिथौ सूर्यशुक्रजीवदिने तथा ॥ सन्नाहछुरिकाखड्गकुंतशस्त्रादिधारणम् ॥ ८८ ॥

अब शस्त्र धारण करना लिखतेहैं—पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, रोहिणी, मृगशिर, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, तीनों उत्तरा, रेवती,

अश्विनी ॥ ८७ ॥ नक्षत्र और रिक्ताविना अन्य तिथि; तथा रवि, शुक्र, बृहस्पति वारमें वखतर, छुरी, तलवार, भाला, शस्त्रादि धारण करै ॥ ८८ ॥

अथ धनुर्विद्यारंभः ।

अनुराधामघापुष्यमृगशीर्षेष्टमीतिथौ ॥ धनुर्विद्यादिकं कार्यं द्वादश्यां शुभवासरे ॥ ८९ ॥

अब धनुर्विद्यारंभ लिखतेहैं-अनुराधा, मघा, पुष्य, मृगशीर्ष नक्षत्र; अष्टमी, द्वादशी तिथि, शुभवारमें धनुर्विद्यादिका आरंभ करना शुभ होताहै ॥ ८९ ॥

अथ कुंतादिसर्वशस्त्राभ्यासः ।

हस्तत्रयोत्तरेश्विन्यां पुनर्भे श्रवपुष्ययोः॥शुभाहे विबुधे खड्ग-कुंतादींश्च समभ्यसेत् ॥ ९० ॥

अब कुन्तादि सर्वशस्त्राभ्यास लिखतेहैं--हस्त, चित्रा, स्वाती, उत्तरा, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण, पुष्य नक्षत्र और बुधविना शुभ, दिनमें खड्ग कुन्तादि शस्त्रोंका अभ्यास करै ॥ ९० ॥

अथाग्निशस्त्रघट्टनं धारणं च ।

विशाखाकृत्तिकापूर्वामघाश्लेषाश्विनीमृगे ॥ मूलार्द्राभरणी-ज्येष्ठे सजीवे क्रूरवासरे ॥ घट्टनं धारणं प्रोक्तं वह्निशस्त्रस्य शोभनम् ॥ ९१ ॥

अब अग्निशस्त्रघट्टन और धारण लिखतेहैं-विशाखा,कृत्तिका,पूर्वा, मघा, आश्लेषा, अश्विनी, मृगशिर, मूल,आर्द्रा भरणी,ज्येष्ठा नक्षत्र और बृहस्पतिसहित क्रूर वारमें (अग्निशस्त्र) बंदूक, तोप, तमंचा आदिका बनवाना और धारण करना शुभ होताहै ॥ ९१॥

अथ नालिकाख्याग्निशस्त्रकृत्यम् ।

आश्लेषाकृत्तिकामूलज्येष्ठार्द्राभरणीश्रव ॥ पूर्वाहस्तचतुर्ष्वेत्ये

पुनर्वसुमघाद्वये ॥ ९२ ॥ रिक्ताजयासु पापाहे नालिकास्त्रविधिः शुभः ॥ ९३ ॥

अव नालिकाख्य अग्निशस्त्र कृत्य लिखतेहैं-आश्लेषा, कृत्तिका, मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, श्रवण,तीनों पूर्वा, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, रेवती, पुनर्वसु, मघा, पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र ॥ ९२ ॥ और रिक्ता ४।९।१४ जया ३।८।१३ तिथि; पापवारमें (नालिकास्त्र) तोप वंदूक वनवाना शुभ होताहै ॥ ९३ ॥

अथ शत्रुचोरवंधनं ताडनं च।

ज्येष्ठार्द्राभरणीपूर्वामूलाऽश्लेषामघाह्वये ॥ क्रूरखेटयुते लग्ने क्रूरमंदारवासरे ॥ शत्रूणां वंधनं कुर्यात्कशाभिस्ताडनं तथा ॥ ९४ ॥

अव शत्रु तथा चोरका वंधन और ताडन लिखतेहैं-ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, ३ पूर्वा, मूल, आश्लेषा, मघा नक्षत्र और क्रूरग्रह युक्त लग्न तथा क्रूरवार शनैश्चर, मंगल वारमें ॥ शत्रुओंका वांधना, कोडेसे ताडना (पीटना) शुभ होताहै ॥ ९४ ॥

अथ शत्रुसंधिः।

अनुराधामघापुष्ये तिथ्यर्द्धे तैतिलाभिधे ॥ लग्ने सद्दृष्टिगेऽष्टम्यां द्वादश्यां संधिरिष्यते ॥ ९५ ॥

अव शत्रुसंधि लिखतेहैं-अनुराधा, मघा, पुष्य नक्षत्र. तैतिल करण. शुभग्रहसे दृष्ट लग्न. अष्टमी, द्वादशी तिथि इनमें शत्रुओंके साथ मिलाप करना शुभ होताहै ॥९५ ॥

अथ मद्यारंभः।

मूलार्द्राशतभज्येष्ठापूर्वाश्लेषामघासु च ॥ भरण्यां क्रूरवारे च मद्यकर्मेरितं वुधैः ॥ ९६ ॥

अश्विनी ॥ ८७ ॥ नक्षत्र और रिक्ताविना अन्य तिथि; तथा रवि, शुक्र, बृहस्पति वारमें वखतर, छुरी, तलवार, भाला, शस्त्रादि धारण करै ॥ ८८ ॥

अथ धनुर्विद्यारंभः ।

अनुराधामघापुष्यमृगशीर्षेष्टमीतिथौ ॥ धनुर्विद्यादिकं कार्यं द्वादश्यां शुभवासरे ॥ ८९ ॥

अव धनुर्विद्यारंभ लिखतेहैं–अनुराधा, मघा, पुष्य, मृगशीर्ष नक्षत्र; अष्टमी, द्वादशी तिथि, शुभवारमें धनुर्विद्यादिका आरंभ करना शुभ होताहै ॥ ८९ ॥

अथ कुंतादिसर्वशस्त्राभ्यासः ।

हस्तत्रयोत्तरेश्विन्यां पुनर्भे श्रवपुष्ययोः॥शुभाहे विबुधे खड्ग-कुंतादींश्च समभ्यसेत् ॥ ९० ॥

अव कुन्तादि सर्वशस्त्राभ्यास लिखतेहैं–हस्त, चित्रा, स्वाती, उत्तरा, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण, पुष्य नक्षत्र और बुधविना शुभ, दिनमें खड्ग कुन्तादि शस्त्रोंका अभ्यास करै ॥ ९० ॥

अथाग्निशस्त्रघट्टनं धारणं च ।

विशाखाकृत्तिकापूर्वामघाश्लेषाश्विनीमृगे ॥ मूलार्द्राभरणी-ज्येष्ठे सजीवे क्रूरवासरे ॥ घट्टनं धारणं प्रोक्तं वह्निशस्त्रस्य शोभनम् ॥ ९१ ॥

अव अग्निशस्त्रघट्टन और धारण लिखतेहैं–विशाखा,कृत्तिका,पूर्वा, मघा, आश्लेषा, अश्विनी, मृगशिर, मूल,आर्द्रा भरणी, ज्येष्ठा नक्षत्र और बृहस्पतिसहित क्रूर वारमें (अग्निशस्त्र) वंदूक, तोप, तमंचा आदिका वनवाना और धारण करना शुभ होताहै ॥ ९१॥

अथ नालिकाख्याग्निशस्त्रकृत्यम् ।

आश्लेषाकृत्तिकामूलज्येष्ठार्द्राभरणीश्रव ॥ पूर्वाहस्तचतुर्ष्वंत्ये

पुनर्वसुमघाह्वये ॥ ९२ ॥ रिक्ताजयासु पापाहे नालिकास्त्र-
विधिः शुभः ॥ ९३ ॥

अब नालिकाख्य अग्निशस्त्र कृत्य लिखतेहैं-आश्लेपा, कृत्तिका, मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, श्रवण, तीनों पूर्वा, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, रेवती, पुनर्वसु, मघा, पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र ॥ ९२ ॥ और रिक्ता ४। ९। १४ जया ३। ८। १३ तिथि; पापवारमें (नालिकास्त्र) तोप बंदूक बनवाना शुभ होताहै ॥ ९३ ॥

अथ शत्रुचोरबंधनं ताडनं च।

ज्येष्ठार्द्राभरणीपूर्वामूलाऽश्लेपामघाह्वये ॥ क्रूरखेटयुते लग्ने
क्रूरमंदारवासरे ॥ शत्रूणां बंधनं कुर्यात्कशाभिस्ताडनं
तथा ॥ ९४ ॥

अब शत्रु तथा चोरका बंधन और ताडन लिखतेहैं-ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, ३ पूर्वा, मूल, आश्लेपा, मघा नक्षत्र और क्रूरग्रह युक्त लग्न तथा क्रूरवार शनैश्चर, मंगल वारमें ॥ अत्रुओंका बांधना, कोडेसे ताडना (पीटना) शुभ होताहै ॥ ९४ ॥

अथ शत्रुसंधिः।

अनुराधामघापुष्ये तिथ्यर्द्धे तैतिलाभिधे ॥ लग्ने सद्दृष्टिगे-
ऽष्टम्यां द्वादश्यां संधिरिष्यते ॥ ९५ ॥

अब शत्रुसंधि लिखतेहैं-अनुराधा, मघा, पुष्य नक्षत्र. तैतिल करण. शुभग्रहसे दृष्ट लग्न. अष्टमी, द्वादशी तिथि इनमें शत्रुओंके साथ मिलाप करना शुभ होताहै ॥ ९५ ॥

अथ मद्यारंभः।

मूलार्द्राशतभज्येष्ठापूर्वाश्लेपामघासु च ॥ भरण्यां क्रूरवारे
च मद्यकर्मेरितं बुधैः ॥ ९६ ॥

अब मद्यारम्भ लिखतेहैं—मूल, आर्द्रा, शतभिषा, ज्येष्ठा, पूर्वा तीनों, आश्लेषा, मघा, भरणी नक्षत्र और क्रूरवारमें मद्यकर्म करना पंडितोंने शुभ कहाहै ॥ ९६ ॥

अथ मादकवस्तुभक्षणम् ।

आर्द्राश्लेषामघापूर्वाज्येष्ठामूलशताभिधे ॥ भरण्यां सुदिने मंदे चाऽश्नीयान्मादकं मधु ॥ ९७ ॥

अब मादकवस्तु भक्षण लिखतेहैं—आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, तीनों पूर्वा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, भरणी इन नक्षत्रोंमें और शुभदिन तथा शनैश्चरके दिन नशा करनेवाली मदिरादि वस्तुका भक्षण करै ॥ ९७ ॥

अथ नवांगनाभोगः ।

प्रथमाभिगमः शस्तो नववध्वाः शुभेहनि ॥ गर्भाधानोक्तनक्षत्रे शस्ते ज्योत्स्नाकरे निशि ॥ ९८ ॥

अब नवांगनाभोग लिखतेहैं—शुभवारमें और गर्भाधानमें जो नक्षत्र कहेहैं तिनमें श्रेष्ठ चंद्रमामें तथा रात्रिके समय नवीन वधूका प्रथमाभिभोग शुभ होताहै ॥ ९८ ॥

अथ गीतनृत्यारंभः ।

रेवत्यामनुराधायां धनिष्ठादिद्वये करे ॥ रोहिणीयुग्मले पुष्ये त्र्युत्तरे गीतनर्त्तने ॥ ९९ ॥

अब गीतनृत्यारम्भ लिखतेहैं—रेवती, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें गाने नाचनेका आरम्भ शुभ होताहै ॥ ९९ ॥

अथ नटनर्त्तकीकृत्यम्

मृगार्द्रारोहिणीपुष्ये पुनर्भे
त्यं शृंगारजीविनाम् ॥

अब नटनर्त्तकी कृत्य लिखतेहैं–मृगशिरा, आर्द्रा, रोहिणी, पुष्य, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, तीनों उत्तरा, मूल इन नक्षत्रोंमें शृंगारद्वारा आजीविका करनेवाले नटनटनियोंका कृत्य शुभ होताहै ॥ १०० ॥

अथ दुंदुभीमृदंगादिकरवाद्यम् ।

हस्तत्रयेनुराधांत्ये पुनर्वसुयुगेश्विभे ॥ श्रवत्रये मृगेऽर्केह्नि शुभे पूर्णाजयासु च ॥ शुभं दुंदुभिभेर्यादिकरवाद्यं समीरितम् ॥ १०१ ॥ पूर्वोक्तेष्वथ वंशाद्यं मुखवाद्यं समीरितम् ॥१०२॥

अब दुंदुभी मृदंगादि करवाद्य लिखतेहैं–हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, रेवती, पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृगशिर इन नक्षत्रोंमें. रवि तथा शुभ वारोंमें. पूर्णा और जया तिथिमें दुंदुभी भेरी आदि (हस्तवाद्य) हाथसे बजानेका बाजा बजाना शुभ होताहै और पूर्वोक्त इसी मुहूर्त्तमें वंशी आदि मुखवाद्यका बजानाभी शुभ होताहै ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

अथ मृगया ।

आश्लेषाभरणीज्येष्ठापूर्वार्द्रास्वातिमूलभे ॥ विशाखायां च पापेह्नि यायादाखेटके नृपः ॥ १०३ ॥

अब मृगया लिखतेहैं–आश्लेषा, भरणी, ज्येष्ठा, तीनों पूर्वा, आर्द्रा, स्वाति, मूल, विशाखा, इन नक्षत्रोंमें और पाप वारोंमें राजा शिकारके निमित्त जाय ॥ १०३ ॥

अथ जलयंत्रमार्गक्रिया ।

पूर्वाश्लेषामघामूलशतपुष्येंबुचारिणि ॥ लग्ने व्यार्किकुजे वारे जलयंत्रक्रिया शुभा॥१०४॥वा रोहिणीतो दिनभं क्रमेण

मध्यादिरुद्रांतदिशं त्रिभिर्भैः॥मध्येंद्रपाश्युत्तररुद्रदिग्भैःशुभं च वह्नित्रयवायुदिक्ष्वसत् ॥१०५॥ इति ज्योतिर्विदाभरणे ॥

अव जलयंत्रमार्गक्रिया लिखतेहैं-पूर्वा, आश्लेपा, मघा, मूल, शतभिपा, पुष्य, इन नक्षत्रोंमें और जलचारी लग्नोंमें. शनि, मंगल विना शुभ वारोंमें जलयन्त्र बनाना शुभ होताहै॥१०४॥ अथवा रोहिणीसे दिनके नक्षत्रतक गिने. क्रमसे तीन २ नक्षत्र जलयंत्रके मध्य और पूर्वादि दिशासे लेकर ईशान दिशातक स्थापित करे जिनमें मध्य ३, पूर्व ३, पश्चिम ३, उत्तर ३, ईशान ३, दिशाओंके तीन २ नक्षत्र जलयंत्र बनानेमें शुभ और अग्निकोणसे तीन दिशा अर्थात् अग्निकोण, दक्षिण, नैर्ऋत्य और वायव्य दिशाओंमें तीन २ नक्षत्र अशुभ होतेहैं ऐसा ज्योतिर्विदाभरण नामक ग्रंथमें लिखाहै ॥ नीचे लिखे चक्रसे स्पष्ट विदित होताहै ॥ १०५ ॥

अथ जलयन्त्रकरणचक्रम् ।

मध्य	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	दिशानामानि
३	३	३	३	३	३	३	३	३	नक्षत्राणि
शुभ	शुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	शुभ	शुभाशुभफलानि

अथ वापीकूपतडागादीनामारंभः ।

अनुराधामघाहस्तरेवतीपूत्तरात्रये ॥ रोहिणीयुगुले पुष्ये धनिष्टाद्वितये तथा ॥१०६॥ पूर्वाषाढाभिधे चैव शुभे मासि शुभे दिने॥ वापीकूपतडागानामारंभः कथितो बुधैः॥१०७॥

अव वापी कूप तडागादिकोंका आरम्भ लिखतेहैं-अनुराधा, मघा, हस्त, रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिपा॥१०६॥ पूर्वाषाढा इन नक्षत्रोंमें. शुभ मासमें, शुभ दिनमें पंडितोंने बावडी, कुआ, तालाव आदिका बनाना शुभ कहाहै ॥ १०७ ॥

अथ वृक्षलतादिरोपणमारामकृत्यम्।

हस्तचित्रोत्तरामूलेऽनुराधारेवतीद्वये ॥ विशाखारोहिणीपुष्येष्वारामोतिर्मृगे शुभा ॥ १०८ ॥

अब वृक्ष लतादि रोपण और बगीचेके कृत्य लिखतेहैं—हस्त, चित्रा उत्तरा, मूल अनुराधा, रेवती, अश्विनी, विशाखा, रोहिणी, पुष्य, मृगशिर इन नक्षत्रोंमें बाग लगाना शुभ होता है ॥ १०८ ॥

अथ नौकाकृत्यम्।

ज्येष्ठोभयं विशाखार्द्रारोहिणीभरणीद्वयम् ॥ आश्लेषां च विहायान्यनक्षत्रेऽर्के गुरौ मृगे ॥ १०९ ॥ सल्लग्ने सत्तिथौ नावो घट्टनं तारणं शुभम् ॥ ११० ॥

अब नौकाकृत्य लिखतेहैं—ज्येष्ठा, मूल, विशाखा, आर्द्रा, रोहिणी, भरणी, कृत्तिका, आश्लेषा इन नक्षत्रोंको छोडकर अन्य नक्षत्रोंमें और रवि,वृहस्पति वारमें.मकर तथा शुभ लग्नमें.शुभ तिथिमें नावका बनवाना तथा जलमें चलाना शुभ होताहै ॥ १०९ ॥ ११०॥

अथ सामान्यतः पशुकृत्यं रक्षा च।

त्यक्त्वाष्टमीममां रिक्तां रोहिणीमुत्तरात्रयम् ॥ १११ ॥ चित्राख्यं श्रवणं भौमं पशूनां सर्वकर्म च ॥ प्रवेशनिर्गमौ चापि न त्याज्यं निजयोनिभम् ॥ ११२ ॥

अब सामान्यतः पशुकृत्य और रक्षा लिखतेहैं—अष्टमी, अमावास्या, रिक्ता तिथि; रोहिणी, तीनों उत्तरा ॥ १११ ॥ चित्रा, श्रवण ये नक्षत्र तथा मंगलवार इन सबको छोडकर पशुओंके सब कर्म और पशुओंका प्रवेश तथा निर्गम शुभ होतेहें । परन्तु पशुकर्ममें निजयोनिका नक्षत्र त्याज्य नहीं होताहै ॥ ११२ ॥

अथोष्ट्रमहिष्यादिकृत्यम्।

धनिष्ठाद्वितये पूर्वाषाढातिर्यङ्मुखोडुपु ॥ अजाविमहिषोष्ट्राणां कृत्यं चाश्वतरीशुनाम् ॥ ११३ ॥

अब उष्ट्रमहिष्यादिकृत्य लिखतेहैं—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वापाढा और तिर्यङ्मुख नक्षत्रोंमें बकरी, भेड, भैंस, ऊँट, खच्चरी, कुत्ता इन सबका कृत्य शुभ होताहै ॥ ११३॥

अथ मृगादिवनचारिशृंगिकृत्यम् ।

ज्येष्ठास्वात्यश्विनीपुष्ये पुनर्भे रोहिणीकरे ॥ उत्तरासु शुभं कृत्यं शृंगिणां वनचारिणाम् ॥ ११४ ॥

अब मृगादि वनचर और शृंगियोंके कृत्य लिखतेहैं—ज्येष्ठा,स्वाती, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी, हस्त, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें शींगवाले वनचारियोंका कृत्य शुभ होताहै ॥ ११४ ॥

अथ नखिकृत्यम् ।

ज्येष्ठार्द्रारोहिणीहस्ते विशाखापुष्यभेश्विभे ॥ क्रूराह्ने व्याघ्र-मुख्यानां कृत्यं नखबलीयसाम् ॥ ११५ ॥

अब नखिकृत्य लिखतेहैं—ज्येष्ठा, आर्द्रा, रोहिणी, हस्त, विशाखा, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें और क्रूर वारोंमें नखोंसे अतिबली व्याघ्रादि जीवोंका कृत्य शुभ होताहै ॥ ११५ ॥

अथ पशूनां क्रयविक्रयौ ।

विशाखारेवतीपुष्ये धनिष्ठाशतभेऽश्विभे ॥ हस्ते चैवादिता-विन्द्रे पशूनां क्रयविक्रयौ ॥ ११६ ॥

अब पशुओंका क्रयविक्रय लिखतेहैं-विशाखा, रेवती, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, हस्त, पुनर्वसु, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें पशु-ओंका खरीदना, वेचना शुभ होताहै ॥ ११६ ॥

अथ पक्षिकृत्यम् ।

शुभाह्ने सर्वो तिर्यङ्मुखे चोर्ध्वमुखेपि भे ॥ सारिकाशुक-मुख्यानां पक्षिणां कृत्यमुत्तमम् ॥ ११७ ॥

अब पक्षिकृत्य लिखतेहैं-रविवारसहित शुभवारमें और तिर्यङ्मुख, ऊर्द्धमुख नक्षत्रोंमें मैना, शुआ आदि पक्षियोंका कृत्य उत्तम होताहै ॥ ११७ ॥

अथ सर्ववस्तुक्रयः।

शततारास्विनीचित्राश्रवणस्वातिभेषु च ॥ रेवत्यां च क्रयः श्रेष्ठो विक्रयो न कदाचन ॥ ११८ ॥

अब सर्ववस्तुक्रय लिखतेहैं-शतभिषा, अश्विनी, चित्रा, श्रवण, स्वाती, रेवती इन नक्षत्रोंमें खरीदना श्रेष्ठ होताहै और बेचना कभी श्रेष्ठ नहीं होता ॥ ११८ ॥

अथ सर्ववस्तुविक्रयः ।

विशाखाकृत्तिकाश्लेषाभरणीपूर्विकात्रये ॥ विक्रयः सत्तिथावेषु कर्त्तव्यो न क्रयः शुभः ॥ ११९ ॥

अब सर्ववस्तु विक्रय लिखतेहैं-विशाखा, कृत्तिका, आश्लेषा, भरणी, तीनों पूर्वा इन नक्षत्रोंमें और शुभ तिथिमें बेचना शुभ होताहै औरु खरीदना शुभ नहीं होता ॥ ११९ ॥

अथ गृहक्षेत्रादिभूमिक्रयविक्रयौ ।

जीवे शुक्रे च नंदासु पूर्णायां मूलभे मृगे ॥ पूर्वाऽऽश्लेषामघांत्ये च विशाखाद्वितये तथा ॥ १२० ॥ पुनर्भे मुनिभिः प्रोक्तं क्रयविक्रयणं भुवः ॥ १२१ ॥

अब गृहक्षेत्रादिभूमिक्रयविक्रयको लिखतेहैं-बृहस्पति, शुक्र वार; नंदा और पूर्णा तिथि; मूल; मृगशिरा, तीनों पूर्वा, आश्लेषा, मघा, रेवती, विशाखा, अनुराधा ॥ १२० ॥ पुनर्वसु इन नक्षत्रोंमें मुनियोंने भूमि, घर, खेत आदिका बेचना शुभ कहाहै ॥ १२१ ॥

अथ वाणिज्यम् ।

अनुराधोत्तरापुष्ये रेवतीरोहिणीमृगे॥ हस्तचित्राश्विभे कुर्या-
द्वाणिज्यं दिवसे शुभे ॥ १२२ ॥

अब वाणिज्य लिखतेहैं–अनुराधा, उत्तरा, पुष्य, रेवती, रोहिणी, मृगशिर, हस्त, चित्रा, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें और शुभ दिनमें वाणिज्य कर्म करै ॥ १२२ ॥

अथ निधिद्रव्यादिवृद्धिसंग्रहौ ।

पुष्ये मृगेऽनुराधायां श्रवणत्रितयेऽश्विभे ॥ पुनर्भेत्ये विशा-
खायां निधेर्वृद्धिश्च संग्रहः ॥ १२३ ॥

अब निधिद्रव्यादि वृद्धिसंग्रह लिखतेहैं–पुष्य, मृगशिर, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, पुनर्वसु, रेवती, विशाखा इन नक्षत्रोंमें (निधि) खजानेकी वृद्धि और संग्रह करना शुभ होताहै ॥ १२३ ॥

अथ द्रव्यनिधीनां गुप्तस्थाने स्थापनम् ।

धनिष्ठोफाविशाखाख्ये पूर्वाषाढाऽभिधेंत्यभे ॥ रोहिण्यां च
निधेर्भूमौ स्थापनं शुभमीरितम् ॥ १२४ ॥

अब द्रव्य और निधियोंका गुप्तस्थानमें स्थापन लिखतेहैं–धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा, पूर्वाषाढा, रेवती, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें खजानेका पृथ्वीमें गाडना शुभ कहाहै ॥ १२४ ॥

अथ द्रव्यप्रयोगः ।

श्रवणादित्रिभे चित्राचतुष्के रेवतीद्वये॥ पुनर्वसुमृगे पुष्ये
शुभो द्रव्यप्रयोगकः ॥१२५॥ संक्रांतौ वृद्धियोगे तु हस्तर्क्षे
रविभौमयोः ॥ न च ग्राह्यमृणं यस्मात्तद्वंशे तत्स्थिरं
भवेत् ॥ १२६ ॥ ऋणच्छेदं तथा कुर्याद्धनं देयं न वै बुधे ॥

अब द्रव्यप्रयोग लिखतेहैं–श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, मृगशिर, पुष्य इन नक्षत्रोंमें (द्रव्यका प्रयोग) ऋण देना शुभ होताहै ॥ ॥ १२५ ॥ संक्रांति, वृद्धि योग, हस्त नक्षत्रमें, रवि मंगल वारमें ऋण नहीं लेना चाहिये क्योंकि, इनमें जो ऋण लेगा तो उसके वंशमें वह ऋण सदैव बना रहेगा निवटेगा नहीं और इसी पूर्वोक्त मुहूर्त्तमें (ऋणच्छेद) कर्जा निवटाना शुभ होताहै ॥ १२६ ॥ और बुधवारमें धन नहीं देना चाहिये ॥

अथ धान्यविक्रयः।

रोहिण्यां विक्रयोन्नस्य धनिष्ठाशतभोत्तरे ॥ १२७ ॥

अब धान्य विक्रय लिखतेहैं–रोहिणी, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें अन्नका वेचना शुभ होताहै ॥ १२७ ॥

अथ रससंग्रहः।

रससंग्रहणं श्रेष्ठं तोयारंभोदितोडुषु ॥ १२८ ॥

अब रससंग्रह लिखतेहैं–जलाशयारम्भोक्त अर्थात् अनुराधा, मघा, हस्त, रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाषाढा इन नक्षत्रोंमें रसका लेना शुभ होताहै ॥१२८॥

अथ वृद्ध्यर्थं धान्यप्रयोगः।

विशाखारोहिणीज्येष्ठापुनर्भेश्विशतत्रये॥ त्र्युत्तरे स्वातिपुष्ये तु धान्यवृद्धिः शुभेरिता ॥ १२९ ॥

अब वृद्ध्यर्थ धान्यप्रयोग लिखतेहैं–विशाखा, रोहिणी, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, अश्विनी, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, तीनों उत्तरा, स्वाति, पुष्य इन नक्षत्रोंमें धान्यवृद्धि शुभ कहीहै ॥१२९॥

अथ हलप्रवाहः।

पुनर्वसुद्वये मूले त्र्युत्तरे रोहिणीद्वये ॥ हस्तत्रयेऽनुराधायां

रेवत्यां श्रवणत्रये ॥ तिथौ वारे शुभेश्विन्यां हलप्रवहणं शुभम् ॥ १३० ॥

अब हलप्रवाह लिखतेहैं-पुनर्वसु, पुष्य, मूल, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, हस्त, चित्रा, स्वाति; अनुराधा, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें शुभ तिथि और शुभ वारमें हल चलाना शुभ होताहै ॥ १३० ॥

अथार्कस्य भुक्तनक्षत्राद्धलचक्रम् ।

सूर्यस्य भुक्तनक्षत्राद्रामा ३ऽष्टक ८ नवा ९ ष्टकम् ८ ॥ अभुक्तं च शुभं ज्ञेयं हलचक्रे क्रमेण भम् ॥ १३१ ॥

अब सूर्यका भुक्त नक्षत्रसे हलचक्र लिखतेहैं--हलचक्रमें सूर्यके भुक्त नक्षत्रसे तीन, आठ, नौ, आठ नक्षत्र क्रमसे अशुभ और शुभ जानने ॥ १३१ ॥

अथ बीजोप्तिस्तचक्रं राहुनक्षत्रात् ।

हस्तत्रये मघापुष्यत्र्युत्तरे रोहिणीद्वये ॥ धनिष्ठारेवतीयुग्मे तथा मूलाऽनुराधयोः ॥१३२॥ शुभे वारे तिथौ श्रेष्ठा बीजोप्तिस्त्वथ राहुभात् ॥ अष्टाग्नी ३ दु १ त्रयं ३ चैकं १ त्रयं ३ दु १ त्रि ३ चतुष्टयम् ४ ॥ १३३ ॥ असच्छुभं क्रमाज्ज्ञेयं दिनर्क्षं फणिचक्रगम् ॥ १३४ ॥

अब बीजोप्ति और उसके चक्र राहुनक्षत्रसे लिखतेहैं-हस्त, चित्रा, स्वाति, मघा, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, धनिष्ठा, रेवती, अश्विनी मूल, अनुराधा इन ॥ १३२ ॥ नक्षत्रोंमें शुभवार और शुभतिथिमें बीज बोना शुभ होता है और राहुके नक्षत्रसे दिनके नक्षत्र तक गिने आठ ८, तीन, ३ एक १, तीन ३, एक १, तीन ३, एक १, तीन ३, चार ४, ये नक्षत्र क्रमसे अशुभ और शुभ जानने इसका नाम फणिचक्र है जैसा कि, चक्रमें लिखाहै ॥ १३४॥

राहुभाद्रींजोतिचक्रम्।

८	३	१	३	१	३	१	३	४	नक्षत्राणि
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	फलानि

अथ सस्यारोपणम्।

हस्तत्रयोत्तरामूले धनिष्ठारोहिणीमृगे ॥ पुष्येश्विन्यऽनुराधायां मघायां शुभवासरे ॥ १३५ ॥ त्यक्त्वा रिक्तां शनिं भौमं सस्यस्यांकुररोपणम् ॥ १३६ ॥

अव सस्यारोपण लिखतेहैं—हस्त, चित्रा, स्वाति, तीनों उत्तरा, मूल, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिर, पुष्य, अश्विनी, अनुराधा, मघा इन नक्षत्रोंमें और शुभ वारोंमें ॥१३५॥ खेती फलादिक पोद लगाना शुभ होताहै परन्तु रिक्ता तिथि.शनि,मंगल वारको त्याग देय ॥१३६॥

अथ सस्यवृक्षलतादीनां वापनं जलेन सेचनं च।

सस्यारोपोदिते काले हित्वा ज्ञाऽर्कमघां करम् ॥ वृक्षसस्यलतादीनां प्रशस्तं जलसेचनम् ॥ १३७ ॥

अव सस्यवृक्षलतादियोंका वपन और जलसे सेचनको लिखते हैं—बुध, रविवार. मघा, हस्त नक्षत्र इनको छोडकर सस्यारोपणोक्त नक्षत्रोंमें सस्य वृक्ष लता आदिका बोना जलसे सींचना शुभ होताहै ॥ ३७ ॥

अथ धान्यच्छेदः।

पूर्वोऽत्तरामघाश्लेषाज्येष्ठार्द्राश्रवणद्वये ॥ भरणीद्वितये मूले मृगे पुष्ये करत्रये ॥१३८॥ धान्यच्छेदः शुभो रिक्तां हित्वा भौमशनैश्चरौ ॥ १३९ ॥

अव धान्यच्छेदन लिखतेहैं—तीनों पूर्वा, उत्तरा, मघा, आश्लेपा, ज्येष्ठा, आर्द्रा, श्रवण, धनिष्ठा, भरणी, कृत्तिका, मूल, मृगशिर.

पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वातीं इनं नक्षत्रोंमें ॥ १३८ ॥ रिक्तावर्जित तिथिमें और मंगल, शनैश्चर वर्जित वारोंमें धान्य काटना शुभ होताहै ॥ १३९ ॥

अथ कणमर्दनम् ।

अनुराधाश्रवोमूले रेवत्यां च मघात्रिभे ॥ ज्येष्ठायां चैव रोहिण्यां शुभं स्यात्कणमर्दनम् ॥ १४० ॥

अब कणमर्दन लिखतेहैं–अनुराधा, श्रवण, मूल, रेवती, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, ज्येष्ठा, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें (कणमर्दन) दाँय चलाना, गाहना शुभ होताहै ॥ १४० ॥

अथ धान्यानयनं फलपुष्पोत्तारणं च ।

रोपणोदितनक्षत्रे वासरे मंदभौमयोः॥ अन्नस्यानयनं पुष्पफलाद्युत्तारणं च सत् ॥ १४१ ॥

अब धान्यानयन और फलपुष्पोत्तारण लिखतेहैं-सस्यारोपणोक्त अर्थात्–हस्त, चित्रा, स्वाती, तीनों उत्तरा, मूल, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, अश्विनी, अनुराधा, मघा इन नक्षत्रोंमें शनि, मंगल वारोंमें अन्नका लाना और फलपुष्पादिकोंका उतारना शुभ होताहै ॥ १४१ ॥

अथ सूपाद्यन्नादिपाकक्रिया ।

मूलचित्रानुराधासु विशाखाकृत्तिकामृगे ॥ उत्तरारोहिणीज्येष्ठारेवतीषु पचिक्रिया ॥ १४२॥ त्यक्त्वा ह्यंबुचरं लग्नं पक्षरंध्रतिथिं शनिम् ॥ १४३ ॥

अब सूपान्नादि पाकक्रिया लिखतेहैं–मूल, चित्रा, अनुराधा, विशाखा, कृत्तिका, मृगशिर, उत्तरा तीनों, रोहिणी, ज्येष्ठा, रेवती इन नक्षत्रोंमें दाल, भात, अन्नादि पकानेकी क्रिया शुभ होतीहै ॥ ॥ १४२ ॥ परन्तु जलचर लग्न, पक्षरंध्र तिथि, शनिवारको छोडदेना चाहिये ॥ १४३ ॥

अथ नवान्नविधिर्नवान्नप्राशनं फलमूलाशनं च।

हस्तचित्रानुराधांत्ये रोहिणीश्रवणद्वये ॥ मृगाश्विन्युत्तरा-
स्वर्के शुभे वारे तिथावपि ॥ नवान्नस्य विधानं च प्राशनं
फलमूलयोः ॥ १४४ ॥

अब नवान्नविधि नवान्नप्राशन और फलमूल प्राशन लिखतेहैं- हस्त, चित्रा, रेवती, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिर, अश्विनी, तीनों उत्तरा, इन नक्षत्रोंमें रविवार शुभवारमें; शुभ तिथिमें नवीन अन्नकी विधि, नवीन अन्नका प्राशन तथा फलमूलका भोजन शुभ होताहै ॥ १४४ ॥

अथ कोष्ठादौ धान्यस्थितिः।

पुनर्भे मृगशीर्षेन्त्येऽनुराधाश्रवणत्रये ॥ हस्तत्रयेऽश्विनी-
पुष्ये रोहिण्यामुत्तरात्रये ॥ १४५ ॥ गुरौ शुक्रे रवींद्वोः स-
त्कोष्ठादौ धान्यरक्षणम् ॥ १४६ ॥

अब कोष्ठादियोंमें धान्यस्थिति लिखतेहैं-पुनर्वसु,मृगशीर्ष, रेवती, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, चित्रा, स्वाति, अश्विनी, पुष्य, रोहिणी; तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें ॥ १४५ ॥ बृहस्पति, शुक्र, रवि, चंद्र वारोंमें कोठे आदि स्थानोंमें धान्यका भरना शुभ होताहै ॥ १४६ ॥

अथ बीजसंग्रहः।

हस्तत्रये पुनर्वस्वौ रोहिण्यां श्रवणद्वये ॥ स्थिरलग्ने शुभे
वारे विचंद्रे बीजसंग्रहः ॥ १४७ ॥

अब बीजसंग्रह लिखतेहैं-हस्त, चित्रा, स्वाति, पुनर्वसु, रोहिणी; श्रवण, धनिष्ठा इन नक्षत्रोंमें; स्थिर लग्नमें और चंद्र विना शुभवारमें बीज इकट्टा करना शुभ होताहै ॥ १४७ ॥

अथ तृणरज्जुभिर्धान्यबंधनम् ।

स्वातौ मूले च हस्तेंत्ये भाद्रापाढाद्वये मृगे ॥ रोहिण्यां काशकोष्ठांतर्धान्यसंरक्षणं शुभम् ॥ १४८ ॥

अब तृणरज्जुओं करके धान्यबंधन लिखतेहैं—मूल, हस्त, रेवती, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वापाढा, उत्तरापाढा, मृगशिर, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें काश मूँज आदिकी रस्सियोंमें धान्यके पूले बाँधना रक्षा करना शुभ होताहै ॥ १४८ ॥

अथ धर्मक्रिया ।

रेवतीद्वितये हस्तत्रितये रोहिणीद्वये ॥ श्रवस्त्रयोत्तरापुण्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ १४९ ॥ ज्ञेज्यशुक्रेंदुसूर्येषु ज्ञेज्यषड्व-र्गशालिनि ॥ लग्ने जीवयुते जीवे बलिष्ठे धर्ममाचरेत् १५० ॥

अब धर्मक्रिया लिखतेहैं—रेवती, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, रोहिणी, मृगशिरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा ॥ १४९ ॥ इन नक्षत्रोंमें बुध, बृहस्पति, शुक्र, चंद्र, रवि इन वारोंमें; बुध और बृहस्पतिके षड्वर्गमें वर्त्तमान जो लग्न सो बृहस्पतिसे युक्त होय तथा बृहस्पति बलिष्ठ होय तो धर्म कर्म करै ॥ १५० ॥

अथ शांतिकपौष्टिककर्म ।

पुनर्वसुद्वये स्वातौ त्र्युत्तरे श्रवणत्रये ॥ रेवतीद्वितीये हस्तेऽ-नुराधारोहिणीद्वये ॥ शांतिकं पौष्टिकं कर्म पुण्याहे कीर्तितं बुधैः ॥ १५१ ॥

अब शांतिक और पौष्टिक कर्म लिखतेहैं—पुनर्वसु, पुष्य, स्वाति, तीनों उत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, अश्विनी, अनुराधा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें और पुण्य दिनमें शान्तिक तथा पौष्टिक कर्म करना पण्डितोंने कहाहै ॥ १५१ ॥

अथ होमादौ खेटाहुतिफलं सूर्यनक्षत्रात्।

रवौ ३ बुधे ६ भृगौ ९ मन्दे १२ चन्द्रे १५ भौमे १८ गुरा २१ वगौ २४ ॥ केतौ २७ च सूर्यभाज्ज्ञेयं प्रत्येकं भत्रयं क्रमात् ॥ होमाहुतिः खलेऽनिष्टा शुभदा शुभखेचरे ॥ १५२ ॥

अथ सूर्यनक्षत्रसे ग्रहोंके भागमें होमाहुतिका फल लिखतेहैं–सूर्यके नक्षत्रसे दिनके नक्षत्र गिने क्रमसे प्रत्येक ग्रहके तीन २ नक्षत्र जानने यथा प्रथम तीन सूर्यके, फिर तीन बुधके, तीन शुक्रके, तीन शनैश्चरके, तीन चंद्रमाके, तीन मंगलके, तीन बृहस्पतिके, तीन राहुके, तीन केतुके इस प्रकार नौ ग्रहोंके सत्ताईस नक्षत्रोंका विभाग कहाहै. होमकी आहुती पापग्रहोंके नक्षत्रोंमें अशुभ और शुभ ग्रहके नक्षत्रोंमें शुभदायिनी होतीहै ॥ १५२ ॥

अथ हवने ग्रहाणां नक्षत्रचक्रम् ॥

सूर्य	बु	शु	श	चं	मं	बृ	रा	के	ग्र.
३	३	३	३	३	३	३	३	३	नक्षत्रा.
अशुभ	शु	शु	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	अशुभ	फलम्

अथ होमादौ वह्निवासफलम्।

तिथिवारयुतिं सैकां चतुर्भिर्भाजयेदिमाम् ॥ शेषेऽभ्रे० च गुणे ३ भूमौ वह्निर्होमे शुभप्रदः ॥ नेष्टः स्वर्गे त्वेकशेषे द्विशेषेऽधोप्यनिष्टकृत् ॥ १५३ ॥

अब होमादिमें अग्निवासफल लिखतेहैं–शुक्लप्रतिपदासे लेकर गत तिथियोंमें वार जोडकर एक १ और मिलावे उसमें चारका भाग देय शेष तीन वा शून्य बचे तो अग्निका निवास पृथ्वीपर जानना जिसका फल शुभदायक है और जो एक १ शेष बचे तो अग्निका

निवास स्वर्गमें जिसका फल अशुभ और दो शेष बचै तो अग्निका निवास पातालमें इसका फल अशुभ जानना ॥ १५३ ॥

अथ मंत्रादिदीक्षा ।

रोहिण्यां त्र्युत्तरे मौंजीबंधनोदितभादिषु ॥ मंत्रदीक्षाशुभे चाह्नि ग्रहणेप्यागमोदिता ॥ १५४ ॥

अब मंत्रादिदीक्षा लिखतेहैं—रोहिणी, तीनों उत्तरा और (मौंजी बंधन) यज्ञोपवीतोक्त नक्षत्रोंमें शुभदिन तथा ग्रहणमें मंत्रदीक्षा लेनी शास्त्रमें शुभ कहीहै ॥ १५४ ॥

अथ दीक्षाकुण्डलीयं बृहन्नरपतौ।

षट्व्येकादशमोदितो दिनकरस्त्रिव्यायषष्ठे शशी लग्नात्सौम्यकुजौ शुभावुपचये केंद्रत्रिकोणे गुरुः ॥ शुक्रः षट्त्रिनवांत्यगोष्टमसुतव्येकादशे सूरजो लग्नांशादिगुरुज्ञचंद्रमहसां सौरेश्च दीक्षाविधौ ॥ १५५ ॥

अब दीक्षाकुंडली बृहन्नरपतिमेंसे लिखतेहैं—मंत्रदीक्षाकी लग्नसे छठे, दूसरे, ग्यारहवें सूर्य स्थित होय; तीसरे, दूसरे, ग्यारहवें, छठे, चंद्रमा होय, बुध और मंगल (उपचय) तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें होंय; बृहस्पति केंद्र १ । ४ । ७ । १० त्रिकोण ९ । ५ वें होय, शुक्र छठे, तीसरे, नौवें, बारहवें होय; शनैश्चर आठवें, पांचवें; दूसरे ग्यारहवें होय; बृहस्पति, बुध, चंद्रमा, शनैश्चरकी लग्न तथा नवांशादिक होय तो मंत्रदीक्षा लेनी शुभ होतीहै ॥ १५५ ॥

अथ मंत्रग्रहणचक्रम् ।

सेनर्क्षादब्ध्यरीन्द्रात्यष्टयेकविंशतिभानि वै ४ । ६ । १४ १७ । २१ ॥ त्रिवनर्क्ष २७ च शस्तानि मन्त्रग्रहणचक्रके १५६॥

अब मंत्रग्रहणचक्र लिखतेहैं—सूर्यके नक्षत्रसे दिनके नक्षत्रतक गिनै चौथा ४, छठा ६, चौदहवाँ १४, सत्रहवाँ १७, इक्कीसवाँ २१, सत्ताईसवाँ २७ नक्षत्र मंत्रग्रहण चक्रमें शुभ होताहै ॥ १५६ ॥

अथ मंत्रयंत्रव्रतोपवासादि।

उफाहस्ताश्विनीकर्णविशाखामृगभेहनि ॥ शुभे सूर्ययुते शस्तं मंत्रयंत्रव्रतादिकम् ॥ १५७ ॥

अब मंत्र, यंत्र, व्रतोपवासादि लिखतेहैं—उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी, श्रवण, विशाखा, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें; रविसहित शुभ वारोंमें; मंत्र, यंत्र, व्रतादिक धारण करना शुभ होताहै ॥ १५७ ॥

अथ वीरसाधनम्।

मघार्द्राभरणीमूले मृगेंगे सबुधे घटे ॥ शुद्धेऽष्टमे भृगौ तुर्ये वीरवेतालसाधनम् ॥ १५८ ॥

अब वीरसाधन लिखतेहैं—मघा, आर्द्रा, भरणी, मूल, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें और बुधयुक्त कुंभ लग्न होय, आठवां स्थान शुद्ध होय, शुक्र चौथे घरमें होय तो वीर वेताल साधन करना शुभ होताहै १५८॥

अथौषधकरणं तत्सेवनं च।

हस्तत्रयेऽनुराधायां मूले पुष्ये श्रवस्त्रये ॥ मृगभे रेवतीयुग्मे पुनर्वस्वोर्विजन्मभे ॥ १५९ ॥ इंदुशुक्रेज्यसूर्याणां वासरे सत्तिथावपि ॥ *द्विःस्वभावे शुभे लग्ने शुद्धे द्यूनमृतिव्यये ॥* भैषज्यं शुभदं प्रोक्तं योग एषां तु पुष्टि दे ॥ १६० ॥

अब औषध करण और सेवन लिखतेहैं—हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, मूल, पुष्य, श्रवण, धनिष्टा, शतभिषा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु इन नक्षत्रोंमें ॥ १५९ ॥ बुध, चंद्र, शुक्र, बृहस्पति, रवि इन वारोंमें; शुभ तिथिमें; द्विस्वभाव लग्नमें वा शुभ लग्नमें और लग्न, सातवाँ, आठवाँ, बारहवाँ स्थान शुद्ध होय तथा जन्मनक्षत्र नहीं होय तथा पुष्टिदायक योग होय तो औषध बनाना, सेवन करना शुभदायक होताहै ॥ १६० ॥

अथ रसोत्पादनम् ।

विशाखाकृत्तिकामूले धनिष्ठाश्विकरे मृगे ॥ ज्येष्ठायामुद्रभे सौम्यवासरेषु रसक्रिया ॥ १६१ ॥

अब रसोत्पादन लिखते हैं-विशाखा, कृत्तिका, मूल, धनिष्ठा अश्विनी, हस्त, मृगशिरा, ज्येष्ठा, आर्द्रा इन नक्षत्रोंमें शुभ वारोंमें रसक्रिया शुभ होतीहै ॥ १६१ ॥

अथ रससेवनम् ।

हस्तत्रयेऽश्विनीपुष्येऽनुराधांत्ये श्रवस्त्रये ॥ अदितौ मृगशीर्षेर्के भौमेज्ये रसभक्षणम् ॥ १६२ ॥

अब रससेवन लिखते हैं-हस्त, चित्रा, स्वाति, अश्विनी, पुष्य, अनुराधा, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, मृगशीर्ष इन नक्षत्रोंमें और रवि, मंगल, बृहस्पति इन वारोंमें रसका सेवन शुभ होता है ॥ १६२ ॥

अथ वातरोगादौ तैलोपवेशनम् ।

हित्वाश्लेपामघामूलं द्वीशार्द्राभरणीद्वयम् ॥ मंदेऽब्जे ज्ञे स्थितिस्तैले तृतीयादित्रिके तिथौ ॥ १६३ ॥

अब वातरोगादिमें तैलोपवेशन लिखतेहैं-आश्लेषा, मघा, मूल, विशाखा, आर्द्रा, भरणी, कृत्तिका इन नक्षत्रोंको छोडकर शेष अन्य नक्षत्रोंमें; शनि, चंद्र, बुध इन वारोंमें; तीज, चौथ, पंचमी तिथिमें तैलमें बैठना शुभ होताहै ॥ १६३ ॥

अथ रक्तमोक्षणं विरेकवमनं च ।

हस्तत्रयेऽश्विनीपुष्ये शतभे रोहिणीद्वये ॥ श्रवणे चानुराधायां ज्येष्ठायां रक्तमोक्षणम् ॥ १६४ ॥ गुरुभौमार्कवारेषु कार्यं शुभतिथौ तथा ॥ विरेको वमनं शुक्रे चंद्रे चैवोक्तभादिषु ॥ १६५ ॥

अब रक्तमोक्षण और विरेक तथा वमन लिखते हैं–हस्त, चित्रा, स्वाति, अश्विनी, पुष्य, शतभिषा, रोहिणी, मृगशिर, श्रवण, अनुराधा, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें रुधिर छुडाना अर्थात् फस्त खुलवाना शुभ होताहै ॥ १६४ ॥ और इन्हीं उक्त नक्षत्रोंमें बृहस्पति, मंगल, रवि वारोंमें; शुभ तिथिमें (विरेक) जुलाब लेना शुभ होताहै और उन्हीं उक्त नक्षत्रादिकोंमें तथा चंद्र, शुक्र वारमें (वमन) कराना शुभ होताहै ॥ १६५ ॥

अथ तप्तलोहदाहः।

पाशिचित्राश्विनीमूले विशाखाकृत्तिकेशभे ॥ ज्येष्ठाऽहिभे कुजेऽर्कगे क्रूरे लोहाग्निभेषजम् ॥ १६६ ॥

अब तप्तलोहदाह लिखते हैं–शतभिषा, चित्रा, अश्विनी, मूल, विशाखा, कृत्तिका, आर्द्रा, ज्येष्ठा, आश्लेषा इन नक्षत्रोंमें; मंगल तथा रविवारमें; क्रूर लग्नमें तप्तलोहेसे दाग देनेकी औषधि शुभ होतीहै ॥ १६६ ॥

अथ धनसंग्रहः।

ब्रह्मानलार्कमघमूलशिवत्रिपूर्वापौष्णानुराधगुरुविष्णुविशाखयुक्ते ॥ वारे कुजार्कभृगुनंदनसोमजानामित्थं शुभं धनचयग्रहणं नराणाम् ॥ १६७ ॥ एवमुक्तर्क्षेषु पूर्वाभाद्ररेवत्योर्धनिष्ठादिपंचकेषु संग्रहः कार्यः।

अब धनसंग्रह लिखते हैं–रोहिणी, कृत्तिका, हस्त, मघा, मूल, आर्द्रा, तीनों पूर्वा, रेवती, अनुराधा, पुष्य, श्रवण, विशाखा इन नक्षत्रोंमें मंगल, रवि, शुक्र, बुध इन वारोंमें मनुष्योंको धनसंग्रह करना शुभ होताहै. इसीप्रकार उक्त नक्षत्रोंमें तथा पूर्वाभाद्रपद, रेवती, धनिष्ठादि पांच नक्षत्रोंमें धनका संग्रह करना चाहिये ॥ १६७ ॥

अथ रोगोत्पत्तौ नक्षत्रवशात्पीडादिनसंख्या।

अश्विनीकृत्तिकामूले ज्वरार्त्तौ नववासराः ॥ रोहिण्यामुत्त-
राभाद्रे पुनर्वस्वोश्च पुष्यभे ॥१६८॥ उफायां वासराः सप्त
७ मघायां विंशतिस्तथा ॥ शतभे भरणीचित्राश्रवे चैकादश
११ स्मृताः ॥ १६९ ॥ धनिष्ठायां विशाखायां हस्तभे पक्ष
१५ एव च ॥ मासं मृगोत्तगषाढे ३० कृच्छ्रादंत्यानुराध
योः ॥ पीडां भुक्त्वा दिनैरुक्तैः सुखीस्यात्तदनंतरम् ॥१७०॥

अब रोगोत्पत्तिमें नक्षत्रवशसे पीडाकी दिनसंख्या लिखतेहैं—अश्विनी, कृत्तिका, मूल नक्षत्रमें ज्वरसे पीडित होय तो ९ नौ दिन. रोहिणी, उत्तराभाद्रपद, पुनर्वसु, पुष्य ॥१६८॥ उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रोंमें ज्वर आवे तो ७ सात दिन. मघामें ज्वर आवे तो २० वीस दिन. शताभिषा, भरणी, चित्रा, श्रवण इनमें ज्वर आवै तो ११ ग्यारह दिन ॥ १६९ ॥ धनिष्ठा, विशाखा, हस्त इन नक्षत्रोंमें ज्वर आवे तो १५ पंद्रह दिन. मृगशिर, उत्तराषाढामें ज्वर आवे तो १ एकमास. रेवती, अनुराधा नक्षत्रोंमें ज्वर आवे तो बहुतदिन पीडा भोगकर सुखी होताहै ॥ १७० ॥

अथ रोगोत्पत्तौ अशुभफलम्।

पूर्वाऽत्रये तथाऽश्लेषाज्येष्ठार्द्रास्वातिभेष्वपि ॥ रोगोत्पत्ति-
र्भवेद्यस्य मरणं तस्य निश्चितम् ॥ १७१ ॥

अब रोगोत्पत्तिमें अशुभफल लिखते हैं—तीनों पूर्वा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, आर्द्रा, स्वाति इन नक्षत्रोंमें जिस मनुष्यको रोगोत्पत्ति होय उसका निश्चय मरण होताहै ॥ १७१ ॥

अथ रोगोत्पत्तौ अनिष्टयोगः।

आश्लेषाभरणीमूले स्वातीपूर्वार्द्रभे तथा ॥ शतभे पापवारे

च प्रतिपद्द्वादशीदिने ॥ १७२ ॥ चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां पूर्णिमायां ज्वरोदयः ॥ स नरो मृत्युमाप्नोति स्ववैंद्येनापि रक्षितः ॥ १७३ ॥

अत्र रोगोत्पत्तिमें अनिष्टयोग लिखते हैं—आश्लेषा, भरणी, मूल, स्वाती, तीनोंपूर्वा आर्द्रा, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें; पापवारमें; प्रतिपदा, द्वादशी ॥१७२॥ चतुर्दशी, अष्टमी, पौर्णमासी इन तिथियोंमें यदि मनुष्यको ज्वर आवै तो (स्ववैंद्य) अश्विनीकुमारभी उसकी रक्षा करें तो भी न बचे मृत्युको प्राप्त होय ॥ १७३ ॥

अथ रोगाद्युपद्रवे सति दोषज्ञानं प्रश्नलग्नात्।

मेषे तु पित्तदोषः स्यादुष्णः शोथो विवर्णता ॥ वृषे खदेवताभूतो दुःस्वप्नो नेत्ररुग्ज्वरः ॥१७४॥ महामायाभवोदोषो द्वंद्वे वेलानिलज्वरः ॥ कर्कटे शाकिनीदोषो मौनं हास्यं च रोदनम् ॥ १७५ ॥ सिंहे प्रेतजदोषस्तु वैमनस्यं हिमज्वरः ॥ कन्यायां खेदजो दोषो व्यथा क्रोधोरुचिर्भवेत् ॥ १७६ ॥ तुलायां क्षेत्रपालस्य दोषः संततपीडनम् ॥ नागदोषोऽलिभे दाहो देहेस्मिन्बुद्धिनाशनम् ॥ १७७ ॥ दोषो धनुषि देहोत्थः शोकोदर्यरुजां ज्वरः ॥ शंपादोषो मृगे देहभंगोत्रानिलजो ज्वरः ॥ १७८ ॥ दुष्टप्रेतभवो दोषो देहपीडा घटे भवेत् ॥ दोषो मीने तु योगिन्या ज्वरो मानसविभ्रमः ॥ तल्लग्ने तत्र चंद्रे वा ज्ञेयं फलमुदाहृतम् ॥ १७९ ॥

अब रोगादि उपद्रवमें दोषज्ञान प्रश्नलग्नसे लिखतेहैं—यदि रोगीके विषयमें मेषलग्नमें प्रश्न करे तो पित्तका दोष होताहै और गरमी, सूजन, विवर्णता होतीहै. वृष लग्नमें प्रश्न करे तो आकाशदेवता वा भूतका दोष होताहै, दुःस्वप्न, नेत्रोंमें पीडा तथा ज्वर

होय ॥ १७४ ॥ मिथुन लग्नमें पूछे तो महामायादेवीका दोष होता है (वेला) समयपर वात ज्वर होय. कर्क लग्नमें पूछे तो शाकिनीका दोष होताहै; मौन, हास्य, रोदनकी चेष्टा होय ॥ १७५ ॥ सिंहलग्नमें प्रश्न करै तो रोगीके शरीरमें प्रेतका कियाहुआ दोष होताहै–(वैमनस्य) उदासीनता, शीतज्वर होय, यह लक्षण होताहै; कन्यालग्नमें प्रश्न करै तो ग्रहका कियाहुआ दोष होताहै; व्यथा, क्रोध, अरुचि ये लक्षण होयँ ॥ १७६ ॥ तुलालग्नमें प्रश्न करै तो क्षेत्रपालका दोष होताहै, निरन्तर पीडा होय. वृश्चिकलग्नमें प्रश्न करै तो (नाग) सर्पका दोष होताहै, देहमें दाह होय, बुद्धिका नाश होय ॥ १७७ ॥ धनुलग्नमें पूछे तो देहोत्पन्न दोष होताहै, शोक, उदररोगकृत ज्वर होय. मकरलग्नमें प्रश्न करै तो शाकिनीका दोष होताहै, देहभंग होय, वालज्वर होय ॥ १७८ ॥ कुंभलग्नमें प्रश्न करै तो दुष्ट प्रेतका किया दोष होताहै, देहमें पीडा होय. मीनलग्नमें पूछे तो योगिनीका दोष होताहै, ज्वर, मनमें भ्रम यह लक्षण होंय इन पूर्वोक्त लग्नोंमें चंद्रमा होय तो यह कथित फल सत्य होताहै ऐसा जानलेना ॥ १७९ ॥

अथ प्रश्नलग्ने ग्रहवशाद्दोषज्ञानम् ।

क्षेत्रपालभवो दोषो लग्नेंत्ये चाष्टमे रवौ १।१२।८ ॥ लग्नारिनिधनांत्ये १।६।८।१२ऽब्जे दोषो देवीसमुद्भवः ॥ १८० ॥ शाकिन्या दूषणं भौमे द्वादशैकादशे तथा १२।११ ॥ सप्तमे ७ द्वादशे १२ सौम्ये वनदेवीसमुद्भवः ॥ १८१ ॥ देवदोषस्तु जामित्रे ७ रिष्फे १२ चित्रशिखंडिजे ॥ अंत्ये १२ वा सप्तमे ७ शुक्रे दोषो भूदेवतोद्भवः ॥ १८२ ॥ वातामयस्तु शारीरो रिष्फ १२ जामित्रगे शनौ ७॥ सिंहिकानंदने रिष्फे १२ सप्तमे ७प्रेत-

संभवः ॥ १८३ ॥ लग्नाद्दृश्यरिधर्मान्त्ये ३।६।९।१२ पापैः खेटैः स्वके कुले ॥ विषशस्त्रैर्जले मृत्युमीयुषां दोष ईरितः ॥ १८४ ॥ सूर्ये हालहलैर्भौमे शस्त्रैर्मंदे जलोर्मिभिः ॥ राहौ रोगैर्मृतानां स्युर्दोषा आयान्तिमस्थिते ॥ १८५ ॥ दशमस्थे बुधे मार्गे देव्याः प्रेतभवो गुरौ ॥ शुक्रे दोषस्तु देवोत्थः पापे दुःशाकिनीभवः ॥ १८६ ॥ स्वर्क्षे स्वगोत्रतो दोषो मित्रर्क्षे स्वजनोद्भवः ॥ वैरिभे शत्रुजो दोषः समे त्वन्यकुलोद्भवः ॥ १८७ ॥

अब प्रश्न लग्नमें ग्रहवशसे दोष ज्ञान लिखतेहैं—लग्न, वारहवें, आठवें स्थानमें सूर्य होय तो क्षेत्रपालका दोष होताहै । लग्नमें, छठे, आठवें, वारहवें स्थानमें चंद्रमा होय तो आकाशदेवीका दोष होताहै ॥ १८० ॥ वारहवें, ग्यारहवें मंगल होय तो शाकिनीका दूषण होताहै। सातवें, वारहवें,स्थानमें वुध होय तो वनदेवीका दोष होताहै ॥ १८१ ॥ सातवें, वारहवें घरमें बृहस्पति होय तो देवदोष होताहै । वारहवें, सातवें स्थानमें शुक्र होय तो पृथ्वीसंबंधी देवताका दोष होताहै ॥ १८२ ॥ वारहवें, सातवें शनैश्चर होय तो शरीरमें वातका रोग होताहै। वारहवें, सातवें राहु होय तो प्रेतका दोष होताहै ॥१८३॥ लग्नसे तीसरे, छठे, नौवें, वारहवें पापग्रह होयँ तो अपने कुलमें जो मनुष्य विषसे, शस्त्रसे तथा जलमें डूवकर मरेहैं उनका दोष है ऐसा वतावे ॥ १८४ ॥ यदि आपोक्लिम ३ । ६ । ९ । १२ वें स्थानमें सूर्य स्थित होय तो (हालाहल) विषसे मरेहुएका दोष जानना । उक्त स्थानोंमें मंगल होय तो शस्त्रसे मरेहुओंका दोष जानना और शनैश्चर होय तो जलमें डूवेहुओंका दोष जानना राहु होय तो रोगसे मरेहुओंका दोष जानना ॥ १८५ ॥ दशवें स्थानमें वुध स्थित होय तो मार्गदेवीका दोष. दशवें घरमें बृहस्पति होय तो प्रेतका दोष. शुक्र होय तो देवका दोष. पापग्रह होयँ

दुष्टशाकिनीका दोष ॥ १८६ ॥ यदि पापग्रह अपनी राशिके होयँ तो अपने गोत्रके प्रेतका दोष और मित्रकी राशिका होय तो अपने घरके मरेहुए जनका दोष. शत्रुकी राशिका होय तो शत्रुका दोष. सम राशिका होय तो अन्य कुलके मृतक मनुष्यका दोष होताहै ॥ १८७ ॥

अथ रव्यादिषु बलिष्ठेषु वासरेषु वा दोषः ।

कुदृष्टिसंभवः सूर्ये पितृदोषो निशाकरे ॥ मंगले शाकिनीदोषो व्योमदेवीभवो बुधे॥१८८॥गोत्रदेवीभवो जीवे जलदेव्यास्तु भार्गवे ॥ प्रेतपीडा शनौ सर्वं शांत्या शांतिमुपैति तत् ॥१८९॥ साध्या दोषाः स्वकीयर्क्षे स्वोच्च चंद्रे बलान्विते ॥ असाध्या विबले नीचस्थिते शत्रुगृहं गते ॥१९०॥ साध्याः सौम्यग्रहैर्दोषा बलिभिः केंद्रसंस्थितैः ॥ असाध्याः खेचरैः पापैः केंद्रगैर्बलशालिभिः ॥१९१॥ यद्दोषः पूजनं तस्य कुर्यात्तद्दोषशांतये ॥ जलदेव्या जले व्योमदेव्या व्योम्नि बलिं त्यजेत् ॥ १९२ ॥ शाकिनीडाकिनीभूतदोषे तच्चत्वरे तथा ॥ तदुद्देशेन दृग्दोषे चत्वरे धारयेद्बलिम् ॥१९३॥ गोत्रदेव्युद्भवो दोषो कुलदेवीं प्रपूजयेत् ॥ पितृदोषे तु कर्त्तव्यो नारायणबलेर्विधिः ॥ प्रेतश्राद्धं त्रिपिंडाख्यं विष्णोस्तर्पणमेव च ॥१९४॥ इति दोषज्ञानम् ।

अत्र रव्यादिकोंके बलिष्ट होनेसे वार दोष लिखतेहैं–यदि प्रश्न कुंडलीमें सूर्य बलवान् होय तो कुदृष्टिका दोष होताहै अर्थात् नजर लगीहै ऐसा कहै. चंद्रमा बलवान् होय तो पितृदोष. मंगल बलवान् होय तो शाकिनीदोष. बुध बलवान् होय तो आकाशदेवीका दोष ॥ १८८ ॥ बृहस्पति बलवान् होय तो गोत्रदेवीका दोष. शुक्र बलवान् होय तो जलदेवीका दोष. शनैश्चर बलवान् होय तो

प्रेतका दोष होताहे, शान्ति करनेसे यह सब दोष शान्त होजातेहैं॥ १८९ ॥ यदि चंद्रमा अपनी राशिका होय अथवा उच्चका बलवान् होय तो सब दोष साध्य होतेहैं और चंद्रमा निर्बल और नीचका होय अथवा शत्रुके घरका होय तो सब दोष असाध्य होतेहैं। यदि बलवान् सौम्यग्रह केंद्रोंमें स्थिथ होयँ तो सब दोष साध्य होतेहैं और जो बलवान् पापग्रह केंद्रोंमें होंय तो सब दोष असाध्य होतेहैं ॥ १९१ ॥ जिसका दोष होय उसीका पूजन करनेसे वह दोष शान्त होजाताहे । जलदेवीका दोष होय तो जलमें और आकाशदेवीका दोष होय तो आकाशमें बलि चढावै॥१९२॥ और जो शाकिनी,डाकिनी, भूतका दोष होय तो चौराहेमें बलि चढावे,जिसका दोष होय उसीके नामसे बलि चौराहेमें देय,और दृष्टिका दोष होय तो भी चौराहेमें बलि रक्खे॥१९३॥ और जो गोत्रदेवीका कियाहुआ दोष होय तो कुलदेवीकी पूजा करै और पितरोंका दोष होय तो नारायणबलिकी विधि करै, त्रिपिण्डनामक प्रेतश्राद्ध करै और विष्णुका तर्पण करै ॥१९४॥ इति दोषज्ञानम् ॥

अथ सर्पदंशे अनिष्टम् ।

विशाखाकृत्तिकामूले रेवत्यार्द्रामघासु च ॥ ऋक्षेऽसार्पाभिधाने च सर्पदष्टो न जीवति ॥ १९५ ॥

अब सर्पदंशमें अनिष्ट लिखते हैं–विशाखा, कृत्तिका, मूल, रेवती, आर्द्रा, मघा, आश्लेषा इन नक्षत्रोंमें सर्पका काटाहुआ नहीं जीताहे ॥ १९५ ॥

अथ रोगनिर्मुक्तस्नानम् ।

मघापुनर्वसुस्वातीरोहिणीपूत्तरात्रये ॥ आश्लेपायां च रेवत्यां भार्गवे चंद्रवासरे ॥ १९६॥ न स्नायाद्रोगनिर्मुक्तः शुभे चंद्रे

तथैव च ॥ रिक्तायां निशि भौमार्कवासरे चरलग्नके॥१९७॥ दुष्टचंद्रे तथा विष्ट्यां पाताद्यैर्दूषितेहनि ॥ रोगमुक्तो नरः स्नायाद्दानं कुर्यादनंतरम् ॥ १९८ ॥

अब रोगनिर्मुक्त स्नान लिखते हैं-मघा, पुनर्वसु, स्वाती, रोहिणी, तीनों उत्तरा, आश्लेषा, रेवती इन नक्षत्रोंमें और शुक्र तथा चन्द्रवारमें ॥ १९६ ॥ शुभ चंद्रमामें रोगसे निवृत्त हुआ मनुष्य स्नान नहीं करे और रिक्तातिथिमें, रात्रिमें मंगल तथा रविवारके दिन चर लग्नमें ॥ १९७ ॥ दुष्ट चंद्रमामें, भद्रामें, उत्पातादिकोंसे दूषित दिनमें रोगमुक्त मनुष्य स्नान करे तदनन्तर दान करे ॥१९८॥

अथ रक्तमोक्षणानंतरं स्नानम् ।

पौष्टिके रक्त ऋक्षे तु स्नानं काले शुभं मतम् ॥ रोगिणो रुधिरस्नाने निंद्यकाले तु तत्स्मृतम् ॥ १९९ ॥

अब रक्तमोक्षणानन्तर स्नान लिखते हैं-उग्रसंज्ञक नक्षत्रोंमें तथा पुष्टिकारक समयमें फस्त खुलवानेके पश्चात् रोगीका स्नान निंदित कालमेंही शुभ कहाहै ॥ १९९ ॥

अथ रोगनिर्मुक्तस्य बहिर्गमनम् ।

सद्वारे गमनोक्तर्क्षे सत्तिथौ शोभने विधौ ॥ सल्लग्ने रोगमुक्तस्य बहिर्निःसरणं शुभम् ॥ २०० ॥

अब रोगमुक्तका बहिर्गमन लिखतेहैं-शुभवार, यात्रोक्त नक्षत्र, शुभतिथि, शुभचंद्रमा, शुभलग्नमें रोगमुक्त मनुष्यका घरसे बाहिर निकलना शुभ होताहै ॥ २०० ॥

अथ होलिकोत्सवस्नानम् ।

राज्ञः पुरोपि सच्चंद्रे शोभनर्क्षे शुभे तिथौ ॥ होलिकानंतरं स्नायाद्विमंदारदिने प्रजा ॥ २०१ ॥

अब होलिकोत्सवस्नान लिखतेहैं—शुभचंद्रमा, शुभनक्षत्र, शुभतिथियोंमें और शनैश्चर मंगलको छोडकर अन्य वारोंमें होलीके पीछेका स्नान राजाके सामने सब प्रजा करे ॥ २०१ ॥

अथ मल्लक्रिया ।

ज्येष्ठार्द्राभरणीपूर्वामूलाश्लेषामघाभिधे ॥ जयापूर्णासु सद्वारे सार्कशीर्षोदयोंगके ॥ सत्खेटैः केंद्रगैः सार्कैर्मल्लक्रीडा शुभावहा ॥ २०२ ॥

अब मल्लक्रिया लिखतेहैं—ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, तीनों पूर्वा, मूल, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रोंमें; जया तथा पूर्णा तिथियोंमें; शुभवारमें और सूर्यसहित शीर्षोदय (मिथुन, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ) लग्नोंमें तथा सूर्यसहित शुभग्रह केंद्रोंमें होयँ तो मल्लक्रीड़ा (कुश्ती कसरत आदि) शुभकारक होतीहै ॥ २०२ ॥

अथ दिव्यपरीक्षा ।

द्विःस्वभावे चरे लग्ने बलिष्ठेऽब्जे सतारके ॥ जीवे च श्रवणज्येष्ठापुनर्वस्वभिधे शते ॥ २०३॥ त्यक्त्वा शनैश्चरं भौमं भूतां १४ च तिथिमष्टमीम् ८ ॥ भद्रां जन्मर्क्षमासौ च विलग्ने चाष्टमे रविम् ॥ नाडीभं च यथायोग्यं कुर्याद्दिव्यपरीक्षणम् ॥ २०४ ॥

अब दिव्यपरीक्षा लिखतेहैं—द्विस्वभाव अथवा चर लग्नमें और चंद्रमा, तारा, बृहस्पति बलिष्ठ होंय, श्रवण, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें ॥ २०३ ॥ और शनैश्चर, मंगल, चौदस, आठें तिथि, भद्रा, जन्मका नक्षत्र, जन्मका मास, जन्मका लग्न, जन्म लग्नसे आठवें घरमें सूर्य तथा एकनाडीस्थ नक्षत्र इन सबको छोड़कर चोरादिकी यथायोग्य दिव्यपरीक्षा करे ॥ २०४ ॥

अथ सर्पग्रहणम् ।

भरण्यार्द्रामघाश्लेषापूर्वाज्येष्ठाख्यमूलभे ॥ करेऽह्नि केंद्रगैः
पापैर्हित्वा कालमहिग्रहः ॥ २०५ ॥

अब सर्पग्रहण लिखतेहैं–भरणी, आर्द्रा, मघा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, ज्येष्ठा, मूल, हस्त इन नक्षत्रोंमें और केंद्रस्थित पापग्रहोंका समय त्यागकर अर्थात् केंद्रोंमें पापग्रह न होयँ तो सर्पका पकड़ना शुभ होताहै ॥ २०५ ॥

अथाऽश्वपशूनां दमनम् ।

कृत्तिकारेवतीपुष्ये स्वातीहस्ते श्रवद्वये ॥ मृगेऽर्कारे विपुं-
स्कत्वं दमनं पशुवाजिनाम् ॥ २०६ ॥

अब पशुओंका दमन लिखतेहैं–कृत्तिका, रेवती, पुष्य, स्वाती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिर इन नक्षत्रोंमें, रवि तथा मंगल वारमें पशुओं और घोडोंका वधिया कराना वा नाथवाना, वा फिराना, नाल बाँधना आदि शुभ होताहै ॥ २०६ ॥

अथ सेतुबंधः ।

त्र्युत्तरे रोहिणीस्वातीमृगेर्के मंगले गुरौ ॥ सेतूनां बंधनं
शस्तं शुभे लग्ने शुभेक्षिते ॥ २०७ ॥

अब सेतुबंध लिखतेहैं–तीनों उत्तरा, रोहिणी, स्वाती, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें और रवि, मंगल, बृहस्पति वारोंमें; शुभग्रहसे दृष्ट शुभ लग्नमें (सेतु) पुलोंका बांधना शुभ होताहै ॥ २०७ ॥

अथ लवणकृत्यम् ।

लवणारंभकृत्यं तु भरणीरोहिणीश्रवे ॥ शनिवारे दिवा-
श्रेष्ठं जन्मराशेः शनेर्बले ॥ २०८ ॥

अब लवणकृत्य लिखतेहैं–भरणी, रोहिणी, श्रवण इन नक्षत्रोंमें

शनिवारमें, दिनमें और जन्मराशिसे शनैश्चर बलवान होय तो लवण बनानेका कार्य शुभ होताहै ॥ २०८ ॥

अथ जिनचार्वाकपाखंडक्रिया।

उषाश्विनीमृगे स्वातौ पुनर्भे श्रवणत्रये ॥ जयापूर्णासु शुक्रेऽब्जे बुधेहनि चरोदये ॥ चार्वाकजिनपाखंडमंडलीकरणं शुभम् ॥ २०९ ॥

अब जिन चार्वाक पाखंडक्रिया लिखतेहैं—उत्तराषाढा, अश्विनी, मृगशिर, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें; जया और पूर्णा तिथियोंमें; शुक्र, चंद्रमा, बुध इन वारोंमें; चर लग्नमें; चार्वाक, जैन, तथा पाखण्डियोंकी (मंडली) सभा करना शुभ होताहै ॥ २०९ ॥

अथ शैलूपनटकर्म।

चित्रार्द्रारोहिणीपुष्ये त्र्युत्तरे श्रवणत्रये ॥ शुभाहेऽर्के च शैलूपनटकृत्यं समीरितम् ॥ २१० ॥

अब शैलूप नटकर्म लिखतेहैं—चित्रा, आर्द्रा, रोहिणी, पुष्य, तीनों उत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें; शुभ दिन और रवि वारमें बाजीगर तथा नटका कर्म शुभ कहाहै ॥ २१० ॥

अथ तैलिकयंत्रकृत्यम्।

धनिष्ठाऽश्विकरे चित्रानुराधापुष्यभे तथा ॥ ज्येष्ठायां च पुनर्वस्वो रेवत्यां शुभवासरे ॥ २११ ॥

अब तैलिक यन्त्रकृत्य लिखतेहैं—धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, पुष्य, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, रेवती इन नक्षत्रोंमें; शुभ वारमें (तैलिकयन्त्र) कोल्हू बनाना चलाना तथा तेल और सुगन्ध बनानाभी शुभ होताहै ॥ २११ ॥

अथ कुंभकारकृत्यम् ।

पुनर्वसुद्वये हस्तत्रयेंत्ये रोहिणीमृगे ॥ अनुराधाश्रवोज्येष्ठे ससूर्ये सौम्यवासरे ॥ तथा चरोदये प्रोक्ता कुंभकारक्रिया बुधैः ॥ २१२ ॥

अथ कुंभकारकृत्य लिखतेहैं—पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाति, रेवती, रोहिणी, मृगशिर, अनुराधा, श्रवण, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें रविवार तथा शुभवारोंमें चर लग्नमें पंडितोंने कुम्हारका कर्म शुभ कहाहै ॥ २१२ ॥

अथ काष्ठशिल्पकृत्यम् ।

हस्तषट्केऽश्विनीपुष्ये रेवत्यां श्रवणत्रये ॥ पुनर्भे रोहिणी-युग्मे सूत्रधारक्रियोत्तमा ॥ २१३ ॥

अथ काष्ठशिल्पकृत्य लिखते हैं—हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, अश्विनी, पुष्य, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, रोहिणी, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें बढई और कारीगरका कार्य शुभ होताहै ॥ २१३ ॥

अथ स्वर्णकारकृत्यम् ।

श्रवत्रयेश्विनीपुष्ये मृगे हस्तचतुष्टये ॥ कृत्तिकायां पुनर्वस्वोः शुभे लग्ने तिथावपि ॥ हेमकारक्रिया शस्ता हित्वा बुधशनैश्चरौ ॥ २१४ ॥

अथ स्वर्णकारकृत्य लिखतेहैं—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, पुष्य, मृगशिर, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, कृत्तिका, पुनर्वसु इन नक्षत्रोंमें; तथा शुभ लग्न और शुभ तिथिमें; बुध, शनिको छोडकर अन्य वारोंमें स्वर्णकारकी क्रिया शुभ होतीहै ॥ २१४ ॥

अथ लोहाश्ममणीनां कृत्यानि।

स्वातौ ज्येष्ठाद्वये मूले चित्रार्द्राभरणीत्रये॥ मणिलोहाऽश्मनां कृत्ये पापे चाह्नि स्थिरोदये॥ २१५॥

अब लोह प्रस्तर और मणियोंका कृत्य लिखतेहैं—स्वाति, ज्येष्ठा, मूल, चित्रा, आर्द्रा, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें; पापवारोंमें, स्थिर लग्नमें; मणि,लोहा, पत्थरका कृत्य शुभ होताहै॥२१५॥

अथ नापितकृत्यम्।

ज्येष्ठाहस्तत्रये कर्णत्रितयेऽश्विमृगेंत्यभे॥ पुनर्वसुद्वये हित्वा रिक्तापष्ठ्यष्टमीतिथिम्॥ सद्वारे नापितानां च क्षुरादिसकला क्रिया॥ २१६॥

अब नापितकृत्य लिखतेहैं—ज्येष्ठा, हस्त, चित्रा, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, मृगशिर, रेवती, पुनर्वसु, पुष्य इन नक्षत्रोंमें और रिक्ता, षष्ठी, अष्टमी तिथियोंको छोडकर शुभ वारमें नाईयोंका छुरा आदिकी सब क्रियाएँ शुभ होतीहैं॥ २१६॥

अथाभीरजनकृत्यम्।

विशाखायां पुनर्भेंत्ये ज्येष्ठाहस्ताऽश्विनीमृगे॥ पूभाकर्णत्रये पुष्ये ज्ञेऽर्केऽब्जे वल्लवक्रिया॥ २१७॥

अब अहीरोंका कृत्य लिखतेहैं—विशाखा, पुनर्वसु, रेवती, ज्येष्ठा, हस्त, अश्विनी, मृगशिरा, पूर्वाभाद्रपदा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य इन नक्षत्रोंमें; बुध, रवि, चन्द्र इन वारोंमें अहीर वनवासी भीलोंकी क्रिया शुभ होतीहै॥ २१७॥

अथ चौरकृत्यम्।

विशाखाकृत्तिकापूर्वामूलार्द्राभरणीमघे॥ आश्लेषाज्येष्ठयो-

मंदभौमयोः शाकुने वले ॥ लग्ने वा दशमे भौमे चौर्यं सद्द्रव्यलब्धये ॥ २१८ ॥

अब चौरकृत्य लिखतेहैं-विशाखा, कृत्तिका, पूर्वा, मूल, आर्द्रा, भरणी, मघा, आश्लेषा, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें; शनि, मंगल वारमें; वलवान् शकुन होय; लग्नमें अथवा दशवें मंगल होय तौ चोरी करनेमें चोरोंको वहुत द्रव्य मिलताहै ॥ २१८ ॥

अथ मुहूर्त्तादौ लग्नादितिथ्यंतानां वलाऽवल- ज्ञानार्थं गुणाः ।

सहस्रगुणभृल्लग्नं चंद्रः शतगुणो बली ॥ तारा षष्टिगुणा योगो द्वात्रिंशद्गुणभाग्भवेत्२१९॥तदर्धं करणं विद्याद्वारस्त्वष्टगुणः स्मृतः ॥ ऋक्षं चतुर्गुणं ज्ञेयं तिथिरेकगुणा स्मृता ॥ २२० ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ नवाम्बरालङ्कारधारणाद्यनेकका- र्याणां मुहूर्तानां प्रकरणमेकादशम् ॥११॥

अव मुहूर्त्तादिमें लग्नसे लेकर तिथिपर्यन्तोंका वलाऽवलज्ञानार्थ गुण लिखतेहैं-लग्नमें सहस्र गुण, वली चंद्रमामें सौ गुण, तारामें साठि गुण, योगमें वत्तीस गुण ॥ २१९ ॥ करणमें १६ सोलह गुण, वारमें आठ गुण, नक्षत्रमें चार गुण, तिथिमें एक गुण कहा है ॥ २२० ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगण पतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालु- शर्मकृतभाषाटीकासमलंकृते नवाम्बरालङ्कार- धारणाद्यनेककार्याणां मुहूर्त्तानां प्रकरण- मेकादशम् ॥ ११ ॥

अथ संक्रांतिप्रकरणम् तत्रादौ संक्रान्तिनामानि ।

संक्रातिर्भानुवारे स्याद्घोराख्या भरणीमघे ॥ पूर्वात्रये च नक्षत्रे शूद्राणां सुखदा स्मृता ॥ १ ॥ सोमवारेऽभिजित्पुष्याऽश्विनी-हस्ते तथैव च ॥ संक्रांतिः कथिता ध्वांक्षी विशां सौख्यप्रदायिनी ॥ २ ॥ श्रवणादित्रिभे स्वात्यां पुनर्वस्वोः कुजेऽहनि ॥ या भवेत्सा तु चोराणां सौख्यदात्री महोदरी ॥ ३ ॥ बुधाहे या च रेवत्यां मृगे चित्रानुराधयोः ॥ सा तु मंदाकिनी नाम्ना नृपाणां सौख्यदायिनी ॥ ४ ॥ बृहस्पतौ यदा जाता रोहिण्यां चोत्तरात्रये ॥ तदा मंदाभिधा ज्ञेया विप्राणां हितकारिणी ॥ ५ ॥ भृगोर्वारे विशाखायां कृत्तिकायां च या भवेत् ॥ सा तु मिश्रेति विख्याता पशूनां प्रीतिदायिनी ॥ ६ ॥ शनौ मूले तथार्द्रायामाश्लेपाज्येष्ठयोरपि ॥ या भवेद्राक्षसी सा स्यादंत्यजानां सुखावहा ॥ ७ ॥ आद्येह्नित्र्यंशके राज्ञो द्वितीये हंति वै द्विजान् ॥ तृतीये वैश्यकान्प्रांत्ये संक्रांतिः शूद्रवर्णकान् ॥ ८ ॥ प्रतियामं क्रमाद्रात्रौ पिशाचान्राक्षसान्नटान् ॥ पशुपालगणं हंति प्रभाते सर्वलिंगिनः ॥ ९ ॥

अब संक्रान्तिप्रकरण लिखतेहैं—तहाँ पहिले संक्रांतिका नाम रखते हैं—रविवारमें और भरणी, मृगशिरा, तीनों पूर्वा नक्षत्रोंमें संक्रान्ति लगे तो घोरानाम्नी होतीहै शूद्रोंको सुख देनेवाली कहीहे ॥ १ ॥ सोमवारमें तथा अभिजित्, पुष्य, अश्विनी, हस्त इन नक्षत्रोंमें संक्रान्ति लगे तो ध्वांक्षी नाम और वैश्योंको सुख देनेवाली होतीहे ॥ २ ॥ श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाति, पुनर्वसु इन नक्षत्रोंमें तथा मंगलवारके जो संक्रान्ति लगे तो महोदरी नामवाली और चोरोंको सुख देनेवाली होतीहे ॥ ३ ॥ बुधवारके दिन रेवती, मृगशिरा,

चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें संक्रान्ति लगे तो मंदाकिनी नामकी राजाओंको सुख देनेवाली होतीहै ॥ ४ ॥ बृहस्पतिके दिन तथा रोहिणी, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें संक्रांति लगे तो मंदा नामकी ब्राह्मणोंका हित करनेवाली होतीहै ॥ ५ ॥ शुक्रवारके दिन विशाखा, कृत्तिका नक्षत्रोंमें जो संक्रान्ति लगे सो मिश्रानामकी पशुओंको सुख देनेवाली होतीहै ॥ ६ ॥ शनैश्चरके दिन मूल, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें जो संक्रांति लगे सो राक्षसी नामकी अन्त्यजोंको सुख देनेवाली होतीहै ॥ ७ ॥ दिनके पहिले त्र्यंशमें जो संक्राति लगै तो राजाओंका नाश करतीहै और दूसरे त्र्यंशमें लगै तो ब्राह्मणोंका नाश करती है और तीसरे त्र्यंशमें लगै तो वैश्योंका नाश करतीहै और सूर्यके अस्तकालमें लगै तो शूद्र वर्णका नाश करतीहै ॥ ८ ॥ रात्रिमें प्रत्येक प्रहरके क्रमसे संक्रान्ति लगनेका यह फल है कि, प्रथमप्रहरमें संक्रांति लगै तो पिशाचोंका नाश करती है और दूसरे प्रहरमें लगै तो राक्षसोंका, तीसरे प्रहरमें लगै तो नटोंका चौथे प्रहरमें लगै तो पशुपालोंके समूहोंका और प्रभातमें लगै तो समस्त संन्यासियोंका नाश करतीहै ॥ ९ ॥

अथ संज्ञांतरम् ।

वृश्चिके ८ वृषभे २ सिंहे ५ कुंभे ११ विष्णुपदी स्मृता ॥
षडशीतिमुखा मीने १२ कन्या ६ मिथुन ३ धन्विषु ९ ॥ १० ॥ प्रोक्तं याम्यायनं कर्के ४ मकरे १० चोत्तरायणम् ॥ विषुवाख्या तुले ७ मेषे १ संक्रांतिः समुदाहृता ॥ ११ ॥

अथ संज्ञान्तर लिखतेहैं—वृश्चिक, वृष, सिंह, कुंभ राशियोंमें जो संक्रांति लगतीहै सो विष्णुपदी कहातीहै. मीन, कन्या, मिथुन,

धन इन राशियोंमें संक्रांतिका नाम षडशीतिमुखाहै ॥ १० ॥ कर्ककी संक्रांति दक्षिणायन और मकरकी उत्तरायण कहातीहै तुला, मेषकी संक्रान्तिका नाम विषुव कहाहै ॥ ११ ॥

अथ पुण्यसमयः।

पुण्याः षोडशनाड्यस्तु पराः पूर्वास्तु संक्रमात् ॥ त्रिंशत्कर्कटके पूर्वाश्चत्वारिंशत्परा मृगे ॥ १२ ॥ मध्याह्नादुत्तरं पुण्यं प्राङ्निशीथात्तु संक्रमे ॥ निशीथादूर्ध्वकाले तु मध्याह्नात्प्राक्परेऽहनि ॥ चेन्निशीथे द्व्यहे पुण्यं परपूर्वविभागयोः ॥ १३ ॥

अब पुण्यसमय लिखतेहैं—संक्रांति लगनेसे पहिली और पिछली सोलह २ घडीका पुण्यकाल होताहै और कर्ककी संक्रांतिमें तीस ३० घडी पहिली, तथा मकरकी संक्रांतिमें चालीस ४० घडी पिछली पुण्यकाल होताहै ॥ १२ ॥ आधीरातसे पहिले संक्रांति लगे तो पूर्वदिनके मध्याह्नसे पीछे पुण्यकाल होताहै और, आधीरातसे पीछे संक्रांति लगे तो परदिनके मध्याह्नसे पहिले पुण्यकाल होताहै और यदि ठीक आधीरातके समय संक्रांति लगे तो पहिले और पिछले दोनों दिनोंके क्रमसे पूर्व और पर भागमें पुण्यकाल होताहै ॥ १३ ॥

अथायनयोर्विशेषः।

अस्तादूर्ध्वं तु मकरे रात्रौ संक्रमणं रवेः ॥ तदोत्तरदिने पुण्यं मध्याह्नात्प्राक्प्रकीर्तितम् ॥ १४ ॥ यदा सूर्योदयात्पूर्वं कर्कं संक्रमते रविः ॥ तदा पूर्वदिने पुण्यं परतश्चेत्परेऽहनि ॥ १५ ॥

अब अयनोंमें विशेष लिखतेहैं—सूर्यास्तके पीछे रात्रिमें मकर राशिपर सूर्यकी संक्रांति लगे तो परदिनके मध्याह्नसे पहिले

पुण्यकाल होताहै ॥ १४ ॥ और यदि सूर्योदयसे पहिले कर्क राशिपर सूर्यकी संक्रान्ति होय तो पहिले दिनमें पुण्यकाल होताहै और जो सूर्योदयसे पीछे कर्क संक्रांति होय तो पिछले दिनमें पुण्यकाल होताहै ॥ १५ ॥

तत्रापि विशेषः ।

मकरेऽस्तमितादूर्ध्वं संक्रमे प्राग्घटीत्रयम् ॥ तदा पूर्वदिने पुण्यं परतश्चेत्परेहनि ॥ १६ ॥ कर्कसंक्रमणं सूर्योदयात्प्राग्घटिकात्रयम् ॥ तदा परदिने पुण्यं तत्पूर्वं तद्दिने स्मृतम् ॥ १७ ॥ आदौ विष्णुपदे याम्ये मध्ये तु विषुवाभिधे ॥ षडशीतिमुखे सौम्येऽयने पुण्यं तदुत्तरम् ॥ १८ ॥

अब तहां विशेष लिखतेहैं– सूर्यास्तसे पीछे तीन घडीके भीतर जो मकरकी संक्रान्ति लगै तो पूर्वदिनमें पुण्यकाल होताहै और जो सूर्यास्तसे तीन घडीके पश्चात् लगै तो परदिनमें पुण्यकाल होताहै ॥ १६ ॥ और यदि कर्ककी संक्रान्ति सूर्योदयसे पहिले तीन घडीके भीतर लगै तो परदिनमें पुण्यकाल होताहै यदि सूर्योदयसे पहिले तीन घडीसे भी पूर्वमें लगै तो पूर्वदिनमें पुण्यकाल होताहै ॥ १७ ॥ विष्णुपद नामकी संक्रांति तथा कर्क संक्रांतिकी प्रथमकी सोलह घडी अतिपुण्यदायक हैं और विषुव नामक संक्रान्तिके मध्यकी सोलह घडी अति पुण्यदायक हैं और, षडशीतिमुख (मिथुन, कन्या, धन, मीन) तथा मकरकी संक्रांतिकी पिछली सोलह घडी अतिपुण्यदायक होतीहैं ॥ १८ ॥

अथ सायनार्कसंक्रांतिः ।

सायनस्य रवेर्वापि यदा संक्रमणं भवेत् ॥ तदा स्यादधिकं पुण्यं रहस्यं विदुषां हि तत् ॥ १९ ॥

अब सायनार्कसंक्रांति लिखतेहैं–जब अयनांशासहित सूर्यकी संक्रांति होतीहै तबभी अधिक पुण्य होताहै यह विद्वानोंकारहस्यहै १९॥

अथ संक्रांतिमुहूर्तास्तत्फलं च ।

पुनर्वसू विशाखा च रोहिणी चोत्तरा बृहत् ॥ सुभिक्षं तत्र संक्रांतौ बाणवेद ४५ मुहूर्तकाः ॥ २० ॥ भरण्यार्द्रा तथाऽऽश्लेषा स्वाती ज्येष्ठा जघन्यभम् ॥ संक्रांतौ तत्र दुर्भिक्षं मुहूर्ता बाणभूमिताः १५ ॥ २१ ॥ शेषभानि समाख्यानि संक्रांतावर्घसाम्यताम् ॥ मुहूर्त्तास्त्रिंश ३० दत्रोक्ताः फलं चंद्रोदयेऽपि तत् ॥ २२ ॥

अथ संक्रांतिमुहूर्त्त और उसका फल लिखतेहैं—पुनर्वसु, विशाखा, रोहिणी, तीनों उत्तरा ये नक्षत्र बृहत्संज्ञक हैं; इनमें संक्रान्ति लगे तो पैंतालीस ४५ मुहूर्त्त तथा सुभिक्ष होताहै ॥२०॥ भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाती, ज्येष्ठा ये नक्षत्र जघन्यसंज्ञक हैं; इनमें संक्रान्ति लगे तो पंद्रह १५ मुहूर्त्त तथा दुर्भिक्ष होताहै ॥ २१ ॥ और शेष नक्षत्र मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, कृत्तिका इन नक्षत्रोंकी समसंज्ञा है; इनमें संक्रान्ति लगे तो तीस मुहूर्त्त ३० तथा भावकी समता होतीहै और इन्हीं पूर्वोक्त तीन संज्ञावाले नक्षत्रोंमें चंद्रमाका उदय होय तो पूर्वोक्त फलही जानलेना चाहिये ॥ २२ ॥

अथाब्दविंशोपकाः ।

अब्दविंशोपकाः कर्कसंक्रमो दिङ्मिता १० रवौ ॥ चंद्रे नखा २० गजा ८ भौमे बुधेऽर्काः १२ सायकाः ५ शनौ ॥ अष्टादश- १८ मिताः शुक्रे तत्संख्या १८ गुरुवासरे ॥ २३ ॥

अब अब्दविंशोपका लिखतेहैं—यदि कर्ककी संक्रांति रविवारके दिन लगे तो दश १० (अब्दविंशोपक) विश्वा होतीहै । सोमवारको लगे तो बीस २०, मंगलको लगे तो आठ ८, बुधको लगे तो बारह १२, शनैश्चरको लगे तो पांच ५, शुक्रको लगे तो अठा-

रह १८, और बृहस्पतिको लगै तो भी अठारह १८, विश्वा होतीहै ॥ २३ ॥

अथ संक्रांतेः स्थित्युपवेशनशयनानि तत्फलं च ।

नेष्टः सुप्तो रविर्नागे तौतिलेऽथ चतुष्पदे ॥ किंस्तुघ्ने कौलवे तिष्ठञ्छकुनौ संक्रमे शुभः ॥ गरादिपंचके मध्यश्चोपविष्टोऽघवर्षणे ॥ २४ ॥

अब संक्रांतिके स्थित्युपवेशनशयनादि और उसका फल लिखतेहैं-नाग, तैतिल, चतुष्पद इन करणोंमें सूर्यकी संक्रांति लगै तो सूर्यकी (सुप्तावस्था) अर्थात् सूर्य सोतेहैं जिसका फल नेष्ट है और किंस्तुघ्न, कौलव, शकुनि इन करणोंमें संक्रान्ति लगे तो सूर्य खडे होतेहैं जिसका फल शुभ होताहै और गरादि पांच करण अर्थात् गर, वणिज, विष्टि, बव, बालवमें संक्रांति लगे तो सूर्य बैठे हुए होतेहैं जिसका फल मध्यम होताहै । उक्तफल अन्नादिके भावमें तथा वर्षामें विचारना चाहिये ॥ २४ ॥

अथ संक्रांतेर्वाहनानि ।

सिंहो व्याघ्रो वराहश्च खरेभमहिषा हयः ॥ श्वाजौ गौः कुक्कुटो वाहाः संक्रांतौ ववतो रवेः ॥ २५ ॥

अब संक्रांतिके वाहन लिखतेहैं-सिंह १, व्याघ्र २, वराह ३, गर्दभ ४, भैंसा ५, हाथी ६, घोडा ७, कुत्ता ८, बकरा ९, गौ १०, मुर्गा ११ ये ववादि करणोंके क्रमसे सूर्यकी संक्रान्तिके वाहन हैं ॥ २५ ॥

अथ वस्त्राणि ।

श्वेतं पीतं हरित्पांडुरक्तं श्यामं च मेचकम् ॥ चित्रं कंबलदिङ्मेघसन्निभं क्रमतोंवरम् ॥ २६ ॥

अब वस्त्र लिखतेहैं-श्वेत १, पीत २, हरित ३, पांडु ४, लाल ५, काला ६. (मेचक) कृष्णवर्ण ७, चित्र ८, कंबल ९, दिशा १०,

मेघके तुल्य ११ ये बवादि करणोंके क्रमसे संक्रान्तिके वस्त्र हैं ॥ २६ ॥

अथ शस्त्राणि।

भुशुंडी च गदा खड्गो दंडः कोदंडतोमरौ ॥ कुंतः पाशोंकुशोऽस्त्रं च बाणश्चैवायुधं क्रमात् ॥ २७ ॥

अब शस्त्र लिखतेहैं–भुशुंडी १, गदा २, खड्ग ३, दंड ४, धनुष ५, तोमर ६, भाला ७, पाश ८, अंकुश ९, अस्त्र १०, बाण ११ ये बवादि करणोंके क्रमसे संक्रांतिके आयुध हैं ॥ २७ ॥

अथ भक्ष्याणि।

अन्नं च पायसं भैक्ष्यं पक्वान्नं च पयो दधि ॥ चित्रान्नं गुडमध्वाज्यं शर्करा भक्षणं क्रमात् ॥ २८ ॥

अब भक्ष्य लिखतेहैं–अन्न १, खीर २, भिक्षान्न ३, पंक्वान्न ४, दूध ५, दधि ६, चित्रान्न ७, गुड ८, शहत ९, घी १०, खांड ११ ये क्रमसे भक्ष्य हैं ॥ २८ ॥

अथ विलेपनानि।

कस्तूरी कुंकुमं चैव चंदनं मृच्च रोचनम् ॥ यावश्चोतुमदो वापि हरिद्रांजनकोऽगरुः ॥ कर्पूरश्चेति विज्ञेयं संक्रान्तेश्च विलेपनम् ॥ २९ ॥

अब विलेपन लिखतेहैं–कस्तूरी १, केसर २, चंदन ३, मृत्तिका ४, गोरोचन ५, महावर ६, बिलावका मद ७, हरिद्रा ८, अंजन ९, अगर १०, कर्पूर ११ ये क्रमसे संक्रांतिके विलेपन जानने ॥ २९ ॥

अथ जातयः।

देवभूतोरगाः पक्षी पशुरेणो द्विजः क्रमात् ॥ क्षत्रियो वैश्यकः शूद्रः संकरो जातयस्त्विमाः ॥ ३० ॥

अव जाति लिखतेहैं—देवता १, भूत २, सर्प ३, पक्षी ४, पशु५, हरिण ६, ब्राह्मण ७, क्षत्रिय ८, वैश्य ९, शूद्र, १०, संकर ११ ये क्रमसे जाति हैं ॥ ३० ॥

अथ पुष्पाणि ।

पुन्नागजातिबकुलकेतकीबिल्वकार्कजम् ॥ दूर्वाब्जमल्लिका-
पुष्पं पाटला च जपा क्रमात् ॥ ३१ ॥

अव पुष्प लिखतेहैं—नागकेसर १, चमेली २, मौलसिरी ३, केतकी, ४, बिल्व ५, आक ६, दूर्वा७, कमल ८,मोगरा ९, पोढर१०, दुपहरिया ११ ये क्रमसे संक्रान्तिके पुष्प हैं ॥ ३१॥

अथाभरणानि ।

नूपुरः किंकिणी मुक्ता विद्रुमः कंकणं मणिः ॥
गुंजा वराटका नीलो वज्रः स्वर्णं यथाक्रमम् ॥ ३२ ॥

अव आभूपण लिखतेहैं—नूपुर १, किंकिणी २, मोती ३, मूंगा ४, कंकण ५, मणि ६, चौंटनी ७, कौडी ८, नीलम ९, हीरा १०, सुवर्ण ११ ये क्रमसे आभूपण हैं ॥ ३२ ॥

अथ वयांसि ।

बाला कुमारिका रंडा मध्या प्रौढा प्रगल्भिका ॥ वृद्धा वं-
ध्याऽतिवंध्या स्यादसूता योगिनी वयः ॥ ३३ ॥

अव वय लिखतेहैं—बाला १, कुमारिका २, रंडा ३, मध्या ४, प्रौढा ५, (प्रगल्भिका,) विशेपतरुणा ६, वृद्धा ७, वंध्या ८, अति-वंध्या ९, (असूता) जिसके बालक नहीं हुआ १०, योगिनी ११ ये वयादिक क्रमसे संक्रान्तिकी अवस्थाएँ हैं ॥ ३३ ॥

करणानुसारसंक्रांतिचक्रम् ।

करण०	बव	बालव	कौलव	तैतिल	गर	वणिज	विष्टि	शकुनि	चतु.	नाग	किंस्तुघ्न
स्थिति	बैठी	बैठी	खड़ी	सुप्ता	बैठी	खड़ी	बैठी	सुप्ता	खडी	सुप्ता	खडी
फल	मध्यम	मध्यम	महर्घ	समर्घ	मध्यम	महर्घ	महर्घ	महर्घ	समर्घ	समर्घ	महर्घ
वाहन	सिंह	व्याघ्र	वराह	गर्दभ	हस्ती	महिष	घोडा	कुत्ता	बकरा	बैल	मुर्गा
उपवा०	गज	अश्व	बैल	मेंढा	गर्दभ	ऊँट	सिंह	शार्दूल	महिष	व्याघ्र	वानर
फल	भय	भय	पिड़ा	सुभिक्ष	लक्ष्मी	क्लेश	स्थैर्य	सुभिक्ष	क्लेश	स्थैर्य	मृत्यु
वस्त्र	श्वेत	पीत	हरित	पांडु	रक्त	श्याम	काला	चित्र	कंबल	नंगी	मेघवर्ण
आयुध	भुशुंडी	गदा	खड्ग	दंड	धनुष	तोमर	कुंत	पाश	अंकुश	तलवार	बाण
पात्र	सुवर्ण	रूपा	ताँबा	काँसी	लोह	खपरि.	पत्र	वस्त्र	कर	भूमि	काष्ठ
भक्ष्य	अन्न	पायस	भक्ष्य	पक्वान्न	पय	दधि	चित्रान्न	गुड़	मधु	घृत	खांड
लेपन	कस्तूरी	केशर	चंदन	माटी	गोरोचन	महाव.	निर्धूम	हलदी	सुरमा	अगरु	कपूर
वर्ण	देव	भूत	सर्प	पक्षी	पशु	मृग	विप्र	क्षत्री	वैश्य	शूद्र	अन्त्यज
पुष्प	पुन्नाग	जुही	बकुल	केतकी	बेल	अर्क	कमल	दूर्वा	मल्लिका	पाटल	जपा
भूषण	नूपुर	कंकण	मोती	मूँगा	कैरण	मणि	गुंजा	कौड़ी	नीलम	वज्र	सुवर्ण
वय:	बाला	कुमारी	रडा	मध्या	प्रौढा	प्रगल्भा	वृद्धा	वंध्या	अभिन.	अमृता	योगिनी

अथ संक्रांतेर्वाहनादीनां दुष्टफलम् ।

वाहजात्यायुधाहारादीनां तद्भृतजीविनाम् ॥ विनाशः स्याच्च संक्रांतेर्वस्त्रादीनां महर्घता ॥ स्थितोपविष्टसुप्तानां तथा ज्ञेयं विनाशनम् ॥ ३४ ॥

अब संक्रान्तिके वाहनादिकोंका दुष्टफल लिखतेहैं-संक्रांतिके वाहन, जाति, आयुध, भोजन आदिका तथा तिसतिस वस्तुसे जीविका करनेवालोंका विनाश होताहे और संक्रान्तिके वस्त्रादिक महँगे होतेहैं। इसी प्रकार खडेहुए, बैठेहुए, सोतेहुए, पुरुषोंका विनाश होताहे। यह फल पूर्वोक्त सूर्यावस्थासे जानलेना

अथ प्रतिमासे संक्रान्तिपूर्वभवशाज्जन्मभस्य फलम् ।

संक्रांतिदिनभात्पूर्वनक्षत्रात्त्रिषु चेत्स्वभम् ॥ मार्गोदयस्ततः षट्सु ६ सौख्यं पीडा ततस्त्रिभे ३ ॥ ३५ ॥ ततोङ्गभे सुखं ज्ञेयमर्थहानिस्त्रिभे ३ तथा ॥ शेषैःषड्भि ६ धनप्राप्तिरेवं मासफलं सदा ॥ ३६ ॥ यस्य चेज्जन्मनक्षत्रं शुभवारे भवेच्छुभम् ॥ पापवारे त्वसत्प्रोक्तं मासिमासि फलं त्विदम् ॥ ३७ ॥

अब संक्रान्तिके पूर्वनक्षत्रके वशसे फल लिखतेहैं—संक्रान्ति लगनेके नक्षत्रसे प्रथमके नक्षत्रसे गिनै यदि तीन नक्षत्रके भीतर जन्मनक्षत्र आजाय तो मार्ग चलावै, उससे आगे छह नक्षत्रके भीतर जन्मनक्षत्र आजाय तौ सौख्य होय और फिर तीन नक्षत्रके मध्यमें आवै तो पीडा होय ॥ ३५ ॥ फिर छह नक्षत्रमें सुख, फिर तीन नक्षत्रमें द्रव्यहानि, शेष छह नक्षत्रोंमें जन्मनक्षत्र आजाय तो द्रव्यप्राप्ति होतीहै इस प्रकार सर्वत्र संक्रांतिद्वारा मासफलका विचार करै ॥ ३६ ॥ जिसका जन्मनक्षत्र जिसमासमें शुभवारके दिन होय तो शुभफल और यदि अशुभवारके दिन आजाय तो अशुभ फल होताहै इस प्रकारभी महीने २ में फल जानै ॥ ३७ ॥

अथ दुष्टसंक्रांतौ दानम् ।

संक्रांतिदोपशांत्यर्थं त्रिकोणं त्रित्रिशूलकम् ॥ तिलेषु संलिखेच्चक्रं दद्यात्तत्सहिरण्यकम् ॥ ३८ ॥

अब दुष्टसंक्रान्तिमें दान लिखतेहैं—संक्रांतिके दोषकी शान्तिके लिये तिलोंपर त्रिकोणाकार तीन त्रिशूल लिखे उसपर सुवर्ण रखके दान करै तो शुभ फल होताहै ॥ ३८ ॥

अथाधिमासक्षयमासकौ ।

असंक्रांतिरमांतो यो मासश्चेत्सोऽधिमासकः ॥परमासाह्वयो ज्ञेयः प्रायश्चैत्रादिसप्तसु ॥ ३९ ॥ द्विसंक्रांतिः क्षयाख्यः स्यात्कदाचित्कार्त्तिकत्रये ॥ युग्माख्यः स तु तत्राब्दे ह्यधिमासद्वयं भवेत् ॥ मलमासाविति प्रोक्तौ गर्हितौ सर्वकर्मसु ॥ ४० ॥

अब अधिमास और क्षयमास लिखतेहैं– जो अमावास्यान्त महीना संक्रांति रहित होय तो वह अधिकमास होताहै उसीका नाम मलमासभी है, बहुधा चैत्रादि सात महीनोंमें आपड़ताहै॥३९॥ और जिस महीनेमें दो संक्रान्ति होंय तो वह क्षयमास होताहै कार्त्तिकादि तीन महिनोंमें कभी २ आपडताहै और जिस वर्षमें क्षयमास होताहै उसी वर्षमें दो अधिमास होतेहैं, क्षयमास और अधिमास दोनों मलमास कहातेहैं सब शुभकर्मोंमें निंदित हैं ॥४० ॥

अथ तारादिबलादन्येषां बलम् ।

ताराया बलतश्चांद्रबलं सूर्यस्य चंद्रतः ॥ सूर्यतः सर्वखेटानां बलं ज्ञेयं शुभाशुभम् ॥ ४१ ॥

इति श्रीमदैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ संक्रांतिप्रकरणं द्वादशम् ॥ १२ ॥

अब तारादिबलसे अन्योंका बल लिखतेहैं–ताराके बलसे चंद्रमाका और चंद्रमाके बलसे सूर्यका और सूर्यबलसे सकल ग्रहोंका शुभ अशुभ बल जानलेना चाहिये ॥ ४१ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं संक्रांतिप्रकरणं द्वादशम् ॥ १२ ॥

अथ गोचरप्रकरणम्,तत्रादौ ग्रहाणां स्थानफलानि ।

गमो हानिर्धनं रोगो दैन्यं सौख्यं गती रुजः ॥ पापं सौख्यं धर्मपीडा फलं भानोः स्वजन्मभात् ॥१॥ पुष्टिर्वित्तं श्रियो रोगः सुखं लाभो धनं रुजः ॥ मानं सौख्यं श्रियः पीडा चंद्रस्यैतत्फलं क्रमात् ॥ २ ॥ भीतिर्हानिः श्रियो वैरं रुग्लाभौ कार्श्यमेव च ॥ पापं रोगः सुखं शोको हानिर्भौमस्य संस्मृतम् ॥ ३ ॥ बंधो लाभो भयं वित्तं शोको लक्ष्मीः क्षयं धनम् ॥ रोगो भोगः सुखं बाधा फलं चैतद्बुधस्य तु ॥ ४ ॥ भीर्वित्तं रुग्व्ययो लाभः शोकः सौख्यं रुजस्तथा ॥ मानं दैन्यं धनं रोगः फलं चैतद्बृहस्पतेः ॥५॥ सुखं वित्तं धनं सौख्यं रोगपीडा विपत्सुखम् ॥ धर्मो दुःखं धनं लाभः फलं शुक्रस्य कीर्तितम् ॥ ६ ॥ भीतिः शोकः श्रियो दुःखं हानिः सौख्यं भयं रुजः ॥ पापं शोको धनं कष्टं शनेरेतत्फलं क्रमात् ॥ ७ ॥ हानिर्व्ययो धनं वैरं शोको वित्तं विपद्रुजः ॥ पापं वैरं सुखं हानी राहुकेत्वोः फलं क्रमात् ॥ ८ ॥

अब गोचर प्रकरण लिखतेहैं—तहां पहिले जन्मराशिसे प्रत्येक स्थानोंमें ग्रहोंका फल लिखतेहैं—यात्रा १, हानि २, धन ३, रोग ४, दीनता ५, सौख्य ६, यात्रा ७, रोग ८, पाप ९, सौख्य १०, धर्म ११, पीडा १२ अपनी जन्मराशिसे जन्म, दूसरे, तीसरे आदि बारहवें तक सूर्यका यह उक्त फल क्रमसे जाने ॥ १ ॥ पुष्टि १, धन २, लक्ष्मी ३, रोग ४, सुख ५, लाभ ६, धन ७, रोग ८, मान ९, सौख्य १०, लक्ष्मी ११, पीडा १२ क्रमसे यह जन्मादि बारहों चंद्रमाका फल है ॥२॥ भय १, हानि २,लक्ष्मी ३,

वैर ४, रोग ५, लाभ ६, दुर्बलता ७, पाप ८, रोग ९, सुख १०, शोक ११, हानि १२ यह फल क्रमसे जन्मादि मंगलका है ॥ ३ ॥ बंधन १, लाभ २, भय ३, धन ४, शोक ५, लक्ष्मी ६, नाश ७, धन ८, रोग ९, भोग १०, सुख ११, रोग १२ यह फल क्रमसे जन्मादि बुधका है ॥ ४ ॥ भय १, धन २, रोग ३, व्यय ४, लाभ ५, शोक ६, सौख्य ७, रोग ८, मान ९, दीनता १०, धन, ११, रोग १२ क्रमसे यह फल जन्मादि बृहस्पतिका है ॥ ५ ॥ सुख १, धन २, धन ३, सौख्य ४, रोग ५, पीडा ६, विपत् ७, सुख ८, धर्म ९, दुःख १०, धन ११, लाभ १२ क्रमसे यह फल शुक्रका है ॥ ६ ॥ भय १, शोक २, लक्ष्मी ३, दुःख ४, हानि ५, सौख्य ६, भय ७, रोग ८, पाप ९, शोक १०, धन ११, कष्ट १२ क्रमसे यह फल जन्मादिक शनिका है ॥ ७ ॥ हानि १, व्यय २, धन ३, वैर ४, शोक ५, धन ६, विपत् ७, रोग ८, पाप ९, वैर १०, सुख ११, हानि १२ क्रमसे यह फल राहु और केतुका है ॥ ८ ॥

अथ ग्रहाणां जन्मराशेः सकाशात्प्रत्येकस्थानफलचक्रम्।

स्थानानि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सूर्यस्य फ.	यात्रा	हानि	धन	रोग	दीनता	सौख्य	यात्रा	रोग	पाप	सौख्य	धर्म	पीडा
चन्द्रस्य फ.	पुष्टि	धन	लक्ष्मी	रोग	सुख	लाभ	धन	रोग	मान	सौख्य	लक्ष्मी	पीडा
मंगलस्य फ	भय	हानि	लक्ष्मी	वैर	रोग	लाभ	दुर्बलता	पाप	रोग	सुख	शोक	हानि
बुधस्य फ	बंधन	लाभ	भय	धन	शोक	लक्ष्मी	नाश	धन	रोग	भोग	सुख	रोग
बृहस्पतेः फ.	भय	धन	रोग	व्यय	लाभ	शोक	सौख्य	रोग	मान	दीनता	धन	रोग
शुक्रस्य फ.	सुख	धन	धन	सौख्य	रोग	पीडा	विपत्	सुख	धर्म	दुःख	धन	लाभ
शनैश्चरफ.	भय	शोक	लक्ष्मी	दुःख	हानि	सौख्य	भय	रोग	पाप	शोक	धन	कष्ट
रा. के. फ.	हानि	व्यय	धन	वैर	शोक	धन	विपत्	रोग	पाप	वैर	सुख	हानि

अथ शुभफलदा ग्रहाः।

शुभा एकादशे ११ सर्वे त्रि ३ षट्क ६ दशगो १० रविः ॥
षट् ६ त्रि ३ संस्था धरापुत्रराहुकेतुशनैश्चराः॥९॥ दश १०

सप्त ७ त्रि ३ षट्का ६ द्य १ संस्थितश्चंद्रमाः शुभः ॥
शुक्लपक्षे तु नवमो ९ द्वितीयः २ पंचमो ५ ऽपि वा ॥१०॥
दिग १० ष्टा ८ श्वि २ चतुः ४ षष्ठो ६ गोचरे शुभदो बुधः
बृहस्पतिः शुभः प्रोक्तो द्वि २ पंच ५ नव ९ सप्त ७ गः
॥ ११ ॥ एक १ द्वि २ त्रि ३ चतुः ४ पंच ५ नवा ९ ष्ट ८
व्यय १२ गो भृगुः ॥ १२ ॥

अब शुभफलदग्रह लिखतेहैं–ग्यारहवें स्थानमें सब ग्रह शुभ होतेहैं; तीसरे, छठे, दशवें स्थानमें सूर्य शुभ होतेहैं; तीसरे छठे स्थानमें मंगल, राहु, केतु, शनैश्चर शुभ होतेहैं ॥ ९ ॥ दशवें, सातवें, तीसरे, छठे, प्रथम स्थानमें चंद्रमा शुभ होता है और शुक्लपक्षमें नौवां, दूसरा, पाँचवाँ चंद्रमा शुभ होताहै ॥१०॥ गोचरमें दशवां, आठवां, दूसरा, चौथा, छठा बुध शुभदायक होताहै और दूसरा, पांचवां, नौवां, सातवां, बृहस्पति शुभ कहा है ॥ ११ ॥ आदिका, दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवां, नौवां, आठवां, बारहवां शुक्र शुभ होताहै ॥ १२ ॥

अथ ग्रहाणां शुभस्थानचक्रम् ।

सूर्य	३	६	१०	११	०	०	०	०	०	०	शुभस्थानानि
चंद्रमा	१०	७	३	६	१	शुक्ल.	९	२	५	११	शुभस्था.
मंगल	३	६	११	०	०	०	०	०	०	०	शुभस्था.
बुध	१०	८	२	४	६	११	०	०	०	०	शुभस्था.
बृहस्प.	२	५	९	७	११	०	०	०	०	०	शुभस्था.
शुक्र	१	२	३	४	५	९	८	१२	११	०	शुभस्था.
शनि	३	६	११	रा. के.	३	६	११	०	०	०	शुभस्था.

अथ ग्रहाणां क्रमवेधः, तत्र प्रथमं रवेः ।

षष्ठ ६ द्वादश १२ गो विद्धो दशम १० स्तुर्यगो ४ ग्रहः ॥

तृतीयो ३ नवमः ९ सूर्यो लाभस्थः ११ पंचम ५ स्तथा ॥ १३ ॥

अब ग्रहोंका क्रमवेध लिखतेहैं—छठे और बारहवें स्थानमें सूर्यका वेध होताहै अर्थात् छठे स्थानमें सूर्य शुभ होतेहैं यदि बारहवें घरमें कोई ग्रह न होय तो. इसी प्रकार दशवें स्थानमें सूर्य शुभ होतेहैं, यदि चौथे स्थानमें कोई ग्रह न होय तो. तीसरे स्थानमें सूर्य शुभ होतेहैं यदि नौवें स्थानमें कोई ग्रह न होय तो. ग्यारहवें स्थानमें सूर्य शुभ होतेहैं यदि पांचवें स्थानमें कोई ग्रह न होय तो और यदि जन्म राशिसे बारहवें, चौथे, नौवें, पांचवें घरमें कोई ग्रह होय तो छठे, दशवें, तीसरे, ग्यारहवें. घरमें स्थित सूर्य विद्ध होजातेहैं जिसका फल अशुभ होताहै, शुभफल नहीं रहता। इसी प्रकारसे सब ग्रहोंका वेध जानलेना चाहिये ॥ १३ ॥

अथ चंद्रमसः।

द्वितीयः २ सप्तम ७ श्चंद्रः प्रथमः १ पंचमस्तथा ५ ॥ षष्ठ ६ द्वादश १२ गो विद्धो ह्यष्टमो ८ लाभ ११ संस्थितः ॥
तृतीयो ३ नवम ९ स्तुर्यो ४ दशमस्थानगः १० सदा १४ ॥

अब चंद्रमाका लिखतेहैं—चंद्रमाको दूसरे. सातवें घरका वेध होताहै अर्थात् दूसरे घरमें चंद्रमा शुभ होताहै यदि सातवें घरमें कोई ग्रह नहीं होय तो और जो सातवें घरमें कोई ग्रह होगा तो चंद्रमा विद्ध और उसका अशुभ फल होजाताहै। इसीप्रकार प्रथम और पांचवेंका, छठे और बारहवें स्थानका, आठवें और ग्यारहवें स्थानका, तीसरे और नौवें स्थानका, चौथे और दशवें स्थानका सदैव चंद्रमाका वेध होताहै ॥ १४ ॥

अथ भौमशनिराहुकेतूनाम्।

तृतीयं ३ द्वादशं १२ षष्ठं ६ नवम ९ मर्थ२ लाभं ११ गम् ॥
विध्येत्पंचमतो ५ भौमं राहुं केतुं शनैश्चरम् ॥ १५ ॥

अव भौम शनि राहु केतुओंका लिखतेहैं-तीसरे तथा बारहवें स्थानका, छठे और नौवेंका, ग्यारहवें और पांचवें स्थानका, मंगल, राहु, केतु, शनैश्चर इन चारोंका वेध होताहै ॥ १५ ॥

अथ वुधस्य ।

द्वितीयं २ पंचमं ५ तुर्यं ४ तृतीयो ३ नवमो ९ रसः ६ ॥
आद्ये १ ष्टमं ८ वुधं खस्थ १० मष्टमों ८ त्यग १२ माय ११ गम् ॥ १६ ॥

अव वुधका लिखतेहैं-दूसरे और पांचवेंका,चौथे और तीसरेका, नौवें और सातवें स्थानका, पहिले और आठवें स्थानका, दशवें और आठवें स्थानका,ग्यारहवें और वारहवें स्थानका वुधका वेध होताहै १६

अथ गुरोः ।

द्वितीयं २ गुरुमंत्यस्थं १२ पंचमं ५ तुर्यगोऽ४ ष्टमः ८ ॥
लाभगं ११ सप्तमं ७ त्रिस्थं ३ नवमं ९ दशमो १० ग्रहः ॥ १७ ॥

अव गुरुका लिखतेहैं-दूसरे और वारहवेंका, पांचवें और चौथेका, आठवें और ग्यारहवेंका, सातवें और तीसरेका, नौवें और दशवें स्थानका वृहस्पतिका वेध होताहै ॥ १७ ॥

अथ भृगोः ।

भार्गवं वाद्य१ मष्टस्थ८स्त्रिग ३ माद्यो१ रिगों६त्यगम्१२॥
खस्थं १० तुर्यं च ४ लाभस्थो ११ नवमं त्रिग३ मायगम् ११ ॥ १८ ॥ द्वितीयं २ सप्तमं ७ खेटो नवमः ९ पञ्चमं तथा ॥ पंचम ५श्चाष्टमं ८ विद्धयेत्क्रमवेध उदाहृतः॥१९॥
अविद्धः शुभदः खेटो न वेधस्तातपुत्रकः ॥ निंद्यस्थानगतोप्याद्यो विद्धश्चेत्स विलोमतः ॥ २० ॥

अव भृगुका लिखतेहैं-पहिले और आठवें स्थानका, तीसरे और पहिले स्थानका,छठे और वारहवें स्थानका,दशवें और चौथे स्थानका,

ग्यारहवें और नौवें स्थानका, तीसरे और ग्यारहवें स्थानका ॥ १८ ॥ दूसरे और सातवें स्थानका, नौवें और पांचवेंका, पांचवें और आठवेंका क्रमसे शुक्रका वेध कहाहै ॥ १९ ॥ (अविद्ध) वेधरहित ग्रह शुभ फलदायक होता है और पिता पुत्र ग्रहोंका वेध नहीं होता जैसे सूर्य और शनैश्चरका, चंद्रमा और बुधका वेध नहीं होता और यदि निन्दित स्थानमें ग्रह स्थित होय तो विलोम वेध होताहै; जैसे छठे, दशवें, तीसरे, ग्यारहवें स्थानमें स्थित सूर्य शुभ होतेहैं और शेष आठ स्थानोंमें अशुभ होतेहैं जिनमेंसे चार स्थान जो कि, पहिले सूर्यके वेधके कह आयेहैं बारहवां, चौथा, नौवां, पांचवां स्थान अशुभ और निंदित हैं इन निंदित स्थानोंमें सूर्य स्थित होंय और छठे, दशवें, तीसरे, ग्यारहवें स्थानमें कोई ग्रह होय तो सूर्य विद्ध होतेहैं और यदि कोई ग्रह नहीं होय तो शुभ होतेहैं यही विलोम वेध कहाताहै इसी प्रकार प्रथम, द्वितीय, सप्तम, अष्टम स्थानमें भी सूर्यका वेधावेध जाने ॥ २० ॥

अथ ग्रहाणां शुभविद्धस्थानचक्रम् ।

<table>
<tr><td rowspan="2">सूर्यस्य</td><td>६</td><td>१०</td><td>३</td><td>११</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>शुभस्थानानि</td></tr>
<tr><td>१२</td><td>४</td><td>९</td><td>५</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>विद्धस्थानानि</td></tr>
<tr><td rowspan="2">चन्द्रस्य</td><td>२</td><td>१</td><td>६</td><td>८</td><td>३</td><td>४</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>शुभस्थानानि</td></tr>
<tr><td>७</td><td>५</td><td>१२</td><td>११</td><td>९</td><td>१०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>विद्धस्थानानि</td></tr>
<tr><td>मं. श.</td><td>३</td><td>६</td><td>११</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>शुभस्थानानि</td></tr>
<tr><td>रा. के.</td><td>१२</td><td>९</td><td>५</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>विद्धस्थानानि</td></tr>
<tr><td rowspan="2">बुधस्य</td><td>२</td><td>४</td><td>९</td><td>१</td><td>१०</td><td>१२</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>शुभस्थानानि</td></tr>
<tr><td>५</td><td>३</td><td>७</td><td>८</td><td>८</td><td>११</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>विद्धस्थानानि</td></tr>
<tr><td>बृहस्प</td><td>२</td><td>५</td><td>८</td><td>७</td><td>९</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>शुभस्थानानि</td></tr>
<tr><td>तेः</td><td>१२</td><td>४</td><td>११</td><td>३</td><td>१०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>०</td><td>विद्धस्थानानि</td></tr>
<tr><td rowspan="2">शुक्रस्य</td><td>१</td><td>३</td><td>६</td><td>१०</td><td>११</td><td>३</td><td>२</td><td>९</td><td>५</td><td>शुभस्थानानि</td></tr>
<tr><td>८</td><td>१</td><td>११</td><td>४</td><td>९</td><td>११</td><td>७</td><td>५</td><td>८</td><td>विद्धस्थानानि</td></tr>
</table>

अथ देशविभागेन जन्मतो वा ग्रहतो वेधगणना ।

हिमाद्रिविंध्ययोर्मध्ये खेटर्क्षाद्वेधको भवेत् ॥
अन्यत्र जन्मराशेस्तु विज्ञेयौ वेध्यवेधकौ ॥ २१ ॥

अब देशविभागसे जन्मसे वा ग्रहसे वेधगणना लिखते हैं– हिमालय और विन्ध्याचलके बीचमें ग्रहकी राशिसे वेध होताहै और अन्य देशोंमें जन्मराशिसे वेध्य तथा वेधक ग्रह जाने ॥ २१ ॥

अथाष्टकवर्गानुसारेण ग्रहफलम् ।

स्वाष्टवर्गे यदा खेटोऽधिकरेखस्तु राशितः ॥
तदा गोचरदुष्टोऽपि श्रेष्ठो नाल्पकरेखगः ॥ २२ ॥

अब अष्टकवर्गानुसारसे ग्रहफल लिखतेहैं–अपनी जन्मराशिसे गोचरमें दुष्टफलदायक भी ग्रह यदि अपने अष्टकवर्गमें अधिक रेखावाला होय तो शुभ फलदायक होताहै और अन्य रेखावाला ग्रह शुभफलदायक नहीं होता ॥ २२ ॥

अथ ग्रहाणां निष्फलत्वम् ।

सत्फलोपीक्षितः पापैः सौम्यैर्दृष्टोप्यसत्फलः ॥ तावुभौ निष्फलौ ज्ञेयौ गोचरे जातकेपि च ॥ २३ ॥ शत्रुक्षेत्रगतः खेटो नीचगोप्यस्तगोपि वा ॥ निष्फलः सोऽपि विज्ञेयः शत्रुदृष्टोऽपि तादृशः ॥ २४ ॥

अब ग्रहोंका निष्फलत्व लिखते हैं–यदि शुभफलका देनेवाला ग्रह पापग्रहोंसे दृष्ट हो और अशुभफल देनेवाला ग्रह शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो इस प्रकारके दोनों ग्रह गोचर और जातकमें निष्फल जानने ॥ २३ ॥ जो ग्रह शत्रुक्षेत्री होय अथवा नीचका होय वा अस्तका होय वा शत्रुसे दृष्ट होय तो वह भी उसी प्रकार निष्फल जानना ॥ २४ ॥

अथ ग्रहाणां राशिभोगमानम्।

मासं शुक्रो बुधः सूर्यः सार्द्धमासं महीसुतः॥ गुरुरब्दं तमस्सार्द्धं शनिः सार्द्धाब्दकद्वयम्॥ सपादद्विदिनं चंद्रः प्रायः खेटभभोगकः॥ २५॥

अब ग्रहोंका राशिभोगमान लिखते हैं—एकमास एकराशिपर शुक्र, बुध, सूर्य भोग करतेहैं और डेढमासमें मंगल एक राशि भोगतेहैं. बृहस्पति एक वर्षमें, राहु डेढवर्षमें; शनि ढाई वर्षमें और चंद्रमा सवादो दिनमें एकराशि भोगताहै यही ग्रहोंका राशि-भोगहै॥ २५॥

अथ ग्रहाणां फलसमयः।

राशेरादौ कुजः सूर्यो मध्ये शुक्रबृहस्पती॥ अंत्ये चंद्रः शनिर्ज्ञेयः फलदः सर्वदा बुधः॥ २६॥ सूर्यः पंचदिनात्पूर्वं शीतरश्मिर्घटीत्रयात्॥ भौमो घस्राष्टकादर्वाक्शुक्रज्ञौ सप्तवासरात्॥ २७॥ गुरुर्मासद्वयाच्चैव षण्मासात्तु शनैश्चरः॥ राहुर्मासत्रयादेव राशेस्तु फलदाः स्मृताः॥ २८॥ राशिनक्षत्रसंधिस्था फलदा ध्रुवमेष्ययोः॥ राशिनक्षत्रयोः खेटाः पूर्वयोश्चेद्विलोमगाः॥ २९॥

अब ग्रहोंका फल समय लिखते हैं—राशिके आदिमें मंगल, सूर्य फल देतेहैं. शुक्र, बृहस्पति राशिके मध्यमें; चंद्रमा, शनैश्चर राशिके अन्तमें और बुध राशिके सब कालमें फलदायक जानना॥ २६॥ सूर्य राशिपर जानेके समयसे पांचदिन पहिलेसे फल देने लगतेहैं. चंद्रमा राशिपर जानेसमयसे तीनघडी पहिलेसे फल देनेलगताहै मंगल आठदिने पहिले; शुक्र, बुध सातदिन पहिले॥ २७॥ बृहस्पति दोमास पहिलेसे; शनैश्चर छहमास पहिलेसे; राहु तीनमास पहिलेसे फल देनेलगताहै॥ २८॥ राशि और नक्षत्रकी संधिमें जो

ग्रह स्थित होय तो अग्रिम राशि और नक्षत्रके फल देतेहैं, और यदि ग्रह वक्री हों तो पूर्वकी राशि और नक्षत्रके फल देतेहैं अर्थात् जिस राशिसे ग्रह वक्री होय उसीका फल देताहै और वर्त्तमान राशिका फल नहीं देता ॥ २९ ॥

अथ जन्मराशितो ग्रहणफलम् ।

ग्रहणं जन्मभाच्छ्रेष्ठं दशै१० कादश ११ षट् ६ त्रिकम् ३ ॥ मध्यमं पंच ५ सप्ता ७ श्वि २ नवम ९ स्थान संस्थितम् ॥ ३० ॥ नेष्टमंत्या १२ ष्ट ८ तुर्य ४ स्थं जन्मर्क्षे चेन्मृतिर्भवेत् ॥ जपात्सुवर्णगोदानाच्छान्तिश्चादर्शनाच्छुभम् ॥ ३१ ॥

अब जन्मराशिसे ग्रहण फल लिखते हैं—जन्मराशिसे दशवीं, ग्यारहवीं, छठी, तीसरी राशिपर ग्रहण पडे तो शुभ होताहै और पांचवीं, सातवीं, दूसरी, नौवीं राशिपर ग्रहण पडे तो मध्यम होता है ॥ ३० ॥ तथा बारहवीं, आठवीं, चौथी राशिपर ग्रहण पडे तो नेष्ट होताहै और जन्मराशिपर ग्रहण पडे तो मृत्यु होतीहै जप करने तथा सुवर्ण और गऊदान करनेसे शान्ति होतीहै और ग्रहण न देखनेसे भी शुभ फल होताहै ॥ ३१ ॥

अथ विषमस्थे ग्रहे विवर्ज्यानि ।

आदावकालयात्रा च दूरदेशगमो नृपैः ॥ दुष्टवाजिगजारोहो गमनं परमंदिरम् ॥ न कार्यं साहसं कर्म विषमेषु ग्रहेषु च ॥ ३२ ॥

अब दुष्टस्थानस्थितग्रहमें वर्ज्य लिखते हैं—यदि अशुभ स्थानमें ग्रह होय तो राजा प्रथमही असमयमें यात्रा करना, दूरदेशका जाना, दुष्ट हाथी घोडेपर चढना, परायेपर जाना और साहस कर्म ये सब न करे ॥ ३२ ॥

अथ ग्रहाणां दानानि।

ये खेटा गोचरे दुष्टा दशायां स्वाष्टवर्गके॥ जपदानादिना ते स्युः प्रसन्नाः शांतितोऽपि वा ॥ ३३ ॥ माणिक्य-धेनुगोधूमा हेम ताम्रं गुडोंबुजम् ॥ चंदनं चांवरं रक्तं देयं भास्वन्मुदे नृपैः ॥ ३४ ॥ मुक्तां रौप्यं सितं ताम्रं शंखं वंशस्थतंडुलान् ॥ कर्पूरं गोयुगं दद्याद्रत्नं कुंभं विधोर्मुदे ॥ ३५ ॥ प्रवालं हेमगोधूमान्रक्तं वासोरुणं वृषम् ॥ करवीरं गुडं ताम्रं मसूरान्भौमतुष्टये ॥ ३६ ॥ कांस्यं नीलांवरं हेम गजदंतं गरुत्मकम् ॥ मुद्राज्यस्वर्णकापुष्पं दद्यात्प्रीत्यै बुधस्य च ॥ ३७ ॥ हरिद्राश्वः सिता हेम पीतं धान्यं तथांवरम् ॥ लवणं पुष्परागश्च देयो वाचस्पतेर्मुदे ॥ ३८ ॥ धेनुं चित्रांवरं चाज्यं श्वेताश्वो हेम तंडुलाः ॥ सुगंधी रजतं वज्रं प्रदेयं प्रीतये भृगोः ॥ ३९ ॥ तिलतैलं तथा माषानिंद्रनीलसितांवरम् ॥ कृष्णां गां महिषीदानं स्वर्णं दद्याच्छनेर्मुदे ॥ ४० ॥ गोमेदं तुरगं खड्गं नीलवस्त्रं च कंवलम् ॥ स्वर्णं तैलं तिलान्दद्यात्सैंहिकेयमुदे नृपः ॥ ४१ ॥ कस्तूरी कंवलं शस्त्रं छागो वैडूर्यकांचनम् ॥ तिलास्तैलं महीपालैः प्रदेयं केतुतुष्टये ॥ ४२ ॥

अव ग्रहोंका दान लिखतेहैं—जो ग्रह गोचरमें, दशामें, अपने अष्टवर्गमें अशुभ फल दायक होयँ तो वे सव ग्रह जप दानादि तथा शान्ति करनेसे प्रसन्न होतेहैं ॥ ३३ ॥ माणिक्य, गऊ, गेहूं, सुवर्ण, तांवा, गुड, कमल, चंदन, रक्तवस्त्र इतनी वस्तुएँ राजालोग सूर्यकी प्रीतिके लिये दान करें ॥ ३४ ॥ मोती, चांदी, श्वेत वस्त्र, ताँवा, शंख, वाँसकी छवरियामें भरेहुए चावल, कपूर, दो गऊ, रत्न, कुंभ ये वस्तु चंद्रमाकी प्रीतिके लिये दान करें ॥ ३५ ॥ मूंगा,

सुवर्ण, गेहूं, रक्तवस्त्र, लाल बैल, कनेरके फूल, गुड, ताँबा, मसूर अन्न ये सब वस्तु मंगलकी प्रसन्नताके लिये दान करैं ॥ ३६ ॥ कांसी, नीला कपडा, सुवर्ण, हाथीका दांत, पन्ना, मूँग, घी, पीले फूल बुधकी प्रीतिके लिये दान करैं ॥ ३७ ॥ हलदी, घोडा, शर्करा, सुवर्ण, पीला अन्न, पीला वस्त्र, लवण, पुखराज ये वस्तु बृहस्पतिकी प्रसन्नतार्थ दान करैं ॥३८॥ गऊ, चित्राम्बर, घी, श्वेत घोडा, सुवर्ण, चावल, सुगंधि, चांदी, वस्त्र, हीरा ये वस्तु शुक्रकी प्रीत्यर्थ दान करैं ॥ ३९ ॥ तिल, तैल, उडद, इंद्रनील मणि, श्याम वस्त्र, काली गऊ, भैंस, सुवर्ण ये वस्तु शनैश्चरकी प्रीतिके अर्थ दान करैं ॥ ४० ॥ गोमेद रत्न, घोडा, तलवार, नीला वस्त्र, कम्बल, सुवर्ण, तैल, तिल ये वस्तु राहुकी प्रीतिके अर्थ राजा दान करैं ॥ ४१ ॥ कस्तूरी, कम्बल, शस्त्र, बकरी, वैडूर्य मणि, सुवर्ण, तिल, तैल ये वस्तु केतुकी प्रसन्नताके लिये दान करैं ॥ ४२ ॥

अथ ग्रहदोषहरमौषधीस्नानम् ।

एलापष्ठीमधूशीरताम्रपुष्पाब्जकुंकुमैः ॥ स्नानं मनःशिलादेवदारुभी रवितुष्टये ॥ ४३ ॥ पंचगव्येनदंतांबुशंखस्फटिकमौक्तिकैः ॥ कुमुदैर्मिश्रितं स्नानं चन्द्रदोषापनुत्तये ॥ ४४ ॥ हिंगूलबिल्वफलिनीमांसीबकुलचंदनैः ॥ रक्तपुष्पैर्बलामिश्रैः स्नानं भौमार्त्तिनुत्तये ॥ ४५ ॥ गोमयाक्षतमुक्ताभी रोचनामधुहेमभिः ॥ फलमूलैर्युतं स्नानं बोधनार्त्तिविनाशनम् ॥ ४६ ॥ मालतीकुसुमैः श्वेतसर्षपक्षौद्रसंयुतैः ॥ मल्लकैर्मदयंत्या च स्नायाद्गुरुमुदे ततः ॥ ४७ ॥ फलामनःशिलामूलफलकुंकुमवारिभिः ॥ स्नानं शुक्रकृतां बाधां नाशयत्येव भूभुजाम् ॥ ४८ ॥ बलांजनैः कृष्णतिलैर्लोध्रेण मिश्रितरपि॥शतपुष्पान्वितैः स्नायान्मंदबाधापनुत्तये॥४९॥

अब ग्रहदोषहरण करनेवाला औषधीस्नान लिखतेहैं—इलायची, साठी, शहत, उशीर, ताम्र रंगके फूल, कमल, केसर, देवदारु, मैनशिल इन औषधियोंसे सूर्यकी प्रसन्नताके अर्थ स्नान करै ॥४३॥ पंचगव्य (गौका दधि, दूध, घृत, मूत्र, गोबर) दंती औषधिका जल, स्फटिक, मोती, कुमुद इन सबको जलमें मिलाकर स्नान करै तो चंद्रमाका दोष दूर होजाताहै ॥ ४४ ॥ हींग, बिल्व, गोंदनी, जटामाँसी, मोलसिरी, चंदन, लाल फूल, खरहटी इन सब औषधियोंके जलसे मंगलकी पीडा दूर करनेके लिये स्नान करै ॥ ४५ ॥ गोबर, अक्षत, मोती, गोरोचन, शहत, सुवर्ण, फल, मूल इन औषधियोंके जलसे बुधकी पीडा निवारण करनेके अर्थ स्नान करै ॥ ४६ ॥ चमेलीके फूल, श्वेत सरसों, शहत, गूलर, मदयंती और नवीन पत्तोंके जलसे बृहस्पतिकी प्रसन्नताके अर्थ स्नान करै॥४७॥त्रिफला, मैनशिल, मूल, फल, मूलीका बीज, केसर, इन औषधियोंके सहित जलसे स्नान राजाओंकी शुक्र कृत बाधाका नाश करता है ॥ ४८ ॥ खिरहटी, सुरमा, काले तिल, लोध, सौंफ इन औषधियोंके जलसे शनिकृत बाधा दूर करनेके लिये स्नान करै ॥ ४९ ॥

अथ सर्वग्रहदोषाणां दोषापनुत्तये सामान्यमौषधीस्नानम्।

लाजाकुष्ठबलाभिश्च प्रियंगुघनसर्षपैः ॥ देवदारुहरिद्राभिः पुंखलोध्रेण संयुतैः ॥ ५० ॥ वारिभिः स्नानमुक्तं हि प्रोक्तं दानपुरःसरम् ॥ एतत्सामान्यतः सर्वग्रहपीडोपशांतये॥५१॥ यथा सिद्धौषधै रोगानश्येयुर्मंत्रतो भयम् ॥ तथा स्नानविधानेन ग्रहदोषः प्रणश्यति ॥ ५२ ॥

अब सब ग्रहोंके दोषोंका नाशके लिये सामान्य औषधीस्नान लिखतेहैं—साठीकी खीलें कूट, खिरहटी, मालकाँगनी, वनसरसों

देवदारु, हलदी, सरफोका, लोध ॥ ५० ॥ इन ओषधियोंके जलसे स्नान करना तथा पूर्वोक्त दान करना सब ग्रहोंकी पीडा शान्त होनेके लिये यह यत्न सामान्यतासे कहाहै ॥ ५१ ॥ जैसे सिद्ध औषधियोंसे रोग और मंत्रसे भय नाश होताहै । इसी प्रकार स्नान करनेसे ग्रहदोष नाश होजाताहै ॥ ५२ ॥

अथ ग्रहप्रीतये रत्नादिधारणम् ।

शुक्रेंद्वो रजतं चैव विद्रुमं भानुभौमयोः ॥ ज्ञस्य हेम शनेर्लोहं गुरोर्मुक्ताफलं नरः ॥ प्रीतये धारयेदंगे लाजावर्त्तं ततोन्ययोः ॥ ५३ ॥

अब ग्रहोंके प्रीतिके लिये रत्नादि धारण लिखतेहैं—शुक्र और चंद्रमाकी प्रसन्नताके अर्थ चांदी, सूर्य तथा मंगलकी प्रसन्नताके अर्थ मूंगा, बुधकी प्रसन्नताके अर्थ सुवर्ण, शनैश्चरकी प्रीतिके अर्थ लोह, बृहस्पतिकी प्रीतिके अर्थ मोती और राहु केतुकी प्रीतिके अर्थ लाजावर्त्त नामक मणि अंगमें धारण करै ॥ ५३ ॥

अथ नवग्रहमुद्रिका ।

माणिक्यं तरणेर्मध्ये प्राच्यां वज्रं भृगोर्विधोः ॥ आग्नेय्यां मौक्तिकं याम्यां प्रवालं मंगलस्य च ॥ ५४ ॥ गोमेदं राक्षसे राहोः पश्चिमे नीलकं शनेः ॥ वायौ वैडूर्यकं केतोरुदीच्यां पुष्पकं गुरोः ॥ ५५ ॥ गारुत्मतं तथैशान्यां सोमपुत्रस्य तुष्टये ॥ मुद्रिकायां नरैर्धार्यं ग्रहाणां प्रीतये सदा ॥ ५६ ॥

अब नवग्रहोंकी मुद्रिका लिखतेहैं—बीचमें सूर्यका माणिक्य, पूर्वमें शुक्रका हीरा, आग्नेयमें चंद्रमाका मोती, दक्षिणमें मंगलका मूंगा ॥ ५४ ॥ नैर्ऋत्यमें राहुका गोमेद रत्न, पश्चिममें शनैश्चरका नीलम, वायव्यमें केतुका वैडूर्य, उत्तरमें बृहस्पतिका

पुखराज ॥ ५५ ॥ ईशानमें बुधका पन्ना ये रत्न (मुद्रिका) अंगूठीमें जड़वायकर ग्रहोंकी प्रसन्नताके अर्थ सब लोग सदैव धारण करें ॥ ५६ ॥

अथ ग्रहपीडोपशमनोपायाः।

धावनाद्गुरुवस्त्राणां देवब्राह्मणवंदनात् ॥ वेदादिश्रवणाद्वापि साधूनामभिभाषणात् ॥ ५७ ॥ मनःशुद्ध्या जपाद्दानाद्धोमादध्वरदर्शनात् ॥ नो कुर्वंति ग्रहाः पीडां दुष्टस्थानस्थिता अपि ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ गोचरप्रकरणं त्रयोदशम् ॥ १३ ॥

अब ग्रहपीडाके नाशका उपाय लिखतेहैं- गुरुके वस्त्र धोनेसे अर्थात् सेवा करनेसे, देवता और ब्राह्मणोंको वंदना करनेसे, वेदादि शास्त्रोंके सुननेसे, साधुओंके साथ संभाषण करनेसे ॥५७॥ मनकी शुद्धिसे, जप और दान तथा होम करनेसे, यज्ञके दर्शनसे, दुष्टस्थानमें भी स्थित ग्रह पीडा नहीं करते हैं ॥ ५८ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलङ्कृतं गोचरप्रकरणं त्रयोदशम् ॥ १३ ॥

अथ संस्कारप्रकरणम्,तत्रादौ प्रथमरजोदर्शनम्।

वैशाखे फाल्गुने माघे मार्गाख्यश्रावणाश्विने ॥ पक्षे शुक्ले शुभाहे च सद्विलग्ने तथा दिवा ॥ १ ॥ श्रवस्त्रये नुराधायां रेवतीद्वितये मृगे ॥ हस्तत्रये च रोहिण्यां पुष्यभे चोत्तरासु

च ॥ २ ॥ सितवस्त्रे शुभं स्त्रीणां प्रथमं पुष्पदर्शनम् ॥ मध्यं ज्येष्ठापुनर्वस्वोर्मूले चान्यत्र निंदितम् ॥ ३ ॥ अष्टम्यां द्वादशीषष्ठ्यो रिक्तादर्शेऽथ संक्रमे ॥ भद्रानिद्राव्यतीपाते ग्रहणे रुजि वैधृतौ ॥ ४ ॥ परतातगृहे संध्याकुदेशे कृष्ण-वाससि ॥ प्राग्रजोदर्शनं नेष्टं शांत्या तु शुभदं भवेत् ॥५॥ प्रागुक्ता विलयं यांति रजोदर्शनसंभवाः ॥ सर्वदोषास्तु सल्लग्ने सितेज्ययुतवीक्षिते ॥ ६ ॥

अब संस्कारप्रकरण लिखतेहैं—तहां पहिले प्रथम रजोदर्शन लिखतेहैं—वैशाख, फाल्गुन, माघ, मार्गशीर्ष, श्रावण, आश्विन इन महीनोंमें; शुक्लपक्ष, शुभदिन, शुभलग्नमें तथा दिनके समय ॥ १ ॥ और श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाति, रोहिणी, पुष्य, तीनों उत्तरा, इन नक्षत्रोंमें ॥ २ ॥ और श्वेतवस्त्र पहिने रहनेमें प्रथम रजोदर्शन शुभ होताहै तथा ज्येष्ठा, पुनर्वसु, मूल इन नक्षत्रोंमें प्रथम रजोदर्शन मध्यम होताहै और अन्य नक्षत्रोंमें निंदित होताहै ॥ ३ ॥ अष्टमी, द्वादशी, षष्ठी, रिक्ता, अमावास्या इन, तिथियोंमें, संक्रांति, भद्रा, निद्रा, व्यतीपात, ग्रहण, रोग, वैधृति योग ॥ ४ ॥ इनमें तथा परायेघर और पिताके घरमें, संध्यामें, कुदेशमें; काले वस्त्र पहिने हुएमें प्रथम रजोदर्शन नेष्ट होताहै शांति करनेसे शुभदायक होताहै ॥ ५ ॥ यदि शुभलग्न शुक्र अथवा बृहस्पतिसे युक्त वा दृष्ट होय तो पूर्वोक्त रजोदर्शनसे उत्पन्न हुए सब दोष नाशको प्राप्त होजातेहैं ॥ ६ ॥

अथ ऋतुमत्याः स्नानम् ।

पुनर्वस्वोस्तथा चित्राज्येष्ठापुष्याभिधेषु च ॥
स्नायादृतुमती नारी शुभे वारे शुभे तिथौ ॥ ७ ॥

अब ऋतुमतीका स्नान लिखतेहैं–पुनर्वसु, चित्रा, ज्येष्ठा, पुष्य इन नक्षत्रोंमें और शुभवार तथा शुभ तिथिमें ऋतुमती स्त्री स्नान करै ॥ ७ ॥

अथ शीघ्रगर्भधारणम्।

रोहिणीद्वितये स्वात्यां हस्तर्क्षे रेवतीद्वये ॥
स्नाता तु युवती गर्भं विधत्ते शीघ्रमेव हि ॥ ८ ॥

अब शीघ्र गर्भधारण लिखतेहैं–रोहिणी, कृत्तिका, स्वाति, हस्त, रेवती, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें स्नान करनेवाली युवती शीघ्रही गर्भको धारण करतीहै ॥ ८ ॥

अथ गर्भाधानम्।

जन्मर्क्षभरणीमूलं दुष्टेंदुं रेवतीं मघाम् ॥ पर्वाहं च व्यतीपातं वैधृतिं परिघाऽर्धकम् ॥ ९ ॥ पित्रोः श्राद्धदिनं संध्यां दिवा षष्ठीं च पर्व च ॥ आर्त्तवाहश्चतुष्कं च विष्टिरिक्तार्कसंक्रमान् ॥ १० ॥ तथैव क्रूरवारांश्च गर्भाधाने विवर्जयेत् ॥ स्वातौ हस्तेऽनुराधायां रोहिण्यां वा श्रवस्त्रये ॥ ११ ॥ त्र्युत्तरे मृगशीर्षे च शुभाहे समरात्रिषु ॥ गर्भाधानं प्रशस्तं स्याच्छस्ते चंद्रे युगांशके ॥ १२ ॥ केंद्रकोणस्थिते सौम्ये पापे च त्रिषडायगे ॥ पुंल्लग्ने पुंनवांशे च तथा पुंग्रहवीक्षिते ॥ १३ ॥ चित्रापुनर्वसूपुष्ये अश्विन्यां मध्यमं स्मृतम् ॥ १४ ॥

अब गर्भाधान लिखतेहैं–जन्मनक्षत्र, भरणी, मूल दुष्ट, चंद्रमा, रेवती, मघा, (पर्वदिन) ग्रहणादि दिन, व्यतीपात, वैधृति, आधा परिघ योग ॥ ९ ॥ माता पिताका श्राद्धदिन, संध्या तथा दिनका समय, छठी (पर्व) अमावास्या, पौर्णमासी, ऋतु होनेके चारदिन, भद्रा, रिक्ता तिथि, सूर्यकी संक्रांति ॥ १० ॥ तथा क्रूरवार ये सब

गर्भाधानमें त्याग देवे, स्वाति, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, श्रवण, धनिष्टा, शतभिषा ॥ ११ ॥ तीनों उत्तरा, मृगशीर्ष, शुभदिन, ऋतुकी सम रात्रियोंमें तथा चौथे नवांशामें शुभ चंद्रमा होय तो गर्भाधान श्रेष्ट होताहै ॥ १२ ॥ केंद्रोंमें १।४।७।१० त्रिकोण ९।५ में सौम्यग्रह होंय और तीसरे, छठे, ग्यारहवें स्थानमें पापग्रह होयँ पुरुषलग्न और पुरुष नवांशा ये दोनों पुरुषग्रहोंसे दृष्ट होंय ॥ १३ ॥ चित्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी ये नक्षत्र होंय तो गर्भाधान मध्यम कहाहै ॥ १४ ॥

अथ पुंसवनसीमंतोन्नयने ।

द्वितीये वा तृतीये वा मासि पुंसवनं स्मृतम् ॥ मासे षष्ठेऽष्टमे वाद्यगर्भे सीमंतकं विदुः ॥ १५ ॥ पुनर्वसुद्वये मूले श्रवणे मृगहस्तयोः ॥ गुरुभौमार्कवारेषु प्रोक्तं पुंसवनादिकम् ॥ १६ ॥ रेवत्यां त्र्युत्तरे पुष्ये शुक्रे चंद्रे बुधे गुरौ ॥ मासेशे सबले चंद्रे लग्ने पुंभांशके शुभे ॥ सौम्ये केंद्रत्रिकोणस्थे पापे लाभ त्रिषङ्गे ॥ १७ ॥

अब पुंसवन और सीमन्तोन्नयन लिखतेहैं-प्रथमगर्भसे दूसरे वा तीसरे मासमें पुंसवन कहाहै और छठे आठवें मासमें सीमन्त कर्म कहाहै ॥ १५ ॥ पुनर्वसु, पुष्य, मूल, श्रवण, मृगशिर, हस्त, इन नक्षत्रोंमें और मंगल, बृहस्पति, रविवारोंमें पुंसवनादिक कर्म शुभ होतेहैं ॥ १६ ॥ रेवती, तीनों उत्तरा, पुष्य इन नक्षत्रोंमें और शुक्र, चंद्रमा, बुध इन वारोंमें तथा मासाधिप ग्रह बलवान् होय शुभ चंद्रमा तथा लग्न पुरुषग्रहके नवांशकमें होय, शुभग्रह केंद्र और त्रिकोणमें होय और पापग्रह ग्यारहवें, तीसरे, छठे स्थानमें होय तो पुंसवनादि कर्म करनेसे जय होती है ॥ १७ ॥

अथ मासेश्वराः।

मासाधिपा भृगुर्भौमो गुरुः सूर्येंदुसूर्यजाः ॥
बुधो लग्नपतिश्चंद्रो सूर्यश्चैते यथाक्रमम् ॥ १८ ॥

अब मासेश्वर लिखतेहैं—गर्भके प्रथम मासका स्वामी शुक्र, दूसरे मासका स्वामी मंगल, तीसरे मासका बृहस्पति, चौथे मासका सूर्य, पांचवें मासका चंद्रमा, छठे मासका शनैश्चर, सातवें मासका बुध, आठवें मासका स्वामी लग्नपति, नौवें मासका चंद्रमा और दशवें मासका सूर्य स्वामी हैं ये यथाक्रमसे मासाधिप कहे हैं ॥ १८ ॥

अथ गर्भसंस्कारे विशेषः।

विवाहे गर्भसंस्कारे चंद्रशुद्धिः स्त्रिया अपि ॥ भूषांबरादिकार्येषु भर्तुश्चैवेंदवं बलम् ॥ १९ ॥ गर्भाधानादिसंस्कारे तथाऽन्नप्राशने शिशोः ॥ न तत्र गुरुशुक्रास्तमलमासादिदूषणम् ॥ २० ॥

अब गर्भसंस्कारमें विशेष लिखतेहैं—विवाह और गर्भसंस्कारमें स्त्रीके लिये भी चंद्रमाकी शुद्धि देखनी चाहिये और भूषण वस्त्रादिकोंके कार्योंमें भर्त्ताके लिये चंद्रमाका बल देखना चाहिये ॥ १९ ॥ गर्भाधानादि संस्कारोंमें तथा बालकके अन्न प्राशनमें बृहस्पति और शुक्रका अस्त तथा मलमासादिका दूषण नहीं होताहै ॥ २० ॥

अथ विष्णुपूजा।

सीमंतोर्ध्वं सिते पक्षे रोहिण्यां श्रवणे तथा ॥
द्वादशीसप्तमीयुग्मे हर्यर्चा गर्भतुष्टये ॥ २१ ॥

अब विष्णुपूजा लिखतेहैं—सीमन्तकर्मके पश्चात् शुक्लपक्षमें रोहिणी, श्रवण नक्षत्रोंमें और द्वादशी, सप्तमी तिथिमें गर्भतुष्टिके अर्थ विष्णुकी पूजा करे ॥ २१ ॥

अथ सूतिकागृहप्रवेशः ।

श्रवणत्रयोत्तराहस्तत्रये पुष्याऽनुराधयोः ॥ पुनर्भे रोहिणी-युग्मे रेवतीद्वितये तथा ॥ २२ ॥ शुभाहेऽप्रसवायुक्ता सूतिका मंदिरं विशेत् ॥ २३ ॥

अब सूतिकागृहप्रवेश लिखतेहैं—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, हस्त, चित्रा, स्वाति, पुष्य, अनुराधा, पुनर्वसु, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें ॥ २२ ॥ और शुभवारमें प्रसवयुक्ता स्त्री सूतिकागृहमें प्रवेश करै ॥ २३ ॥

अथ जातकर्म ।

जातकर्म शिशौ जाते पिता तत्कालमाचरेत् ॥ एकादशेह्नि वा कुर्याद्द्वादशे वा यथाविधि ॥ २४ ॥ रेवतीद्वितये पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ श्रवणादित्रिभे हस्तत्रितये रोहिणी-मृगे ॥ २५ ॥ त्र्युत्तरे जातकर्माद्यं कालातिक्रमणे विदुः ॥

अब जातकर्म लिखतेहैं—पिता बालकका जन्महोनेपर उसी समय जातकर्म करै अथवा जन्मसे ग्यारहवें वा बारहवें दिन यथाविधिसे करै और (कालातिक्रमण) अर्थात् उक्त समयपर न बनपडे तो ॥ २४ ॥ रेवती, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, चित्रा, स्वाति, रोहिणी, मृगशिरा ॥ २५ ॥ तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें जातकर्म करै ऐसा पूर्वाचार्य कहतेहैं ॥

अथ जननसमये दुष्टकालनिर्णयः, तत्राभुक्तमूलम् ।

ज्येष्ठांत्ये घटिकायुग्मं मूलादौ घटिकाद्वयम् ॥ अभुक्तमूलमेतत्स्यादित्येवं नारदोऽब्रवीत् ॥ २६ ॥ वसिष्ठस्तु तयोरंत्याद्ययोरेकद्विनाडिकम् ॥ अंगिरा घटिकामेकामन्ये

पट्चाष्ट तत्र तु ॥ २७ ॥ जातं शिशुं त्यजेत्तातो न पश्ये-
द्वाष्टहायनम् ॥ २८ ॥

अब जन्मसमयमें दुष्टकाल निर्णय लिखतेहैं–तहां अभुक्त मूल लिखतेहैं–ज्येष्ठा नक्षत्रके अंतकी दो घडी और मूलके आदिकी दो घडी अभुक्तमूल होतेहैं ऐसा नारदजीने कहाहै ॥ २६ ॥ और ज्येष्ठाके अंतकी एकघड़ी और मूलके आदिकी दोघडी अभुक्तमूल होतेहैं ऐसा वसिष्ठजीने कहाहै और अंगिरा ऋषिका ऐसा मत है कि, ज्येष्ठाके अंतकी एकघडी और मूलके आदिकी एकघडी अभुक्त-मूल होतेहैं और अन्य आचार्योंका ऐसा मत है कि, ज्येष्ठाके अंतकी छह घडी और मूलके आदिकी आठ घडी अभुक्त मूल होतेहैं॥२७॥ अभुक्त मूलोत्पन्न बालकको पिता त्यागदेवे अथवा आठ वर्षतक उस बालकको न देखे ॥ २८ ॥

अथ मूलजनने पादफलम्।

भूलाद्यचरणे तातो द्वितीये जननी तथा ॥
तृतीये तु धनं नश्येच्चतुर्थोऽपि शुभावहः ॥ २९ ॥

अब मूलमें पादफल लिखतेहैं–मूल नक्षत्रके प्रथम चरणमें बालकका जन्म होय तो पिताका नाश होता है, दूसरे चरणमें माताका, तीसरेमें धनका नाश होताहै और चौथा चरण शुभ-कारक है ॥ २९ ॥

अथ मूलवासः।

माघाषाढाश्विने भाद्रपदे मूलं वसेद्दिवि ॥ कार्त्तिके श्रावणे चैत्रे पौषमासे तु भूतले ॥ ३० ॥ वैशाखे फाल्गुने ज्येष्ठे मार्गे पातालवर्ति तत् ॥ भूतले वर्त्तमाने तु ज्ञेयो दोषोऽन्यथा नहि ॥ ३१ ॥

अव मूलका वास लिखतेहैं–माघ, आपाढ, आश्विन, भाद्रपद इन महीनोंमें मूल नक्षत्रका वास स्वर्गमें होताहै और कार्त्तिक, श्रावण, चैत्र, पौप इन महीनोंमें मूलका वास पृथ्वीपर होताहै ॥ ३० ॥ वैशाख, फाल्गुन, ज्येष्ठ, मार्गशीर्ष इन महीनोंमें मूल पातालमें रहताहै यदि मूल पृथ्वीपर वर्त्तमान होय तो दोप होताहै अन्यथा दोप नहीं होता ॥ ३१ ॥

अथाऽऽश्लेपाज्येष्ठागंडांतयमलजननादौ नेष्टफलम् ।

यदुक्तं मूलपादेषु फलं तत्स्याद्विलोमकम् ॥ आश्लेपायां तु विज्ञेयं शांतिस्तस्माद्विधीयते ॥ ३२ ॥ गंडांतत्रितये चापि ज्येष्ठायामशुभा जनिः ॥ तथा यमलजन्मादिविकृतिर्न शुभावहा ॥ ३३ ॥

अव आश्लेषा, ज्येष्ठा, गंडान्त आदिमें तथा यमलजननादिमें नेष्टफल लिखतेहैं–मूल नक्षत्रके चरणोंका जो फल कहाहै वहही फल आश्लेपा नक्षत्रमें (विलोम) विपरीत जानना अर्थात् पहिला चरणमें जन्म हो तो शुभ, दूसरे चरणमें धनका नाश, तीसरे चरणमें माताका नाश चौथेमें पिताका नाश होताहै इसी कारणसे शांति करनी चाहिये ॥ ३२ ॥ (गंडांतत्रितय) तिथिगंडान्त, लग्नगंडान्त, नक्षत्रगंडान्तमें,अथवा ज्येष्ठा नक्षत्रमें बालकका जन्म अशुभ होताहै तथा दो बालकोंका एक साथ जन्म अथवा विकृतका जन्म शुभ नहीं होताहै ॥ ३३ ॥

अथ ज्येष्ठायाश्चरणफलम् ।

आद्ये पादेऽग्रजं हंति ज्येष्ठायामनुजं द्विके ॥
तृतीये जननीं जातः स्वात्मानं च तुरीयके ॥ ३४ ॥

अव ज्येष्ठाके चरणफल लिखतेहैं–ज्येष्ठा नक्षत्रके प्रथम पादमें बालकका जन्म होय तो बडे भाईका, दूसरे चरणमें जन्म होय

तो छोटे भाईका, तीसरेमें जन्म होय तो माताका और चौथेमें जन्म होय तो अपने आत्माका नाश करताहै ॥ ३४ ॥

अथ पूर्वोक्ता अन्ये च जनने दुष्टकालाः शांत्या शुभावहास्तानाह।

गंडांतः परिघः शूलं व्यतीपातोऽथ वैधृतिः ॥ मूलाऽश्लेषा-ध्यमा ज्येष्ठा यमघंटोऽर्कसंक्रमः ॥ ३५ ॥ वज्रगंडौ मृतिर्भद्रा व्याघातो दग्धवासरः ॥ कृष्णा चतुर्दशी पातस्तातसोदर-जन्मभम् ॥ ३६ ॥ तथाऽवमं दिनं निंद्यं जन्मकाले शिशो स्त्रिकम् ॥ तद्दोषपरिहाराय शांतिं कुर्याद्यथाविधि ॥ ३७ ॥

अब पूर्वोक्त और अन्य भी दुष्टकालमें जन्महो तो शांति करनेसे, शुभ होताहै सो लिखतेहैं—तीनप्रकारका गंडान्त, परिघ योग, शूल योग, व्यतीपात, वैधृति योग, मूल, आश्लेषा, अमावास्या, ज्येष्ठा, यमघंटक योग, सूर्यकी संक्रांति ॥ ३५ ॥ वज्र, गंड योग, मृत्युयोग, भद्रा, व्याघात योग, दग्धवार, कृष्णपक्षकी चतुर्दशी, पात दोष, पिता भ्राताका जन्मनक्षत्र ॥ ३६ ॥ और अवमदिन, तथा त्रिकदोष यह सब दोष बालकके जन्ममें निंदितहैं तिनका परिहार करनेके लिये विधिपूर्वक शांति करै ॥ ३७ ॥

अथ त्रिकदोषः।

यदि पुत्रत्रयादूर्ध्वं चतुर्थी कन्यका भवेत् ॥
एवं कन्यात्रयात्पुत्रस्तदा दोषस्त्रिकाभिधः ॥ ३८ ॥

अब त्रिकदोष लिखतेहैं—यदि तीनपुत्रोंके जन्म पीछे कन्याका जन्म होय तथा तीन कन्याओंके पीछे चौथे पुत्रका जन्म होय तो त्रिक नामक दोष होताहै ॥ ३८ ॥

अथ स्तन्यपानम्।

जातकर्मोक्तनक्षत्रे श्रवणे च पुनर्वसौ ॥
त्यक्त्वा स्वातीं स्तन्यपानं शुभं प्रोक्तं शुभेऽहनि ॥ ३९ ॥

अब स्तनपान लिखतेहैं-जातकर्ममें जो नक्षत्र कहेहैं तिनमें और श्रवण, पुनर्वसु नक्षत्रमें, शुभवारमें बालकको स्तनपान कराना शुभ कहाहै परन्तु स्वाति नक्षत्रको त्याग देवे ॥ ३९ ॥

अथ सूतिकाक्वाथः ।

भैषज्यगदिते धिष्ण्ये वारे दुर्योगवर्जिते ॥
आरोग्यहेतवे क्वाथः सूतिकायाश्च तच्छिशोः ॥ ४० ॥

अब सूतिकाके लिये क्वाथ लिखतेहैं-जो नक्षत्रवार औषधी सेवनमें कहेहैं तिनमें और दुर्योगवर्जित सुयोगमें सूतिका स्त्री और उसके बालककी आरोग्यताके अर्थ (क्वाथ) काढा देना शुभ होताहै ॥ ४० ॥

अथ सूतिकापथ्यम् ।

अन्नाशनोक्तनक्षत्रे शुभाहे सांशुमालिनि ॥
हित्वा रिक्तां च दुर्योगं सूतिकापथ्यमीरितम् ॥ ४१ ॥

अब सूतिकाके पथ्य लिखतेहैं-अन्नप्राशनोक्त नक्षत्रोंमें तथा रविवारसहित शुभवारोंमें रिक्ता और दुर्योगको छोडकर सूतिकाके लिये पथ्य देना शुभ कहाहै ॥ ४१ ॥

अथ पंचमीषष्ठीपूजा ।

जन्मतः पंचमे घस्रे जीवंत्याःपूजनं निशि ॥
षष्ठेह्नि षष्ठिका पूज्या गीतैर्जागरणादिभिः ॥ ४२ ॥

अब पंचमी षष्ठीपूजा लिखतेहैं-जन्मसे पांचवें दिन रात्रिमें जीवन्ती देवीका पूजन करे, छठे दिन गीत जागरणादिसे षष्ठिकाका पूजन करे ॥ ४२ ॥

अथ सूतिकास्नानम् ।

हस्ते मृगेऽनुराधायां रोहिण्यां रेवतीद्वये ॥ उत्तरात्रितये स्वातौ जीवार्ककुजवासरे ॥४३॥ सूतिस्नानं प्रशस्तं स्याद्वि-

हायार्द्रात्रयं श्रवम् ॥ विशाखां भरणीं मूलं चित्राख्यं कृत्तिकां मघाम् ॥ रिक्तां बुधशनी षष्ठीं द्वादशीमष्टमीं तथा ॥ ४४ ॥

अब सूतिकास्नान लिखतेहैं—हस्त, मृगशिरा, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, अश्विनी, उत्तरा तीनों, स्वाति इन नक्षत्रोंमें बृहस्पति, रवि, मंगल इनवारोंमें ॥ ४३ ॥ सूतिकाका स्नान शुभ होताहै परन्तु आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, विशाखा, भरणी, मूल, चित्रा, कृत्तिका, मघा ये नक्षत्र और रिक्ता तिथि, बुध, शनैश्चर वार तथा षष्ठी द्वादशी, अष्टमी तिथि इन सबको त्याग देवे ॥ ४४ ॥

अथ प्रसंगात्सर्वेषां नित्यस्नानम् ।

पुत्रजन्मनि संक्रांतौ सिद्धजन्मदिने तथा ॥
नित्यस्नानं च कर्तव्यं तिथिदोषो न विद्यते ॥ ४५ ॥

अब प्रसंगसे सबोंका नित्य स्नान लिखतेहैं—पुत्रके जन्म समयमें, संक्रांतिमें, सिद्धपुरुषोंके जन्मदिनमें नित्य स्नान कर्तव्य है उसमें तिथिका दोष नहीं रहताहै ॥ ४५ ॥

अथ प्रसंगात्स्त्रीणां शतभिषास्नानं निषिद्धं श्रीपतिनिबंधे ।

स्नानं कुर्यात्तु या नारी चंद्रे शतभिषां गते ॥ सप्तजन्म भवेद्वंध्या विधवा दुर्भगा ध्रुवम् ॥ ४६ ॥ यदा शतभिषास्नानं नारीणां खलु जायते ॥ पूजयेत्स्वामिनं तत्र ह्यात्मनः सर्वसत्कृतम् ॥ ४७ ॥

अब प्रसंगसे स्त्रियोंके शतभिषा स्नान निषिद्ध लिखतेहैं—शतभिषा नक्षत्रस्थ चंद्रमामें स्त्री स्नान करे तो सात जन्मतक वंध्या वा विधवा तथा दुर्भगा रहतीहै ॥ ४६ ॥ और यदि शतभिषा नक्षत्रमें

स्त्रियोंका स्नान होभीजाय तो उस दिन अपने स्वामीका सर्व-सत्कारसे पूजन करै ॥ ४७ ॥

अथार्भकस्य दंतोत्पत्तेः फलम् ।

स्वात्मानं प्रथमे मासि द्वितीये चानुजाँस्तथा ॥ तृतीये भगिनीं तुर्ये मातरं पञ्चमेऽग्रजान् ॥ ४८ ॥ निहन्याद्दशनोत्पत्तौ सदंतस्त्वर्भकोऽखिलान् ॥ षष्ठादौ लभते भोगानधः पंक्तावसत्सदा ॥ ४९ ॥

अब बालकको दन्तोत्पत्तिका फल लिखतेहैं—यदि बालकके प्रथम मासमें दांत निकलें तो अपने आत्माका नाश करताहै और दूसरे मासमें निकलें तो छोटे भाइयोंका नाश करताहै, तीसरे मासमें दांत निकलें तो बहिनका, चौथे मासमें दाँत निकलें तो माताका और पंचमें मासमें दांत निकलें तो बड़े भाइयोंका नाश करताहै ॥ ४८ ॥ और जो दाँतोंसहित बालकका जन्म हो तो सब कुटुंबका नाश करताहै, छठे महीनेसे लेकर किसी महिनेमें दांत निकलें तो भोग प्राप्त होताहै और प्रथम नीचेकी पंक्तिमें दांत निकलें तो सदैव अशुभ फल होताहै ॥ ४९ ॥

अथ जलपूजा ।

पुनर्वसुद्वये हस्ते मृगे मूलानुराधयोः ॥ श्रवे गुरौ बुधे चंद्रे सत्तिथौ जलपूजनम् ॥५०॥ गुरौ शुक्रेऽस्तगे चैत्रे पौषे वा मलमासके॥ मासपूर्त्तौ विरुद्धाहे न कुर्याज्जलार्चनम्॥५१॥

अथ दोलारोहणम् ।

स्तन्यपानोक्तनक्षत्रे कुर्याद्दोलाधिरोहणम् ॥ धृत्य १८ र्क-
१२ नृप१६ दिक्१० दंत ३२ वासरे जन्मतः शिशोः॥५२॥
रविभात्पंचभे ५ सौख्यं ततः पंचदशस्व १५ पि ॥ अशुभं
च ततः शेषे ७ शुभं दोलाधिरोहणम् ॥ ५३ ॥

अब दोलारोहण लिखतेहैं—जो नक्षत्र स्तनपानमें कहेहैं तिनमें झूला झुलाना शुभ होताहै और बालकके जन्मदिनसे आठवें, बारहवें, सोलहवें, दशवें, बत्तीसवें दिन दोलाधिरोहण शुभ होताहै ॥ ५२ ॥ सूर्यके नक्षत्रसे दिनके नक्षत्रतक गिनै पहिले पंच नक्षत्रोंमें सुख और फिर पंद्रह नक्षत्रोंमें अशुभ और शेष सात नक्षत्रोंमें दोलाधिरोहण शुभ होताहै ॥ ५३ ॥

अथ खट्वारोहणम् ।

दोलोक्तभे सुपर्यंके जननी वा सुवासिनी ॥
योगशायिं हरिं ध्यात्वा स्वापयेत्प्राक्शिरः शिशुम् ॥ ५४ ॥

अब खट्वारोहण लिखतेहैं—दोलारोहणोक्त नक्षत्रोंमें माता अथवा सौभाग्यवती स्त्री योगशायी विष्णुका ध्यान करके पलंगपर बालकको पूर्वदिशामें शिर करके सुलावै ॥ ५४ ॥

अथार्भकदुग्धपानम् ।

एकत्रिंशत्तमे घस्ने ऋक्षे चान्नाशनोदिते ॥
पूर्वाह्णे च शुभे वारे पयःपानं शिशोः स्मृतम् ॥ ५५ ॥

अब बालकका दुग्धपान लिखतेहैं—जन्मदिनसे इकतीसवें दिनमें अन्नप्राशनोक्त नक्षत्रोंमें दुपहरसे पहिले शुभवारमें बालकको गऊ आदिका दूध पिलाना शुभ कहाहै ॥ ५५ ॥

अथ निष्क्रमणम् ।

तुर्ये निष्क्रमणं मासि यात्रोक्तदिवसे स्मृतम् ॥
जन्मतो द्वादशाहे वा कुर्यान्मंगलपूर्वकम् ॥ ५६ ॥

अव निष्क्रमण लिखतेहैं—चौथे महीनेमें और यात्राके मुहूर्त्तमें कहे हुए वार नक्षत्रोंमें अथवा जन्मसे बारहमें दिन मंगलपूर्वक बालकको घरसे वाहिर निकालै ॥ ५६ ॥

अथ कच्छाबंधनं गणकमंडने

कच्छाबंधः सिते पक्षे सुदिने करपंचके ॥
ध्रुवर्क्षेऽदितियुग्मेऽश्विपितृपौष्णेंदुवासरे ॥ ५७ ॥

अव कच्छा बंधन लिखतेहैं—शुक्लपक्ष और शुभवारमें, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, (ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र) तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुनर्वसू, पुष्य, अश्विनी, मघा, रेवती इन नक्षत्रोंमें तथा चंद्रवारमें बालकको कछनी बांधना शुभ होताहै ॥ ५७ ॥

अथ कटिसूत्रं भूम्युपवेशनम् ।

पुष्यहस्ताश्विनीमूलत्र्युत्तरे रोहिणीमृगे ॥ ज्येष्ठायामनुराधायां शुभाहे मासि पंचमे ॥ ५८ ॥ कुजे शुद्धे समभ्यर्च्य वाराहं धरणीं भुवि ॥ कटिसूत्रमथो बद्धा बालकं चोपवेशयेत् ॥ ५९ ॥ पुस्तकं लेखनीं शस्त्रं रौप्यं च कांचनं तथा ॥ तस्मिन्काले यदादत्त तद्वृत्त्या जीवनं शिशोः ॥६०॥

अव कटिसूत्र और भूम्युपवेशन लिखतेहैं—पुष्य, हस्त, अश्विनी, मूल, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, ज्येष्ठा, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें शुभवारमें; जन्मसे पांचवें महीनेमें मंगल शुद्ध होय; वाराह भगवान्की मूर्ति तथा पृथ्वीका पूजन करके बालकके कोंधनी बाँधे और फिर पृथ्वीपर बैठावे ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ उस समय बालकके सामने पुस्तक,

कलम, शस्त्र, चांदी, सुवर्ण धरै इनमेंसे बालक जिस वस्तुका ग्रहण करै उसी वस्तुके द्वारा बालककी आजीविका जाने ॥ ६० ॥

अथान्नप्राशनम् ।

रेवतीद्वितये पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ श्रवणादित्रये हस्तत्रितये रोहिणीमृगे ॥ ६१ ॥ उत्तरायां शुभे लग्ने मीनमेषालिभिन्नभे ॥ षष्ठान्मासि समे पुंसः पंचमाद्विषमे स्त्रियाः ॥ ६२ ॥ अन्नप्राशनकं प्रोक्तं शुभाहे सर्वसंमतम् ॥ नेत्येके शतभे स्वातीचानुराधाख्यजन्मभे ॥ ६३ ॥

अब अन्नप्राशन लिखतेहैं-रेवती, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसू, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, चित्रा, स्वाति, रोहिणी, मृगशिरा ॥६१॥ तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें; मीन, मेष और वृश्चिक लग्न विना अन्य शुभलग्नोंमें; षष्ठादि सम मासोंमें पुरुषके लिये और पंचमादि विषम मासोंमें स्त्रीके लिये तथा शुभवारोंमें अन्न प्राशन सब आचार्योंने शुभ कहाहै तथा कुछ आचार्योंका ऐसा मत है कि, शतभिषा, स्वाति, अनुराधा, जन्मका नक्षत्र इनमें अन्न प्राशन नहीं करै ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

अथ तांबूलभक्षणम् ।

अनुराधात्रये हस्तत्रितये रेवतीद्वये ॥ उत्तरासु च रोहिण्यां श्रवणद्वितये मृगे ॥ ६४ ॥ पुनर्वस्वोस्तथा पुष्ये शनिभौमान्यवासरे ॥ तांबूलभक्षणं सार्द्धद्विमासेन्नाशनेऽथवा ॥ ज्ञार्कीज्यानां वृषे लग्ने कार्यं तांबूलभक्षणम् ॥ ६५ ॥

अब तांबूल भक्षण लिखतेहैं-अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल हस्त, चित्रा, स्वाति,रेवती, अश्विनी, तीनों उत्तरा, रोहिणी,श्रवण,धनिष्ठा, मृगशिर ॥ ६४ ॥ पुनर्वसू, पुष्य इन नक्षत्रोंमें, शनि मंगल विना अन्यवारोंमें; जन्मसे ढाई महीने पश्चात् अथवा अन्नप्राशनके समय वृष लग्नमें तांबूल भक्षण शुभ होताहै ॥ ६५ ॥

अथ कर्णवेधः ।

रेवतीद्वितये पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ श्रवणद्वितये चित्रा-मृगे हस्ते शुभे तिथौ ॥ ६६ ॥ शुभे वारे हि जन्माहाद्वा-दशे षोडशे दिने ॥ कर्णवेधोथ वा मासे षष्ठसप्ताष्टमेपि वा ॥ ६७ ॥ युग्माब्दं जन्ममासं च पौषं चैत्रं हरेः शयम् ॥ जन्मतारां विहायाथ त्र्युत्तरेपि च केचन ॥ ६८ ॥

अब कर्णवेध लिखते हैं-रेवती, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसु, अनु-राधा, श्रवण, धनिष्ठा, चित्रा, मृगशिरा, हस्त इन नक्षत्रोंमें, शुभ तिथि और शुभवारोंमें और जन्म दिनसे वारहवें और सोलहवें दिन अथवा छठे, सातवें, आठवें मासमें कर्णवेध शुभ होताहै ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ युग्म वर्ष, जन्मका महीना, पौष, हरिशयन,जन्मतारा इन सवको छोड़कर तीनों उत्तराओंमें कोई भी आचार्य कर्णवेधको शुभ कहतेहैं ॥ ६८ ॥

अथ कन्याया नासिकावेधः ।

कर्णवेधोक्तभे शस्तं कन्याया घ्राणवेधनम् ॥
त्र्युत्तराजलपस्वातौ पूर्वाह्ने शुक्लपक्षके ॥ ६९ ॥

अब कन्याके नासिकावेध लिखतेहैं-कर्णवेधोक्त नक्षत्रोंमें तथा तीनों उत्तरा, शतभिषा, स्वाति इन नक्षत्रोंमें और पूर्वाह्नमें शुक्लपक्षमें कन्याकी नासिकाका वेधना शुभ होताहै ॥ ६९ ॥

अथाब्दपूर्तिकृत्यम् ।

प्रतिवर्षं तु जन्माहे रमायास्तवपूर्वकम् ॥ गणेशमम्बामभ्य-र्च्य देवताश्चिरजीविनः ॥ ७० ॥ कृष्णायुष्यं च विध्युक्तं कर्मदानान्यनेकशः ॥ वद्धा मंगलसूत्रं च भुंक्ते शिष्टद्विजैः सह ॥ ७१ ॥ जन्माहे जन्मनक्षत्रे वारौ मंदारयोस्तदा ॥ तस्मिन्वर्षे महत्कष्टं कार्यहानिः पदेपदे ॥ ७२ ॥

अब वर्षपूर्त्तिमें लिखतेहैं—प्रतिवर्ष जन्मके दिनविषें लक्ष्मी, गणेश, पार्वती देवता, तथा चिरजीवियोंका स्तुतिपूर्वक पूजन करके विधिपूर्वक कृष्णायुष्य कर्म तथा अनेक प्रकारके वस्तुओंका दान करे और फिर मंगलसूत्र बांधकरके श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके साथ भोजन करै ॥ ७० ॥ ७१ ॥ जन्मके दिन तथा जन्मके नक्षत्रमें यदि शनि और मंगलवार होय तो उस वर्षमें महान् कष्ट होताहै और पदपदपर कार्यकी हानि होतीहै ॥ ७२ ॥

अथ प्रतिष्ठादि विचारः।

जलाशयसुरारामप्रतिष्ठा व्रतवन्धनम् ॥ अग्न्याधानं विवाहं च चौलं राज्याभिषेचनम् ॥ ७३ ॥ नवगेहप्रवेशादीन्न कुर्याद्दक्षिणायने ॥ गुरुभार्गवयो रिक्ते बाल्यवार्धकयोरपि ॥ ७४ ॥ दशाहं पश्चिमे बाल्यं पंचाहं वार्द्धकं भृगोः॥ प्राच्यां तु त्रिदिनं बाल्यं पक्षं वार्द्धकमुच्यते ॥ ७५ ॥ पक्षं बाल्यं च वार्द्धक्यं गुरोस्त्याज्यं शुभे सदा ॥ दशाहं पश्चिमे बाल्यं परे सप्ताहमूचिरे ॥७६॥ त्र्यहं चावश्यके कृत्ये केचिद्भार्गवजीवयोः॥अर्द्धाहं बाल्यमब्जस्य वार्द्धकं त्रिदिनं विदुः ॥ ७७ ॥ अवंतिदेशे सप्ताहं पङ्गे दश विंध्यके ॥ पंच हूणे द्वयोरेते शेषदेशे दिनत्रयम् ॥ ७८ ॥

अब प्रतिष्ठाकर्म लिखतेहैं—जलाशय अर्थात् कुआ, बावड़ी आदि-देवप्रतिष्ठा, बागकी प्रतिष्ठा, यज्ञोपवीतधारणकर्म, अग्निहोत्र, विवाह, मुंडन, राज्याभिषेक॥७३॥नवीन गृहप्रवेश इत्यादि कार्य दक्षिणायनमें नहीं करै तथा बृहस्पति और शुक्रके अस्त, बालत्व तथा वृद्धत्वमेंभी उक्त कार्य नहीं करै ॥ ७४ ॥ पश्चिममें शुक्रका उदय होय तो दश १० दिन बालपन और ५ दिन वृद्धपन रहताहै और जो पूर्वमें शुक्रका उदय होय तो तीनदिन बालभाव और पंद्रह

दिन वृद्धभाव रहताहै ॥ ७५ ॥ और बृहस्पतिके अस्तमें बाल और वृद्धभाव पंद्रहदिनका होताहै शुभकार्यमें सदैव त्याज्यहै. कुछ आचार्योंका ऐसा मत है कि, बृहस्पति और शुक्रके अस्तमें दश दिन बालत्व और वृद्धत्व रहताहै. अन्य आचार्योंका ऐसा मत है कि, सात दिन बालत्व और वृद्धत्व रहताहै. कोई ज्योतिर्विद ऐसा कहते हैं कि, आवश्यक कार्यमें बृहस्पति और शुक्रका बालत्व वृद्धत्व तीन दिन मानना चाहिये और चंद्रमाका आधा दिन बालत्व तथा तीन दिन वृद्धत्व मानना चाहिये. बृहस्पति और शुक्रका बालत्व तथा वृद्धत्व अवंतीदेशमें सात दिन, वङ्गदेशमें छः दिन विंध्याचलके देशमें दश दिन, हूणदेशमें पांच दिन और शेष देशोंमें तीनदिन रहताहै ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

अथ शुक्रोदयास्तमानम् ।

प्राङ्नेत्रेषुदृङ्मितैश्च२५२दृश्यो भवति भार्गवः ॥ वसुशैलमितै ७८ स्तत्र यातोऽस्तं नैव दृश्यते ॥७९॥ खबाणाश्वि २५० मितान्घस्रान्प्रतीच्यां दृश्यते भृगुः ॥ तत्र वार्ककरग्रस्तो नवा९हानि न दृश्यते ॥ ८० ॥

अब शुक्रोदयास्तमान लिखतेहैं—जब शुक्र पूर्वदिशामें उदय होतेहैं तब २५२ दोसौ बावन दिन उदय रहकर दीखते रहतेहैं और फिर अठत्तर ७८ दिन अस्त रहकर नहीं दीखतेहैं ॥ ७९ ॥ और जब पश्चिममें उदय होतेहैं तब दोसौ पचास २५० दिन उदय रहकर दीखते रहतेहैं और फिर सूर्य किरणोंसे अस्त होकर नौ ९ दिन नहीं दीखतेहैं ॥ ८० ॥

अथ गुरूदयास्तमानम् ।

प्रायो वाचस्पतिर्मासं भवत्यक्ष्णामगोचरः ॥
प्राच्यामुदयते मासं याति पश्चात्तु वत्सरात् ॥ ८१ ॥

अब गुरूदयास्तमान लिखतेहैं–बृहस्पति पूर्व दिशामें जब अस्त होतेहैं तो प्रायः एक मास नहीं दीखतेहैं. इसके पश्चात् पश्चिममें उदय होतेहैं तो एक वर्षतक उदय रहते हैं इसके पीछे एक महीनेके लिये अस्त रहतेहैं फिर एक मास पूर्वमें उदय रहतेहैं ॥ ८१ ॥

अथ चूडाकर्म ।

चौलं संवत्सरे पूर्णे तृतीयाद्विषमे चरेत्॥सौम्यायने विचैत्रे ये ह्येज्यशुक्रेंदुवासरे॥८२॥ चरक्षिप्रेंदुचित्रेंद्रपौष्णे च शुभवासरे॥अथवा ब्राह्मणस्यार्के क्षत्रियस्य कुजेहनि॥८३॥ मंदाहे वैश्यशूद्राणां क्षौरोक्ततिथिभादिषु ॥ लग्ने खेटबलोपेते चंद्रताराबलान्विते ॥ ८४ ॥ ज्येष्ठस्य ज्येष्ठे नो मासे मार्गशीर्षेऽपि केचन ॥ मातुर्गर्भे न सच्चौलं पंचमासाधिके शिशोः ॥ पंचवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥८५॥

अब चूडाकरण लिखतेहैं–संवत्सर पूर्ण होनेपर अथवा तीसरे वर्षसे लेकर विषम वर्षमें उत्तरायणमें, चैत्र वर्जित मासोंमें,बुध,बृहस्पति,शुक्र, चंद्रवारोंमें मुंडन शुभ होताहै॥८२॥चर नक्षत्र (स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) क्षिप्र (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् मृगशिरा,चित्रा,ज्येष्ठा,रेवती इन नक्षत्रोंमें,शुभवारमें मुंडन शुभ होताहै अथवा ब्राह्मणका रविवारमें, क्षत्रियका मंगलके दिन ॥ ८३ ॥ वैश्यशूद्रोंका शनैश्चरके दिन क्षौरोक्त तिथि नक्षत्रोंमें, ग्रहबलयुक्त लग्नमें, बली चंद्रमा तथा तारामें मुंडन शुभ होताहै ॥ ८४ ॥ प्रथमोत्पन्न बालकका मुंडन ज्येष्ठमासमें नहीं करावे और कोई आचार्योंका मतहै कि, मार्गशीर्षमें भी नहीं करावे और यदि माताका गर्भ पांचमहीनेसे अधिक होय तो मुंडन शुभ नहीं होताहै और जो बालक पांच वर्षसे अधिक अवस्थाका होय तो माताके गर्भवती होनेपरभी मुंडन शुभ होताहै ॥ ८५ ॥

अथाक्षरलेखनारंभः ।

सौम्यायने शुभे मासि स्वाध्यायदिवसे शुभे ॥ स्वस्थे जीवबुधे शुक्रे लग्ने खेटबलान्विते ॥ ८६ ॥ रेवतीद्वितये पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ आर्द्राख्ये श्रवणे हस्ते स्वातौ चित्राभिधे तथा ॥८७॥ हेरंबविष्णू वाग्देवीं तथाभ्यर्च्येष्ट-देवताः ॥ पंचमाब्दे नरः कुर्याल्लिप्यारंभं सदा बुधैः ॥८८॥

अब अक्षर लेखनारम्भ लिखतेहैं—उत्तरायण, शुभमास, स्वाध्यायका शुभदिन अर्थात् अनध्याय न होय, बृहस्पति, बुध, शुक्र बलवान् होकर अपनी राशियोंपर स्थित होय, ग्रहबलयुक्त लग्न होय ॥ ८६ ॥ रेवती, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसू, अनुराधा, आर्द्रा, श्रवण, हस्त, स्वाति, चित्रा, ॥ ८७ ॥ इन नक्षत्रोंमें गणेश, विष्णु, सरस्वती इष्ट देवताका पूजन करके पांचवें वर्षमें अक्षर लिखनेका आरंभ करै ॥ ८८ ॥

अथोपनयनम् ।

व्रतबंधस्तु विप्राणां गर्भाद्वा जन्मतोऽष्टमे ॥ षष्ठेऽब्दे सप्तमे मध्यो विद्याकामस्य पंचमे ॥ ८९ ॥ षष्ठे चैकादशेऽब्दे वा क्षत्रियाणामुदीरितः ॥ वैश्यानां द्वादशेऽब्दे स्यादष्टमे गर्भतोऽपि वा ॥९०॥ विप्रस्याषोडशाद्वर्षाद्द्वाविंशात्तु भूभुजाम् ॥ वैश्यानामाचतुर्विंशाद्गौणः काल उदाहृतः ॥ ९१ ॥ निजवर्णेशशाखेशभास्वद्वागीश्वरेन्दुषु ॥ वीर्यवत्सु द्विजातीनां व्रतबंधः शुभप्रदः ॥ ९२ ॥

अब उपनयन लिखतेहैं—ब्राह्मणोंका यज्ञोपवीत गर्भसे वा जन्मसे आठवें वर्षमें उत्तम होताहै; छठे और सातवें वर्षमें मध्यम होताहै और विद्याकी इच्छा करनेवालेको पांचवें वर्षमें शुभ होताहै ॥ ८९ ॥ और छठे अथवा ग्यारहवें वर्षमें क्षत्रियोंका और

वैश्योंका वारहवें वर्षमें अथवा गर्भसे आठवें वर्षमें यज्ञोपवीत शुभ होताहै ॥ ९० ॥ ब्राह्मणोंका सोलह वर्षतक, क्षत्रियोंका वाईस वर्षतक, वैश्योंका चौवीस वर्षतक यज्ञोपवीत धारण करनेमें गौणकाल कहाहै,॥९१॥अपना वर्णेश तथा शाखेश और बृहस्पति,सूर्य, चंद्रमा वलवान् होयँ तो द्विजातियोंका व्रतवंध शुभदायक होताहै ॥ ९२ ॥

अथ वर्णेशाः ।

जीवशुक्रौ तु विप्रेशौ भूभुजां रविमंगलौ ॥
विशोऽब्जो ज्ञश्च शूद्राणामंत्यजानां पतिः शनिः ॥ ९३ ॥

अव वर्णेश लिखतेहैं—बृहस्पति, शुक्र ब्राह्मणोंके स्वामी हैं, सूर्य मंगल क्षत्रियोंके; चंद्रमा वैश्योंके; बुध शूद्रोंके और शनैश्चर अंत्यजोंके स्वामी हैं ॥ ९३ ॥

अथ वेदाधीशाः ।

ऋग्वेदेशो गुरुः प्रोक्तो यजुषां भार्गवः पतिः ॥
सामवेदेश्वरो भौमः पतिश्चाथर्वणो बुधः ॥ ९४ ॥

अव वेदाधीश लिखतेहैं—ऋग्वेदका पति बृहस्पति, यजुर्वेदका पति शुक्र, सामवेदका पति मंगल, अथर्वणका पति बुध कहाहै ॥ ९४ ॥

अथ गुर्वादिवलम् ।

गुरुसूर्यवलं ज्ञेयं विवाहे यद्विवक्ष्यते ॥
चंद्रतारावलं पूर्वमुक्तं ग्राह्यं वटोः शुभम् ॥ ९५ ॥

अव गुर्वादिवल लिखतेहैं—जिसप्रकार विवाहमें बृहस्पति और सूर्य वल देखना कहा है इसी प्रकार यज्ञोपवीतमें भी देखना चाहिये और चंद्रमा तथा ताराका वल जो कि, पूर्वमें कह आये हैं (वटु) ब्रह्मचारीके लिये शुभ ग्रहण करना चाहिये ॥ ९५ ॥

अथ मासादिः ।

माघात्पंचसु मासेषु शुक्ले जीवज्ञभास्करे ॥ केचित्तु कृष्ण-पक्षेऽपि प्रथमत्रिलवे जगुः॥९६॥ जनुर्मासभलग्नादौ विप्रा-णां व्रतबंधनम् ॥बहुविद्याप्रदं विद्यादाद्यगर्भभुवामपि॥९७॥

अब मासादि लिखतेहैं–माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ; मासोंमें; शुक्लपक्षमें; बृहस्पति, बुध, रविवारोंमें और कोई आचार्य कृष्णपक्षके प्रथम त्रिलवमें अर्थात् पंचमीतक तिथियोंमें जन्मके मास और जन्मकी लग्नादिकोंमें ब्राह्मणोंके प्रथम गर्भोत्पन्न बाल-कोंका भी व्रतबंध बहुत विद्यादायक होताहै ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

अथ तिथयः ।

द्वित्र्येकादशदिक्पंचद्वादशप्रमिते २ । ३ । ११ । १० । ५ । १२ तिथौ ॥ शुक्लपक्षे तथा कृष्णे पञ्चमीद्वित्रिके ५ । २ । ३ शुभम् ॥ ९८ ॥

अब तिथि लिखतेहैं–दूज, तीज, एकादशी, दशमी, पंचमी, द्वादशी ये तिथि, शुक्लपक्षमें और पंचमी, दूज, तीज ये तिथि कृष्णपक्षमें शुभहैं ॥ ९८ ॥

अथोत्तमानि नक्षत्राणि ।

हस्तत्रये मृगे पुष्ये श्रवणद्वितयेऽश्विभे ॥
रेवत्यां च प्रशस्तं स्यान्मेखलाबंधनं वटोः ॥ ९९ ॥

अब उत्तम नक्षत्र लिखतेहैं–हस्त, चित्रा, स्वाति, मृगशिरा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, अश्विनी, रेवती इन नक्षत्रोंमें वटुका मेखलाबन्धन श्रेष्ठ होताहै ॥ ९९ ॥

अथ मध्यमानि ।

षष्ठ्यर्केंदुकुजे मूले पूर्वाऽऽश्लेषोत्तराशते ॥
पुनर्वस्वनुराधार्द्रारोहिण्यां केचिदिष्यते ॥ १०० ॥

अब मध्यम लिखतेहैं--षष्ठी तिथि; रवि, चंद्र मंगलवार; मूल, तीनों पूर्वा, आश्लेषा, तीनों उत्तरा, शतभिषा, पुनर्वसू, अनुराधा, आर्द्रा, रोहिणी नक्षत्र ये सब किसी आचार्योंने शुभ मानेहैं ॥ १०० ॥

अथ प्रतिवेदनक्षत्राणि।

आर्द्राहस्तत्रये मूले पूर्वाऽऽश्लेषाश्रवे तथा॥ ऋग्वेदाध्यायिनां जीवे प्रशस्तं व्रतबंधनम् ॥ १०१ ॥ त्र्युत्तरे रेवतीपुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः॥ मृगे हस्ते च रोहिण्यां भार्गवे यजुषां व्रतम् ॥ १०२ ॥ अश्विन्यां श्रवणे पुष्ये धनिष्ठार्द्रोत्तरात्रये॥ हस्ते भूमिसुते श्रेष्ठं सामगानां व्रतं तथा ॥ १०३ ॥ मृगे हस्तेऽश्विनीपुष्ये धनिष्ठारेवतीमृगे॥ पुनर्वस्वनुराधायां बुधे शस्तमथर्वणाम् ॥ १०४ ॥

अब प्रतिवेद नक्षत्र लिखतेहैं--आर्द्रा, हस्त, चित्रा, स्वाति, मूल, तीनों पूर्वा, आश्लेषा, श्रवण इन नक्षत्रोंमें तथा बृहस्पति वारमें ऋग्वेदपाठियोंका व्रतबंध श्रेष्ठ होता हे ॥ १०१ ॥ तीनों उत्तरा, रेवती, पुष्य, पुनर्वसू, अनुराधा, मृगशिरा, हस्त, रोहिणी नक्षत्र और भृगुवारमें यजुर्वेदियोंका व्रतबंध शुभ होताहे ॥१०२॥ अश्विनी, श्रवण, पुष्य, धनिष्ठा, आर्द्रा, तीनों उत्तरा, हस्त इन नक्षत्रोंमें और मंगलवारमें सामवेदियोंका व्रतबंध शुभ होताहे ॥ १०३ ॥ मृगशिरा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, धनिष्ठा, रेवती, श्रवण, पुनर्वसू, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें और बुधवारमें अथर्ववेदियोंका व्रतबंध शुभ होताहे ॥ १०४ ॥

अथ साधारणनक्षत्रे विशेषः।

पुनर्वस्वोर्व्रतं नेष्टं शतभे चेति केचन ॥ १०५ ॥

अब साधारण नक्षत्रमें विशेष लिखतेहैं-पुनर्वसुमें व्रतबंध अशुभ होताहै कोई आचार्य शतभिषा नक्षत्रमें भी व्रतबंध अशुभ कहतेहैं ॥ १०५ ॥

अथ व्रते निषिद्धानि ।

कृष्णपक्षे शनौ रात्रौ प्रदोषे वा गलग्रहे ।
अनध्यायेऽपराह्ले च न कुर्याद्व्रतबंधनम् ॥ १०६ ॥

अब व्रतमें निषिद्ध लिखतेहैं-कृष्णपक्ष, शनिवार, रात्रिका समय, प्रदोष, गलग्रह, अनध्याय, अपराह्ल इनमें व्रतबंध नहीं करे ॥ १०६ ॥

अथानध्यायाः ।

संक्रांतियुगमन्वादि द्वितीया ज्येष्ठशुक्लजा ॥ चैत्रकृष्णतृतीया च द्वादशी माघशुक्लजा ॥ १०७ ॥ प्रतिपक्षेऽष्टमी चैव चतुर्दश्या दिनत्रयम् ॥ रिक्ता च व्रतबंधादावष्टौ वर्ज्या गलग्रहाः ॥ १०८ ॥

अब अनध्याय लिखतेहैं-संक्रांति, युगादि और मन्वादि तिथि, ज्येष्ठशुक्ला द्वितीया, चैत्रकृष्णा तृत्तीया, माघ शुक्ल, द्वादशी ॥ १०७ ॥ दोनों पक्षोंकी अष्टमी और चतुर्दशी, पौर्णमासी, प्रतिपदा, रिक्ता तिथि ये आठ तिथि गलग्रह कहातीहैं व्रतबंधादि कार्योंमें वर्जित हैं ॥ १०८ ॥

अथात्र लग्नबलम् ।

त्रिषट् ३ । ६ संस्थाः खलाः सर्वे चंद्रो द्विद्यूनदिक्त्रिगः ॥ २ । ७ । १० । ३ ॥ सोम्याः केंद्रत्रिकोणस्था १।४।७।१०। ९।५ लाभे ११ सर्वे व्रते शुभाः ॥ १०९ ॥ जीवेंदुभृगुलग्नेशा व्रते नेष्टाः षडष्टगाः ६।८ ॥ शुक्रेंदू व्यय १२ गौ- नेष्टौ खला लग्नाष्टपंचमाः १ । ८ । ५ ॥ ११० ॥ व्रते

सौम्याः शुभाः प्रोक्ताः षडष्टांत्य ६।८।१२ विवर्जिताः ॥
शुक्रे स्वर्क्षोच्चगश्चंद्रो लग्ने श्रेष्ठो रविः क्वचित् ॥ १११ ॥
ज्ञेज्यशुक्रांशगे लग्ने चंद्रः शस्तो व्रते मतः ॥ नान्यत्राथ
निजांशेऽब्जः पुनर्वस्वोः श्रवे शुभः ॥ ११२ ॥

अब यहां लग्नबल लिखतेहैं–तीसरे, छठे स्थानमें सब पापग्रह होंय और दूसरे, सातवें, दशवें, तीसरे स्थानमें चंद्रमा होय और केंद्र १।४।७।१० त्रिकोण ९।५ लाभ ११ स्थानमें सब शुभग्रह होंय तो व्रतबंध शुभ होताहै ॥ १०९ ॥ बृहस्पति, चंद्रमा, शुक्र, लग्नेश छठे, आठवें स्थानमें हों तो व्रतबंधमें शुभ नहीं होते. शुक्र चंद्रमा बारहवें स्थानमें शुभ नहीं होतेहैं और लग्न, पांचवें, आठवें स्थानमें पापग्रह शुभ नहीं होते ॥ ११० ॥ शुभग्रह छठे, आठवें, बारहवें स्थानको छोड़कर अन्य शेष स्थानोंमें होंय तो व्रतबंधमें शुभ होतेहैं. शुक्लपक्षमें चंद्रमा अपनी राशि (कर्क) वा उच्च (वृष) राशिका होकर लग्नमें स्थित होय तो शुभ होताहै और कहीं कहीं सूर्यको भी लग्नमें शुभ मानेहैं ॥ १११ ॥ बुध, बृहस्पति, शुक्र इन ग्रहोंके नवांशामें प्राप्त चंद्रमा लग्नस्थित होय तो व्रतबंधमें श्रेष्ठ मानाहै और अन्य ग्रहोंके नवांशामें प्राप्त होकर अन्य स्थानमें स्थित होय तो शुभ नहीं मानाहै और चंद्रमा अपने नवांशामें तथा पुनर्वसु, श्रवण नक्षत्रपर स्थित होय तो शुभ माना है ॥ ११२ ॥

अथ केंद्रस्थखेटस्य फलम्।

भूपसेवी वणिग्वृत्तिः शस्त्रभृत्पाठकोत्तमः ॥ पंडितश्चार्थवान्म्लेच्छसेवी केंद्रेर्कतः क्रमात् ॥ ११३ ॥ लग्ने गुरुर्भृगुः कोणे शुक्रांशेऽब्जः शुभो व्रते ॥ गुरुश्चंद्रो भृगुर्नेष्टो रविर्भौमार्किसंयुतः ॥ ११४ ॥

अब केंद्रस्थ ग्रहोंका फल लिखतेहैं-केंद्रमें सूर्यादि ग्रहोंके क्रमसे यह अग्रिम फल जानना चाहिये अर्थात् केंद्रमें सूर्य होयं तो बालक राजाकी सेवा करनेवाला होताहै और केंद्रमें चंद्रमा होय तो वैश्यवृत्ती होताहै और मंगल होय तो शस्त्र धारण करनेवाला, बुध होय तो उत्तम पढ़नेवाला, बृहस्पति होय तो पंडित, शुक्र होय तो द्रव्यवान, शनैश्चर होय तो बटु म्लेच्छोंकी सेवा करनेवाला होताहै ॥ ११३ ॥ लग्नमें बृहस्पति, त्रिकोणमें ९ । ५ शुक्र होय, शुक्रके नवांशामें चंद्रमा होय तो व्रतबंधमें शुभ होताहै. बृहस्पति, चंद्रमा, शुक्र ये तीनों ग्रह रवि वा मंगल या शनैश्चरके साथ होंय तो व्रतबंध नेष्ट होतेहैं ॥ ११४ ॥

अथ चैत्रप्राशस्त्यम् ।

चैत्रे मासि रवौ मीने विबलेपि गुरौ वटोः ॥
व्रतबंधः प्रशस्तः स्याच्चैत्रे मीने यतः शुभः ॥ ११५ ॥

अब चैत्रप्रशंसा लिखतेहैं-चैत्रमासमें मीनके सूर्य होंय तो बृहस्पतिके निर्बल होनेपर भी बटुका व्रतबंध शुभ होताहै क्योंकि, चैत्रमासमें मीनके सूर्य शुभ होतेहैं ॥ ११५ ॥

अथ केशांतसमावर्त्तनम् ।

चौलोक्तसमये कार्यः केशांतः षोडशेऽब्दके ॥
व्रतबंधोक्तकाले तु समावर्त्तनमीरितम् ॥ ११६ ॥

अब केशान्त समावर्त्तन लिखते हैं-मुंडनोक्त मुहूर्त्तमें सोलहवें वर्षमें केशान्त अर्थात् दाढी बनवावै और व्रतबंधोक्त कालमें समावर्तन करना कहा है ॥ ११६ ॥

अथात्र मातृ रजोदोषे विशेषः ।

मातृ रजस्वलादोषे नांदीश्राद्धोत्तरं तदा ॥
आवश्यके व्रतं चौलं शान्त्या पाणिग्रहं चरेत् ॥ ११७ ॥

अब माताके रजो दोषमें विशेष लिखतेहैं—नांदीश्राद्धके उपरांत माताका रजस्वला दोष होय तो आवश्यक यज्ञोपवीत और मुंडन तथा विवाह शान्ति करके करै ॥ ११७ ॥

अथ राज्ञां छुरिकाबंधनम्।

व्रतोक्तमासतिथ्यादौ विचैत्रे सबले कुजे ॥
विभौमे छूरिकाबंधः प्राक्विवाहान्महीभुजाम् ॥ ११८ ॥
इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्त-
गणपतौ संस्कारप्रकरणं चतुर्दशम् ॥ १४ ॥ ७ ॥

अब राजाका छूरिकाबन्धन लिखतेहैं—यज्ञोपवीतमें कहेहुए मास तथा तिथि होंय, चैत्रका महीना नहीं होय,मङ्गल बलवान् होय, मंगलविना अन्यवार होंय तो विवाहसे प्रथम राजाओंको कटारका बाँधना शुभ होताहै ॥ ११८ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्त-
गणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितराम-
दयालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं संस्कार-
प्रकरणं चतुर्दशम् ॥ १४ ॥

अथ विवाहप्रकरणम्।

योषा धर्मार्थकामानां साध्वी चेत्साधनं भवेत् ॥ शीलं लग्नवशात्तस्याः शुभं लग्नमतो ब्रुवे ॥ १ ॥ दैवज्ञं सुदिने-भ्यर्च्य तांबूलश्रीफलादिभिः ॥ विज्ञाप्य भं तयोः पृच्छे-द्विवाहं वरकन्ययोः ॥ २ ॥ प्रश्ने लग्नाद्दि १० गीशा ११-ग्नि ३ बाण ५ शैल ७ स्थिते विधौ ॥ सद्यः परिणयो जीवदृष्टेस्याद्वरकन्ययोः ॥ ३ ॥ गो २ तुला ७ कर्क ४ लग्ने वा शुभेक्षितयुते तथा ॥ विषमर्क्षे स्थितौ शुक्रचंद्रौ

चेत्पश्यतस्तनुम् ॥ ४ ॥ वरदौ तत्र शुक्रेन्दू समभांशगतौ यदा ॥ चंद्रः षष्ठेष्टमे ६ । ८ पक्षे बहुले समराशिगः ॥५॥ क्रूरेक्षितो विवाहस्य भंगदः परिकीर्तितः ॥ द्यूने ७ सेंदुभृगौ रंडा भौमेपि कुलटा शनौ ॥ ६ ॥ सुशीला सुभगा जीवे बुधे च प्रश्नलग्नतः ॥ यादृक्संतानसंयुक्ता योषित्तत्र समाव्रजेत् ॥ ७ ॥ तां विलोक्य तथाऽपत्यं तस्याः प्रश्ने वदेत्सुधीः ॥ ८ ॥ शंखभेर्यादिनादश्चेत्प्रश्ने स्यान्मंगलं तदा ॥ वायसश्वासृगालानां नादश्चेत्त्वशुभं चरेत् ॥ ९ ॥ दंपत्योरंतरा मैत्री विवाहो न शुभावहः ॥ सत्यां मैत्र्यां शुभस्तेन ब्रुवे मैत्रीमनेकधा ॥ १० ॥ घटितं प्रथमं ज्ञात्वा शुभदं वरकन्ययोः ॥ उद्वाहस्तु विधातव्यस्तेनादौ वच्मि ते तथा ॥ ११ ॥ युंजी १ वर्ग २ स्तथा वर्णो ३ वश्य ४ स्तारा ५ थ योनिका ६ ॥ ग्रहमैत्री ७ गणो ८ राशेर्भ ९ नाडी १० हीति वै दश ॥ १२ ॥ यथोत्तरबलाश्चेति विज्ञेयास्तु परस्परम् ॥ गुणाधिके समुद्वाहः कर्त्तव्यो वरकन्ययोः ॥ १३ ॥

अब विवाहप्रकरण लिखते हैं–यदि स्त्री शुभशीलयुक्त पतिव्रता होय तो धर्म, अर्थ, काम की साधन होतीहै और लग्नवशसे उस स्त्रीका शील होताहै इसी कारणसे शुभ लग्नको कहताहूँ ॥ १ ॥ शुभदिनमें तांबूल नारियल आदि वस्तुओंसे ज्योतिषीका पूजन करके उसे वरकन्या दोनोंका नक्षत्र बतावे, तदनन्तर विवाह पूछे (ज्योतिषी प्रश्नलग्नसे विचारकर कहे सो आगे लिखतेहैं)॥ २ ॥ प्रश्न लग्नसे दशवें, ग्यारहवें, तीसरे, पांचवें, सातवें स्थानमें स्थित चंद्रमाको बृहस्पति देखते होंय तो वरकन्याका विवाह शीघ्र होताहै ॥ ३ ॥ शुभग्रहोंसे दृष्ट वा युक्त प्रश्नलग्न वृष, तुला, कर्क होय

अथवा विषमराशिगत चंद्रमा और शुक्र लग्नको देखते होंय ॥ ४ ॥ तो कन्याके लिये वरदायक होतेहैं और यदि वेही शुक्र चंद्रमा समराशिके नवांशामें होंय तो वरके लिये कन्यादायक होतेहैं और कृष्णपक्षमें समराशिगत चंद्रमा प्रश्नलग्नसे छठे आठवें स्थानमें ॥ ५ ॥ क्रूरग्रहोंसे दृष्ट होय तो विवाहका भंग करताहै और यदि सातवें स्थानमें शुक्र और चंद्रमा युक्त मंगल होय तो रंडा होय और जो सातवें स्थानमें शुक्र, चंद्रमा युक्त शनैश्चर होय तो व्यभिचारिणी होय ॥ ६ ॥ और प्रश्नलग्नसे सातवें स्थानमें शुक्र चंद्रमा युक्त वृहस्पति अथवा वुध होय तो सुशीला और सौभाग्यवती होती है,प्रश्नकरनेके समय जैसी सन्तानको साथ लेकर कोई स्त्री आवे ॥ ७ ॥ वैसीही सन्तान (पुत्र वा कन्या) उसके भी उत्पन्न होगा कि, जिसके लिये प्रश्न कियागयाहे ऐसा ज्योतिषी वतावे ॥ ८ ॥ यदि प्रश्नके समय शंख, भेरी, वीणा आदि वाजेका शब्द होय तो मंगल होता है और जो कौआ,कुत्ता, गीदर शब्द करें तो अशुभ होताहे ॥ ९ ॥ स्त्री और पुरुपकी मैत्रीके विना विवाह शुभ नहीं होताहे और जो दोनोंमें मैत्री होय तो विवाह शुभ होताहै इसी कारणसे अनेक प्रकारकी मैत्रीको कहताहूं ॥ १० ॥ प्रथम (घटिन) मैत्री शकुनादिको शुभ विचारकर वरकन्याका विवाह करना चाहिये इसी कारणसे पहिले उसीको कहताहूं ॥ ११ ॥ युंजी १, वर्ग २, वर्ण ३, वश्य ४, तारा ५, योनि ६, ग्रहमैत्री ७, गण ८, भकूट ९, नाडी १० ये दश प्रकारकी प्रीति कहीहै ॥ १२ ॥ इनमें परस्पर उत्तरोत्तर वलवान् जाननी, अधिक गुण मिलें तो वरकन्याका विवाह करना चाहिये ॥ १३ ॥

अथ युंजीप्रीतिः ।

पूर्वभागस्तु रेवत्याः षड्भे चार्द्रादितस्तथा ॥ द्वादशस्वपि मध्योयं ज्येष्ठातो नवकेंत्यकः ॥ १४ ॥ प्राग्भागे जन्मभं

तस्याः कन्याया वल्लभः पतिः ॥ नृणामपरभागे तु कन्या पत्युर्हि वल्लभा ॥ १५ ॥ मध्यभागे तु दंपत्योः प्रीतिरुक्ता परस्परम् ॥ १६ ॥

अव यंजीप्रीति लिखते हैं–रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा ये छह नक्षत्र पूर्वभागके हैं और आर्द्रा, पुनर्वसू, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा ये बारह नक्षत्र मध्यभागके हैं ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद ये नौ नक्षत्र अन्त्यभागके हैं ॥ १४ ॥ पूर्वभागके नक्षत्रोंमें वरकन्याका जन्मनक्षत्र होय तो कन्याको पति प्यारा होताहै और जो मध्यभागके नक्षत्रोंमें दोनोंका जन्म नक्षत्र होय तो स्त्रीपुरुषमें परस्पर प्रीति रहतीहै तथा परभागके नक्षत्रोंमें दोनोंका जन्मनक्षत्र होय तो पतिको कन्या प्यारी होतीहै ॥ १५ ॥ १६ ॥

अथ वर्गप्रीतिः ।

अवर्गो गरुडः प्रोक्तो मार्जारस्तु कवर्गकः ॥ चवर्गः केसरी ज्ञेयो टवर्गः श्वा प्रकीर्तितः ॥ १७ ॥ तवर्गः सर्पसंज्ञः स्यात्पवर्गो मूपको मतः ॥ यवर्गो हरिणाख्यश्च शवर्गो मेष उच्यते ॥ १८ ॥ गरुडोरगयो वैरं मिथ आखुविडालयोः॥ शार्दूलमृगयोर्वैरं तथा मेषशुनोरपि ॥ १९ ॥ वर्गेऽरित्वे महद्दुःखं वर्गैक्ये प्रीतिरुत्तमा ॥ कन्यकावरयोश्चैव स्वामिसेवकयोरपि ॥ २० ॥

अव वर्गप्रीति लिखतेहैं–अवर्ग गरुडवर्ग है,कवर्ग मार्जार, चवर्ग सिंह, टवर्ग कुत्ता ॥१७॥ तवर्ग सर्प, पवर्ग मूपक, यवर्ग मृग, शवर्ग मेंढा वर्ग कहाहै ॥ १८ ॥ गरुड और सर्पका परस्पर वैरहै. मूपक

और बिडालका, सिंह और मृगका, मेढा और कुत्ताका आपसमें वैरहै ॥ १९ ॥ वर्गवैरमें महान् दुःख होताहै, दोनोंका एक वर्ग होय तो उत्तम प्रीति रहतीहै जिस प्रकार कन्या और वरकी वर्गप्रीति विचारते हैं उसी प्रकार स्वामी और सेवककीभी वर्ग प्रीति विचारनी चाहिये ॥ २० ॥

वर्गचक्रम्.

अ–आ–इ–ई–उ–ऊ–ऋ–ॠ–ए–ऐ–ओ–औ–गरुडवर्गहैं	
क–ख–ग–घ–ङ	ये बिडाल वर्गहैं
च–छ–ज–झ–ञ	ये सिंह वर्गहैं
ट–ठ–ड–ढ–ण	ये कुत्ता वर्गहैं
त–थ–द–ध–न	ये सर्प वर्गहैं
प–फ–ब–भ–म	ये मूषक वर्गहैं
य–र–ल–व	ये मृग वर्गहैं
श–ष–स–ह	ये मेढा वर्गहैं

अथ वर्णप्रीतिः ।

कर्कवृश्चिकमीनाख्या ब्राह्मणास्त्वथ बाहुजाः ॥ मेषसिंह धनुष्काख्या वृषकन्यामृगा विशः ॥ २१ ॥ तुलाद्वंद्वघटाः शूद्राश्चैते वर्णाश्च राशिजाः ॥ वर्णाधिक्ये वरः श्रेष्ठो न कन्या वर्णतोऽधिका ॥ २२ ॥

अब वर्णप्रीति लिखतेहैं–कर्क,वृश्चिक,मीन राशि ब्राह्मण वर्ण हैं. मेष, सिंह, धनु ये राशि क्षत्रिय वर्ण हैं. वृष, कन्या, मकर ये राशि वैश्यवर्ण हैं ॥ २१ ॥ तुला, मिथुन, कुंभ ये राशि शूद्रवर्ण

वर्णचक्रम् ।

ब्राह्मणवर्ण	कर्क	वृश्चिक	मीन	राशय
क्षत्रियवर्ण	मेष	सिंह	धनुष	राशय
वैश्यवर्ण	वृष	कन्या	मकर	राशय
शूद्रवर्ण	तुला	मिथुन	कुंभ	राशय

हैं. अधिक वर्णका वर श्रेष्ठ होताहै और वरके वर्णसे कन्याका वर्ण अधिक नहीं होना चाहिये ॥२२॥

अथ वश्यावश्यम् ।

युग्मं कुंभस्तुला कन्या प्राग्दलं धनुषो द्विपात् ॥ परार्द्धं धनुषश्चैव पूर्वार्धं मकरस्य च ॥ २३ ॥ केसरी वृषभाख्यश्च मेषश्चैते चतुष्पदाः ॥ नक्रोत्तरदलं मीनो जलचारी प्रकीर्तितः ॥ २४ ॥ ॥ कर्कः कीटकसंज्ञश्च वृश्चिकस्तु सरीसृपः ॥ द्विपदानां वशाः सर्वे हित्वा केसरिणं तथा ॥२५॥ भक्ष्यो वारिचरस्तेषां भयस्थानं तु वृश्चिके ॥ लोकाद्विज्ञेयमन्यत्तु सिंहवश्या विवृश्चिकाः ॥ २६ ॥

अब वश्यावश्य लिखतेहैं—मिथुन, कुंभ, तुला, कन्या, धनुका पूर्वार्द्ध द्विपद संज्ञक हैं और धनुका परार्द्ध, मकरका पूर्वार्द्ध ॥ २३ ॥ सिंह, वृष, मेष ये राशि चतुष्पद संज्ञक हैं. मकरका उत्तरार्द्ध और मीन राशि जलचर संज्ञक हैं ॥ २४ ॥ कर्ककी कीट संज्ञा है, वृश्चिक राशिकी सरीसृप संज्ञा है, सिंहराशिके विना, अन्य सब राशियें द्विपद राशियोंके वशमें हैं ॥ २५ ॥ और द्विपदोंके जलचर भक्ष्य हैं. वृश्चिक राशि भयका स्थान है, वृश्चिकको छोडकर सिंहके वशमें सब राशि हैं और शेषराशियोंमें भक्ष्य भक्षकको छोडकर वश्यावश्य लोकव्यवहारसे जानलेना चाहिये ॥ २६ ॥

वश्यावश्यचक्रम् ।

द्विपद	चतुष्पाद	जलचर	कीट	सर्प	संज्ञा
कुंभ, मिथुन, कन्या, तुला, धनुका पूर्वार्ध	सिंह, वृष, मेष, धनुका परार्द्ध, मकरका पूर्वार्द्ध.	मकरका उत्तरार्द्ध मीन	कर्क	वृश्चिक	राशय

अथ तारामैत्री।

कन्याभं वरभाद्गण्यं वधूभाद्वरभं तथा ॥
नवहृच्छेपभं नेष्टं सप्तपंचत्रिसंख्यकम् ॥ २७ ॥

अब तारामैत्री लिखतेहैं—कन्याके नक्षत्रसे वरके नक्षत्रतक और वरके नक्षत्रसे वधूके नक्षत्रतक गिनै दोनों जगह नौका भाग देनेसे शेष सात, पांच, तीन बचैं तो नेष्ट तारा होतीहै ॥२७॥

अथ योनिमैत्री।

अश्विन्याः शतभस्याश्वो महिषः स्वातिहस्तयोः ॥ पूभाधनिष्ठयोः सिंहो भरण्यंत्यभयोर्गजः ॥ २८ ॥ कृत्तिकापुष्ययोर्मेषः श्रुतिपूषाढयोः कपिः ॥ उषाभिजिद्वयोर्बभ्रू रोहिणीमृगयोरहिः ॥ २९ ॥ ज्येष्ठानुराधयोरेणः श्वा मूलार्द्रभयोस्तथा ॥ पुनराश्लेषयोरोतुराखुः पूफामघर्क्षयोः ॥३०॥ विशाखाचित्रयोर्व्याघ्रो गौरुफोत्तरभाद्रयोः ॥ मैत्री वैरं विचार्यैवं भानां प्रोक्तास्तु योनयः ॥ ३१ ॥

अब योनिमैत्री लिखतेहैं—अश्विनी और शतभिषा नक्षत्रकी अश्वयोनि है. स्वाती और हस्तकी महिषयोनि, पूर्वाभाद्रपद और धनिष्ठाकी सिंहयोनि, भरणी और रेवतीकी गजयोनि ॥ २८ ॥ कृत्तिका और पुष्यकी मेंढायोनि,श्रवण और पूर्वाषाढाकी वानरयोनि, उत्तराषाढा और अभिजितकी नकुलयोनि,रोहिणी और मृगशीर्षकी सर्पयोनि॥२९॥ ज्येष्ठा और अनुराधाकी मृगयोनि,मूल और आर्द्राकी कुत्तायोनि, पुनर्वसू और आश्लेषाकी मार्जारयोनि, पूर्वाफाल्गुनी और मघाकी मूषकयोनि ॥ ३० ॥ विशाखा और चित्राकी व्याघ्र योनि, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपदकी गोयोनि हैं ये नक्षत्रोंकी योनि कहीहैं इस प्रकार मैत्री और वैर विचारना चाहिये जिसको आगे कहतेहैं ॥ ३१ ॥

अथ परस्परं महद्वैरम्।

गोव्याघ्रं महिषाश्वं च श्वैणं मार्जारमूषकम् ॥ सिंहेभं कपिमेषं च वैरं तु नकुलोरगम् ॥ ३२ ॥ त्याज्यं परस्परं चैतद्दंपत्योः स्वामिभृत्ययोः ॥ ३३ ॥

अब परस्पर महद्वैर लिखतेहैं—गौ और व्याघ्रका महद्वैर है, महिष औ अश्वका, कुत्ता और मृगका, मार्जार और मूषकका सिंह और हाथीका, वानर और मेढेका, नकुल और सर्पका महावैर है ॥ ३२ ॥ वर और कन्याकी योनियोंका तथा स्वामी और सेवककी योनियोंका परस्पर वैर त्याज्य है ॥ ३३ ॥

अथ ग्रहमैत्री।

मित्राणि कुजचंद्रेज्याः शत्रू शनिसितौ रवेः ॥ मित्रे सूर्यबुधावेतौ रिपुः कोपि न शीतगोः ॥ ३४ ॥ जीवेंदुरवयो भूमिसूनोर्मित्राणि विद्रिपुः ॥ सूर्यशुक्रौ हितौ शत्रुश्चंद्रमा बोधनस्य तु ॥ ३५ ॥ मित्राणि सूर्यभौमाब्जा विच्छुक्रौ त्वहितौ गुरोः ॥ मित्रे सौम्यशनी शत्रू भार्गवस्येंदुभास्करौ ॥ ३६ ॥ सुहृदौ वित्सितौ सौरेः शत्रवोर्ककुजेंदवः ॥ सर्वेषामेव खेटानामनुक्तास्ते समाः स्मृताः ॥ ३७ ॥ दंपत्यो राशिपोर्मैत्री मिथः स्याच्छोभनं तदा ॥ अहिते त्वहितं विद्धि तत्समे वै मध्यमं स्मृतम् ॥ ३८ ॥

अब ग्रहमैत्री लिखतेहैं—सूर्यके मंगल,चन्द्रमा, बृहस्पति मित्र हैं; शनैश्चर, शुक्र शत्रुहैं; शेष बुध समहै और चंद्रमाके सूर्य,बुध मित्रहैं; शत्रु कोई नहींहैं;मंगल,बृहस्पति,शुक्र, शनैश्चर सम हैं ॥३४॥ मंगलके बृहस्पति, चंद्रमा, सूर्य मित्रहैं; बुध शत्रुहै. शुक्र, शनैश्चर समहैं

और बुधके सूर्य, शुक्र मित्रहैं; चंद्रमा शत्रुहै; बृहस्पति, शनैश्चर, मंगल; समहैं ॥ ३५ ॥ बृहस्पतिके सूर्य, मंगल, चंद्रमा मित्रहैं; बुध शुक्र शत्रुहैं; शनैश्चर समहै और शुक्रके बुध, शनैश्चर मित्रहैं; चंद्रमा, सूर्य, शत्रुहैं; मंगल, बृहस्पति समहैं. शनैश्चरके बुध, शुक्र, मित्र हैं; सूर्य, मंगल, चंद्रमा शत्रुहैं और बृहस्पति समहै ॥ ३७ ॥ स्त्रीपुरुष दोनोंके राशीश्वरोंकी परस्पर मित्रता होय तो विवाह शुभ होताहै और जो शत्रुता होय तो अशुभ होताहै और दोनोंके राशीश्वरोंमें समता होय तो मध्यम होताहै ॥ ३८ ॥

अथ ग्रहमैत्रीचक्रम् ।

सू	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ग्रहाः
मं बृ. चं.	सू. बु.	बु. चं. सू.	श सू	मं चं सू	बु श	शु बु	मित्राणि
बु	मं बृ शु श	शु स	बृ श मं	श	मं बृ	बृ	समाः
शु. श	००	बु	चं	बु शु	सू चं	सू चं मं	शत्रवः

अथ गणमैत्री ।

हस्तः स्वाती श्रुतिः पुष्योऽनुराधा रेवतीद्वयम् ॥ पुनर्वसू मृगश्चैव प्रोच्यते देवतागणः ॥ ३९ ॥ रोहिणीभरणीपूर्वोत्तरार्द्रा मानुषो गणः ॥ चित्राऽश्लेषा मघा मूलं धनिष्ठा शततारका ॥ ४० ॥ विशाखा कृत्तिका ज्येष्ठा एष रक्षोगणो मतः ॥ गणैक्ये परमा प्रीतिर्देवमानुषयोः समः ॥ देवराक्षसयोर्वैरं मृत्युर्मानवरक्षसोः ॥ ४१ ॥

अब गणमैत्री लिखते हैं—हस्त, स्वाति, श्रवण, पुष्य, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, पुनर्वसू, मृगशिर ये नक्षत्र देवतागण कहेहैं ॥ ३९ ॥

रोहिणी, भरणी, तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, आर्द्रा ये नक्षत्र मनुष्यगण कहेहैं. चित्रा, आश्लेषा, मघा, मूल, धनिष्ठा, शतभिषा ॥४०॥ विशाखा, कृत्तिका, ज्येष्ठा ये नक्षत्र राक्षसगण कहेहैं. कन्यावर दोनोंका एक गण होय तो परम प्रीति रहतीहै. देव मनुष्यमें समताहै; देव राक्षसोंमें वैर रहताहै; मनुष्य और राक्षसमें मृत्यु होतीहै ॥ ४१ ॥

अथ गणदोषापवादः ।

मैत्र्यां राशीशयोरंशस्वामिनोर्वरकन्ययोः ॥ न तत्र गणदोषः स्याद्विवाहः शुभदो मतः॥४२॥ यदि रक्षोगणा कन्या वरश्चेन्नृगणो भवेत् ॥ तदोद्वाहो गुणाधिक्ये कार्यस्त्वावश्यके सति ॥ ४३ ॥ रक्षोमरगणा नारी चेत्तदोद्वाहनं तयोः ॥ योनिमैत्र्यादिना कार्यमिति गर्गेण भाषितम् ॥ ४४ ॥

अब गणदोषापवाद लिखतेहैं— वर और कन्याके राशीश्वरोंमें अथवा राशिनवांशके स्वामियोंमें मित्रता होय तो गणका दोष नहीं

अथ नक्षत्राणां योन्यादिचक्रम् ।

अथ नक्षत्राणि	योनि	वैरयोनि	गण	नाडी
अश्विनी	अश्व	भैंस	देव	आदि
भरणी	गज	सिंह	मनुष्य	मध्य
कृत्तिका	मेंढा	वानर	राक्षस	अन्त्य
रोहिणी	सर्प	नकुल	मनुष्य	अन्त्य
मृगशिरा	सर्प	नकुल	देव	मध्य
आर्द्रा	श्वान	मृग	मनुष्य	आदि
पुनर्वसु	मार्जार	मूसा	देव	आदि
पुष्य	मेंढा	वानर	देव	मध्य
आश्लेषा	बिलाव	मूसा	राक्षस	अन्त्य
मघा	मूसा	बिलाव	राक्षस	अन्त्य
पूर्वाफाल्गुनी	मूसा	बिलाव	मनुष्य	मध्य
उत्तराफाल्गुनी	गौ	व्याघ्र	मनुष्य	आदि
हस्त	भैंसा	अश्व	देव	आदि
चित्रा	व्याघ्र	गौ	राक्षस	मध्य
स्वाती	भैंस	अश्व	देव	अन्त्य
विशाखा	व्याघ्र	गौ	राक्षस	अन्त्य
अनुराधा	मृग	श्वान	देव	मध्य
ज्येष्ठा	मृग	श्वान	राक्षस	आदि
मूल	श्वान	मृग	राक्षस	आदि
पूर्वाषाढा	वानर	मेंढा	मनुष्य	मध्य
उत्तराषाढा	नकुल	सर्प	मनुष्य	अन्त्य
अभिजित्	नकुल	सर्प	मनुष्य	००
श्रवण	वानर	मेंढा	देव	अन्त्य
धनिष्ठा	सिंह	गज	राक्षस	मध्य
शतभिषा	अश्व	भैंस	राक्षस	आदि
पूर्वाभाद्रपदा	सिंह	गज	मनुष्य	आदि
उत्तराभाद्रपदा	गौ	व्याघ्र	मनुष्य	मध्य
रेवती	गज	सिंह	देव	अन्त्य

होताहै और विवाह शुभदायक होताहै ॥ ४२ ॥ यदि कन्याका गण राक्षस और वरका मनुष्य गण होय तो अधिक गुण होनेपर आवश्यकतामें विवाह करलेना चाहिये ॥ ४३ ॥ और यदि स्त्रीका देवता वा राक्षसगण होय तो योनि आदिकी मित्रता होनेपर वर कन्या दोनोंका विवाह करदेना चाहिये ऐसा गर्गाचार्यने कहाहै॥४४॥

अथ राशिकूटकम् ।

राश्योः षट्काष्टके मृत्युस्त्रिकोणे त्वनपत्यता ॥ नैःस्वं द्विद्वादशे ज्ञेयं सौख्यमन्यत्र चोभयोः ॥ ४५ ॥ कुमार्या विषमाद्राशेः षष्ठे तु वरभं तथा ॥ समराशेः शुभं षष्ठे विपरीतमसत्स्मृतम ॥ ४६ ॥

अब राशिकूट लिखतेहैं—वर और कन्या दोनोंकी परस्पर छठी आठवीं राशि होय तो मृत्यु होय, नौवीं पांचवीं राशि होय तो संतान नहीं होय और दूसरी बारहवीं राशि होय तो निर्धनता होय और अन्यप्रकारसे होय तो दोनोंमें सुख होय ॥ ४५ ॥ कन्याकी विषम राशिसे वरकी छठी राशि होय और वरकी समराशिसे कन्याकी छठी राशि होय तो शुभ और इससे विपरीत होय तो अशुभ होताहै ॥ ४६ ॥

अथ दुष्टकूटापवादः ।

प्रोक्ते दुष्टभकूटेपि राश्योरेकाधिपत्यके ॥ मैत्र्यां चोद्वाहनं श्रेष्ठं ह्येकनाडी न चेत्तयोः ॥ ४७ ॥ तुला ७ वृष २ भयोर्मीन १२ सिंहयोः ५ कुंभ ११ कन्ययोः ६ ॥ धनुःकर्कटयोर्नक्रयुग्मयोश्चालिमेषयोः ॥ ४८ ॥ प्रीतिषड्काष्टकं चेन्दन्यं संत्याज्यमेव हि ॥ राशिपावैरभावेपि मैत्री चेत्स्यात्तदंशपोः ॥ ४९ ॥ नाडी शुद्धौ च ताराणां शुद्धावुद्वहनं शुभम् ॥

अब दुष्टकूटापवाद लिखतेहैं–(दुष्टभकूट) छठी आठवीं राशिमें वर कन्या दोनोंकी राशियोंका स्वामी एक होय अथवा दोनोंके राशियोंकी मित्रता होय तो विवाह श्रेष्ठ होताहै परन्तु वर-कन्याकी एक नाडी नहीं होय ॥ ४७ ॥ तुला और वृषका, मीन और सिंहका, कुंभ और कन्याका, धनु और कर्कका, मकर और मिथुनका वृश्चिक और मेष राशिका प्रीतिषडष्टक होताहै विवाहमें शुभ है और अन्य प्रकारका मृत्युषडष्टक विवाहमें त्याज्य है वरकन्याके राशिस्वामियोंका वैर भी होय परन्तु दोनोंकी राशिनवांशाके स्वामियोंकी मित्रता होय और नाडी तारा शुद्ध होय तो विवाह शुभ होताहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

अथ नाडीशुद्धिः ।

ज्येष्ठामूलाश्विनार्द्राख्यद्वयं शतभिषक्द्वयम् ॥ उत्तराफाल्गुनीयुग्ममाद्यनाडीयमीरिता ॥ ५० ॥ चित्रानुराधा भरणी मृगः पुष्यो धनिष्ठिका । अहिर्बुध्न्यो भगः पूर्वाषाढा मध्यमनाडिका ॥५१॥ रोहिणी कृत्तिकाश्लेषा मघा स्वातीद्वयं तथा ॥ रेवती चोत्तराषाढा श्रवणश्चांत्यनाडिका ॥ ॥ ५२ ॥ दंपत्योरेकनाडीस्थ ऋक्षे नेष्टः करग्रहः ॥ मध्यनाडीगते मृत्युस्तस्मात्तां सर्वथा त्यजेत् ॥ ५३ ॥

अब नाडीशुद्धि लिखतेहैं–ज्येष्ठा, मूल, अश्विनी, आर्द्रा, पुनर्वसू, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त ये नक्षत्र आदिनाडी कहातेहैं ॥ ५० ॥ चित्रा, अनुराधा, भरणी, मृगशिर धनिष्ठा, पुष्य, पूर्वाषाढा पूर्वाफाल्गुनी उत्तराभाद्रपदा ये नक्षत्र मध्यनाडी कहातेहैं ॥५१॥ रोहिणी, कृत्तिका, आश्लेषा, मघा,स्वाति, विशाखा, रेवती, उत्तराषाढा, श्रवण ये नक्षत्र अन्त्यनाडी कहतेहैं॥ ॥५२॥स्त्रीपुरुष दोनोंके जन्मनक्षत्र एकनाडीमें स्थित होंय तो विवाह

नेष्ट होताहै,मध्यनाडीमें होय तो मृत्युहोतीहै इस कारण मध्यनाड़ी सर्वथा त्याज्यहै ॥ ५३ ॥

अथ नाडीदोषापवादः।

राश्यैक्ये भिन्नभेऽप्येकभेन्यराशौ तथैकभे ॥
भिन्नांघ्रौ न द्वयोर्दोषा गणनाडीभकूटजाः ॥ ५४ ॥

अब नाडी दोषापवाद लिखतेहैं—यदि वर और कन्याकी राशि एक होय और नक्षत्र अलग अलग होय, वा दोनोंका नक्षत्र एक होय और राशि अलगअलग होय, अथवा नक्षत्र एक होय और अलग अलग चरणोंमें दोनोंका जन्म होय तो गण और नाड़ी तथा भकूटका दोष नहीं होताहै ॥ ५४ ॥

अथैकभेपि विशेषः।

विशाखार्द्रा श्रवः पुष्यो रोहिण्युत्तरभाद्रपाद् ॥
रेवती च मघा श्रेष्ठा नेतरश्चैकभद्वयोः ॥ ५५ ॥

अब एक नक्षत्रमें भी विशेष लिखतेहैं—विशाखा,आर्द्रा, श्रवण, पुष्य, रोहिणी, उत्तराभाद्रपात, रेवती, मघा इन नक्षत्रोंमेंसे वर और कन्याका जन्मनक्षत्र होय तो श्रेष्ट होताहै अर्थात् नाड़ी, गण, भकूटका दोष नहीं होता और उक्त नक्षत्रोंसे अन्य नक्षत्रोंमें दोनोंका जन्म होय तो अशुभ होताहै अर्थात् नाड्यादि दोष माने जातेहैं ॥ ५५ ॥

अथ नाड्यादिदोषदानानि।

हेमान्नयरत्नगोदानं मृत्युंजयजपस्तथा ॥ कुर्यादावश्यकोद्वाहे नाडीदोषाऽपनुत्तये ॥ ५६ ॥ ताम्रं द्विद्वादशे दद्यात्सुवर्णं च षडष्टके ॥ गोयुगं नवपंचाख्ये स्वर्णं वर्णादिदूषणे ॥ हेमान्नं वसनं धेनुं सर्वदोषापनुत्तये ॥ ५७ ॥

अब नाड्यादि दोषोंमें दान लिखते हैं–सुवर्ण, घी, रत्न, गौका दान और मृत्युंजयमंत्रका जप करें तो आवश्यक विवाहमें नाड़ीका दोष नहीं होताहै ॥ ५६ ॥ और दूसरी बारहवीं राशि होय तो ताम्रदान करें. छटी आठवीं राशि होय तो सुवर्ण दानकरें. नौवीं पांचवीं राशि होय तो दो गोदान करें और यदि वर्णादिका दूषण होय तो सुवर्ण दान करें. सर्व दोष दूर करनेके लिये सुवर्ण, अन्न, वस्त्र, गऊ दान करें ॥ ५७ ॥

अथ वर्णादिगुणाः ।

एकैकवृद्धितो ज्ञेया वर्णादीनां गुणाः क्रमात् ॥
विवाहः शुभदस्तेषां गुणे त्वष्टादशाऽधिके ॥ ५८ ॥

अब वर्णादिगुण लिखते हैं–क्रमसे वर्णादिके गुण एक एक वृद्धि करके जानने चाहिये अर्थात् वर्णका १ एक गुण, वश्यके २ दो गुण, ताराके ३ तीन गुण, योनिके चार ४ गुण, ग्रहमैत्रीके पांच ५ गुण. गणमैत्रीके ६ छह गुण. भकूटके सात ७ गुण, नाड़ीके आठ ८ गुण होतेहैं इन सबका जोड़ ३६ छत्तीस होताहै, इनके आधे अठारहसे अधिक गुण मिलें तो विवाह शुभ होताहै ॥ ५८ ॥

अथ प्रकारांतरेण वर्णादीनां च गुणाः ।

एको वर्णोत्तमे तुल्यवर्णैक्ये कथितो वरे ॥ हीने शून्यं गुणश्चैके वदंति सदृशे दलम् ॥ ५९ ॥ वश्यभक्ष्ये दलं वश्यवैरे ह्येको गुणः स्मृतः ॥ गुणद्वयं द्वयोः सख्ये वैरभक्ष्ये च खं स्मृतम् ॥६०॥ शुभा चेदेकतस्तारा तदा सार्द्धगुणो द्वयोः॥ शुभे चेत्स्युस्त्रयः शून्यं चोभयोस्तारकेऽशुभे ॥ ६१ ॥ अतिमैत्रे तु चत्वारो योन्योर्मैत्रे त्रयो गुणाः ॥ औदासीन्ये द्वयं चैकं वैरे खं चातिशात्रवे ॥ ६२ ॥ मिथोवैरे तु शून्यं स्यात्समवैरे गुणाधिकम् ॥ एकं शात्रवमैत्रे च द्वयोः साम्ये

त्रयो गुणाः ॥ ६३ ॥ सममैत्रे तु चत्वारः पंचैवैकेश्वरे तथा ॥ मित्रत्वे चोभयोस्तद्वद्राशिपोर्वरकन्ययोः ॥ ६४ ॥ मनुष्ये च स्त्रिया देवे वरे तुल्यगणेपि षट् ॥ पंचान्यथा स्त्रिया देवे तथा रक्षोगणे वरे॥६५॥ रक्षोगणा यदा कन्या वरो देवस्तदा तु खम् ॥ रक्षोमानुषयोः खं स्यादन्योन्यं- वरकन्ययोः ॥ ६६ ॥ द्वयोरेकपदाभावे भकूटे योनिमैत्रतः॥ कन्यादूरेपि चत्वारो ह्येकोप्येकचरे तयोः ॥ ६७ ॥ सत्कूटे योनिवैरत्वे नरदूरे षडीरिताः ॥ राश्यैक्ये भिन्नभे पंच सप्तान्यत्र सकूटके ॥ ६८ ॥ कन्याया वरभं दूरं कन्यादूरं हि तच्छुभम् ॥ वरभाद्भीरुदूरंतद्विवाहे न शुभप्रदम् ॥ ६९ ॥ नाडीभेदे गुणाश्चाष्टौ तदैवान्येपि सार्थकाः ॥ अजागल- स्तनायंते नाड्यैक्ये सकला गुणाः ॥ ७० ॥

अब प्रकारान्तरसे वर्णादिकोंका गुण लिखते हैं—वरका उत्तम वर्ण होय अथवा वर कन्या दोनोंका एक वर्ण होय तो एक गुण होताहै और यदि वर हीन वर्ण होय और कन्या उत्तम वर्ण होय तो शून्यगुण होता है और कोई आचार्य कहतेहैं कि, सम वर्णमें आधागुण होताहै ॥ ५९ ॥ वरकन्या दोनोंका वश्य भक्ष्य होय तो आधागुण और वश्य वैर होय तो एकगुण और यदि दोनोंके वश्योंमें मित्रता होय तो दोगुण और दोनोंका वश्य वैर भक्ष्य होय तो शून्य गुण होताहै ॥ ६० ॥ वरकन्या दोनोंमें एकके तारा शुभ और एकके तारा अशुभ होय तो डेढ़ गुण होताहै और जो दोनोंके शुभ तारा होयँ तो तीन गुण होतेहैं और दोनोंके अशुभ तारा होय तो शून्य गुण होताहै ॥ ६१ ॥ दोनोंकी योनियोंमें अति मित्रता होय तो चार गुण और दोनोंकी योनि- योंमें मित्रता होय तो तीन गुण और दोनों योनियोंमें उदा-

सीनता होय तो दो गुण और यदि दोनोंकी योनिमें वैर होय तो एक गुण और अतिशत्रुता होय तो शून्य गुण होताहै ॥ ६२ ॥ वरकन्या दोनोंके राशि स्वामियोंमें परस्पर वैर होय तो शून्य गुण होताहै और एकका राशीश सम और एकका शत्रु होय तो आधा गुण और शत्रुमित्रमें एक गुण और यदि दोनोंके राशीश्वर सम होंय तो तीन गुण ॥ ६३ ॥ और सम मित्र होय तो चार गुण और दोनोंके राशिस्वामियोंमें मित्रता होय अथवा दोनोंका राशीश्वर एकही होय तो पांच गुण होतेहैं ॥ ६४ ॥ मनुष्यगणकी कन्या और देवता गणका वर होय अथवा दोनोंका एकगण होय तो छह गुण होतेहैं और यदि स्त्री देवतागण होय और वर राक्षसगण होय तो पांच गुण होतेहैं ॥ ६५ ॥ और जो राक्षसगण कन्या होय और वर देवतागण होय तो शून्यगुण होताहै और वरकन्याका परस्पर राक्षस और मनुष्यगण होय तो शून्यगुण होताहै ॥ ६६ ॥ दोनोंमें एकपदका अभाव होय अर्थात् भकूट शुद्धि न होय तो योनिकी मित्रतासे भकूट शुभ होजाताहै वरकी राशिसे कन्याकी राशि दूर होय तो चारगुण होतेहैं इसी प्रकार तीनों दुष्ट भकूटोंमेंसे कोई एक भी भकूट होय योनि मैत्री और वरसे कन्याको दूरत्व होनेपर, चारगुण होतेहैं ॥ ६७ ॥ और शुभभकूटमें यह विचार है कि दोनोंकी योनिमें वैर.होय और कन्यासे वरकी राशि दूर होय तो छह गुण होतेहैं.राशि एकही होय और दोनोंके नक्षत्र भिन्न होंय तो पांचगुण होताहै. अन्य तीसरी, ग्यारहवीं राशिका शुभ भकूट होय तो सातगुण होतेहैं ॥ ६८ ॥ कन्याकी राशिसे वरकी राशि दूर होय तो वह कन्यादूर कहाता है और शुभ होताहै और वरकी राशिसे कन्याकी राशि दूर होय तो विवाहमें शुभ नहीं होताहै ॥ ६९ ॥ नाडी अलगअलग होय

तो आठ गुण होतेहैं और जब नाड़ीके पूरे गुण मिल जातेहैं तो और के गुणभी सार्थक होजातेहैं. यदि दोनोंकी नाड़ी एकही होय तो बकरीके गलस्तनके समान सर्वगुण निष्फल होजातेहैं ॥ ७०॥

अथ जन्मकाले भौमदोषः ।

मूर्तौ १ तुर्ये ४ ष्टमे ८ भौमे सप्तमे ७ न्त्ये १२ च जन्मनि॥
भर्तुर्योषिद्विनाशः स्यात्स्त्रिया भर्तृविनाशनम् ॥ ७१ ॥
एवं विधे कुजे संख्ये विवाहो न कदाचन ॥ कार्यो वा गुणबाहुल्ये कुजे वा तादृशे द्वयोः ॥ ७२ ॥

अब जन्मकालमें भौमदोष लिखतेहैं—पतिकी जन्मकुंडलीमें मंगल लग्नमें वा सातवें अथवा बारहवें अथवा चौथे वा आठवें स्थानमें होय तो स्त्रीका विनाश करता है और जो स्त्रीकी जन्म कुण्डलीमें मंगल उक्त स्थानोंमेंसे किसी स्थानमें होय तो पतिका नाश करताहै इस कारण उक्त स्थानोंमें मंगल होय तो विवाह कभी न करै और यदि बहुत गुण मिलें अथवा वर कन्या दोनोंकी जन्मकुंडलीमें मंगल एकसा होय तो विवाह करलेवे ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

अथ विषकन्यायोगः ।

सूर्यभौमार्किवारेषु तिथिभद्राशताभिधम् ॥ आश्लेषा कृत्तिका चेत्स्यात्तत्र जाता विषांगना ॥ ७३ ॥ जनुर्लग्ने रिपुक्षेत्रे संस्थितः पापखेचरः ॥ द्वौ सौम्यावपि योगेस्मिन्संजाता विषकन्यका ॥ ७४ ॥ लग्ने शनैश्चरो यस्याः सुतेऽर्को नवमे कुजः ॥ विषाख्या सापि नोद्वाह्या विविधा विषकन्यका ॥ ७५ ॥

अब विषकन्यायोग लिखतेहैं—रवि, मंगल, शनैश्चर इन वारोंमें भद्रातिथिमें, आश्लेषा कृत्तिका इन नक्षत्रोंमें कन्या उत्पन्न होय

तो वह विषकन्या कहातीहै ॥ ७३ ॥ और जन्मलग्नमें शत्रुक्षेत्री पापग्रह स्थित होय तथा दो शुभग्रहभी वहीं लग्नमें स्थित होयँ तोभी विषकन्या कहाती है ॥ ७४ ॥ और जिस कन्याकी जन्मलग्नमें शनैश्चर होय, पाचवें स्थानमें सूर्य, नौवें स्थानमें मंगल होय तोभी विषकन्या कहातीहै इस प्रकारके योगोंसे अनेक विषकन्या होतीहैं उनका विवाह नहीं करना चाहिये ॥ ७५ ॥

अथ विषकन्यादोषपरिहारः ।

सावित्र्यादिव्रतं कृत्वा वैधव्यविनिवृत्तये ॥
अश्वत्थादिभिरुद्वाह्य दद्यात्तां चिरजीविने ॥ ७६ ॥

अब विषकन्यादोषपरिहार लिखतेहैं—वैधव्य दूर करनेके लिये सावित्र्यादिक व्रत करके पीपल आदि वृक्षोंके साथ विवाह करै फिर चिरजीवी वरको देवे ॥ ७६ ॥

अथ जन्मकालिकदुष्टनक्षत्रफलम् ।

आश्लेषाख्यसमुत्पन्नो श्वश्रू कन्यासुतौ हतः ॥ मूलजा श्वशुरं हंति ज्येष्ठोत्था स्वधवाग्रजम् ॥ ७७ ॥ कन्यका तु विशाखोत्था निहंति देवरं स्वकम् ॥

अब जन्मकालिक दुष्टनक्षत्रफल लिखतेहैं—यदि कन्या अथवा पुत्र आश्लेषा नक्षत्रमें उत्पन्न होय तो दोनों सासोंका नाश करतेहैं और मूल नक्षत्रमें उत्पन्न हुई कन्या श्वसुरका नाश करतीहै और ज्येष्ठा नक्षत्रमें उत्पन्नहुई कन्या स्वपतिके बड़ेभ्राताका नाश करतीहै ॥ ७७ ॥ और विशाखा नक्षत्रमें उत्पन्नहुई कन्या देवरका नाश करतीहै—

अथास्यापवादः ।

आश्लेषाप्रथमः पादः पादो मूलांतिमस्तथा ॥ विशाखाज्येष्ठयोराद्यास्त्रयः पादाः शुभावहाः ॥ ७८ ॥ इति वधूवरयोर्मेलापवादः ॥

अब इसका अपवाद लिखतेहैं—आश्लेषाका पहिला चरण और मूलका अन्तिम चरण विशाखा तथा ज्येष्ठाके पहिले तीन चरण शुभकारक हैं ॥ ७८ ॥ इति वधूवरयोर्मेलापवादः ॥

अथ वाग्दानं कुमारीवरणं च ।

विवाहोदितभे पूर्वाधनिष्ठाकृत्तिकाश्रवे ॥
कुमारीवरयोः कार्यं वरणं च शुभेहनि ॥ ७९ ॥

अब वाग्दान और कुमारीवरण लिखतेहैं—विवाहमें जो नक्षत्र कहेहैं तिनमें और पूर्वा तीनों, धनिष्ठा, कृत्तिका, श्रवण इन नक्षत्रोंमें शुभवारमें कुमारी और वरका वरण करना शुभ होताहै ॥७९॥

अथ विवाहादिकृत्ये निषिद्धसमयः ।

जलाशयगृहारामप्रतिष्ठारंभणे तथा ॥ व्रतारंभसमाप्ती च दीक्षा सोमाऽध्वरादिकम् ॥ ८० ॥ महादानमुपाकर्माग्रयणारंभमष्टकम् ॥ केशांतं वृषभोत्सर्गं देवतास्थापनं प्रपा ॥ ८१ ॥ व्रतबंधमथोद्वाहं मुंडनं कर्णवेधनम् ॥ गर्भाधानादिसंस्कारान्कालातिक्रमणे शिशोः ॥ ८२ ॥ देवतीर्थेक्षणं चाद्यं भूमिपालाभिषेचनम् ॥ अग्न्याधानं च संन्यासं चातुर्मास्यमथो गमम् ॥ ८३ ॥ वेदव्रतं व्रतोत्सर्गमाद्यं वध्वाः प्रवेशनम् ॥ अस्ते शुक्रेज्ययोर्बाल्ये वार्द्धके सिंहगे गुरौ ॥८४॥ त्रयोदशदिने पक्षे मासे न्यूनेऽधिके त्यजेत् ॥ धार्यं नेति जगुः केचिदस्तादौ भूषणादिकम् ॥ ८५ ॥ सुवर्णरत्नदंतानां संधार्यमिति चापरे ॥ केचिद्वक्रेऽतिचारेपि नीचराशिगते गुरौ ॥ धनुर्मीनगते सूर्ये गुरुणा संयुतेपि च ॥ ८६ ॥

अब विवाहादिकृत्यमें निषिद्धसमय लिखतेहैं—जलाशय, मकान, बगीचा इनका बनाना, तथा प्रतिष्ठा करना, व्रतका प्रारंभ और

समाप्ति, मंत्रदीक्षा, सोमयज्ञादि करना ॥ ८० ॥ महादान, उपाकर्म, नवान्न भोजन, अष्टकाश्राद्ध (केशांत) डाढ़ी बनवाना, वृषोत्सर्ग, देवस्थापन, प्याऊ लगाना ॥ ८१ ॥ यज्ञोपवीत, विवाह, मुंडन, कर्णवेध, बालकका समय निकल जानेपर गर्भाधानादि संस्कार ॥ ८२ ॥ देवता और तीर्थका प्रथम दर्शन, राजाका अभिषेक, अग्निहोत्र, संन्यास लेना, चातुर्मास्यव्रत करना, प्रथमयात्रा करनी ॥ ८३ ॥ वेदपाठका व्रत करना, व्रतका उद्यापन करना, प्रथम वधूप्रवेश इतने कार्य शुक्र और बृहस्पतिके अस्त तथा बालत्व और वृद्धत्वमें, सिंहके बृहस्पतिमें ॥ ८४ ॥ तेरहदिनके पक्षमें, न्यूनाधिक मासमें त्यागदेने चाहिये और कोई आचार्य ऐसा कहतेहैं कि, अस्तादिकमें भूषणादिक धारण नहीं करें ॥ ८५ ॥ और किन्ही आचार्योंका ऐसा मत है कि, सुवर्ण, रत्न, हाथीदांतका पहिरलेना अस्तादिकमें शुभहै तथा किन्हीं आचार्योंका ऐसा कथन है कि, बृहस्पति वक्री हांय अथवा अतिचारी हांय वा नीच राशि मकरके हांय अथवा बृहस्पतिसे युक्त धनु और मीनके सूर्य हांय तोभी सोना, रत्न, हाथीदांत धारण करलेना शुभ होताहै ॥ ८६ ॥

अथ प्रकारांतरैर्मासद्वयमेव त्याज्यम् ।

इयं मासद्वयं जीवे नक्रस्थे शुभमीप्सुभिः ॥ ८७ ॥

अथ प्रकारान्तरसे दोमासमें ही त्याज्य लिखतेहैं—मकरके बृहस्पति हांय तो शुभ चाहनेवाले जन दो महीनेतक शुभकार्य न करें ॥ ८७ ॥

गुरोर्वक्रातिचारे विशेषः ।

वक्रातिचारगे जीवे त्वष्टाविंशतिवासरान् ॥
परित्यज्य ततः कुर्याद्व्रतोद्वाहादिकं शुभम् ॥ ८८ ॥

अब गुरुके वक्रातिचारमें विशेष लिखतेहैं वक्र अथवा अति-चारके बृहस्पति होंय तो अट्ठाईस दिनोंको त्यागकर यज्ञोपवीत विवाहादि कार्य करें तो शुभ होतेहैं ॥ ८८ ॥

अथ वक्रातिचारदोषापवादः ।

त्रिकोणद्व्यायसंस्थे तु जीवे वक्रातिचारिणि ॥
न दोषस्तत्र विज्ञेयः कुर्यादुद्वाहनादिकम् ॥ ८९ ॥

अब वक्रातिचारके दोषापवाद लिखतेहैं–नौवें, पांचवें, दूसरे, ग्यारहवें स्थानमें बृहस्पति होंय तो वक्र और अतिचारका दोष नहीं होताहै विवाहादि कर्म शुभ होतेहैं ॥ ८९ ॥

अथ सिंहस्थगुरोर्दोषः ।

सिंहसिंहांशगे जीवे विवाहादि न कारयेत् ॥
गोदाया उत्तरे भागे भागीरथ्याश्च दक्षिणे ॥ ९० ॥

अब सिंहस्थ गुरुदोष लिखतेहैं–सिंहराशि और सिंहराशिके नवांशामें बृहस्पति होय तो गोदावरीके उत्तर भाग और भागीरथी गंगाके दक्षिणभागमें विवाहादिक न करे ॥ ९० ॥

अथ देशविशेषेण सिंहस्थगुरुदोषाभावः ।

गोदाया याम्यदिग्भागे भागीरथ्यास्तथोत्तरे ॥
विवाहाद्यखिलं कार्यं सिंहस्थेपि बृहस्पतौ ॥ ९१ ॥

अब देशविशेषसे सिंहस्थ गुरुदोषाभाव लिखतेहैं–गोदावरी न-दीके दक्षिण भागमें और भागीरथी नदीके उत्तर भागमें सिंहके बृहस्पति होनेपरभी विवाहादि समस्त कार्य करें ॥ ९१ ॥

अथ सिंहस्थगुरौ सर्वदेशेषु दोषापवादः ।

सिंहराशिस्थिते जीवे मेषेके तु न दूषणम् ।
आवश्यके विवाहादौ सर्वदेशेष्वपि स्मृतम् ॥ ९२ ॥

अब सिंहस्थगुरुमें सर्वदेशमें दोषापवाद लिखतेहैं–सिंहराशिके बृहस्पति होंय तो मेषके सूर्यमें आवश्यक विवाहादि कार्य सब देशोंमें शुभ होतेहैं अर्थात् मेषके सूर्य रहनेपर सिंहस्थ बृहस्पतिका दूषण नहीं होताहै ॥ ९२ ॥

अथ मकरस्थे गुरौ विशेषः ।

मगधे गौडदेशे च सिंधुदेशे च कौंकणे ॥
विवाहादिशुभे त्याज्यो नान्यस्मिन्नक्रगो गुरुः ॥ ९३ ॥

अब मकरस्थगुरुमें विशेष लिखतेहैं–मकरके बृहस्पति विवाहादि शुभकर्म्मोंमें मगध, गौड, सिंधु, कौंकण इन देशोंमें त्याज्यहैं अन्य देशोंमें शुभहैं ॥ ९३ ॥

अथ लुप्तसंवत्सरः ।

देवपूज्योतिचारेण दशमासात्पुरा यदि ॥ राश्यंतरगते भूयो ऋते कुंभचतुष्टयात् ११ । १२ । १ । २ ॥ ९४ ॥ प्राग्राशिं यदि नो याति लुप्तसंवत्सरस्तदा ॥ गंगानर्मदयोर्मध्ये देशे सोत्यंतनिंदितः ॥ ९५ ॥

अब लुप्तसंवत्सर लिखतेहैं–यदि बृहस्पति अतिचारकरके दश मासके भीतर कुंभ, मीन, मेष, वृष इन चार राशियोंको छोडकर अन्य राशिपर चले जाँय और अपनी पूर्वराशिपर न आवें तो लुप्त संवत्सर होताहै सो गंगा और नर्मदा नदीके मध्य देशमें अत्यंत निंदित है ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

अथ कार्यविशेषे नामजन्मर्क्षयोः प्राधान्यम् ।

देशग्रामगृहद्यूतव्यवहारे रणे ज्वरे ॥ दाने मंत्रे च सेवायां काकिण्यां वर्गयाजने ॥ ९६ ॥ पुनर्भूमेलने ज्ञेया नामराशेः प्रधानता ॥ अतोन्यत्र विवाहादौ प्राधान्यं जन्मभस्य हि ॥ ९७ ॥ अज्ञातजनिधिष्ण्ये तु नामभादेव चिंतयेत् ॥

जायापत्योर्भकूटाद्यं गोचराद्यं खिलं तथा ॥ ९८ ॥ एकस्यापि च दंपत्योरज्ञाते जन्मभे सति ॥ तदा तु गुरुरव्यादिमेलनं नामभाद्वयोः ॥ ९९ ॥

अब कार्यविशेषमें जन्मर्क्ष और नामर्क्षको प्रधानता लिखतेहैं— देश, ग्राम और घरके कार्योंमें, जुआमें, व्यवहारमें, युद्धमें, ज्वरमें, दानमें, मंत्रमें, सेवामें, काकिणीमें, वर्गके मिलानेमें ॥ ९६ ॥ (पुनर्भूमेलन) अन्यकी व्याहीहुई स्त्रीका अन्यपुरुषके साथ सगाई करनेमें नामराशिकी प्रधानता जाननी. इससे अन्यत्र विवाहादि कार्योंमें जन्मराशिकी प्रधानता जाननी ॥ ९७ ॥ जिस स्त्री पुरुषका जन्मनक्षत्र नहीं मालूम होय उनके नामकी राशिसेही सब भकूटादि तथा गोचरादिका विचार करे ॥ ९८ ॥ स्त्रीपुरुषमें एकका भी जन्मनक्षत्र अज्ञात होय तो जो बृहस्पति तथा सूर्यादिग्रहोंके मेलनमें जन्मराशिसे किया जाता है सो विचार सब ग्रहोंके मेलनका दोनोंकी नामराशिसे ही करे ॥ ९९ ॥

अथ विवाहे संवत्सरादिशुद्धिः।

गर्भाज्जन्मदिनाद्वापि हायनात्पंचमात्परम् ॥ आदशाब्दं तु कन्याया विवाहः समवत्सरे ॥ १०० ॥ गौरी स्यादष्टवर्षा सा रोहिणी नववार्षिकी ॥ दशाब्दा कन्यका ज्ञेया तस्मादूर्ध्वं रजस्वला ॥ १०१ ॥

अब विवाहमें संवत्सरादिशुद्धि लिखते हैं—गर्भ अथवा जन्मदिनसे पांच वर्षके पश्चात् दश वर्षके भीतर सम वर्षमें कन्याका विवाह शुभ होताहै ॥ १०० ॥ आठवर्षकी कन्याकी गौरी संज्ञा है। नौवर्षकी कन्याकी रोहिणी संज्ञा, दशवर्षकी कन्याकी कन्या संज्ञाहै और दशवर्षके पीछे कन्याकी रजस्वला संज्ञा है ॥ १०१ ॥

तत्र विशेषः ।

देया गुरुवला गौरी रोहिणी भानुमद्वला ॥ कन्या चंद्रवला ग्राह्या ततो लग्नवलेतरा ॥ १०२ ॥

यहां विशेष लिखतेहैं—गौरीको बृहस्पतिका वल, रोहिणीको सूर्यका वल, कन्याको चंद्रमाका वल और रजस्वलाको लग्नवल देखना चाहिये ॥ १०२ ॥

अथ विवाहे रविगुरुचंद्रवलम् ।

गुरोर्वलं तु कन्याया वरस्याथ वलं रवेः ॥
ग्राह्यं परिणये प्राज्ञैर्वलं चांद्रं तथोभयोः ॥ १०३ ॥

अव विवाहमें रवि गुरु चंद्रवल लिखतेहैं—कन्याको बृहस्पतिका वल और वरको सूर्यका वल और दोनोंके लिये चंद्रमाका वल विवाहमें ग्रहण करना चाहिये ॥ १०३ ॥

अथ कन्याया वटोश्च गुरुवलम् ।

जन्मराशेर्गुरुः श्रेष्ठःपंचमो नवमो द्विगः॥एकादशःसप्तमस्थः कन्यायाश्च वटोर्व्रते ॥१०४॥ त्रि ३ षट् ६ दशाद्य १० । १ गो मध्यो नेष्टस्तुर्यो ४ ष्टमो ८ न्त्यगः ॥ एकया पूजया मध्यस्तुर्योत्यो द्विगुणार्चया ॥ १०५ ॥ कालातिक्रमणे त्विष्टो ह्यष्टमस्त्रिगुणार्चनात् ॥ गुरुः स्वोच्चे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमेपि वा ॥१०६॥ शुभस्तुर्याष्टमोत्योपि नीचारिस्थः शुभोऽप्यसत् ॥ वक्रातिचारगो वा पि यस्मिन्राशौ समागतः ॥ १०७ ॥ तद्राशिजं फलं धत्ते जीवो नो पूर्वराशिजम् ॥ १०८ ॥

अव कन्या और वटुके गुरुवल लिखतेहैं—विवाहमें कन्याकी जन्म राशिसे और यज्ञोपवीतमें वटुकी जन्मराशिसे बृहस्पति पांचवें, नौवें, दूसरे, ग्यारहवें, सातवें होय तो श्रेष्ठ होतेहैं ॥ १०४ ॥

और तीसरे, छठे, दशवें, जन्मके होंय तो मध्यम होतेहें और चौथे, आठवें, बारहवें होंय तो नेष्ट होतेहें. मध्यम बृहस्पति एक गुणी पूजासे और चौथे, बारहवें बृहस्पति दूनी पूजासे शुभ होतेहें और काल व्यतीत होनेपर आठवें बृहस्पति तिगुनी पूजासे शुभ होतेहें यदि बृहस्पति उच्चराशिके अथवा अपनी राशिके वा मित्रग्रहकी राशिके अथवा अपने नवांशकमें वा वर्गोत्तम नवांशकमें होंय ॥ ॥ ५ ॥ ६ ॥ तो चौथे, आठवें, बारहवें स्थानमें स्थित भी शुभ होतेहें तथा नीच राशि वा शत्रुकी राशिका होय तो शुभ भी अशुभ होजाताहे और बृहस्पति वक्र अथवा अतिचारी होके जिस राशिपर आताहे उसीका फल देताहे और पूर्वराशिका फल नहीं देता ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

अथ वरस्य रविबलम् ।

रविस्त्रिषट्दशायस्थो वरस्योद्वहने शुभः ॥ मध्यः पंचमदृक्सप्तनवमः पूजयोत्तमः ॥ द्विरर्च्यो द्वादशः सूर्योऽष्टमस्त्रिगुणार्चनात् ॥ १०९ ॥

अब वरका रविबल लिखतेहें—सूर्य तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें वरके लिये विवाहमें शुभ होतेहें । पांचवें, दूसरे, सातवें, नौवें पूजासे उत्तम होते हें और बारहवें सूर्य दूनी पूजासे तथा आठवें तिगुनी पूजासे शुभ होतेहें ॥ १०९ ॥

अथोभयोश्चंद्रबलम् ।

ग्राह्यं प्रागुक्तमुद्वाहे द्वयोश्चांद्रबलं समम् ॥ ११० ॥

अब दोनोंके चन्द्रबल लिखतेहें—कन्या और वर दोनोंके लिये विवाहमें चंद्रमाका पूर्वोक्तसमानही बल ग्रहण करना चाहिये ॥११०॥

अथ मासादिदोषापवादः ।

जन्ममासादिके ज्येष्ठे विवाहो नृकन्ययोः ॥ आद्यगर्भभुवोर्नेष्टो नानाद्यजनुषोस्तयोः ॥ १११ ॥ नेष्टं त्रिज्येष्ठमुद्वाहे

द्विज्येष्ठं मध्यमं स्मृतम् ॥ कृत्तिकास्थे रवौ केचित्त्रिज्येष्ठं तु शुभं जगुः ॥ ११२ ॥

अब मासादिदोषापवाद लिखतेहैं—प्रथम गर्भसे उत्पन्न हुए वरकन्याका विवाह जन्ममास, जन्मनक्षत्र, वार, तिथ्यादिमें तथा ज्येष्ठमासमें नेष्ट होताहै और अन्य महीनोंमें नेष्ट नहीं होता अर्थात् शुभ होताहै ॥ १११ ॥ विवाहमें तीन ज्येष्ठ अशुभ दो ज्येष्ठ मध्यम होतेहैं. कोई आचार्य ऐसा कहतेहैं कि, कृत्तिका नक्षत्रपर सूर्य होय तो तीन ज्येष्ठ शुभ होतेहैं ॥ ११२ ॥

अथात्र प्रसंगाद्विवाहाद्युपयुक्तः शास्त्रार्थः ।

नेष्टं त्र्युद्वहनं केचिज्ज्येष्ठयोस्तु परस्परम् ॥ पुत्रोद्वाहात्तु षण्मासान्न कन्याकरपीडनम् ॥११३॥ मंडनान्मुंडनं वापि कुले शस्तमतोन्यथा ॥ सीमंतोद्वाहने चौलं केशांतं व्रतबंधनम् ॥ ११४ ॥ गुरुमंगलमेतत्स्यात्तदन्ये लघुमंगलम् ॥ गुरुमंगलयोर्नेष्टं षण्मासाल्लघुमंगलम् ॥ ११५ ॥ शुभत्रयं तथा पित्र्यं कृत्यं स्वीयकुले न सत् ॥ सहोदरप्रसूतानां भ्रातॄणां च समक्रिया ॥ ११६ ॥ षण्मासाभ्यंतरे नेष्टा कन्यकानां तथैव च ॥ प्रागुक्तमंगलं कुर्यादब्दभेदेऽथवा पुनः ॥ ११७ ॥ चतुर्दिनांतरे वापि संकटे तु दिनान्तरे ॥ एकाहेपि प्रकुर्वीत सरिद्गिरिगृहांतरे ॥ ११८ ॥ तथा मंडपभेदेपि लग्नभेदे यथोचितम् ॥ यमयोस्तु विशेषोयं कार्याः सर्वाः सहक्रियाः ॥११९॥ एकोदरसमुत्पन्नमेकस्मै कन्यकाद्वयम्॥न देयं नैव कुर्याच्च सोदराभ्यां सहोदरे ॥१२०॥ विवाहनिश्चयादूर्ध्वं कुले वध्वा वरस्य च ॥ पित्रादेर्मरणे जाते विवाहो न तथा शुभः ॥ १२१ ॥ अथवा वत्सरादूर्ध्वं

मासपक्षादथापि वा ॥ मासोर्ध्वात्सुतकांते वा शांत्या शस्तः करग्रहः ॥ १२२ ॥

अब यहाँ प्रसंगसे विवाहाद्युपयुक्तशास्त्रार्थ लिखतेहैं—तीन ज्येष्ठोंमें विवाह अशुभ होताहै । किन्ही आचार्योंका ऐसा मत है कि, जेठे वर कन्या दोकाही परस्पर विवाह अशुभ होताहै और पुत्रके विवाहसे पीछे छह महीनेके भीतर कन्याका विवाह शुभ नहीं होता ॥ ११३ ॥ और अपने कुलमें कन्या वा पुत्रके विवाहसे पीछे छह महीनेके भीतर मुंडनभी शुभ नहीं होताहै. सीमंतकर्म, विवाह, मुंडन, केशान्त, यज्ञोपवीत ॥ ११४ ॥ ये कार्य गुरुमंगल कहातेहैं इनसे अन्य लघुमंगल कार्य हैं. गुरु मंगल कार्यके पीछे छह महीनेके भीतर लघुमंगलकार्य शुभ नहीं होता॥११५॥(तीन शुभकर्म) विवाह, यज्ञोपवीत, मुंडन और (पितृकर्म) गयाश्राद्धादिक छह महीनेके भीतर अपने कुलमें शुभ नहीं मानेहैं और सगेभाईयोंका विवाहादिक छह मासके भीतर अशुभ होताहै ॥ ११६ ॥ इसी प्रकार सगी-बहिनोंका विवाहभी छह महीनेके भीतर अशुभ होताहै. पूर्वोक्त मंगलकार्य (वर्षभेद) साल बदल जानेपर छह महीनेके भीतरभी शुभ होजाताहै. जैसे माघके महीनेमें विवाह होय तो वैशाखके महीनेमें अन्य विवाहादि कार्य अपने कुलमें करलेने शुभ होतेहैं. अथवा आवश्यक संकट कार्यमें चारदिनके अंतरसे अथवा एकदिनके अंतरसे पूर्वोक्तकार्य करना शुभ होताहै और एक दिनमेंभी नदीके अंतर वा पर्वतके अंतर अथवा मकानके अन्तरसे शुभ होता है ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ और यदि एक घरमें ही करे तो मंडपभेदसे करे अथवा लग्नभेदसे करे अर्थात् दूसरा मंडप वा दूसरी लग्नमें करे और एकसाथ पैदाहुए दोभाईयोंके तो सब कार्य एक संगही करने चाहिये ॥ ११९ ॥ और सगी दो कन्याओंको एक वरके लिये नहीं

देवे और सगे दो भाइयोंके लिये सगी दो कन्याएंभी नहीं देवे ॥ १२० ॥ विवाह निश्चय करनेके उपरान्त वधू अथवा वरके कुलमें पिताआदि किसीका मरण होजावै तो विवाह शुभ नहीं होता है ॥१२१॥ अथवा एकवर्षके उपरान्त शुभ होता है अथवा छह महीने पीछे वा एक मासपीछे अथवा सूतककी समाप्तिपर शान्ति करनेसे विवाह शुभ होताहै ॥ १२२ ॥

अथ विवाहे शुभमासाः ।

मेषवृश्चिककुंभेषु मकरे मिथुने वृषे ॥ रवौ पाणिग्रहः श्रेष्ठो युग्मे विष्णुशयावधिः ॥ १२३ ॥ वैशाखः फाल्गुनो माघो ज्येष्ठश्चैते शुभप्रदाः ॥ मासा उद्वहने मार्गो मध्योऽन्ये त्वशुभा मताः ॥ १२४ ॥ वृश्चिके मकरे मेषे विद्यमाने दिवाकरे ॥ कार्त्तिकः पौषचैत्रौ च विवाहे तेपि शोभनाः ॥ १२५ ॥ मार्गशीर्षे धनुष्यर्के मीनार्कः फाल्गुने शुभः ॥ सौरो व्रतविवाहादौ मासः सर्वत्र शस्यते ॥१२६॥ चांद्रो मासस्तु विंध्याद्रेर्भागे दक्षिणके मतः ॥ योगस्तयोर्विवाहादौ शोभनः सौरचांद्रयोः ॥ १२७ ॥

अब विवाहमें शुभमास लिखतेहैं—मेष, वृश्चिक, कुंभ, मकर, मिथुन, वृषके सूर्यमें और मिथुनके सूर्यमें देवशयनी एकादशीतक विवाह श्रेष्ठ होताहै ॥१२३॥ विवाहमें वैशाख, फाल्गुन माघ, ज्येष्ठ ये महीने शुभदायक हैं और मार्गशीर्ष मध्यम है. अन्य महीने अशुभ हैं ॥ १२४ ॥ वृश्चिक, मकर, मेषके सूर्य विद्यमान होंय तो विवाहमें क्रमसे कार्त्तिक, पौष, चैत्र मासभी शुभ होतेहैं ॥ १२५॥ मार्गशीर्षमें धनुके और फाल्गुनमें मीनके सूर्य होंय तो अशुभ होतेहैं. यज्ञोपवीत, विवाहादि कार्योंमें सौरमास श्रेष्ठ मानाहै॥१२६॥ और विंध्याचलके दक्षिण भागमें चांद्रमास मानाजाताहै सौर और चांद्रमासका योग विवाहादिकमें शुभ मानाहै ॥ १२७ ॥

अथ विवाहे तिथिनक्षत्राणि।

षष्ठी दर्शोऽष्टमी रिक्ता कृष्णपक्षांत्यपंचके ॥ शुक्ला च प्रतिपन्नेष्टास्तिथयोऽन्ये तु शोभनाः ॥ १२८ ॥ सौम्यवाराः शुभा मध्यौ सूर्यमंदौ कुजोऽधमः ॥ रोहिण्यामुत्तरे मूले पितृमैत्रांतभे मृगे ॥ १२९ ॥ हस्ते स्वात्यां मृगाक्षीणां शोभनं करपीडनम् ॥ सीतोढा पूर्वफाल्गुन्यां नो लेभे शमतो न सत् ॥ १३० ॥

अब विवाहमें तिथि नक्षत्र लिखतेहैं—षष्ठी, अमावास्या, अष्टमी, रिक्ता तिथि और कृष्णपक्षके अंतकी पांच तिथि और शुक्लप्रतिपदा इतनी तिथि विवाहमें नेष्ट हैं और अन्य तिथि शुभ हैं ॥ १२८ ॥ विवाहमें सौम्यवार शुभहैं और सूर्य शनैश्चर मध्यम हैं; मङ्गल अधमहै. रोहिणी, तीनों उत्तरा, मूल, मघा, रेवती, मृगशिर ॥ ॥ १२९ ॥ हस्त, स्वाति, इन नक्षत्रोंमें कन्याका विवाह शुभ होताहै और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें सीताका व्याह हुआ था उसको सुख नहीं मिला इसीसे पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र विवाहमें शुभ नहींहै ॥ १३० ॥

अथ विवाहे दशमहादोषाः।

वेधः पातो युतिः क्रांतिर्लत्तैकार्गलपंचकम् ॥
दग्धोपग्रहजामित्रं दोषास्त्याज्या इमे दश ॥ १३१ ॥

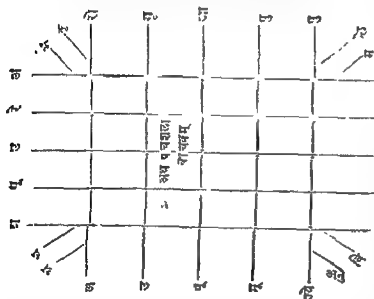
अब विवाहमें दश महादोष लिखतेहैं—वेध, पात, युति, क्रांतिसाम्य, लत्ता, एकार्गल, पंचक, दग्धा, उपग्रह, जामित्र ये दश महादोष विवाहमें त्याज्यहैं ॥ १३१ ॥

अथ वेधदोषः।

रेखा पंचोर्ध्वतिर्यक्स्था द्वेद्वे रेखे च कोणयोः ॥ चक्रं पंचशलाकाख्यं विवाहे वेधसाधनम् ॥१३२॥ इति द्वितीयरेखातः

साभिजित्कृत्तिकादिकम् ॥ लिखेत्सव्यक्रमात्तत्र ग्रहा देया यथायथम् ॥१३३॥ विवाहर्क्षैकरेखस्थे ग्रहवेधो भवेदिह ॥ पापैर्विद्धं त्यजेत्सर्वमृक्षं तच्चरणं शुभैः ॥१३४॥ उत्तराषाढतुर्यांघ्रिराद्यस्तिथ्यंशकः १५ श्रुतेः ॥ सोभिजित्तद्गतः खेटो रोहिणीमत्र विध्यति ॥ १३५ ॥

अब वेधदोष लिखतेहैं–पांचरेखा ऊंची पांचरेखा तिरछी और फिर दो दो रेखा चारों कोणोंमें खैंचे तो यह पंचशलाकनाम चक्र बनताहै यह विवाहमें वेधका साधन कहा है ॥ ॥ १३२ ॥ ईशान कोणकी दूसरी रेखासे कृत्तिकादि नक्षत्र अभिजित् सहित सव्यक्रमसे लिखे और जो ग्रह जिस नक्षत्रपर हो उसको उसी नक्षत्रकी रेखापर स्थापित करै ॥ १३३ ॥ विवाहका नक्षत्र और ग्रह एकरेखामें पडै तो वेध होता है, विवाहादि शुभ कार्यमें पाप ग्रहोंसे विद्ध समस्त नक्षत्र त्याज्य होताहै और शुभग्रहसे विद्ध हो तो जिस चरणको वेधता हो वही त्याज्य होताहै ॥ ॥ १३४ ॥ उत्तराषाढाका चौथा चरण और श्रवणका पंद्रहवाँ भाग अभिजित् कहाता है तिसपर कोईग्रह होय तो रोहिणीको वेधताहै ॥ १३५ ॥



अथ विवाहर्क्षाणां वेधस्योदाहरणम् ।

रेवत्युत्तरफाल्गुन्योर्भरण्याख्यानुराधयोः ॥ मघाश्रवणयोर्वेधः स्वातीशतभिषाख्ययोः ॥ १३६ ॥ वेधो मूलपुनर्वस्वोरुफाख्यामृगयोरपि ॥ रोहिण्यभिजितोर्वेध उत्तराभाद्रहस्तयोः ॥ १३७ ॥ अन्यत्रोद्वाहनाज्ज्ञेयो वेधः सप्तशलाकजः ॥ पापवेधे च नक्षत्रं संपूर्णं त्याज्यमेव च ॥ शुभवेधे च तुर्याद्यपादयोर्द्वितृतीययोः ॥ १३८ ॥

अब विवाह नक्षत्रोंमें वेधका उदाहरण लिखतेहैं—रेवती और उत्तराफाल्गुनीका वेध होताहै, भरणी और अनुराधाका, मघा और श्रवणका स्वाति और शतभिषाका वेध होताहै ॥ १३६ ॥ मूल और पुनर्वसुका, उत्तराषाढ और मृगशिराका, रोहिणी और अभिजित्का, उत्तराभाद्रपद और हस्तका वेध होताहै ॥ १३७ ॥ विवाहसे अन्य कार्योंमेंभी इसी प्रकार सब नक्षत्रोंका वेध सप्तशलाका चक्रमें जानै; पापग्रहका वेध होय तो संपूर्ण नक्षत्र त्याज्य होताहै और शुभग्रहका वेध होय तो नक्षत्रके चौथे और पहिले चरणका, दूसरे और तीसरे चरणका वेध होताहै; चौथे और दूसरे चरणका, तीसरे और पहिले चरणका वेध नहीं होता इसीसे शुभ जानै ॥ १३८ ॥

अथ वेधापवादः ।

लग्ने शुभग्रहो वाथ लग्नेशो लाभगोथ वा ॥ सौम्यैर्दृष्टो युतो वापि कालहोरा शुभस्य वा ॥ वेधदोषस्तदा न स्याद्विवाहादौ सतां मतम् ॥ १३९ ॥

अब वेधापवाद लिखतेहैं—लग्नमें शुभग्रह बैठा होय अथवा ग्यारहवें स्थानमें लग्नेश सौम्यग्रहोंसे दृष्ट वा युक्त होय अथवा शुभग्रहकी कालहोरा होय तो विवाहादिकमें वेधदोष नहीं होताहै ऐसा सत्पुरुषोंका मत है ॥ १३९ ॥

अथ पातदोषः ।

शूलहर्षणसाध्यानां वैधृतिव्यतिपातयोः ॥
गंडस्यांते च यद्विष्ट्यां तच्चंडायुधपातितम् ॥ १४० ॥

अब पातदोष लिखतेहैं–शूल हर्षण, साध्य, वैधृति, व्यतीपात, गंड इन योगोंके तथा भद्राके अन्तमें जो विवाहका नक्षत्र होय तो चंडायुध पातदोष होताहै ॥ १४० ॥

अथ पातानयनं प्रकारांतरेण ।

अनुराधा मघाश्लेषा श्रवश्चित्रा च रेवती ॥ यत्रैतद्वक्रग तत्र रेखा कार्या विचक्षणैः ॥१४१॥ रविभाद्भानि विन्यस्य त्वश्विभाद्गणयेत्क्रमात् ॥ यत्र भे वक्रगा रेखा तत्र पातो भवेद्ध्रुवम् ॥ १४२ ॥

अब पातानयन प्रकारान्तरसे लिखतेहैं–सूर्यके नक्षत्रसे अट्ठाईस रेखा सीधी खैंचे जहांपर अनुराधा, मघा, आश्लेषा, श्रवण, चित्रा, रेवती इन नक्षत्रोंकी रेखा आवैं तहांपर उन रेखाओंको टेढ़ी लिखै, फिर अश्विन्यादि नक्षत्रसे लेकर प्रथम रेखासे क्रमकरके गिनै जिस नक्षत्रपर डेढ़ीरेखा आवै तो उसी नक्षत्रपर पातदोष जानै यदि विवाहके नक्षत्रपर वक्र रेखा होय तो वहभी पातदोष युक्त होताहै ॥ १४१ ॥ १४२ ॥

अथ युतिदोषः ।

राशौ सखेचरे चंद्रे दोषः स्यात्स ग्रहाभिधः ॥
स त्याज्यः शोभने केचिन्नेत्याहुः सबुधेज्यके ॥ १४३ ॥

अब युतिदोष लिखतेहैं–जिस राशिपर चंद्रमा होय यदि उसी राशिपर अन्य कोई ग्रह होय तो युतिदोष होताहै सो शुभकर्ममें त्याज्यहै और किन्ही आचार्योंका ऐसा कथन है कि, बुध और बृहस्पतियुक्त चंद्रमा होय तो युतिदोष नहीं होताहै ॥ १४३ ॥

अथ युतिदोषापवादः।

स्वर्क्षस्थः स्वोच्चगश्चंद्रो मित्रक्षेत्रगतोपि वा ॥ गुरुर्वा स्वीयवर्गस्थो बली केन्द्रगतो विधुः ॥ विलोकयति चेद्दोषं नाशयत्येव स ग्रहः ॥ १४४ ॥

अब युतिदोषापवाद लिखतेहैं—चंद्रमा अपनी कर्कराशिका होय अथवा उच्च (वृषका) होय अथवा मित्रक्षेत्री होय अथवा बृहस्पति अपने नवांशकमें स्थित होय अथवा बलीचंद्रमा केंद्रमें स्थित होय और उसको बृहस्पति देखता होय तो सब दोषोंका नाश करता है ॥ १४४ ॥

अथ प्रकारांतरेण युतिदोषः।

चंद्रर्क्षे पापयुक्चेत्स्याद्युतिदोषस्तदोदितः ॥

अब प्रकारान्तरसे युतिदोष लिखतेहैं—चंद्रमाकी राशि पापग्रह युक्त होय तो युतिदोष कहाताहै

अथैतस्यापवादः।

धिष्ण्यैक्ये राशिभेदे भं पापयुग्राशिगं त्यजेत् ॥ १४५ ॥

अब इसका अपवाद लिखतेहैं—नक्षत्र एक होय—और राशिभेद होय तो शुभ होताहै—और पापयुक्तराशिका नक्षत्र होय तो त्याज्य होता है ॥ १४५ ॥

अथ क्रांतिसाम्यदोषः।

ऊर्ध्वरेखात्रयं चैव तिर्यग्रेखात्रयं तथा ॥ क्रांतिसाम्यं बुधैर्ज्ञेयं मध्ये मीनं तु योजयेत् ॥ १४६ ॥ मेषसिंहौ तुलाकुंभौ गोनक्रौ कर्कवृश्चिकौ ॥ कन्यामीनौ धनुर्मीने तत्रान्योन्यं स्थितावुभौ ॥ १४७ ॥ रविचंद्रौ तदा ज्ञेयः क्रांतिसाम्यस्य संभवः ॥ १४८ ॥

अब क्रान्तिसाम्यदोष लिखतेहैं—तीन रेखा खड़ी और तीन रेखा तिरछी खेंचे तो यह चक्र क्रांतिसाम्यका बनताहै मध्यरेखापर मीनराशि

लिखे ॥१४६॥ मेष और सिंह राशिका, तुला और कुंभ राशिका, वृष और मकरका, कर्क और वृश्चिकका, कन्या और मीनका, धनु और मिथुनका वेध होताहै; परस्पर आमनेसामने सूर्यचंद्रमा एकरेखापर स्थित होंय तो क्रांतिसाम्य दोषका संभव होताहै ॥ १४७ ॥ १४८॥

अथ प्रकारांतरेण क्रांतिसाम्यसंभवः ।

वृद्धियोगचतुर्थांघ्रौ ब्रह्मयोगादिमे तथा ॥
क्रांतिसाम्यस्य संभूतिस्तत्र प्रायो भवेदपि ॥ १४९ ॥

अब प्रकारान्तरसे क्रांतिसाम्यदोषसम्भव लिखतेहैं—वृद्धियोगके चौथे चरण और ब्रह्मयोगके पहिले चरणमें बहुधा क्रांतिसाम्य दोषकी उत्पत्ति होतीहै ॥ १४९ ॥

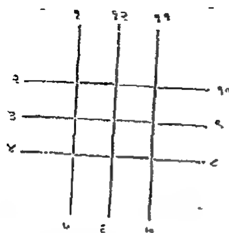
अथ गणितागतमेव क्रांतिसाम्यं त्याज्यम् ।

प्रागुक्तसंभवस्येत्थं यदि स्याद्गणितागतम् ॥ क्रांतिसाम्यं तदा नेष्टं मध्यमन्यत्र संभवे ॥ १५० ॥ त्रयस्त्रिंशत्कलाल्पत्वे दोषः क्रांत्यंतरे तयोः ॥ रवींद्वोः क्रांतिसाम्यस्य नाधिको दोष ईरितः ॥ १५१ ॥

अब गणितागत क्रांतिसाम्यही त्याज्य लिखतेहैं—पूर्वोक्त कान्तिसाम्यका संभव होनेपर यदि गणितागत क्रांतिसाम्यभी होय तो नेष्ट होताहै अन्य प्रकारसे क्रांतिसाम्य होय तो मध्यम होताहै ॥ ॥ १५० ॥ यदि सूर्यचंद्रमाकी तेंतीसकलासे कम अन्तर होय तो क्रांतिसाम्यका दोष होताहै अधिक होनेसे नहीं होता है ॥ १५१ ॥

अथ लत्तादोषः ।

स्वराशेर्द्वादशं सूर्यः षष्ठं जीवोऽष्टमं शनिः ॥ तृतीयं धरणीपुत्रः पुरो लत्तापरिग्रहः ॥ १५२ ॥ पश्चात्सप्तमभं सौम्यो नवमं सिंहिकासुतः ॥ द्वाविंशं पूर्णहिमगुः पञ्चमं भृगुनन्दनः ॥ १५३ ॥



अब लत्तादोष लिखतेहैं–सूर्यकी अपने नक्षत्रसे आगे बारहवें नक्षत्रपर लत्ता होतीहै, बृहस्पतिकी आगे छठे नक्षत्रपर लत्ता होतीहैं, शनैश्चरकी आगे आठवें नक्षत्रपर लत्ता होतीहै और मंगलकी अपने नक्षत्रसे आगे तीसरेपर लत्ता होतीहै बुधकी अपने नक्षत्रसे पीछले सातवें नक्षत्रपर लत्ता होतीहै और राहुकी अपने नक्षत्रसे पीछेवाले नौवें नक्षत्रपर लत्ता होतीहै, पूर्ण बली चंद्रमाकी अपने नक्षत्रसे पिछले बाइसवें नक्षत्रपर और शुक्रकी अपने नक्षत्रसे पिछले पाँचवें नक्षत्रपर लत्ता होतीहै ॥ १५३ ॥

अथैकार्गलदोषः ।

योगांके विषमे सैके साष्टविंशतिके समे ॥
तदर्द्धसंख्ये भं मूर्ध्नि चक्रे खार्जूरकं त्यजेत् ॥ १५४ ॥

अब एकार्गलदोष लिखतेहैं–योगका अंक विषम होय तो उसमें एक जोडदे और जो सम होय तो अट्ठाईस जोड़दे फिर उस जोड़का आधाकरे जो अंक होय सो विष्कुंभादियोगकी संख्या जानै ॥१५४॥

अथैतस्योदाहरणम् ।

व्यतीपाते भमाश्लेषा व्याघाते तु पुनर्वसू ॥ अतिगंडेऽनुराधा च मूर्ध्निभं परिघे मघा ॥ १५५ ॥ विष्कंभे चाश्विनी पुष्यो वज्रे चित्रा तु वैधृतौ ॥ तथा शूले मृगो गंडे मूलभं मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥१५६॥ योगेष्वेतेषु संभूतिर्नान्येष्वेकाऽर्गलस्य च ॥ १५७ ॥

अब इसकाउदाहरण लिखतेहैं–यदि व्यतीपात योग होय तो आश्लेषानक्षत्र एकार्गलचक्रकी मूर्धानामकी रेखापर स्थापितकरे और

जो व्याघात योग होय तो पुनर्वसू नक्षत्र मूर्द्धापर लिखै,अतिगंड योग होय तो अनुराधा नक्षत्र लिखै,परिघ योग होय तो मूर्द्धापर मघा नक्षत्र स्थापित करै॥१५५॥विष्कुंभ योग होय तो अश्विनी नक्षत्र मूर्द्धापर लिखै,वज्र योग होय तो पुष्य लिखै और वैधृति योग होय तो चित्रा लिखै और शूल योग होय तो मृगशिर, गंड योग होय तो मूल नक्षत्र मूर्द्धापर लिखै ॥ १५६ ॥ ये उक्त योग होयँ तों एकार्गल दोपकी उत्पत्ति होतीहै और अन्य योग होय तो एकार्गल दोपकी उत्पत्ति नहीं होती ॥ १५७ ॥

अथ तस्य चक्रम् ।

एका चोर्ध्वगता रेखा तिर्यक्कार्यास्त्रयोदश ॥ मूर्ध्नि भं मूर्ध्नि विन्यस्य साभिजिच्च ततो न्यसेत् ॥ १५८ ॥ एकार्गलो मिथश्चैकरेखागश्चेद्विधू रविः ॥ विवाहादिशुभे कार्ये नेष्टस्त्वेकार्गलाभिधः ॥ १५९ ॥

अथैकार्गलचक्रम्

	१	
२		२८
३		२७
४		२६
५		२५
६		२४
७		२३
८		२२
९		२१
१०		२०
११		१९
१२		१८
१३		१७
१४		१६
	१५	

अब उसका चक्र लिखतेहैं—एक रेखा ऊंची और तेरह रेखा तिरछी खैंचे, ऊंची रेखाके मूर्द्धापर मूर्द्धाका नक्षत्र लिखकर अभिजित्सहित अट्ठाईस नक्षत्र क्रमसे रेखाओंपर स्थापित करै तो यह एकार्गल चक्र बनताहै परस्पर एकरेखापर आमनेसामने चंद्रमा और सूर्य होंय तो यह एकार्गलनाम दोप विवाहादि शुभकार्योंमें नेष्ट होताहे ॥ १५८ ॥ १५९ ॥

अथ पंचकदोषः

षट् ६ त्र्ये ३ का १ ष्ट ८ चतुः ४ संख्याः संक्रांत्यंशैर्गते-र्युताः॥पंचशेषे ५ ग्रहै ९ र्भक्ता विज्ञेयं बुधपंचकम्॥१६०॥ रोगो वह्निर्नृपश्चौरो मृतिर्वै पंचकं क्रमात्॥ शेषैक्ये नव-भिर्भक्ते पंचशेषे सशल्यकम्॥ १६१॥

अथ पंचकदोष लिखतेहैं—छह ६, तीन ३, एक १, आठ ८, चार ४ इन अंकोंमें संक्रांतिसे वीतेभये सूर्यके अंश जोड़कर नौका भाग देनेसे जहांपर पांच शेष बचें सो बुधपंचक होताहे॥ १६०॥ क्रमसे रोग, अग्नि, राज, चोर, मृत्यु इन नामोंके पंचक होतेहैं और पांचों जगह जो अंक शेष बचें उन सबको जोडकर फिर नौका भाग देनेसे पांच ५ शेष बचें तो बाणसहित पंचक होताहे सो अति अशुभ है॥ १६१॥

अथ दाक्षिणात्यप्रसिद्धपंचकम्।

शुक्लाद्यास्तिथयो याता लग्नाढ्या भाजिता ग्रहैः॥ शेषेऽष्ट-८ द्वि २ चतु ४ स्तर्क ६ भू १ मिते बाणपंचकम्॥१६२॥ रोगोऽग्निनृपती चौरो मृत्युश्चेति यथाक्रमम्॥ प्रसिद्धं दाक्षिणात्यानां शुभकार्ये विवर्जयेत्॥ १६३॥

अब दाक्षिणात्यप्रसिद्ध पंचक लिखतेहैं—शुक्लपक्षकी प्रतिप-दासे लेकर गत तिथियोंमें लग्न जोड़कर नौका ९ भाग देनेसे शेष आठ ८, दो २, चार ४, छह ६, एक, बचे तो बाणपंचक होताहे॥ १६२॥ यथाक्रमसे रोग, अग्नि, राज, चोर, मृत्यु इन नामोंके पंचक दाक्षिणात्योंमें प्रसिद्धहें और शुभकार्यमें त्याज्यहें॥ १६३॥

अथैतयोरपवादव्यवस्था।

रात्रौ चोररुजौ जह्याद्दिवसे राजपंचकम्॥ संध्ययोरुभयो-र्मृत्युं सर्वदा वह्निपंचकम् ॥१६४॥ रवौ रोगं नृपं मंदे बुधे

मृत्युं परित्यजेत् ॥ भौमे तु पावकं चौरं लग्ने हीनबले न सत् ॥ १६५ ॥ लग्ने पूर्णबलोपेते न दोषः पंचकस्य च ॥ व्रते रोगं गृहे वह्निर्मार्गे तु चोरपंचकम् ॥ १६६ ॥ विवाहे मृत्युसंज्ञं च सेवायां राजकं त्यजेत् ॥

अब दोनोंकी अपवादव्यवस्था लिखतेहैं—रात्रिमें चोर और रोगपंचक त्याज्यहैं. दिनमें राजपंचक, दोनों संध्याओंमें मृत्युपंचक और सर्वदा अग्निपंचक त्याज्यहैं ॥१६४॥ रविवारको रोगपंचक, शनैश्चरके दिन राजपंचक, बुधको मृत्युपंचक, मंगलको अग्निपंचक और चौरपंचक त्याज्य होताहै यदि लग्न हीनबल होय तो पंचक शुभ नहीं होताहै ॥ १६५ ॥ और जो लग्न बलकरके युक्त होय तो पंचकका दोष नहीं होताहै. व्रतमें रोगपंचक त्याज्यहै. घर बनानेमें अग्नि पंचक, मार्गयात्रामें चौरपंचक ॥ १६६ ॥ विवाहमें मृत्युपंचक, नौकरी करनेमें राजपंचक त्याज्यहै ॥

अथ दग्धास्तिथयः।

द्वितीया धन्विमीनेर्के चतुर्थी वृषकुंभयोः ॥ षष्ठी कर्काजयोः प्रोक्ताऽष्टमी मिथुनकन्ययोः ॥ १६७ ॥ सिंहाल्योर्दशमी ज्ञेया द्वादशी तुलनक्रयोः ॥ इत्येतास्तिथयो दग्धा विवाहादौ न शोभनाः ॥ १६८ ॥

अब दग्धातिथि लिखतेहैं—धनु और मीनके सूर्यमें द्वितीया दग्धातिथि है वृष और कुंभके सूर्यमें चतुर्थी दग्धातिथि है. कर्क और मेषके सूर्यमें षष्ठी दग्धा तिथि कहीहै, मिथुन और कन्याके सूर्यमें अष्टमी दग्धातिथि है ॥ १६७ ॥ सिंह और वृश्चिकके सूर्यमें दशमी दग्धातिथि है तुला और मकरके सूर्यमें द्वादशी दग्धातिथि कही है ये दग्धातिथि विवाहादि कार्यमें शुभ नहीं होतीहैं ॥ १६८ ॥

अथोपग्रहदोषः ।

अष्टमं ८ पंचमं ५ चाष्टादशं १८ वाथ चतुर्दशम् १४ ॥
द्वाविंशं २२ कोनविंशे च १९ त्रयोविंशं २३ तथैव च
॥१६९॥ चतुर्विंशं २४ तथैतानि नक्षत्राण्यष्ट सूर्यभात् ॥
उक्तान्युपग्रहाख्यानि त्याज्यान्युद्वहनादिषु ॥ १७० ॥
दिक् १० सप्त ७ तिथि १५ तत्त्वाख्य २५ स्वर्गसं-
ख्यानि २१ भानि च ॥ एतान्यपि जगुश्चोपग्रहर्क्षाणीति
केचन ॥ १७१ ॥

अब उपग्रहदोष लिखतेहैं–सूर्यके नक्षत्रसे चंद्रमाका नक्षत्र आठवां, पांचवां, अठारहवां, चौदहवां, बाईसवां, उन्नीसवां, तेई-सवां, चौवीसवां होय तो यह आठ प्रकारके नक्षत्र उपग्रह कहातेहैं विवाहादि कार्योंमें त्याज्य हैं ॥ १६९ १७० ॥ कोई आचार्य ऐसा कहतेहैं कि,सूर्यके नक्षत्रसे चंद्रमाका नक्षत्र दशवां, सातवां, पंद्रहवां, पचीसवां इकीसवां होय तो भी उपग्रह दोष होताहै ॥ १७१ ॥

अथ लत्तोपग्रहपातदोषदुष्टस्य त्याज्यः पादः ।

यत्संख्ये चरणे खेटस्तत्संख्यं चरणं त्यजेत् ॥
लत्तोपग्रहपातेषु त्याज्या नेवांऽऽश्रयो परे ॥ १७२ ॥

अब लत्तोपग्रहपातदोषदुष्टोंका त्याज्य पाद लिखतेहैं–लत्ता, उप-ग्रह, पात इन दोषोंमें नक्षत्रके जिस चरणपर ग्रह स्थित होय वही चरण विवाहके नक्षत्रकाभी त्याज्य होताहै अन्य चरण त्या-ज्य नहीं हैं ॥ १७२ ॥

अथ जामित्रदोषः ।

चंद्राद्विलग्नतो वापि सप्तमो यदि खेचरः ॥ तदा जामित्रदोषः
स्यात्क्रूरोत्थस्त्वतिनिंदितः ॥ १७३ ॥ चतुर्दशे वा नक्षत्रे

जामित्रं कैश्चिदुच्यते ॥ नवांशे पंचपंचांशे ५५ सूक्ष्मं जामित्रगं परे ॥ १७४ ॥

अब जामित्र दोष लिखतेहैं–चंद्रमासे अथवा लग्नसे सातवें स्थानमें कोई ग्रह होय तो जामित्र दोष होताहै, यदि सातवें स्थानमें क्रूरग्रह होय तो अतिनिंदित होताहै ॥ १७३ ॥ और विवाहसे चौदहवें नक्षत्रपर कोई ग्रह होय तोभी जामित्रदोष होताहै ऐसा मत किन्हीं आचार्योंका है और पचपनवें नवांशेमें कोई ग्रह होय तो सूक्ष्म जामित्रदोष होताहै ऐसा अन्य आचार्योंका कथन है ॥ १७४ ॥

अथ लत्तोपग्रहजामित्रैकार्गलकर्त्तरी-दोषाणामपवादः ।

लत्तोपग्रहजामित्रपातैकार्गलकर्त्तरी ॥
एते दोषा विनश्यंति लग्नेंदुबलान्विते ॥ १७५ ॥

अब लत्तोपग्रहजामित्रैकार्गलकर्त्तरी दोषोंका अपवाद लिखतेहैं–लग्नमें बलवान् सूर्य तथा चंद्रमा होय तो लत्ता, उपग्रह, जामित्र, पात, एकार्गल, कर्त्तरी इतने दोष विनाशको प्राप्त होजातेहैं ॥१७५॥

अथ देशविशेषे दोषव्यवस्था ।

कुरुवाह्लिकयोर्देशे त्यजेदुपग्रहर्क्षकम् ॥ सौराष्ट्रे मालवे लत्तां पातं वंगकलिंगयोः ॥ एकार्गलं तु काश्मीरे विद्धं भं सर्वदेशके ॥ १७६ ॥

अब देशविशेषमें दोषव्यवस्था लिखतेहैं–कुरु और वाह्लिक देशमें उपग्रहका नक्षत्र त्याज्यहै. सौराष्ट्र और मालव देशमें लत्तादोष त्याज्यहै. वंग और कलिंग देशमें एकार्गलदोष त्याज्यहै और वेधका नक्षत्र सब देशोंमें त्याज्यहै ॥ १७६ ॥

अथैकविंशतिमहादोषाः ।

आदौ पंचाङ्गजो दोषः संक्रांतिश्चैव कर्तरी ॥ संग्रहः कुनवांशाख्यो गंडतिकार्गलाभिधौ ॥ १७७ ॥ दुःक्षणो वारजो

दोपः पापभं विपनाडिकाः ॥ विद्धर्क्षं क्रांतिसाम्यं च तथा वृष्टिरकालजा ॥ १७८ ॥ ग्रहणोत्पातनक्षत्रं पापषड्गंक-स्तथा ॥ जन्मलग्नेंदुराशिभ्यामष्टमं लग्नमेव च ॥ १७९ ॥ षडष्टांत्यगतश्चंद्रो भृगुः षष्टः कुजोष्टमः ॥ लग्नास्तोत्थ इति प्रोक्ता एकविंशतिसंख्यकाः ॥ १८० ॥ महादोषा विवाहादौ शुभे त्याज्याः शुभेप्सुभिः ॥ विवाहादन्यकार्ये तु जामित्रं नैव चिंतयेत् ॥ १८१ ॥

अब एकविंशति महादोष लिखतेहैं—प्रथम पंचाग दोष, फिर संक्रांति, कर्तरी दोष, संग्रह, कुनवांशक, गंडांत, एकार्गल ॥ १७७ ॥ दुष्टक्षण, वारदोष, पापग्रहकी लग्न, विषघटी, वेधका नक्षत्र, क्रांतिसाम्य, अकालवृष्टि ॥ १७८ ॥ ग्रहणका नक्षत्र, उत्पातका नक्षत्र, पापग्रहका षड्वर्ग, जन्मलग्नसे और चंद्रमाकी राशिसे आठवीं लग्न ॥ १७९ ॥ लग्नसे छठे, आठवें, बारहवें स्थानमें चंद्रमा; छठे स्थानमें शुक्र; आठवें स्थानमें मंगल; लग्नास्त ये इकीस दोष कहेहैं ॥१८०॥ विवाहादि शुभकार्योंमें ये इकीस महादोष शुभ चाहनेवाले पुरुषोंको त्यागदेने चाहिये. विवाहसे अन्य कार्योंमें जामित्रदोषका विचार न करे ॥ १८१ ॥

अथ पूर्वोक्तेभ्यो येऽवशिष्टास्ते लिख्यंते तत्रादौ कर्तरीदोषः ।

द्रविणव्ययोर्लग्नाच्चंद्राद्वा पापखेचरौ ॥
यदि स्यातां तदा ज्ञेया कर्त्तरी त्तां परित्यजेत् ॥ १८२ ॥

अब अवशिष्टदोषोंको लिखतेहैं—तहां कर्त्तरीदोष लिखतेहैं—यदि लग्न अथवा चंद्रमासे दूसरे, बारहवें पापग्रह होंय तो कर्त्तरीदोष होताहे विवाहादि कार्योंमें त्याज्य हे ॥ १८२ ॥

अथ कर्त्तरीदोपापवादः ।

लग्नं द्विरिःफगौ क्रूरौ त्रयमेतत्समांशकम् ॥ तदा कर्त्तरिजा दोषा अन्यथा भावजं फलम् ॥ १८३ ॥ धने मार्गी व्यये वक्री वक्रौ वा मार्गजावुभौ ॥ लग्ने सद्वादशे सौम्यो यदि चेत्कर्त्तरी न सा ॥ १८४ ॥ शुक्रजीवबुधैः केंद्रकोणगैः सा न दुःखदा ॥ कर्त्तरीकारकौ पापौ शत्रुनीचर्क्षगौ यदि ॥ अथवाऽस्तमितौ तत्र न दोषः कर्त्तरीभवः ॥ १८५ ॥

अव कर्त्तरी दोपापवाद लिखतेहैं—और [illegible] दूसरे, वारहवें स्थानमें दो क्रूरग्रह और लग्न ये तीनों समन[illegible]वांशकमें होंय तो कर्त्तरीकृत दोप होतेहैं और जो उक्तप्रकारसे [illegible] क्रूरग्रह और लग्न समनवांशामें नहीं होंय तो उस भावका लफ हो[illegible]ताहै कि, जिसमें क्रूरग्रह वैठेहैं ॥ १८३ ॥ दूसरे स्थानमें मार्गीग्रह औ[illegible] वारहवें स्थानमें वक्रीग्रह होय अथवा दोनोंही मार्गी होंय व[illegible] और लग्नमें अथवा वारहवें स्थानमें शुभग्रह होय तो क[illegible]दोप नहीं होताहै ॥ १८४ ॥ यदि शुक्र, वृहस्पति, वुध केंद्र वा त्रिकोण ९।५ में स्थित होंय तो कर्त्तरीदोप दुःखप्रद नहीं होताहै और यदि कर्त्तरीकारक पापग्रह शत्रुक्षेत्री वा नीचराशिके अथवा अस्तके होंय तो कर्त्तरीकृत दोप नहीं होताहै ॥ १८५ ॥

जिना २४ स्त्रिंश ३० दश्विभाद्धटिकाः स्मृताः ॥ आभ्यश्च-तुष्टयं त्याज्यं घटिकानां विषाभिधम् ॥ १८८ ॥ सर्वर्क्ष-घटिकाभिश्च प्रोक्तर्क्षघटिका हताः ॥ षष्ट्या भक्ताः स्फुटा नाड्यस्तथा स्युर्विषनाडिकाः ॥ १८९ ॥

अब नक्षत्रविषघटिका लिखतेहैं—क्रमसे अश्विन्यादि नक्षत्रोंकी विषघटी नीचे लिखेहुए चक्रसे जानलेनी चाहिये इन घटियोंसे अगेकी चार विषघटीहैं वे त्याज्य हैं ॥ १८५ ॥ १८६ ॥ १८७ ॥ १८८ ॥ सर्वर्क्षकी घटियोंसे नक्षत्रकी उक्त घटियोंको गुणा करै और साठि ६०का भाग देनेपर जो लब्ध मिले वह स्पष्ट विषघटी होतीहै ॥१८९॥

अथ नक्षत्रविषघटीचक्रम्।

अ	म	कृ	रो	मृ	आ	पु	पु	आ	म	पू	उ	ह	चि	स्वा	वि	अनु	ज्ये	मू	पू	उ	श्र	ध	श	पू	उ	रे
५०	२४	३०	४०	१४	२१	३०	२०	३२	३०	२०	१८	२१	२०	१४	११	१०	१४	५६	२४	२१	१०	१०	१८	१६	२४	३०

अथ तिथिविषघटिकाः।

तिथि १५ वाणा ५ ष्ट ८ सप्तां ७ ग ६ पंच ५ वेदा ४ ष्ट-८ भूधराः ७ ॥ दि १० ग्वह्निय ३ र्क १२ मनु १४ क्ष्माभृ ७ द्वसवो ८ घटिकाः क्रमात् ॥ १९० ॥ आभ्यो घटीच-तुष्कं च विषं प्रतिपदादितः ॥ १९१ ॥

अब तिथिविषघटिका लिखतेहैं—प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमातककी विषघटी क्रमसे चक्रमें जानलेनी चाहिये इन घटियोंसे आगेकी चार घटी विषसंज्ञक होतीहैं ॥ १९० ॥ ११ ॥

अथ तिथिविषघटीचक्रम्।

प्रतिप.	द्वितीया	तृतीया	चतुर्थी	पंचमी	षष्ठी	सप्तमी	अष्टमी	नवमी	दशमी	एकादशी	द्वादशी	त्रयोदशी	चतुर्दशी	पूर्णिमा अमा.
१५	५	८	५	६	५	४	८	७	१०	३	१३	१४	७	८

अथ वारविषघटिकाः ।

नख २० युग्मा २ र्क १२ दिक् १० सप्त ७ बाण ५ तत्त्व २५ मिताः क्रमात् ॥ आभ्यो नाडीचतुष्कं च विषं तद्रविवासरात् ॥ १९२ ॥

अब वारविषघटिका लिखतेहैं— रविवारसे लेकर शनैश्चर वारतकको विषघटी क्रमसे चक्रमें समझलेनी चाहिये. इनसे आगेकी चारघटी विषसंज्ञक हैं ॥ १९२ ॥

अथ वारविषघटीचक्रम् ।

रवि	चंद्र	मंगल	बुध	बृहस्प	शुक्र	शनैश्चर	वाराः
२०	२	१२	१०	७	५	२५	४ घटिका

अथ विषनाडीदोषापवादः ।

कोणा ५ । ९ स्ता ७ ङ्घि ४ नभः १० संस्थः सुहृत्सौम्येक्षितोपि वा ॥ सद्राशौ वा विधुः स्वांशे लग्ने वा केंद्रकोण १ । ४ । ७ । १० । ५ । ९ गः ॥ १९३ ॥ निहन्यादखिलं दोषं विषनाडीसमुद्भवम् ॥ १९४ ॥

अब विषनाडीदोषापवाद लिखतेहैं—यदि चंद्रमा नौवें, पांचवें, सातवें, चौथे, दशवें स्थानमें स्थित होय, उसको मित्र वा शुभग्रह देखतेहोंय अथवा चंद्रमा शुभग्रहकी राशिमें स्थित होकर अपने नवांश अथवा लग्न अथवा केंद्र १ । ४ । ७ । १० । अथवा कोण ९ । ५ में स्थित होय तो ॥ १९३ ॥ विषघटीसे उत्पन्नहुए सब दोषोंका नाश करताहै ॥ १९४ ॥

अथ ग्रहदृष्टिः ।

तृतीयदशमे ३ । १० पादं १५ त्रिकोणे ५ । ९ त्रिद्वयं ३० ग्रहः ॥ पश्येतुर्येऽष्टमे ४ । ८ पादत्रयं ४५ पूर्णं

६० तु सप्तमे ॥ १९५ ॥ पूर्णं तु त्रिदशं मंदो पंचमं नवमं गुरुः ॥ भौमोऽष्टमं चतुर्थं च सप्तमं सकला ग्रहाः ॥ १९६ ॥

अब ग्रहदृष्टि लिखतेहैं—ग्रह अपने स्थानसे तीसरे, दशवें स्थानको एकचरणकी दृष्टिसे देखताहै और नौवें पांचवेंको दो चरणकी दृष्टिसे देखताहै. चौथे आठवें स्थानको तीन चरणकी दृष्टिसे देखताहै और सातवें स्थानको पूर्णदृष्टिसे देखताहैं ॥ १९५ ॥ तथा तीसरे दशवें स्थानको शनैश्चर पूर्ण दृष्टिसे देखताहै आर पांचवें नौवें स्थानको बृहस्पति पूर्ण दृष्टिसे देखताहै. आठवें चौथेको मंगल पूर्णदृष्टिसे देखताहै. तथा सातवें स्थानको सब ग्रह पूर्णदृष्टिसे देखतेहैं ॥ १९६ ॥

अथ लग्नसप्तमशुद्धिः।

लग्ने लग्नलवे वापि लग्नांशेशयुतेक्षिते ॥ लवेशशुभमित्रैश्च दृष्टे वा स्वामिनः शुभम् ॥ १९७ ॥ द्यूनांशे द्यूनलग्ने वा द्यूनांशेशयुतेक्षिते ॥ द्यूनांशपतिसन्मित्रदृष्टे वध्वाः शुभं स्मृतम् ॥ १९८ ॥ लग्नेशो लग्नमंशेशः स्वांशं पश्यति वा मिथः ॥ तद्वरस्य शुभं ज्ञेयमन्यथा नैव शोभनम् ॥ १९९ ॥ द्यूनेशोस्तं तथाऽस्तांशपतिर्द्यूनांशमीक्षते ॥ तन्मिथो वा तदा वध्वाः शुभं त्वितरथा न हि ॥ २०० ॥

अब लग्नसप्तमशुद्धि लिखतेहैं—लग्न अथवा लग्नका नवांशा लग्नेश और लग्ननवांशेश इन दोनोंसे युक्त वा दृष्ट होय अथवा लग्न नवांशपतिके मित्र शुभग्रहसे दृष्ट होय तो वरको शुभ होताहै ॥ ॥ १९७ ॥ सप्तम ग्रहका नवांशा अथवा सप्तमलग्न, सप्तमेश तथा सप्तमनवांशेश इन दोनोंसे युक्त वा दृष्ट होय अथवा सप्तम नवांशपति मित्र शुभग्रहसे दृष्ट होय तो वधूको शुभ होताहै ॥१९८॥

लग्नेश लग्नको और लग्ननवांशपति अपने नवांशको देखता होय अथवा परस्पर लग्नको लग्ननवांशपति और लग्न नवांशको लग्नपति देखता होय तो वरके लिये शुभ जानना. अन्यथा अशुभ होताहै ॥ १९९ ॥ सप्तमेश सप्तमस्थानको और सप्तमनवांशेश सप्तमनवांशको देखता होय अथवा परस्पर सप्तमेश सप्तमनवांशको और सप्तम नवांशपति सप्तम स्थानको देखता होय तो वधूके लिये शुभ. अन्यथा अशुभ होताहै ॥ २०० ॥

अथ पंग्वंधादित्याज्यलग्नानि ।

दिवा पंगुर्घटो ज्ञेयो बधिरौ तुलवृश्चिकौ ॥ अंधो मेषो वृषः सिंहः संध्यां कुब्जा मृगात्रयः ॥२०१॥ रात्रौ पंगुर्झषश्चांधाः कन्यामिथुनकर्कटाः ॥ बधिरौ तु धनुर्मीनौ तत्काले तान्परित्यजेत् ॥ २०२ ॥

अब पंग्वंधादि त्याज्य लग्न लिखतेहैं-दिनमें कुंभलग्न पंगु रहतीहै. तुला और वृश्चिक लग्न बधिर रहतीहैं. मेष, वृष, सिंह लग्न अंधी रहतीहैं. दिन और रात्रीकी संधिमें मकरसे तीन अर्थात् मकर, कुंभ, मीन,लग्न कुबडी रहतीहैं ॥ २०१ ॥ और रात्रिमें मीनलग्न पंगु रहतीहै. कन्या. मिथुन, कर्क लग्न अंधी रहतीहैं. धनु, मीन बधिर रहतीहैं इनको उसी समयमें त्यागदेय जिस समय कि, ये विकृत रहतीहैं ॥ २०२ ॥

अथ होलिकाष्टकम् ।

ऐरावत्यां विपाशायां शतद्रौ पुष्करत्रये ॥
होलिकाप्राग्दिनान्यष्टौ विवाहादौ शुभे त्यजेत् ॥ २०३ ॥

अब होलिकाष्टक लिखतेहैं-ऐरावती, विपाशा, शतलज नदी और तीनों पुष्करोंके किनारेके देशोंमें होलीसे प्रथमके आठ दिन विवाहादि शुभकार्योंमें त्याज्यहैं ॥ २०३ ॥

अथ केषांचिद्दोषाणामपवादः ।

राशयो मासशून्याश्च लग्नं काणांधपंगुवत् ॥ तत्त्याज्यं मालवे गौडे नान्यत्राऽशुभदं स्मृतम् ॥ २०४ ॥ हन्याद्दिनद्विजं दोषं तिथिसिद्धान्तमोद्भवम् ॥ गुरुः केंद्रगतः शून्यतिथिजं लाभगः शुभः ॥ २०५ ॥

अब कितने दोषोंका अपवाद लिखतेहैं—मासशून्य राशियें और पंगुली, कानी, अंधी लग्नें मालव और गौड देशमें त्याज्यहैं और अन्य देशोंमें अशुभ नहीं हैं ॥२०४॥ तिथिवृद्धि, तिथिका (अवम) हानि और शून्यतिथि इन तीनोंके दोषोंको केंद्रगत बृहस्पति और ग्यारहवें स्थानमें स्थित शुभग्रह नाश करदेताहै ॥ २०५ ॥

॥ अथ गंडान्तदोषापवादः ॥

बलींदुर्हंति दोषं च तिथिगंडांतसंभवम् ॥ लग्नगंडांतजं दोषं बलिष्ठः शक्रपूजितः ॥२०६॥ त्रिविधं चातिगंडांतमभिजिच्छुभदः क्षणः ॥ २०७ ॥

अब गंडान्तदोषापवाद लिखते हैं—तिथिगंडांतकृत दोषको बली चंद्रमा और लग्नगंडान्तकृत दोषको बलिष्ठ बृहस्पति नाश करदेतेहैं ॥२०६॥ तथा तीनों प्रकारोंके गंडान्तको अभिजित् नामक शुभ मुहूर्त्त नाश करदेताहै ॥ २०७ ॥

अथ कुलिकयमघंटयोरपवादः ।

सहजे वासराधीशो बलोपेतो भवेद्यदि ॥ लग्नगो वा तदा दोषं निहंति कुलिकोद्भवम् ॥ २०८ ॥ केंद्रकोणे शुभः खेटो लग्नाद्वा राशितोथवा ॥ यमघंटोद्भवं दोषं निहंति गरलोपमम् ॥ २०९ ॥

अब कुलिक और यमघंट योगोंका अपवाद लिखतेहैं—यदि वारका स्वामी वली होकर तीसरे अथवा लग्न स्थानमें स्थित होय तो कुलिक योगका कियाहुवा दोष नाश होजाताहै ॥ २०८ ॥ लग्नसे अथवा राशिसे त्रिकोण ९।५ अथवा केंद्र १।४।७।१० में शुभग्रह होय तो विषसमान तीक्ष्ण यमघंटोद्भव दोषका नाश कर देताहै ॥२०९॥

अथाऽष्टमलग्नदोषापवादः ।

वृषभो वृश्चिको मीनः कन्यामकरकर्कटाः ॥
लग्नेष्वेतेषु नो दोषो जन्मतो ह्यष्टमेष्वपि ॥ २१० ॥

अब अष्टम लग्नदोषका अपवाद लिखतेहैं—यदि जन्मलग्नसे वृष, वृश्चिक, मीन, कन्या, मकर, कर्क ये राशि अष्टम स्थानमें स्थित होंय और फिर विवाहादि कार्योंमें यहही राशियें लग्नकी होंय तो अष्टम लग्नकृत दोष नहीं होताहै इनसे अन्यराशि होंय तो दोष होताहै ॥ २१० ॥

अथाब्दायनांधकाणादिलग्नदोषापवादः ।

अब्दायनर्तुमासर्क्षपक्षदग्धाहसंभवाः ॥ अंधकाणादिलग्नोत्थाः सपापेंदुनवांशकाः ॥ दोषा नश्यंति जीवज्ञशुक्रैः केंद्रत्रिकोणगैः ॥ २११ ॥

अब अब्दायनांधकाणादि लग्नदोषापवाद लिखतेहैं—वर्षदोष, अयनदोष, ऋतु दोष, मासदोष, पक्षदोष, नक्षत्रदोष, दग्धदिनदोष, अंधकाणादिलग्नोत्थ दोष, पापग्रहसहित चंद्रमाका और कुनवांशका दोष यह सव दोष वृहस्पति, वुध, शुक्रके केंद्र और त्रिकोणमें होनेसे नाश होजातेहैं ॥ २११ ॥

अथ कुनवांशादिदोषापवादः ।

कुनवांशग्रहोद्भूताः षड्वर्गक्षणलग्नजाः ॥
शशिन्येकादशे सर्वे दोषा नश्यंति वै ध्रुवम् ॥ २१२ ॥

अब कुनवांशादि दोषापवाद लिखतेहैं—कुनवांश, ग्रहण, षड्वर्ग, मुहूर्त, लग्न इनसे उत्पन्न हुए सब दोष ग्यारहवें स्थानमें चंद्रमा होनेसे नाशको प्राप्त होजातेहैं ॥ २१२ ॥

अथ सर्वदोषापवादः।

लग्ने वर्गोत्तमे वेंदौ द्युनाथे लाभगेथवा ॥ केन्द्रकोणे गुरौ दोषा नश्यंति सकला अपि ॥ २१३ ॥ केंद्रकोणेपि जामित्रे दोषाणां च शतं बुधः ॥ शुक्रः शतद्वयं हन्याल्लक्षं तु वचसां पतिः ॥ २१४ ॥ लग्नेशो वा लवाधीशो लाभे केन्द्रे च संस्थितः॥दोषराशिं दहत्याशु तूलराशिमिवानलः॥२१५॥

अब सर्व दोषापवादलिखतेहैं—चंद्रमा लग्नमें वर्गोत्तम नवांशका होय अथवा सूर्य ग्यारहवें स्थानमें होय अथवा बृहस्पति केंद्र वा कोणमें होय तो संपूर्ण दोष नाश होजातेहैं ॥ २१३ ॥ सातवें स्थानको छोडकर केंद्र वा त्रिकाणमें बुध होय तो सौ दोषोंका नाश करताहै और शुक्र होयतो दो सौ दोषोंका नाश करताहै और बृहस्पति होय तो लक्ष दोषोंका नाश करताहै ॥ २१४ ॥ लग्नेश अथवा लग्ननवांशेश ग्यारहवें वा केंद्रस्थानमें होय तो दोष समूहका इस प्रकार नाश करदेतेहैं जैसे कि, रूईके ढेरको अग्नि भस्म करदेतीहै ॥ २१५ ॥

अथ विवाहशुभनवांशाः।

कन्यायुग्मधनुस्तौलिनवांशाः शुभदाः स्मृताः ॥ विवाहेऽन्ये तु मीनस्य नवांशं शुभदं जगुः ॥ २१६ ॥ लवं वर्गोत्तमं हित्वा विवाहो नांतिमेंशके ॥ चरांशेऽपि चरे लग्ने तुलनक्रस्थिते विधौ ॥ २१७ ॥

अब विवाहमें शुभ नवांश लिखतेहैं—कन्या, मिथुन, धन, तुलाका नवांशा विवाहमें शुभदायक कहाहै और अन्य आचार्योंने मीनके

नवांशाको भी शुभ कहेहैं ॥ २१६ ॥ वर्गोत्तम नवांशाको छोडकर अन्य अन्तके नवांशामें विवाह शुभ नहीं होताहै और तुला वा मकरका चंद्रमा होय तो चर नवांशा तथा चर लग्नमेंभी विवाह शुभ नहीं होताहै ॥ २१७ ॥

अथ विवाहलग्ने भंगदा ग्रहाः ।

लग्ने शनैश्चरः सूर्यो लग्नारिनिधने शशी ॥ लग्नेऽष्टमे महीसूनुरष्टमे बुधवाक्पती ॥ २१८ ॥ राहुः सूर्यो विलग्ने च निधनारिगतो भृगुः ॥ द्यूने तु खेचराः सर्वे विवाहे भंगदाः स्मृताः ॥ २१९ ॥ कुजः खे द्वादशे मंदो लग्नेशो निधनारिगः ॥ तृतीये भार्गवश्चंद्रो व्यये ते नैव शोभनाः ॥ २२० ॥

अव विवाहलग्नमें भंगदग्रह लिखतेहैं—लग्नमें शनैश्चर और सूर्य; लग्नमें, छठे, आठवें स्थानमें चंद्रमा और लग्नमें, आठवें मंगल और आठवें बुध तथा बृहस्पति; लग्नमें, राहु और सूर्य; आठवें और छठे शुक्र; सातवें सब ग्रह विवाहमें भंगदायक कहेहैं॥२१८॥२१९॥ मंगल दशवें स्थानमें,शनैश्चर बारहवें,लग्नेश आठवें,छठे;शुक्र तीसरे, चंद्रमा बारहवें स्थानमें होय तो विवाहमें शुभ नहीं होतेहैं ॥२२०॥

अथ भंगदग्रहापवादः ।

शत्रुनीचर्क्षगः शुक्रो न दूष्यो ह्यरि ६ संस्थितः ॥ नाशुभश्चाष्टमो भौमः शत्रुनीचास्तगो यदि ॥ २२१ ॥ नीचनीचांशगश्चंद्रो नाशुभोऽष्टारिरिष्फगः ॥ लग्ने बली गुरुः शुक्रश्चंद्रो वा शुभवर्गगः ॥ शुभदृष्टो निहंत्येव दोषं रिष्फारिचंद्रजलम् ॥ २२२ ॥

अव भंगदग्रहापवादलिखतेहैं—शत्रु वा नीचकी राशिका शुक्र होय तो छठे स्थानमें स्थित होनेका दोष नहीं होताहै यदि शत्रु और नीच राशिका अथवा अस्तका मंगल होय तो आठवें स्थित

होनेका दोष नहीं होताहै ॥ २२१ ॥ यदि चंद्रमा नीच राशि अथवा नीच नवांशामें होय तो आठवें, छठे, वारहवें स्थानमें स्थित होनेका दोष नहीं होताहै. लग्नमें वली बृहस्पति, शुक्र अथवा शुभ वर्गमें चंद्रमा शुभ ग्रहसे दृष्ट होय तो वारहवें और छठे चंद्रमाका दोष नहीं होताहै ॥ २२२ ॥

अथ विवाहलग्ने रेखाप्रदा ग्रहाः।

निधनारित्रिलाभस्था अर्कार्किशिखिराहवः ॥ लाभत्रिशत्रुगो भौमो द्वित्रिलाभगतः शशी ॥ २२३ ॥ खास्ताष्टांत्यं विना सौम्यो द्यूनाष्टान्त्यं विना गुरुः ॥ अस्ताष्टारिव्ययं हित्वा शुक्रो रेखाप्रदः शुभः ॥ २२४ ॥

अव विवाहलग्नमें रेखाप्रद ग्रहोंको लिखतेहैं—आठवें,छठे, तीसरे ग्यारहवें स्थानमें सूर्य, शनैश्चर, केतु, राहु होंय और ग्यारहवें, तीसरे, छठे मंगल होय तथा दूसरे, तीसरे, ग्यारहवें, चंद्रमा होय और दशवें, सातवें, आठवें, वारहवें इन स्थानोंके विना अन्य स्थानमें वुध होय और सातवें, आठवें, वारहवें स्थानके विना अन्य स्थानमें बृहस्पति होय और सातवें, आठवें, छठे, वारहवें स्थानको छोडकर अन्य स्थानोंमें शुक्र होय तो शुभरेखा देनेवाला होताहै ॥ २२३ ॥ २२४ ॥

अथ मध्यमफलदा ग्रहाः।

सदसत्स्थानतोऽन्यत्र स्थिता मध्यफला ग्रहाः ॥

अव मध्यमफलद ग्रहोंको लिखतेहैं—सत् और असत् स्थानसे अन्य स्थानोंमें ग्रह होय तो मध्यम फल देतेहैं ॥

अथ रेखाप्रदग्रहाणां विंशोपकाः।

सार्धत्रयं रविः सार्द्धं भौमार्किशिखिराहवः ॥ २२५ ॥ द्वौ शुक्रो ज्ञश्च पंचेंदुरंशांस्त्रीन्विन्दते गुरुः ॥ लग्नं शुभं विवाहे स्याद्दशविंशोपकाधिकम् ॥ २२६ ॥

अब रेखाप्रद ग्रहोंका विंशोपक लिखतेहैं-यदि सूर्य रेखाप्रद होय तो साढेतीन विश्वा बल देतेहैं और मंगल, शनैश्चर, केतु, राहु ये चारोंग्रह रेखाप्रद हौंय तो डेढडेढ विश्वा बल देतेहैं और शुक्र तथा बुध रेखाप्रद हौंय तो दो विश्वा बल देतेहैं और चंद्रमा रेखाप्रद होय तो पांच विश्वा बल देताहै. बृहस्पति रेखाप्रद होय तो तीन विश्वा बल देताहै॥ और दश विश्वे से अधिक बल विवाहमें लग्न शुभ होनेसे देतीहै ॥ २२५ ॥ २२६ ॥

अथेष्टकालज्ञानम् ।

परं दिनं द्युमानोनं नवघ्नं ९ तिथि १५ भाजितम् ॥ विलब्धं चांगुलाद्यं यत्सा भवेद्दिनमध्यभा ॥ २२७ ॥ पादभा मध्यभाहीना सप्तयुक् द्विगुणा ततः ॥ भजेत्सप्तहतं यत्तन्मानं लब्धास्तु नाडिकाः ॥२२८॥ प्रत्यगर्के तु शेषास्ताः प्रागर्के तु गताः स्मृताः ॥ रात्रीष्टकालविज्ञानं चतुः पूर्वमुदाहृतम् ॥ २२९ ॥

अब इष्टकालज्ञान लिखतेहैं-(परमदिनमान) अर्थात् सबसे बडा दिनमान जो होय उसमेंसे अपने इष्टका दिनमान घटाय दे शेष अंकको नौसे गुणा करके पंद्रहका भाग देनेपर जो लब्ध मिले सो अंगुलादिक दिनकी मध्यम छाया कहातीहै ॥ २२७ ॥ फिर खडा होकर आप अपनी छायाको पैरसे नापे जितने चरण छायाके हों उसमेंसे दिनकी मध्यच्छाया घटाय दे शेषांकमें सात जोडकर दूना करे जो गुणन फल होय उसको अलग लिखे तदनन्तर अपने दिनमानको सातगुणा करे गुणनफलमें पूर्वोक्त अलग लिखेहुए अंकोंका भाग देनेसे जो लब्ध मिले सो घटी और शेषको६० साठिगुणा कर उसी अंकका भाग देनेसे जो लब्ध मिले सो पल जाने ॥ २२८ ॥ दुपहरसे पीछे नापे तो दिन शेष रहा और

दुपहरसे पहिले नापे तो इतनी घडी इतने पल दिन चढगया ऐसा इष्ट जानना और रात्रिमें इष्टकाल जानना होय तो चार प्रकारसे पहिलेही कहचुकेहैं ॥ २२९ ॥

अब उदाहरण लिखतेहैं—जैसे परम दिनमान ३४ । १६ है और अपना इष्ट दिनमान २६ । ६ है परम दिनमानमेंसे इष्ट दिनमान घटाया तो शेष ८ । १० रहे इनको ९ नौसे गुणा किया तो ७३ । ३० हुए इनमें पंद्रह १५ का भाग दिया तो ४ । ५४ मिले यहही अंगुलादि मानसे दिनकी मध्यच्छाया हुई. पैरोंसे नापीहुई छाया १० दशमेंसे दिनमध्यच्छायाको घटाया तो शेष ५ । ६ रहे इसमें सात ७ जोडकर दूना किया तो २४ । १२ हुए यह अलग स्थितहैं अब अपने दिनमान २६ । ६ को सातगुणा किया तो १८२।४२ हुए इन में पूर्वोक्त अलग लिखे हुए २४ । १२ का भाग दिया तो ७ लब्ध मिले शेषको ६० साठि गुणा करके पूर्वोक्त अंकोंकाही भाग दिया तो ३३ लब्धमिले अर्थात् दुपहरसे पहिले नापा हो तो ७ घडी ३३ पल दिन चढा और दुपहरसे पीछे नापा हो तो पूर्वोक्त दिन वाकी रहा इति ॥

अथेष्टकालाल्लग्नानयनम् ।

सायनार्कैष्यभागघ्ना निजोदयविनाडिकाः ॥ खत्रि ३० भक्ता भवेद्भोग्यकालो लब्धः पलात्मकः ॥२३०॥ शोध्यो- ऽभीष्टघटीभ्यश्च तदग्रभनिजोदयाः ॥ शोध्याः शेषं खराम- ३० घ्नमशुद्धमितिभाजितम् ॥ २३१ ॥ लब्धमंशादिकं योज्यं मेषाद्यैः शुद्धराशिभिः ॥ अयनांशविहीनं यद्विलग्नं तत्स्फुटं भवेत् ॥२३२॥ भोग्यकालो न शुद्धयेचेदिष्टकालः पलात्मकः ॥ खराम ३० घ्नो हृतः स्वीयोदयेनाप्तं लवादि

कम् ॥२३३॥ योज्यं सूर्ये स्फुटं लग्नमयनांशविवर्जितम् ॥
रात्रीष्टकालतो वापि सपड्भाऽर्काच्च पूर्ववत् ॥ २३४ ॥

अव इष्ट कालसे लग्नानयन लिखतेहैं—अयनांशायुक्त स्पष्ट सूर्य सायनार्क कहाताहै, सायनार्कके अंश, कला, विकला को तीसमें घटा देनेसे शेष भोग्यांशादि होतेहैं उन अंशादिकोंको सायनसूर्यकी राशिके पलोंसे अलग २ गणा करै पीछे विकलाके गुणनफलमें साठिका भाग देकर कलास्थानके गुणित अङ्कमें जोड दे और कलास्थानमें साठिसे भाग लेकर अंशस्थानमें जोडदे और अंशगुणित स्थानमें तीसका भागदे जो लब्ध मिले सो पलात्मक भोग्यकाल होताहै ॥२३०॥उस भोग्यकालके पलोंको इष्टघटीके पलोंमेंसे घटादे जो अंक शेष बचै उनमेंसे आगेकी लग्नोंके पल घटाताजाय फिर जिस लग्नके पल न घटसकें उसीको अशुद्ध जानै और लग्नोंके पल घटानेपर जो शेषांक रहै उसको तीस गुणा करके अशुद्ध लग्नके पलोंका भाग देनेसे अंशादिक लब्ध मिलेंगे उनमें मेषादिसे शुद्धसंख्या जितनी होय उसको राशि स्थानमें लिखदेवे उस लिखेहुए राशि, अंश, कला, विकलामेंसे अयनांश घटाय देनेपर शेष स्पष्टलग्न होजातीहै. यदि इष्टकालके पलोंमेंसे भोग्यकालके पल न घटसकें तो इष्टपलोंको तीसगुणा करै उसमें सायनार्ककी राशिके पलोंका भाग देनेसे तीनस्थानमें लब्ध अर्थात् अंश, कला, विकला निकाले फिर इन अंशादिकोंको सायनार्कमें जोड़कर अयनांश घटाय देनेसे शेष स्पष्टलग्न होजातीहै और जो रात्रिमें इष्टकाल होय तो सायनार्ककी राशिमें छह जोड़कर पूर्वोक्त रीतिसे लग्नस्पष्ट करलेवे परन्तु इष्ट रात्रिकाही लेना चाहिये अर्थात् सूर्योदयसे जो इष्टकाल होय उसमें दिनमान घटाय देनेसे रात्रिका इष्ट वनजाताहै ॥ २३१ ॥ २३२ ॥ ॥ २३३ ॥ २३४ ॥

अब लग्नस्पष्ट करनेका उदाहरण लिखतेहैं—जैसे स्पष्टसूर्य ७। २०। १७। २७ है और अयनांशा ०।२१।७।१२ है. दोनोंको जोडा तो ८। ११। २४। ३९ हुए यहही सायनार्क कहाताहै नीचे लिखी हुई क्रियामें देखो तीसमें घटानेसे शेष १८ अंश, ३५ कला, २१ विकला रहीं. इन तीनोंजगह धनुराशिके स्वोदयपल ३४४ लिखकर गुणा करदिया तो (६१९२) (१२०४०) (७२२४) हुए यहांपर विकलाके गुणनफल ७२२४ में साठिका भाग दिया तो लब्धि मिले (१२०) इसको कलास्थानके गुणितफल १२०४० में जोड़ा तो१२१६०इतना भया इसमेंभी साठिका भाग दिया तो लब्धि मिले (२०२) इसको अंशस्थानके गुणित अंक ६१९२ में जोड़ा तो (६३९४)हुए; इसमें तीसका भाग देनेसे लब्ध २१३ मिले यहही पलात्मक भोग्यकाल हुआ और इष्टपल ४०४ हैं इन इष्टपलोंमेंसे भोग्यपलोंको घटाया तो शेष १९१ रहे इसमेंसे मकरके स्वोदयपल ३०२ घट नहीं सक्ते इससे मकरलग्नही अशुद्ध हुई; इस कारण पूर्वोक्त शेष १९१को तीसगुणा करके अशुद्ध लग्न मकरके ३०२ पलोंका भाग दिया तो १८लब्ध मिले, शेष २९४ को ६० साठिगुणा करके पूर्वोक्त पलोंका भाग दिया तो लब्ध ५८ मिलै शेष १२४ को ६० साठिगुणा करके ३०२का भाग दिया तो लब्ध २१मिले अर्थात् १८। ५८।२१ हुए. यहाँ राशिस्थानमें मेषादिसे शुद्धराशिकी संख्या ९ जोडा तो ९। १८। ५८। २१ हुए इनमेंसे अयनांशा घटाया तो—८। २७। ५१। ९ शेष रहे यहही लग्नस्पष्टहुई अर्थात् धनुलग्नके सत्ताईस अंश, इक्यावन कला, नौ विकला इष्ट समयपर व्यतीत हुई॥

स्प० सू०	७	२०	१७	२७
अ० शा०	००	२१	०७	१२
यह सायनार्क है इसको तीसमेंघटा	८	११	२४	३९
या तो शेष रहे		१८	३५	२१
		३४४	३४४	३४४
		६१९२	१२०४०	७२२४
	३० क'	भागदिया.	६० भागदिया.	६०भागदिया
लब्ध २१३ यह पला		शेष	शेष	शेष
त्मक भोग्य काल है		४	४०	२४

इष्टपल ४०४
भोग्यपल २१३

१९१ शेष

मकरलग्नके पल ३०२ नहीं घटे
इसकारण अशुद्ध मकर लग्न हुई.

```
        १९१
         ३०
३०२ ) ५७३० ( १८
      ३०२
      २७१०
      २४१६
       २९४
        ६०
     १७६४०
```

```
३०२ ) १७६४० ( ५८
      १५१०
      ----
      २५४०
      २४१६
      ----
       १२४
        ६०
३०२ ) ७४४० ( २१
       ६०४
      ----
       ४००
       ३०२
      ----
        ९८
```

अयनांशा	९	१८	५८	२१
घटाया	००	२१	०७	१२
	०८	२७	५१	९

अथ स्पष्टलग्नादिष्टकालानयनम् ।

भानोर्भोग्यस्तु यः कालो भुक्तकालस्तथा तनोः ॥ तदैक्यमेतयोर्मध्योदयाढ्यं समयः स्फुटम् ॥ २३५ ॥ यद्येकर्क्षे तु लग्नार्कौ तयोर्भागांतरैर्हतः ॥ स्वीयोदयः खरामा ३० प्तोऽभीष्टकालः स्फुटस्तदा ॥ २३६ ॥

अब स्पष्टलग्नसे इष्टकालज्ञान लिखतेहैं—सूर्यका पूर्वोक्त भोग्य काल और लग्नका भुक्तकाल अर्थात् लग्लस्पष्टमें जो अंश, कला, विकला होंय वहही भुक्तकाल कहाताहै फिर पूर्वोक्त रीतिसे लग्नके उदयपलों करके लग्नके भुक्तांशादिको गुणा करके तीसरी जगह तीसका भाग देनेसे जो लब्ध मिलै सो लग्नका पलात्मक भुक्त काल

मिलैगा उन भुक्तकाल और भोग्यकालके पलोंको जोड देवे फिर उसमें बीचकी लग्नोंके पलभी जोडदेवे तीनों अंक जोडनेसे जो अंक होय सो इष्टकालके पल होतेहैं उनमें साठिका भाग देकर इष्टकी घडी पल निकल आतीहैं ॥ २३५ ॥ यदि लग्न और सूर्य एक अंशोंकी राशिके होंय तो दोनोंके अंतर करै जो शेष रहै तिससे उदय लग्नके पलाको गुणाकरै गुणनफलमें तीसका भाग देय तो इष्टकालके पल होतेहैं उसमें साठिका भाग देनेसे जो लब्ध मिले वह घड़ी, वाकी बचै सो पल होतेहैं यहही इष्ट कहाताहै ॥ २३६ ॥

अथ विवाहे प्रशस्तयोगः ।

शुभैर्लग्नगतैः खेटैरशुभैर्निधनोपगैः ॥ ध्वजोयं परिणीतात्र युवती प्रियवल्लभा ॥२३७॥ कुजेर्के लाभ ११ गे षष्ठे शनौ चंद्रे द्वितीयगे २ ॥ धर्मस्थैः ९ खेचरैरन्यैः श्रीवत्सो योग उत्तमः ॥ २३८ ॥ यदि स्यात्कन्यका लग्ने तृतीये चंद्रवाक्पती ॥ पंचमे भृगुरानंदो योगश्चानंदकृत्स हि ॥ २३९॥ लाभे ११ ऽर्कोरि ६ गृहे भौमो दुश्चिक्येऽ३ थ शनैश्चरः ॥ योगोयमर्द्धचंद्राख्यस्तत्रोढा सुभगा सती ॥ २४० ॥ गुरौ धर्मे ९ बुधे मूर्तौ १ लाभे ११ मंदे गजाभिधः ॥ परिणीतेह वामाक्षी साध्वी धर्मार्थदायिनी ॥ ख १० तुर्य ४ नवगैः ९ सौम्यैः शंखोऽयं शुभकृत्सदा ॥ २४१ ॥

अब विवाहमें प्रशस्त योग लिखतेहैं–शुभग्रह लग्नमें और पापग्रह आठवें स्थानमें होंय तो यह ध्वज योग होताहै इसमें विवाहिता युवती अपने पतिकी प्यारी होतीहै ॥ २३७ ॥ मंगल सूर्य ग्यारहवें, शनैश्चर छटे, चंद्रमा दूसरे, अन्य ग्रह नौवें स्थानमें होंय तो उत्तम श्रीवत्स योग होताहै ॥ २३८ ॥ यदि कन्या लग्न होय और तीसरे स्थानमें चंद्रमा और बृहस्पति होंय, पांचवें

शुक्र होय तो आनंदनामक योग होताहै, आनंद करनेवाला कहाहै ॥ २३९ ॥ ग्यारहवें स्थानमें सूर्य, छठे मंगल, तीसरे स्थानमें शनैश्वर होय तो अर्द्धचंद्र योग होताहै इस योगमें विवाह कीहुई स्त्री सौभाग्यवती रहतीहै ॥ २४० ॥ बृहस्पति नौवें, बुध लग्नमें, शनैश्वर ग्यारहवें स्थानमें होंय तो गजनामक योग होताहै इस योगमें विवाहिता स्त्री धर्म और अर्थ देनेवाली पतिव्रता होतीहै. दशवें,चौथे, नौवें स्थानमें शुभग्रह होंय तो शंखनामक योग होताहै सदैव शुभकारक है ॥ २४१ ॥

अथ नेष्टयोगाः।

पापाश्चक्रस्य पूर्वार्द्धे पश्चार्द्धे सौम्यखेचराः ॥ विवाहे चक्रयोगोयं तदोढा जारिणी भवेत् ॥ २४२ ॥ सर्वैः केंद्रगतैः पापैर्वापीयोगोपि निंदितः ॥ सौम्यैर्लग्ने १० व्यये १२ वित्ते २ पापैः कोदंडकोप्यसत् ॥ २४३॥ भौमे द्वादश १२-गे षष्ठे ६ शुक्रे तुर्ये ४ शनैश्चरे ॥ कुठारोयं समाख्यातः शुभवल्लीविदारणः ॥ २४४ ॥ व्यये १२ऽर्के द्रविणे २ शुक्रे रिपौ ६ मंदेऽष्टमे विधौ ॥ योगः स्यात्कूर्मनामायं नवोढा भिक्षुकी भवेत् ॥ २४५ ॥ रवौ लग्ने १० व्यये १२ मंदेऽष्टमे ८ ऽजे मुसलाभिधः ॥ तत्रोढा या कुमारी सा कुलमारी भवेद्ध्रुवम् ॥ २४६ ॥

अब नेष्टयोग लिखतेहैं—चक्रके पूर्वार्द्ध अर्थात् लग्नसे छठे स्थान तक पापग्रह और चक्रके परार्द्ध अर्थात् सातवें घरसे बारहवें घरतक शुभग्रह होय तो यह चक्रयोग होताहै इसमें विवाहिता स्त्री जारिणी होतीहै ॥ २४२ ॥ सब पापग्रह केंद्रोंमें होंय तो वापी योग निंदित होताहै, शुभग्रह लग्नमें होंय और पापग्रह दूसरे वा बारहवें होंय तो कोदंड नामक योग होताहै विवाहमें अशुभ है ॥ २४३ ॥

मंगल वारहवें, शुक्र छठे, शनैश्चर चौथे होंय तो कुठार नामक योग होताहै यह (शुभवल्ली) वंशवेलका नाश करनेवाला है ॥२४४॥ वारहवें स्थानमें सूर्य, दूसरे शुक्र, छठे शनैश्चर, आठवें चंद्रमा होंय तो कूर्म नामक योग होताहै इसमें विवाहिता स्त्री भिक्षुकी होतीहै ॥ २४५ ॥ लग्नमें सूर्य, वारहवें शनैश्चर, आठवें चंद्रमा होय तो मुसल नामक योग होताहै इसमें विवाहिता कन्या कुलका नाश करनेवाली होतीहै ॥ २४६ ॥

अथ गोधूलिकलग्नम् ।

निंद्यादिकुलिकं क्रांतिविद्धभं पापयुक्तथा ॥ लग्ना १ ष्टा- ८ रि ६ गतं चंद्रं लग्ने गोधूलिके त्यजेत् ॥ २४७ ॥ नाऽन्ये गोधूलिके चिंत्या दोपाश्चंडादयस्तथा ॥ प्रपद्येते यतः सर्वे गोरजोभिः समंततः ॥ २४८ ॥ द्वित्रिलाभस्थिते चंद्रे श्रेष्ठं गोधूलिकं मतम ॥ लग्नास्तशत्रुतोन्यत्र चंद्रे संस्थे तु मध्य- मम् ॥ २४९ ॥ दोपाः पंचांगजा लग्नग्रहजामित्रसंभवाः ॥ लत्तापाताष्टमस्थाननवांशक्षणजास्तथा ॥ २५०॥ एतेऽन्ये- ऽप्यखिला नैव हेया गोधूलिके सदा ॥ २५१ ॥

अब गोधूलिकलग्न लिखतेहैं-निंदितयोग, कुलिकयोग, क्रांति- साम्य, विद्ध नक्षत्र और लग्न, आठवें, छठे स्थानमें पापग्रहयुक्त चंद्रमा होंय तो गोधूलिलग्न त्याज्य होतीहै ॥ २४७ ॥ और गोधूलि लग्नके समय अन्य चण्डायुधादि दोपोंका विचार न करै क्योंकि, गोओंकी रजसे सव दोप सव अलँगसे ढक जातेहैं ॥ २४८ ॥ यदि दूसरे, तीसरे, ग्यारहवें स्थानमें चंद्रमा होय तो गोधूलिलग्न श्रेष्ठ मानीहै. लग्न, सातवें, छठे स्थानसे अन्यत्र चंद्रमा होय तो मध्यम होतीहै ॥२४९॥ पंचांगदोप, लग्नदोप, ग्रहदोप, जामित्रदोप, लत्ता, पात, अष्टमस्थान, नवांश, मुहूर्त्तके सवदोप, तथा अन्य सव दोष गोधूलि लग्नके समय त्याज्य नहीं मानेहैं ॥ २५० ॥ २५१ ॥

अथ गोधूलिसमयः ।

अर्धास्तात्पूर्वमप्यूर्ध्वं घटिकार्द्धं तु गोरजः ॥ स कालो मंगले श्रेयान्विवाहादौ शुभप्रदः ॥ अर्धविंबात्परं केचिद्घटीद्वयमितं जगुः ॥ २५२ ॥ निदाघे सार्द्धविंबेर्के पिंडीभूते हिमागमे ॥ मेघकाले तु पूर्णस्ते प्रोक्तं गोधूलिकं शुभम्॥ ॥ २५३ ॥ अलब्धे घटिकालग्ने विप्राणां गोरजः स्मृतम् ॥ गोरजो हीनवर्णानां शूद्रादीनामथो स्मृतम् ॥ २५४ ॥

अब गोधूलिसमय लिखतेहैं–अर्द्धास्त सूर्यसे पहिले और पीछे आधी आधी घड़ीतक गोधूलि लग्नका समय होताहै वह समय मंगल कार्योंमें तथा विवाहादिकोंमें श्रेष्ठ और शुभदायक होताहै और किन्हीं आचार्योंका ऐसा कथन है कि, अर्द्धास्त सूर्यके उपरांत दो घड़ीतकका समय गोधूलि होताहै ॥ २५२ ॥ ग्रीष्म कालमें अस्तके समय सूर्यका आधा बिंब दीखता रहे और अधा अस्त होजाय तब गोधूलिका समय होताहै और शीतकालमें अस्तसमय सूर्यका पूर्ण बिम्ब किरणों विना दीखता रहे तो वह गोधूलिका समय होताहै और मेघकालमें सूर्यका बिम्ब सपूर्ण अस्त होजाय तो गोधूलि लग्नका समय होताहै विवाहादिकमें शुभ है ॥ २५३ ॥ यदि घटिका लग्न शुद्ध न मिले तो ब्राह्मणोंकोभी गोधूलिलग्न शुभ होतीहै. परन्तु हीनवर्ण और शूद्रोंके लिये तो गोधूलि मुख्यही है॥२५४॥

अथ विवाहलग्नाच्छ्वशुरादीनां शुभाशुभफलम् ।

लग्नं देहो भृगुः श्वश्रूः श्वशुरोऽर्को मनः शशी ॥ भर्त्ता कांता कलत्रेशस्तद्बलात्तत्सुखं भवेत् ॥ २५५ ॥ पतिं सूर्याद्विधोः कांतां धनं भौमात्सुतान्बुधात् ॥ सुखं जीवाद्भृगोर्द्धर्मं वेश्मार्कसूनुतो वदेत् ॥ २५६ ॥ सुखं स्वोच्चादिगैर्ज्ञेयं दुःखं नीचास्तगादिभिः ॥ २५७ ॥

अब विवाहमें लग्नसे सास आदियोंका शुभाशुभ फल लिखतेहैं-लग्न देहहै. शुक्र सासहै. सूर्य श्वसुरहै, चंद्रमा मनहै और सप्तमेश स्वमीहै इनमेंसे जो बली होय उसीको सुख होताहै॥२५५॥ सूर्यसे पतिका, चंद्रमासे स्त्रीका, मंगलसे धनका, बुधसे पुत्रोंका, बृहस्पतिसे सुखका, शुक्रसे धर्मका, शनैश्चरसे मकानका शुभाशुभ फल विचारकर कहै ॥ २५६ ॥ यदि उच्चादि स्थानमें ग्रह होंय तो सुख और नीच तथा अस्तके ग्रह होंय तो दुःख होताहै ॥ २५७॥

अथावश्यके राज्ञां खड्गविवाहः ।

चंद्रपंचांगसंशुद्धो सौम्यायनविवाहभे ॥
राज्ञो गोधूलिके लग्ने खड्गोद्वाहः प्रशस्यते ॥ २५८ ॥

अब आवश्यकोंमें राजाका खड्गविवाह लिखतेहैं-चंद्रमा और पंचाग शुद्ध होय, उत्तरायण सूर्य होंय, विवाहके नक्षत्र होंय, गोधूली लग्न होय तो राजाओंका खड्ग विवाह श्रेष्ठ कहाहै ॥२५८॥

अथ हीनजातीनां विवाहे विशेषः ।

अनुक्ततिथिमासर्क्षं संकीर्णानां शुभप्रदम् ॥
विवाहे धनपुत्रायुःप्रीतिसौख्यकरो भवेत् ॥ २५९ ॥

अब हीनजातिओंका विवाहमें विशेष लिखतेहैं-विवाहमें जो तिथि, मास, नक्षत्र नहीं कहेहैं वेही सब तिथ्यादि संकीर्ण जातियोंके विवाहमें शुभदायक तथा धन, पुत्र, आयु, प्रीति और सौख्य कारक होतेहैं ॥ २५९ ॥

अथ शूद्रादीनां स्त्रियः पुनर्विवाहः ।

शूद्रादीनां विवाहर्क्षे पुनरुद्वहनं स्त्रियाः ॥ रात्रौ कुर्यान्न तत्रास्ततिथिमासादिदूषणम् ॥ २६० ॥ सूर्यभाद्वेद ४ नेत्रा २ ग्नि ३ भू १ चंद्रा १ ऽब्धि ४ रसा ६ ऽग्नयः ३ ॥ भू

१ राम ३ संमितास्तारा गांधर्वादिविवाहके ॥ २६१ ॥
नेष्टाः श्रेष्ठाः क्रमादेतास्त्रियश्च गदिता बुधैः ॥ २६२ ॥

अब शूद्रादि स्त्रियोंके पुनर्विवाह लिखतेहैं—विवाहके नक्षत्रोंमें शूद्रादिकोंकी स्त्रियोंका पुनर्विवाह रात्रिमें करे तो अस्त तथा तिथि मासादिका दूषण नहीं होताहै ॥ २६१ ॥ गांधर्वादि विवाहमें सूर्यके नक्षत्रसे ४ । २ । ३ । १ । १४ । ६ । ३ । १ । ३ ये नक्षत्र स्त्रीके लिये पंडितोंने क्रमसे नेष्ट और श्रेष्ठ कहेहैं ॥ २६२ ॥

अथ विवाहांगकार्यम् ।

कार्यं विवाहकार्यांगं विवाहोदितभे जनैः ॥ विबलं च विधुं हित्वा त्रिषष्ठनवमं दिनम् ॥ २६३ ॥ विशाखां भरणीं चित्रां ज्येष्ठाख्यामश्विनीं शतम् ॥ आर्द्रा चतुष्टयं हित्वा कुर्याद्वैवाहिकं विधिम् ॥ २६४ ॥ हेरंबपूजनं तैलं सकलं चांकुरार्पणम् ॥ भूषणं कंकणाद्यं च वेदिकामंडपादिकम् ॥ २६५ ॥

अब विवाहाङ्गकार्य लिखतेहैं—विवाहोक्त नक्षत्रोंमें विवाहके अंगकार्य शुभ होतेहैं. परन्तु निर्बलचंद्रमा और तिसरे, नौवें, छठे दिनको छोडदेय ॥ २६३ ॥ विशाखा, भरणी, चित्रा, ज्येष्ठा, अश्विनी, शतभिषा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा इन नक्षत्रोंको छोडकर अन्य नक्षत्रोंमें विवाहकी विधि करै ॥ २६४ ॥ गणेशपूजन, तैलधारण, अंकुरारोपण, भूषण कंकणादि धारण, वेदिकामंडप बनाना इत्यादि सब कार्य सिद्ध होतेहैं ॥ २६५ ॥

अथ तैलादिलापने दिनसंख्या ।

मेषादिराशिजातानां कुर्यात्तैलादिलापनम् ॥ शैल७दि १०
ग्बाण५ सप्तां ७ ग ६ बाण ५ पंचे ५ षवः५शराः ॥२६६॥

बाणाः ५ शैला ७ स्त्रय ३ श्चैव क्रमात्कैश्चिदितीरितम् ॥ २६७ ॥

अब तैलादिलापनमें दिनसंख्या लिखतेहैं—मेषादि राशिवाले कन्या वरके तैल चढानेके दिनोंकी संख्या क्रमसे जाननी ऐसा किन्ही आचार्योंने कहाहै जैसे मेष राशिवाला मनुष्य विवाहमें सातदिन और वृष राशिवाला दशदिन तैल चढावै इत्यादि सवराशियोंके तैल दिनसंख्या चक्रमें लिखतेहैं— ॥ २६६ ॥ २६७ ॥

मेषादिराशीनां तैलदिनसंख्याचक्रम् ।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	क	तु	वृ.	ध	म.	कु.	मी.	राशय·
७	१०	५	७	६	२	५	५	५	५	७	३	दिनसंख्या

अथ विवाहवेदिका ।

चतुरास्त्रां करोच्छ्रायां चतुर्हस्तां सुवेदिकाम् ॥ वेश्मनो वामभागे च कुर्यात्स्तंभोपशोभिताम् ॥ २६८ ॥ ऐशान्यां स्थापयेत्स्तंभं सिंहादित्रिभगे रवौ ॥ वृश्चिकादित्रिभे वायौ नैर्ऋत्यां कुंभतस्त्रिभे ॥ वृषात्त्रये तथाऽग्नेय्यां स्तंभखातस्तथैव हि ॥ २६९ ॥

अब विवाहमें वेदिका लिखतेहैं—मकानके वाम भागमें चौकोर हाथभर ऊंची, चारहाथ लंबी और चौडी वेदी बनावै उसको समीपमें खंभसे सुशोभित करै ॥ २६८ ॥ सिंह, कन्या, तुला राशिके सूर्य होंय तो ईशान दिशामें खंभको स्थापित करै और वृश्चिक, धनु, मकर राशिके सूर्य होंय तो वायव्यदिशामें खंभको गाडै और कुंभ, मीन, मेष राशिके सूर्य होंय तो नैर्ऋत्य दिशामें खंभ गाडै और वृषमिथुन, कर्कके सूर्य हों तो आग्नेय दिशामें खंभ गाडै ॥ २६९ ॥

अथ विवाहानंतरं मंडपोद्वासनम् ।

मंडपोद्वासनं षष्ठं हित्वा कुर्यात्समेऽहनि ॥
पंचमे सप्तमे वापि शुभर्क्ष शुभवासरे ॥ २७० ॥
इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त-
गणपतौ विवाहप्रकरणं पञ्चदशम् ॥ १५ ॥

अब विवाहानन्तर मंडपोद्वासन लिखतेहैं—छठे दिनको छोड़कर-समदिनमें अथवा पांचवें सातवें दिन, शुभनक्षत्र और शुभवारमें मंडप सिरावे ॥ २७० ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त-
गणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितराम-
दयालुशर्मकृतभाटीकासमलंकृतं विवाहप्रकरणं
पञ्चदशम् ॥ १५ ॥

अथ वधूप्रवेशप्रकरणम् ।

लग्नादह्नि समे पंचसप्तांके प्राक्च षोडशात् ॥ ततस्त्वपंच-माद्वर्षादोजाहे मासि वत्सरे ॥ १ ॥ यथेच्छं तु ततो वध्वाः प्रवेशः शुभदः स्मृतः ॥ श्रवणद्वितये मूलेऽनुराधा-रोहिणीमृगे ॥ २ ॥ हस्तत्रये मघापुष्ये त्र्युत्तरे रेवतीद्वये ॥ प्रवेशः शुभदो वध्वाः सोमे शुक्रे गुरौ शनौ ॥ ३ ॥ मध्यो बुधे कुजेर्के तु नेष्टो रिक्तातिथौ तथा ॥ शुभे वर्गे बलोपेते लग्ने चांशे शुभः स्मृतः ॥ ४ ॥

अब वधूप्रवेश लिखतेहैं—विवाहसे सम दिनमें अर्थात् चौथे, छठे, आठवें, दशवें दिन आदि सोलहवें दिनतक और पीछे पांच-वर्षके भीतर विषमवर्ष और विषम मासमें ॥ १ ॥ और पांचवें वर्षसे पीछे इच्छानुरूप वधूका प्रवेश शुभदायक कहाहै. श्रवण, धनिष्ठा, मूल, अनुराधा, रोहिणी, मृगशिरा ॥ २ ॥ हस्त, चित्रा,

स्वाति, मघा, पुष्य, तीनों उत्तरा, रेवती, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें और चंद्र, शुक्र, बृहस्पति, शनि वारोंमें वधूप्रवेश शुभ होताहै ॥ ३ ॥ वधूप्रवेशमें बुध मध्यम और मंगल, रवि तथा रिक्तातिथि नेष्ट होतीहैं, लग्न और लग्नका नवांश शुभग्रहके बलसे युक्त होय तो वधूप्रवेश शुभ होताहै ॥ ४ ॥

अथ विवाहोत्तरं प्रथमाब्दे मासविशेषेण वध्वा निवासदोषः ।

उद्वाहात्प्रथमे ज्येष्ठे यदि पत्युर्गृहे वसेत् ॥ पत्युर्ज्येष्ठं तदा हंति पौषे तु श्वशुरं तथा ॥ ५ ॥ श्वश्रूं साऽऽषाढमासे तु चाधिमासे स्वकं पतिम् ॥ आत्मानं तु क्षये मासि तातं तातगृहे मधौ ॥ ६ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त गणपतौ वधूप्रवेशप्रकरणं षोडशम् ॥ १६ ॥

अथ विवाहोत्तर प्रथम वर्षमें मासविशेषसे वधूका निवासदोष लिखतेहैं—यदि विवाहसे प्रथमवार वधू ज्येष्ठ मासमें पतिके घर निवास करे तो पतिके बडे भाईका नाश होताहै और जो पौष मासमें निवास करे तो श्वसुरका ॥ ५ ॥ आषाढ मासमें निवास करे तो सासका, अधिमासमें निवास करे तो अपने पतिका, क्षयमासमें निवास करे तो अपने आत्माका नाश होताहै और जो चैत्रके महीनेमें पिताके घर निवास करे तो पिताका नाश होताहै ॥ ६ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्म्मकृतभाषाटीकासमलङ्कृतं वधूप्रवेशप्रकरणं षोडशम् ॥ १६ ॥

अथ द्विरागमनप्रकरणम् ।

विवाहाद्विषमे वर्षे कुंभमेषालिगे रवौ ॥ बलिन्यर्के विधौ जीवे शुभाहे चाश्विनीमृगे ॥ १ ॥ रेवतीरोहिणीपुष्ये त्र्युत्तरे श्रवणत्रये ॥ हस्तत्रये पुनर्वस्वोस्तथा मूलानुराधयोः ॥ २ ॥ कन्यामीनतुलायुग्मे वृषे प्रोक्तबलान्विते ॥ लग्ने पद्मदलाक्षीणां द्विरागमनमिष्यते ॥ ३ ॥ संमुखे दक्षिणे शुक्रे नो गच्छेत्तु कदाचन ॥ गर्भिणी तु विगर्भा स्यान्नवोढा वंध्यतामियात् ॥ ४ ॥ बालकश्चेद्विपद्येत विगेहादपि चेद्व्रजेत् ॥ ५ ॥

अब द्विरागमन लिखतेहैं—विवाहसे विषम वर्षमें और कुंभ, मेष, वृश्चिक राशिके सूर्यमें तथा सूर्य,चंद्रमा, बृहस्पति बलवान् होय, शुभवार होय, आश्विनी, मृगशिरा ॥ १ ॥ रेवती, रोहिणी, पुष्य, तीनों उत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, चित्रा, स्वाति, पुनर्वसू, मूल, अनुराधा ये नक्षत्र होंय ॥ २ ॥ उक्त बल युक्त कन्या, मीन, तुला, मिथुन, वृष ये लग्नें होंय तो कमलदलनयनी स्त्रियोंका द्विरागमन श्रेष्ठ होताहै ॥ ३ ॥ सम्मुख और दक्षिण शुक्र होय तो कभी यात्रा न करे; यदि सम्मुख और दक्षिण शुक्रमें गर्भवती यात्रा करे तो गर्भ नष्ट होजाताहै और नवीन विवाहकीहुई विना गर्भकी स्त्री यात्रा करे तो वंध्या होजातीहै ॥ ४ ॥ और जो बालकवाली यात्रा करे तो बालक मरजाताहै ॥ ५ ॥

अथ दीपमालाप्रवेशे दोषापवादः ।

सिंहस्थे वा गुरौ शुक्रे संमुखे संगतेपि वा ॥
शुभो दीपोत्सवे वध्वाः प्रवेशः पतिमंदिरे ॥ ६ ॥

अब दीपमालाके प्रवेशमें दोषापवाद लिखतेहैं—सिंहके बृहस्पति अथवा सम्मुख शुक्र होय तो भी दीपोत्सवके दिन पतिके मंदिरमें वधूका प्रवेश शुभ होताहै ॥ ६ ॥

अथ प्रतिशुक्रदोषापवादः ।

एकस्मिन्नगरे ग्रामे देशे राजाद्युपद्रवे ॥ दुर्भिक्षे तीर्थयात्रायां नववध्वाः प्रवेशने ॥ ७ ॥ विवाहे न हि दोषाय प्रतिशुक्रस्तथा बुधः ॥ अत्र्यंगिरोवसिष्ठानां वत्सकश्यपयोर्भृगोः ॥ ८ ॥ भरद्वाजमुनेर्गोत्रे प्रतिशुक्रो न दुष्यति ॥ पित्र्यागारे यदि स्त्रीणां स्तनपुष्पोद्गमो भवेत् ॥ ९ ॥ गमनं प्रतिशुक्रेपि प्रशस्तं पतिवेश्मनि ॥ १० ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मूहूर्त्तगणपतौ द्विरागमनप्रकरणं सप्तदशम् ॥ १७ ॥

अथ प्रतिशुक्रदोषापवाद लिखतेहैं-एकनगर, एकग्राम, एकदेशमें, तथा राजकृत उद्रवमें, दुर्भिक्षमें, तीर्थयात्रामें, नवीन वधूप्रवेशमें॥७॥ विवाहमें सामने शुक्रका दोष नहीं होताहै. तथा बुधकाभी दोष नहीं होताहै और अत्रि, अंगिरा, वशिष्ठ, वत्स, कश्यप, भरद्वाज इन गोत्रोंमें सामने शुक्रका दोष नहीं होताहै और यदि पिताके घरमें स्त्रियोंके स्तन निकसें अथवा रजोधर्म होय तोभी सामने शुक्रका दोष नहीं होताहै पतिके घर जानेमें शुभ मानाहै ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ पंडितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं द्विरागमनप्रकरणं सप्तदशम् ॥ १७ ॥

अथाग्न्याधानप्रकरणम् ।

सौम्यायने विशाखायां कृत्तिकारोहिणीमृगे ॥ त्र्युत्तरे रेवती ज्येष्ठापुष्येऽग्न्याधानमिष्यते ॥ १ ॥ कुजार्काब्जे गुरौ शुक्रे नो नीचाऽस्तंगतेऽरिभे ॥ नो रिक्तायां तिथौ कर्के लग्ने नैव मृगत्रये ॥ २ ॥ अग्न्याधानं प्रकुर्वीत नेंदौ लग्नगतेपि च ॥ त्रिकोणेऽपचये केंद्रे सूर्यजीवकुजेंदुषु ॥ ३ ॥ शेषे चोप-

-चये शुद्धे रंध्रेऽग्न्याधानमुत्तमम् ॥ लग्ने जीवे धनुर्गे वा द्यूने ७ खे १० वाऽजगे कुजे ॥ ४ ॥ चंद्रे वा त्रिषडायस्थे सूर्ये वा दीक्षितो भवेत् ॥ ५ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतावग्न्याधानप्रकरणमष्टादशम् ॥ १८ ॥

अब अग्न्याधान लिखतेहैं—उत्तरायण सूर्यमें और विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, तीनों उत्तरा, रेवती, ज्येष्ठा, पुष्य इन नक्षत्रोंमें अग्निहोत्र करना शुभ कहाहै ॥ १ ॥ मंगल, सूर्य, चंद्रमा, बृहस्पति, शुक्र ये ग्रह नीचके अथवा अस्तके वा शत्रुग्रहकी राशिके न होंय और रिक्ता तिथिभी नहीं होय तथा कर्क, मकर, कुंभ, मीन ये लग्नेंभी नहीं होंय ॥ २ ॥ लग्नमें चंद्रमा न होय, त्रिकोण ९ । ५ अपचय केंद्र स्थानमें सूर्य, बृहस्पति, मंगल, चंद्रमा होंय ॥ ३ ॥ शेष ग्रह उपचय ३।६।१०।११ में होंय, तथा आठवां स्थान शुद्ध होय तो अग्न्याधान उत्तम होताहै. बृहस्पति लग्नमें होय अथवा धनुराशिका होय और सातवें, दशवें, मेषका मंगल होय ॥ ४ ॥ चंद्रमा अथवा सूर्य तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें स्थानमें होंय तो अग्निहोत्रादि यज्ञमें दीक्षा लेनी शुभ होतीहै ॥ ५ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्तगणपतौ पण्डितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतमग्न्याधानप्रकरणमष्टादशम् ॥ १८ ॥

अथ राजाभिषेकप्रकरणम् ।

उदितेऽब्जे गुरौ शुक्रे विनैत्रे चोत्तरायणे ॥ जन्मेशे चापि कर्मेशे रवौ भौमे बलान्विते ॥ १ ॥ रोहिणीद्वितये पुष्ये ज्येष्ठायां त्र्युत्तरे तथा ॥ रेवतीयुगुले हस्ते चित्रायां श्रवणेपि

च ॥ २ ॥ तिथौ वारे शुभेऽर्केपि कुर्याद्राजाभिषेचनम् ॥ स्थिरे चोपचये लग्ने जन्मतो मस्तकोदये ॥ ३ ॥ शुभैर्युक्तेक्षिते वापि पापदृग्योगवर्जिते ॥ धनकेंद्रत्रिकोणाख्यै रहितैः पापखेचरैः ॥ ४ ॥ सौम्यैरपष्ठगैः सर्वैर्व्ययमृत्युविवर्जितैः ॥ केंद्रत्रिकोणगैः सौम्यैरसौम्यैः षट्त्रिलाभगैः ॥ ५ ॥ सुहृत्स्वर्क्षोच्चगैः खेटैर्नीचारातिभवर्जितैः ॥ राजयोगोचिते लग्ने शुभं राजाभिषेचनम् ॥ ६ ॥

अब राजाभिषेक लिखतेहैं–चंद्रमा, बृहस्पति, शुक्र का उदय होय, चैत्र विना अन्यमास होंय, उत्तरायण सूर्य होय, जन्मेश अथवा दशमेश सूर्य वा मंगल बलवान् होय ॥ १ ॥ रोहिणी, मृगशिर, पुष्य, ज्येष्ठा, तीनों उत्तरा, रेवती, अश्विनी, हस्त, चित्रा, श्रवण इन नक्षत्रोंमें ॥ २ ॥ ॥ शुभ वार शुभ तिथिमें तथा रविवारके दिनभी राज्याभिषेक शुभ होताहै. जन्मलग्नसे तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें स्थानकी लग्न होय अथवा स्थिर वा मस्तकोदय लग्न होय अर्थात् मिथुन, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ ये लग्नें होंय और शुभग्रहोंसे युक्त वा दृष्ट तथा पापग्रहोंकी दृष्टि और योगसे वर्जित लग्न होय दूसरा स्थान केंद्र १ । ४ । ७ । १० कोण ९ । ५ स्थान, पापग्रहोंसे रहित होय ॥ ३ ॥ ४ ॥ षष्ठस्थानमें शुभग्रह न होंय और बारहवें, आठवें स्थानमें कोई ग्रह न होय, केन्द्र त्रिकोण स्थानमें शुभग्रह होंय और छठे, तीसरे, ग्यारहवें स्थानमें पापग्रह होंय तथा मित्रकी राशि अथवा अपनी राशि वा उच्चराशिके ग्रह होंय, नीचराशि वा शत्रुराशिके न होंय और राजयोगके योग्य लग्न होय तो राजाभिषेक शुभ होताहै ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ युवराजाभिषेकः ।

युवराजाभिषेकः स्यादभिषेकोक्तभादिषु ॥ ७ ॥

अब युवराजाभिषेक लिखतेहैं–राजाभिषेकमें कहेहुए नक्षत्रादिकोंमें युवराजका अभिषेक शुभ होताहै ॥ ७ ॥

अथ पुत्राऽभावेऽन्यस्याभिषेचनम्।

स्वजाते राज्ञि तत्स्थाने पुत्राभावे कुलोद्भवम् ॥
नो चिंत्यास्तिथिवाराद्यास्तत्कालमभिषेचयेत् ॥ ८ ॥

अब पुत्राभावमें अन्यका अभिषेचन लिखतेहैं–राजाके पश्चात् पुत्र गद्दीपर बैठताहै, यदि पुत्र न होय तो अपने कुलके पुरुष को और यदि अपने कुलका पुरुष न मिलै तो अपनी जातिवाले पुरुषको तत्काल राजगद्दीपर बैठायदेवे उस समय तिथि वारादिकोंका कुछभी विचार न करै ॥ ८ ॥

अथ राजचिह्नधारणम्।

चामरं छत्रदोलादिद्वीपिसिंहासनादिकम् ॥
पट्टाभिषेकभे सर्वं विदध्याच्छोभनेहनि ॥ ९ ॥
इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ राज्याभिषेकप्रकरणमेकोनविंशम् ॥ १९ ॥

अब राजचिह्नधारण लिखतेहैं–चँवर, छत्र, हिंडोलादि तथा गेंडा अथवा सिंहके चमड़ेसे सुशोभित आसनादिको राजाभिषेकोक्त नक्षत्रों तथा शुभवारोंमें धारण करै ॥ ९ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं राज्याभिषेकप्रकरणमष्टादशम् ॥ १९ ॥

अथ यात्राप्रकरणम्।

विज्ञातजन्मनां राज्ञां ज्ञात्वा शुभफलोदयम् ॥
योज्या यात्रा बुधैः शस्तं प्रश्नादज्ञातजन्मनाम् ॥ १ ॥

अब यात्राप्रकरण लिखतेहैं-जिन राजाओंका जन्मपत्र होय उनके जन्म लग्नसे तथा जिन राजाओंका जन्म पत्र न होय उनके प्रश्न लग्नसे सब ग्रहादिकोंका फल विचारकर पंडितलो गायत्राका श्रेष्ठ मुहूर्त्त निश्चय करें ॥ १ ॥

अथ प्रश्नलग्नाद्यात्रायाः शुभाशुभफलम् ।

जनुषो लग्नराशी वा लग्नगे वा तदीश्वरौ ॥ ताभ्यां चोपचये लग्ने तदा राज्ञां जयो ध्रुवम् ॥ २ ॥ प्रश्नतो लग्नभे शत्रोस्तुर्ये ४ स्ते ७ वा तयोः पती ॥ ताभ्यामुपचयं भं वा जयः स्याद्वैरिसंभवः ॥ ३ ॥ जयो लग्ने स्वसद्वर्गे भवेच्छीर्षोदयेपि वा ॥ शुभयुक्तेक्षिते वापि शुभा यात्रा चरोदये ॥४॥ स्थिरोदये गमो न स्याच्छुभैर्दृष्टे युते शुभः ॥ द्विःस्वभावोदये पापैर्युक्ते वाथ निरीक्षिते ॥ ५ ॥ प्रस्थितोपि निवर्त्तेत निर्जितोरिजनैः पुनः ॥ रम्ये भूमितले दृष्टे श्रुते भोगेल्पवस्तुनि ॥ ६ ॥ अत्यादरेपि वा प्रश्ने जयलाभोपि यास्यताम् ॥ भृगौ लग्ने बुधे तुर्ये ४ सहोत्थे ३ र्के सुते गुरौ ॥ ७ ॥ लाभगे ११ रपरैः शत्रूञ्जित्वाभ्येति नृपो गृहे ॥ लग्ने १ भौमेऽथवा मंदे सुते जीवेथ खे १० रवौ ॥ ८ ॥ लाभे ११ कर्मणि १० वा चंद्रे शुक्रेपि विजयो ध्रुवम् ॥ लग्ने भौमेंदुयुक्ते वा दिनेशतनुजेक्षिते ॥ ९ ॥ चंद्रे वा निधनेऽस्तस्थे भास्करे लग्नवर्त्तिनि ॥ पापैर्वा द्यूनलग्नाष्टहिबुकोपगतैर्ग्रहैः ॥ एभिस्त्रिभिश्च दुर्योगैः प्रष्टुभंगो न संशयः ॥ १० ॥ कोणे ५।९ भौमाद्बुधेज्यार्किशुक्रा वैषु चतुर्ष्वपि ॥ एकश्चेद्गमनं न स्यात्सूर्याद्राकोणके विधौ ॥ ११ ॥ नयेद्रा स्वदिशं सोत्र यः खेटो बलवांस्तयोः ॥ प्रश्ने गम्यदिशाधीशात्पंचमोपि बली ग्रहः ॥१२॥

अब प्रश्नलग्नसे यात्राके शुभाशुभ फल लिखतेहैं—जन्मकी लग्न अथवा राशिही प्रश्नकी लग्न होय अथवा प्रश्नलग्नमें जन्म लग्नेश्वर वा जन्मराशीश्वर होय अथवा जन्म लग्न और जन्मराशिसे उपचय स्थान ३।६।१०।११। की लग्न होय तो राजाओंकी निश्चयही जय होतीहै ॥ २ ॥ शत्रुके जन्मकी लग्न वा राशि प्रश्नलग्नसे चौथे वा सातवें स्थानमें होय अथवा शत्रुका जन्मलग्नपति तथा जन्मराशिपति चौथे वा सातवें होय अथवा शत्रुका जन्मलग्न और जन्मराशिसे उपचय ३।६।१०।११ स्थानकी लग्न होय तो शत्रुसे विजय होतीहै ॥ ३ ॥ प्रश्न लग्न अपने वर्गमें अथवा शुभग्रहके वर्गमें होय अथवा (शीर्षोदय) मिथुन,कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ लग्न शुभयुक्त दृष्ट होय तो विजय होतीहै. अथवा शुभग्रहसे युक्त वा दृष्ट चर लग्न होय तो यात्रा शुभ होतीहै ॥ ४ ॥ और जो स्थिर लग्न होय तो यात्रा नहीं होतीहै यदि स्थिरलग्न शुभग्रहोंसे दृष्ट वा युक्त होय तो यात्रा शुभ होतीहै और जो द्विस्व. भाव लग्न पापग्रहोंसे युक्त वा दृष्ट होय तो ॥ ५ ॥ जाकरके भी लौट आताहै अथवा शत्रुओंसे हारकर लौट आताहै. यदि प्रश्नलग्नके समय पृथ्वीतल रमणीक होय अथवा शुभ वस्तु देखने- सुननेमें आवे अथवा थोडीसी शुभ वस्तुका भोग मिलै अथवा अत्यादरके साथ पंडितसे पूछै तो जानेवालोंकी विजय होतीहै, लग्नमें शुक्र होय,चौथे बुध होय, तीसरे सूर्य होय, पांचवें बृहस्पति होय ॥ ६ ॥ ७ ॥ ग्यारहवें स्थानमें अन्य ग्रह होय तो राजा शत्रुओंको जीतकर घर आजावै.लग्नमें मंगल अथवा शनैश्चर होय, पांचवें बृहस्पति होय,दशवें सूर्य होय ॥ ८ ॥ और ग्यारहवें, दशवें स्थानमें शुक्र वा चंद्रमा होय तो निश्चयही विजय होतीहै. यदि लग्न, मंगल वा चंद्रमासे युक्त होय और शनैश्चरसे दृष्ट होय ॥ ९ ॥ चंद्रमा आठवें वा सातवें

स्थानमें स्थित होय, सूर्य लग्नमें वर्तमान होय, पापग्रह सातवें, लग्नमें, आठवें, चौथे स्थानमें स्थित होंय तो पूछनेवालेका यात्रामें निस्संदेह भंग होताहै ये तीन दुष्टयोग हैं ॥ १० ॥ मंगलसे त्रिकोणमें बुध, वृहस्पति, शनैश्चर, शुक्र ये चारों वा इन चारों ग्रहोंमेंसे कोई एक ग्रह होय तो यात्रा नहीं होतीहै अथवा सूर्यसे त्रिकोण ९। ५ में चंद्रमा होय तोभी यात्रा नहीं होतीहै ॥ ११ ॥ और पूर्वोक्त यात्रावरोधक दोनों ग्रहोंमें जो ग्रह वलवान् होय सो अपनी दिशाकी यात्रा करताहै अथवा (गम्य) जानेयोग्य दिशाके स्वामीग्रहसे पांचवें स्थानमें जो ग्रह वली होय सो अपनी दिशाकी यात्रा कराताहै ॥ १२ ॥

अथ संक्रांतिषु यात्राफलम् ।

मेष १ सिंह ५ धनुः ९ संस्थे यात्रा शस्तांशुमालिनि ॥
कुंभे ११ नक्रां १० गना ७ युग्म ३ शुक्रभस्थे २।७ तु मध्यमा ॥ १३ ॥ कर्का ४ लि ८ मीनगे १२ ऽर्के तु यात्रा दीर्घप्रवासदा ॥ १४ ॥

अब संक्रांतिसे यात्राफल लिखतेहैं—मेष, सिंह, धनु राशिपर स्थित सूर्य होंय तो यात्रा शुभ होतीहै और कुंभ, मकर, कन्या, मिथुन और (शुक्रकी राशि) वृष, तुला पर सूर्य स्थित होंय तो यात्रा मध्यम होतीहै ॥ १३ ॥ और कर्क, वृश्चिक, मीन राशिके सूर्य होंय तो यात्रा दीर्घकालकी होतीहै ॥ १४ ॥

अथ दशादिवलवशात्त्रिविधं यात्राफलम् ।

दशादेः सफले पाके यात्रा श्रेष्ठाथ मध्यमा ॥
गोचरादिवले न्यूनफला पंचांगशुद्धितः ॥ १५ ॥

अब दशादिवलवशसे त्रिविध यात्राफल लिखतेहैं—यदि दशान्तर्दशा आदि फलवाली अर्थात् शुभ होंय तो यात्रा श्रेष्ठ होतीहै और

जो गोचरादिका बल होय तो मध्यम होताहै और यदि पंचांगशुद्धि होय तो न्यून फलवाली होतीहै ॥ १५ ॥

अथ यात्रायां चंद्रताराविथ्यादिशुद्धिः ।

ताराञ्त्रिपंचसप्ताद्या रिक्तामापूर्णिमाष्टमीः ॥
शुक्लाद्यां द्वादशीषष्ठ्यौ हित्वा चंद्रबले गमः ॥ १६ ॥

अब यात्रामें चंद्रतारातिथ्यादिशुद्धि लिखतेहैं–तीसरी, पांचवीं, सातवीं, पहिली तारा और रिक्ता, अमावास्या, पूर्णिमा, अष्टमी और शुक्लपक्षकी प्रतिपदा, द्वादशी, षष्ठी तिथि इन सबको त्यागकर चंद्रमाका बल होय तो यात्रा शुभ होतीहै ॥ १६ ॥

अथ यात्रायां पृथक् तिथिफलानि ।

कृष्णा च प्रतिपच्छ्रेष्ठा नो शुक्ला गमनादिषु ॥ द्वितीया कार्यसिद्ध्यै स्यात्तृतीया क्षेमसंपदे ॥ १७ ॥ चतुर्थी क्लेशदा ज्ञेया लाभदा पंचमी तथा ॥ व्याध्यार्त्तिदायिनी षष्ठी सप्तमी भोगभोज्यदा ॥ १८ ॥ रोगदा चाष्टमी ज्ञेया नवमी मृत्युदा सदा ॥ दशमी लाभदा नित्यं हेमदैकादशी स्मृता ॥१९॥ प्राणहृद्द्वादशी प्रोक्ता सर्वसिद्धा त्रयोदशी॥ शुक्ला चतुर्दशी नेष्टा कृष्णपक्षेविशेषतः ॥ २० ॥ पूर्णिमा मध्यमा प्रोक्ता त्याज्यो दर्शस्तु सर्वथा ॥ तिथीनां फलमेतद्धि ज्ञातव्यं गमने बुधैः ॥ २१ ॥

अब यात्रामें पृथक तिथिफल लिखतेहैं–यात्रादि कार्योंमें कृष्ण पक्षकी प्रतिपदा श्रेष्ठ होतीहै और शुक्लपक्षकी नेष्ट होतीहै, द्वितीया तिथि कार्य सिद्धिकेलिये होतीहै, तृतीया कल्याणपूर्वक संपदाकेलिये होतीहै ॥ १७ ॥ चतुर्थी क्लेशदेनेवाली कहीहै, पंचमी लाभ देनेवाली है, षष्ठी तिथि रोग और दुःखकी देनेवाली है, सप्तमी भोग और भोज्यकी देनेवाली है ॥ १८ ॥ अष्टमी तिथि रोग देनेवाली

है, नवमी तिथि सदैव मृत्यु देनेवाली है, दशमी तिथि नित्य लाभकी देनेवाली है, एकादशी सुवर्णकी देनेवाली है ॥ १९ ॥ द्वादशी तिथि प्राणोंकी हरनेवाली है, त्रयोदशी सर्वसिद्धिकी देनेवाली है, शुक्लपक्षकी चतुर्दशी नेष्ट होतीहै और कृष्णपक्षकी चतुर्दशी विशेप करके नेष्ट होतीहै ॥ २० ॥ और पूर्णमासी मध्यम कहीहै और अमावास्या सर्वथा त्याज्य है यात्रामें पंडितोंको तिथियोंका यह फल अवश्यही विचारना चाहिये ॥ २१ ॥

अथ यात्रायां शुभाशुभवाराः ।

सत्खेटवासरे चोपचयस्थस्यापि वासरे ॥
यात्रा श्रेष्ठा बुधे मध्या लोके शास्त्रे तु न क्वचित् ॥ २२ ॥

अब यात्रामें शुभवार लिखतेहैं-शुभग्रहके वारमें यात्रा शुभ होतीहै और प्रश्नलग्नसे (उपचय) तीसरे, छठे, ग्यारहवें, दशवें घरमें जो ग्रह होय उसके वारमेंभी यात्रा श्रेष्ठ होतीहै और बुधवारमें मध्यम होतीहै ऐसा कथन लोकमें है और शास्त्रमें कहीं नहीं लिखाहै ॥ २२ ॥

अथ वारे कालविशेषे यात्रा कैश्चिदुक्ता ॥

रवौ सूर्योदये यायादुषःकाले शनैश्चरे ॥
भौमे भुक्त्वा सदान्यत्र वारे कैश्चिदितीरितम् ॥ २३ ॥

अब वारोंमें कालविशेपसे यात्रा लिखतेहैं-रविवारको सूर्योदयके समय यात्रा करे, शनैश्चरको प्रातःकालके समय यात्रा करे, मंगलको भोजन करके यात्रा करे और अन्य वारोंमें सब कालमें यात्रा करे ऐसा किन्ही आचार्योंने कहाहै ॥ २३ ॥

अथ यात्रायामुत्तममध्यमनेष्टनक्षत्राणि ।

धनिष्ठा श्रवणो हस्तोऽनुराधा रेवतीद्वयम् ॥ मृगः पुनर्वसू पुष्यः श्रेष्ठान्येतानि भानि च ॥ २४ ॥ मूलं पूर्वात्रयं ज्येष्ठा

रोहिणी शततारका ॥ उत्तराणां त्रयं याने मध्यान्येतानि भानि च ॥ २५ ॥ चित्रात्रयं मघाश्लेषा कृत्तिकार्द्रा भरण्यपि ॥ वर्ज्यान्येतानि धिष्ण्यानि यात्रायां जन्मभं तथा ॥ २६ ॥

अब यात्रामें उत्तम मध्यम नेष्ट नक्षत्र लिखतेहैं–धनिष्ठा, श्रवण, हस्त, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसू, पुष्य ये नक्षत्र श्रेष्ठहैं ॥ २४ ॥ मूल, तीनों पूर्वा, ज्येष्ठा, रोहिणी, शतभिषा, तीनों उत्तरा यह नक्षत्र यात्रामें मध्यम हैं ॥ २५ ॥ चित्रा, स्वाति, विशाखा, मघा, आश्लेषा, कृत्तिका, आर्द्रा, भरणी और जन्मनक्षत्र ये सब नक्षत्र यात्रामें वर्जितहैं ॥ २६ ॥

अथ वर्ज्यनक्षत्राणामावश्यके त्याज्यघटिकाः ।

पूर्वासु षोडशैवाद्याः कृत्तिकास्वेकविंशतिः ॥ मघास्वेकादश त्याज्या भरण्याः सप्तनाडिकाः ॥ २७ ॥ स्वात्याश्लेषाविशाखासु ज्येष्ठायाश्च चतुर्दश ॥ पापा लग्नबले शेषनाड्यावश्यके सति ॥ २८ ॥

अब वर्ज्यनक्षत्रोंके आवश्यकमें त्याज्य घटिका लिखतेहैं–तीनों पूर्वाके आदिकी सोलह घडी आवश्यक यात्रामें त्याज्य हैं और कृत्तिकाके आदिकी २१ इकीस घड़ी, मघाके आदिकी ग्यारह घड़ी, भरणीके आदिकी सातघड़ी ॥ २७ ॥ स्वाती, आश्लेषा, विशाखा, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंके आदिकी चौदहचौदह घड़ी आवश्यक यात्रामें त्याज्य हैं और यदि लग्न बलवान् होय तो पूर्वोक्त नक्षत्रोंकी शेषघड़ी आवश्यक यात्रामें शुभ होतीहैं ॥ २८ ॥

अथात्र मतांतरम् ।

कृत्तिकाया मघास्वात्योरेके पूर्वदलं जगुः ॥
उत्तरार्द्धं तु चित्रायां भरण्याश्लेषयोरपि ॥ २९ ॥

अब यहां मतान्तर लिखतेहैं–किन्हीं आचार्योंने ऐसा कहाहै कि, कृत्तिका, मघा, स्वाती इन नक्षत्रोंका पूर्वार्द्ध और चित्रा, भरणी, आश्लेषा इन नक्षत्रोंका उत्तरार्द्ध आवश्यकयात्रामें त्याग देवे ॥२९॥

अथोशनसो मते तु ।

सर्वस्वाती मघा त्याज्योशनसो मतमीदृशम् ॥ ३० ॥

अब शुक्रका मत लिखतेहैं–शुक्राचार्यका ऐसा मत है कि, स्वाति और मघा नक्षत्र संपूर्णही त्याज्यहैं ॥ ३० ॥

अथ नक्षत्रविशेषे विजययात्राप्रकारः ।

संप्रस्थायानुराधायां स्थित्वा ज्येष्ठाऽभिधे ततः ॥ मूले गच्छेन्महीपालो यदि स्याच्च जयो ध्रुवम् ॥ ३१ ॥ हस्ते प्रस्थाय वा स्थित्वा तत्रैव स्वातिचित्रयोः ॥ विशाखायां व्रजन्भूपो विजयं लभते ध्रुवम् ॥ ३२ ॥ प्रस्थाय मृगशीर्षे वा स्थित्वार्द्रायां ततो व्रजन् ॥ पुनर्वस्वोर्महीपालो लभते च जयश्रियम् ॥ ३३ ॥ रेवत्यां पुष्यभे वापि धनिष्ठायां महीश्वरः॥उषित्वा स्वीयशिबिरे रात्रौ गच्छञ्जयत्यरीन् ॥ ३४ ॥

अब नक्षत्रविशेषमें विजययात्राप्रकार लिखतेहैं–अनुराधा नक्षत्रमें प्रस्थान करे, ज्येष्ठामें स्थितरहे और मूल नक्षत्रमें यात्रा करे तो अवश्य राजाकी विजय होतीहै ॥ ३१ ॥ हस्त नक्षत्रमें प्रस्थान करे और स्वाति तथा चित्रा नक्षत्रमें वहीं ठहरे और फिर विशाखा नक्षत्रमें राजा यात्रा करे तो अवश्य जय पावे ॥ ३२ ॥ अथवा मृगशीर्ष नक्षत्रमें प्रस्थान करके आर्द्रामें ठहरारहे और फिर पुनर्वसु नक्षत्रमें राजा यात्रा करे तो जय और लक्ष्मीको प्राप्त करे ॥ ३३ ॥ रेवती, पुष्य, अथवा धनिष्ठा नक्षत्रमें राजा अपने डेरेमें रात्रिभर निवास करके प्रभातही यात्रा करताहै तो शत्रुओंको जीत लेताहै ॥ ३४ ॥

अथ दिक्शूलम्।

दिक्शूलं पूर्वदिग्भागे ज्येष्ठायां शनिसोमयोः ॥ पूर्वाभाद्रपदे याम्यां तथैव गुरुवासरे ॥ ३५ ॥ रवौ शुक्रे च रोहिण्यां पश्चिमायां त्यजेद्बुधः ॥ उदीच्यामुत्तराफाल्गुन्यभिधे मंगले बुधे ॥ ३६ ॥

अथ दिक्शूल लिखतेहैं—ज्येष्ठा नक्षत्र और शनैश्चर सोमवारके दिन पूर्वदिशामें दिक्शूल होताहै और पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र तथा बृहस्पतिवारके दिन दक्षिणमें दिक्शूल होताहै ॥ ३५ ॥ रविवार, शुक्रवार तथा रोहिणी नक्षत्रमें दिशाशूल पश्चिममें होताहै और मंगल तथा बुधवार उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें उत्तरमें दिक्शूल होताहै ॥३६॥

अथ विदिक्शूलं वारेषु।

आग्नेय्यां च गुरौ चंद्रे नैर्ऋत्यां रविशुक्रयोः ॥
ऐशान्यां चंद्रजे वायौ मंगले गमनं त्यजेत् ॥ ३७ ॥

अब विदिक्शूल वारोंमें लिखतेहैं—बृहस्पति और चंद्रवारके दिन आग्नेय दिशामें विदिक्शूल होताहै, सूर्य और शुक्रके दिन नैर्ऋत्य दिशामें, बुधको ईशान दिशामें और मंगलको वायव्य दिशामें विदिक्शूल होताहै यात्रामें सामने दिक्शूल और विदिक्शूल त्याज्यहैं ॥ ३७ ॥

अथ दिक्शूलदोषापनुत्तये विधिः।

सूर्ये घृतं पयश्चंद्रे गुडं भौमे बुधे तिलान् ॥ गुरौ दधि यवाञ्छुक्रे माषान्मंदे नरस्तथा ॥ ३८ ॥ संप्राश्यावश्यके गच्छन्दिक्शूले न च दोषभाक् ॥ तांबूलं भास्करे चंद्रे चंदनं मंगले मृदः ॥ ३९ ॥ बुधे पुष्पं दधीज्ये च घृतं शुक्रे तिलाञ्छनौ ॥ दत्त्वा भुक्त्वाथ धृत्वा वा न दोषः शूलजो यतः ॥ ४० ॥

अब दिक्शूलदोष नाशकेलिये विधि लिखतेहैं—रविवारको घी, सोमवारको दूध, मंगलको गुड़, बुधको तिल, बृहस्पतिको दधि, शुक्रको जौ, शनैश्चरको उड़द ॥ ३८ ॥ भक्षण करके आवश्यकमें यात्रा करै तो दिशाशूलका दोष नहीं होताहै तथा रविवारको तांबूल, सोमवारको चंदन, मंगलको मिट्टी ॥ ३९ ॥ बुधको पुष्प, बृहस्पतिको दधि, शुक्रको घृत, शनैश्चरको तिल दान करके अथवा भोजन करके अथवा उक्त वस्तु लेकरके चलै तो दिक्शूलका दोष नहीं होताहै ॥ ४० ॥

अथ समयविशेषे त्याज्यानि भानि ।

पूर्वाह्णे रोहिणीधिष्ण्यं विशाखाकृत्तिकोत्तराः ॥ मध्याह्नसमये ज्येष्ठाऽश्लेषार्द्रामूलभं तथा ॥ ४१ ॥ अपराह्णे परित्याज्या गमने चाश्विनी सदा ॥ चित्रांत्यमनुराधा च यामिन्याः प्रथमेंशके ॥ ४२ ॥ मध्येंशके त्यजेत्पूर्वात्रितयं भरणी मघा ॥ प्रांत्ये पुनर्वसुस्वातीधनिष्ठाशततारकाः ॥ ४३ ॥

अब समयविशेषमें त्याज्य नक्षत्र लिखतेहैं-पूर्वाह्णके समय रोहिणी, विशाखा, कृत्तिका, उत्तरा इन नक्षत्रोंमें यात्रा न करै और मध्याह्नके समय ज्येष्ठा, आश्लेषा, आर्द्रा, मूल इन नक्षत्रोंमें और (अपराह्न) तीसरे प्रहरके समय अश्विनी नक्षत्रमें और रात्रिके प्रथम भागमें चित्रा, रेवती, अनुराधा नक्षत्रमें ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ और रात्रिके मध्यभागमें तीनों पूर्वा, भरणी, मघा इन नक्षत्रोंमें और रात्रिके अन्त्य भागमें पुनर्वसू, स्वाति, धनिष्ठा, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें यात्रा न करै क्योंकि, उक्त समयोंमें उक्त नक्षत्र त्याज्य हैं ॥ ४३ ॥

अथ सार्वकालं यात्रायां शुभनक्षत्राणि ।

श्रवे पुष्ये मृगे हस्ते श्रेष्ठा यात्रा च सर्वदा ॥ ४४ ॥

अब सार्वकालिक यात्रामें शुभनक्षत्र लिखतेहैं—श्रवण, पुष्य, मृगशिर, हस्त इन नक्षत्रोंमें यात्रा सब समय श्रेष्ठ होतीहै ॥ ४४ ॥

अथ युद्धयात्रायां विशेषः।

राहुभुक्तानि ऋक्षाणि जीवपक्षस्त्रयोदश ॥ मृतपक्षस्तु भोग्यानि कर्तरी तदधिष्ठितम् ॥ ४५ ॥ ततः पंचदशे ग्रस्तं चिंत्यं युद्धे गमादिषु ॥ जीवपक्षः शुभो ज्ञेयो मृतपक्षस्त्वशोभनः ॥ ४६ ॥ मृतपक्षाच्छुभं ग्रस्तं ग्रस्तभात्कर्तरी शुभा ॥ मृतपक्षे सहस्रांशौ जीवपक्षे विधौ स्थिते ॥ ॥ ४७ ॥ यात्रायां विजयस्तत्र विपरीते पराजयः ॥ उभौ चेज्जीवपक्षस्थौ यात्रा तत्रापि शोभना ॥ ४८ ॥ चेदुभौ मृत्युपक्षस्थौ रवींदू तत्र कष्टदा ॥ यायिनो जयदश्चंद्रो जीवपक्षे व्यवस्थितः ॥ ४९ ॥ भानुमाञ्जीवपक्षस्थः स्थायिनो विजयावहः ॥ ५० ॥

अब युद्धयात्रामें विशेष लिखतेहैं—राहु जिस नक्षत्रपर स्थित होय उस नक्षत्रसे पिछले तेरह नक्षत्र जीवपक्ष कहातेहैं और राहुस्थित नक्षत्रसे आगेके तेरह नक्षत्र मृतपक्ष कहातेहैं और राहुके अधिष्ठित नक्षत्रकी कर्त्तरी संज्ञा है ॥ ४५ ॥ और राहुनक्षत्रसे आगेका पंद्रहवां नक्षत्र ग्रस्त कहाताहै यह युद्ध और यात्रादिकोंमें विचारनाचाहिये. यात्रामें जीवपक्ष शुभ होताहै मृतपक्ष अशुभ होताहै॥४६॥मृतपक्षसे ग्रस्त नक्षत्र शुभ होताहै और ग्रस्त नक्षत्रसे कर्त्तरी नक्षत्र शुभ होताहै यदि मृतपक्षमें सूर्य होय और जीवपक्षमें चंद्रमा होय ॥ ४७॥ तो यात्रामें विजय होतीहै और इससे विपरीत होय तो पराजय होतीहै और यदि सूर्य तथा चंद्रमा दोनों ग्रह जीवपक्षमें स्थित होंय तोभी यात्रा शुभ होतीहै ॥ ४८ ॥ और जो सूर्य चंद्रमा दोनों ग्रह मृत्युपक्षमें स्थित होंय तो यात्रा कष्ट देनेवाली होतीहै और यदि चंद्रमा जीवपक्षमें स्थित होय तो जानेवालेके लिये विजय देताहै और जो सूर्य जीवपक्षमें स्थित होंय तो (स्थायी) अपने स्थानपर रहनेवालेकी विजय करताहै ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अथाकुलगणः ।

धनिष्ठाभरणीस्वातीहस्ताश्लेषापुनर्वसू ॥ रोहिणीत्र्युत्तरं चांत्यानुराधे विषमा तिथिः ॥ ५१ ॥ सूर्येन्दुगुरुमंदाख्यवाराश्चैष गणोऽकुलः ॥ अत्र संप्रस्थितो राजा शत्रून् जयति संगरे ॥ ५२ ॥

अब अकुल कुल कुलाकुलसंज्ञा त्रिविधका फल लिखतेहैं-तहाँ प्रथम अकलगण लिखतेहैं-धनिष्ठा, भरणी, स्वाति, हस्त, आश्लेषा, पुनर्वसू, रोहिणी, तीनों उत्तरा, रेवती, अनुराधा ये नक्षत्र और विषम तिथि ॥ ५१ ॥ सूर्य, चंद्र, बृहस्पति, शनैश्चर वार यह सब अकुलगण है इसमें यात्रा करनेवाला राजा युद्धमें शत्रुओंको जीतलेताहै ॥ ५२ ॥

अथ कुलगणः ।

पूर्वाश्विनी मघा पुष्यः कृत्तिका श्रवणो मृगः ॥ चित्रा ज्येष्ठा विशाखा च कुजशुक्रौ चतुर्दशी ॥ ५३ ॥ अथार्काश्विमितास्तिथ्यो गणोयं कुलसंज्ञकः ॥ संग्रामे यायिनो भंगः स्थायिनोऽत्र जयो भवेत् ॥ ५४ ॥

अब कलगण लिखतेहैं-पूर्वा तीनों, अश्विनी, मघा, पुष्य, कृत्तिका, श्रवण, मृगशिर,चित्रा, ज्येष्ठा, विशाखा ये नक्षत्र; मंगल, शुक्र वार; चतुर्दशी ॥ ५३ ॥ द्वादशी, दूज तिथि ये सब कुलगणसंज्ञक हैं इसमें जानेवालेका युद्धमें भंग और स्थायीकी जय होतीहै ॥ ५४ ॥

अथ कुलाकुलगणः ।

अभिजिन्मूलमार्द्रा च शतभं बुधवासरः ॥ द्वितीया दशमी षष्ठी कुलाकुलगणस्त्वयम् ॥ राज्ञः संप्रस्थितस्यात्र संधिर्भवति वैरिणाम् ॥ ५५ ॥

अब कुलाकुल गण लिखतेहैं—अभिजित्, मूल, आर्द्रा, शतभिषा ये नक्षत्र; बुधवार; द्वितीया, दशमी, षष्ठी तिथि ये सब कुलाकुल-गणहै ॥ ५५ ॥ इसमें जानेवाले राजाकी वैरियोंके साथ संधि होजातीहै ॥

अथ नामादिवर्णवशान्नैसर्गिको वर्णस्वरः ।

कछडाधभवानां स्यादकारो वर्णजः स्वरः ॥ खजढानम-
पानां तु स्वर ईकार उच्यते ॥ ५६ ॥ गरुतापयशा वर्णा
उकारस्वरभाजिनः॥ घटथाफरसा वर्णा एकारस्वरसंज्ञकाः॥
॥ ५७ ॥ चठदा वलहाश्चैषामोकारः कथितः स्वरः ॥
नाम्नि यश्चादिमो वर्णस्तद्वशाद्वर्णजः स्वरः ॥ ५८ ॥

अब नामादिवर्णवशसे नैसर्गिक वर्णस्वर लिखतेहैं—क, छ, ड, ध, भ, व इन वर्णोंका अकारस्वर है. ख, ज, ढ, न, म, प इन वर्णोंका ईकारस्वरहै ॥ ५६ ॥ ग, रु, ता, प, य, श इन वर्णोंका उकारस्वर है. घ, ट, थ, फ, र, स इन वर्णोंका एकारस्वर है ॥ ५७ ॥ च, ठ, दा, व, ल, ह इन वर्णोंका ओकारस्वरहै जिसके नामके आदिमें जो वर्ण होय उसी वर्णका स्वर जानलेना चाहिये ॥ ५८ ॥

अथ तिथिस्वरः ।

अकारादिस्वराः पंच नंदाद्यास्तिथयः क्रमात् ॥ निजस्वर-
तिथेर्ज्ञेया बालप्रभृतयः स्वराः ॥ ५९ ॥ आद्यो बालः
कुमारोन्यो युवा वृद्धस्तथा मृतिः ॥ ईषल्लाभकरस्त्वाद्यः
कुमारस्त्वर्द्धलाभदः ॥ ६० ॥ सर्वां सिद्धिं युवा कुर्याद्वृद्धो
मध्योऽधमोंतिमः ॥ ६१ ॥

अब तिथिस्वर लिखतेहैं—नंदादिक पांच तिथियोंके अकारादि पांच स्वर हैं अर्थात् नंदाका अकार, भद्राका इकार, जयाका उकार, रिक्ताका एकार और पूर्णाका ओकारस्वरहै; अपनेस्वरकी ...

वाल आदिके स्वर जानने ॥ ५९ ॥ प्रथम वालस्वर, फिर दूसरा कुमार, तीसरा युवा, चौथा वृद्ध, पांचवां मृत्युस्वर होताहै । पहिला वालस्वर थोड़ा लाभ देताहै, कुमारस्वर आधा लाभ देताहै ॥ ६० ॥ युवास्वर सर्वसिद्धि करताहै, वृद्धस्वर मध्यम है और मृत्युस्वर अधम है ॥ ६१ ॥

अथ तात्कालिकस्वरः ।

तिथेर्गतैष्ययोगस्य यः स्यादेकादशांशकः ॥
तात्कालिकः स्वरश्चासौ स्वावस्थातः क्रमात्स्मृतः ॥ ६२ ॥

अव तात्कालिकस्वर लिखतेहैं—तिथिकी गतघटी और भोग्यघटीके जोड़का ग्यारहवां भाग जो होय सो अपनी अवस्थाके क्रमसे तात्कालिक स्वर होताहै ॥ ६२ ॥

अथ पथिराहुचक्रम् ।

विशाखापुन्यभाऽऽश्लेपाऽनुराधाऽश्विशताभिधम् ॥ धनिष्ठैतानि धर्मे स्युश्चक्रेऽस्मिन्पथिराहुके ॥ ६३ ॥ भरणी श्रवणो ज्येष्ठा मघा स्वाती पुनर्वसू ॥ पूर्वाभाद्रपदैतानि भान्यर्थे गदितानि च ॥ ६४ ॥ चित्रार्द्रा कृत्तिका मूलं पूर्वाफाल्गुनिकाऽभिजित् ॥ तथा भाद्रोत्तरैतानि कामे धिष्ण्यानि सप्त च ॥ ६५ ॥ उत्तराफाल्गुनी हस्तो रोहिणी रेवती मृगः ॥ पूर्वापाढाद्वयं मोक्षे भान्येतानि बुधा जगुः ॥ ॥ ६६ ॥ धर्मर्क्षसंस्थिते सूर्ये चंद्रो मोक्षार्थगः शुभः ॥ अर्थर्क्षे भास्करे चंद्रः प्रशस्तो धर्ममोक्षगः ॥ ६७ ॥ सूर्ये कामर्क्षगे श्रेष्ठो मोक्षधर्मार्थगः शशी ॥ मोक्षधिष्ण्यस्थिते सूर्ये चंद्रमा धर्मगः शुभः ॥ ६८ ॥ अन्यथा त्वशुभो ज्ञेयो यात्रायां शुभमीप्सुभिः ॥ ६९ ॥

अथ पथिराहुचक्र लिखतेहैं—विशाखा, पुष्य, आश्लेषा, अनुराधा, अश्विनी, शतभिषा, धनिष्ठा ये नक्षत्र पथिराहुके चक्रमें

धर्ममार्गके हैं ॥ ६३ ॥ भरणी, श्रवण, ज्येष्ठा, मघा, स्वाती, पुनर्वसू, पूर्वाभाद्रपदा ये नक्षत्र अर्थमार्गके हैं ॥ ६४ ॥ चित्रा, आर्द्रा, कृत्तिका, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, अभिजित्, उत्तराभाद्रपदा ये सात नक्षत्र काममार्गके हैं ॥ ६५ ॥ उत्तराफाल्गुनी, हस्त, रोहिणी, रेवती, मृगशिरा, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा ये नक्षत्र मोक्षमार्गके हैं ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ ६६ ॥ यदि धर्मनक्षत्रमें सूर्य स्थित होय और चंद्रमा मोक्ष वा अर्थमें स्थित होय तो यात्रा शुभ होतीहै और जो अर्थमें सूर्य होय और धर्म वा मोक्षमें चंद्रमा स्थित होय तो यात्रा श्रेष्ठ होतीहै ॥ ६७ ॥ सूर्य तो कामसंज्ञक नक्षत्रोंमें और चंद्रमा धर्म और अर्थसंज्ञक नक्षत्रोंमें होय तो श्रेष्ठहोताहै तथा मोक्ष नक्षत्रोंमें सूर्य स्थित होय तो चंद्रमा धर्मनक्षत्रोंमें शुभ होताहै॥६८॥ अन्यथा यात्रा अशुभ होतीहै यात्रामें शुभ चाहनेवाले पुरुषोंको यह पथिराहुचक्र जानना चाहिये ॥ ६९ ॥

अथ यात्रायां गोरक्षकमते तिथिचक्रं तत्फलं च ।

मासे शुक्लादिके पौषे तिथयः प्रतिपन्मुखाः॥ द्वितीयाद्यास्तु माघे स्युस्तृतीयाद्यास्तु फाल्गुने ॥ ७० ॥ एवं चान्येषु मासेषु तिथ्यो द्वादशसंज्ञकाः ॥ लेख्याश्चक्रे त्रयोदश्याः संविहाय तिथित्रयम् ॥ ७१ ॥ तृतीयादित्रये यत्त्रयोदश्यादिके फलम् ॥ मासेषु तिथिकोष्ठस्थतिथीनां क्रमतः फलम्॥७२॥याने प्राच्यादिकाष्ठासु वक्ष्ये द्वादशधा क्रमात्॥ सौख्यं शून्यं धनार्तिश्च लाभः प्रीतिर्भयं धनम् ॥ ७३ ॥ कष्टं सौख्यं कलिर्मृत्युःशून्यं प्राच्यां फलं क्रमात्॥क्लेशो नैस्वं व्यथा सौख्यं द्रव्याप्तिर्लाभपीडने ॥ सौख्यं लाभो व्ययो लाभः सौख्यं याम्यदिशि ध्रुवम् ॥ ७४ ॥ भयं नैस्वं प्रियाप्तिश्च भद्रं द्रव्यं मतिर्धनम् ॥ क्लेशाल्लाभोऽर्थसिद्धिः

स्वं लाभो मृत्युश्च पश्चिमे ॥ ७५ ॥ धनं मिश्रं धनं लाभः सौख्यं लाभो व्यथा सुखम् ॥ कष्टं द्रव्यत्वशून्यत्वे कष्टमुत्तरदिक्फलम् ॥ ७६ ॥

अव यात्रामें गोरक्षमतमें तिथिचक्र और उसका फल लिखतेहैं- पौषमासमें शुक्लप्रतिपदासे लेकर और माघमें शुक्लाद्वितीयासे लेकर, फाल्गुनमें शुक्लातृतीयासे लेकर इसी प्रकार अन्य मासोंमें शुक्लाचतुर्थी, शुक्लापंचमी आदि तिथियोंसे लेकर वारह तिथि चक्रमें लिखे और त्रयोदश्यादि तीन तिथि (१३–१४–३०) छोड़देवे अर्थात् नहीं लिखे ॥ ७० ॥ ७१ ॥ तृतीयादि तीन तिथियोंका जो फल है सोही त्रयोदश्यादि तीन तिथियोंकाभी जानै. मासोंमें तिथिकोष्ठ लिखेहुए हैं तिनमें वारहतिथियोंका वारह प्रकारका फल क्रमसे पूर्वादि दिशाओंकी यात्रामें जो होताहै उसे कहतेहैं सौख्य, शून्य, धननाश, लाभ, प्रीति, भय, धन ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ कष्ट, सौख्य,

अथ गोरक्षमतेन यात्राचक्रम् ।

पौ.	मा.	फा.	चै.	वै.	ज्ये.	आ.	श्रा.	भा.	आ.	का.	मा.	पूर्वे	दक्षिणे	पश्चिमे	उत्तरे
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	सौख्य	क्लेश	भय	धन
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शून्य	दरिद्र	दरिद्र	मिश्र
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	धनना.	व्यथा	प्रिया.	धन
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	लाभ	सौख्य	भद्र	लाभ
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	प्रीति	द्रव्य	द्रव्य	सौख्य
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भय	लाभ	मति	लाभ
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	धन	पीडा	धन	व्यथा
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कष्ट	सुख	क्लेश	सुख
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	सुख	लाभ	लाभ	कष्ट
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	व्याधि	व्यय	मर्धसि	द्रव्य
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मृत्यु	लाभ	धनना.	शून्य
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	शून्य	सुख	मृत्यु	कष्ट

कलह, मृत्यु, शून्य ये फल क्रमसे पूर्वदिशाकी यात्राका है. क्लेश, निर्धनता, व्यथा, सौख्य, द्रव्याप्ति, लाभ, पीडा, सौख्य, लाभ, व्यय, लाभ, सौख्य यह फल दक्षिण दिशाका है ॥ ७४ ॥ भय, निर्धनता, प्रियकी प्राप्ति, कल्याण, द्रव्यलाभ, मति, धन, क्लेशसे लाभ, अर्थसिद्धि, धन, लाभ, मृत्यु यह फल पश्चिमदिशाका है ॥ ७५ ॥ धन, मिश्र, धन, लाभ, सौख्य, लाभ, व्यथा, सुख, कष्ट, द्रव्यस्व, शून्यस्व, कष्ट यह फल उत्तर दिशाका है ॥ ७६ ॥

अथ सर्वांकयोगफलम्।

तिथिनक्षत्रवारैक्यं सप्ता ७ ऽष्टा ८ ऽग्नि ३ विभाजितम् ॥ आदिशून्येऽतिपीडा स्यान्मध्यशून्ये भयं तथा ॥ ७७ ॥ शून्येंत्ये वपुषो रोगो मृत्युः शून्यत्रये ध्रुवम् ॥ जयश्चाऽर्थागमः सौख्यं शेषे च स्थानकत्रये ॥ चिंत्यमेतद्धि यात्रादौ शुक्लाद्यास्तिथयोत्र तु ॥ ७८ ॥

अब सर्वांकयोगफल लिखतेहैं—तिथि, नक्षत्र, वारको जोडकर उसे तीन जगह लिखे एक जगह सातका, दूसरी जगह आठका, तीसरी जगह तीनका, भाग दे आदिमें शून्य बचै तो अतिपीडा होय, मध्यमें शून्य बचे तो भय होय ॥ ७७ ॥ अंत्यमें शून्य बचें तो शरीरमें रोग होय और तीनों जगह शून्य बचै तो मृत्यु होय और जो तीनों जगह अंक शेष बचें तो क्रमसे जय, अर्थागम, सौख्य होताहै यह सर्वांकयोग यात्रामें अवश्यही विचारै. परन्तु इसमें शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर तिथि जोड़नी चाहिये ॥ ७८ ॥

अथाडलभ्रमौ त्याज्यौ।

रविभात्साभिजिच्चांद्रे सप्तभि ७ र्द्व्य २ द्रि ७ शेषके ॥ आडलोथ त्रि ३ षट् ६ शेषे भ्रमो नेष्टौ गमे त्विमौ ॥७९॥

अब आडल और भ्रम त्याज्य लिखतेहैं—सूर्यके नक्षत्रसे अभि· जित्समेत चंद्रमाके नक्षत्रतक गिनै सातका भागदे शेप दो २ वा सात ७ वचैं तो आडल योग होताहै और तीन ३ अथवा छह ६ वचैं तो भ्रम योग होताहै ये दोनों योग यात्रामें नेष्ट हैं ॥ ७९ ॥

अथ प्रशस्तो हैवरयोगः ।

चांद्रभं सूर्यभाद्युक्तं पक्षादितिथिवासरैः ॥
नवाप्तं सप्तशेषे तु हैवरः स्याच्छुभो गमे ॥ ८० ॥

अब प्रशस्त हैवरयोग लिखतेहैं—सूर्यके नक्षत्रसे चंद्रमाके नक्षत्र तक गिनै फिर उसमें पक्षादितिथि और वार जोडदे नौका भाग देय जो सात ७ शेप वचै तो हैवर योग होताहै यात्रामें शुभ कहाहै ॥ ८० ॥

अथ घवाडाख्यः शुभयोगः ॥

रविभाच्चांद्रभं त्रिघ्नं ३ तिथियुक्सप्त ७ भाजितम् ॥
घवाडस्तु त्रिशेषे स्याद्गमने श्रेष्ठ ईरितः ॥ ८१ ॥

अब घवाडाख्य शुभयोग लिखतेहैं—सूर्यके नक्षत्रसे चंद्रमाके नक्षत्रतक गिनै तीनसे गुणा करके तिथि जोड़ देय सातका भाग देनेसे जो तीन शेप वचैं तो घवाड़ योग होताहै यात्रामें श्रेष्ठ कहाहै ॥ ८१ ॥

अथ घातचंद्राः ।

जन्मस्थो मेपराशेः स्याद्वृपभस्य तु पंचमः ॥ नवमो मिथुनस्येंदुर्द्वितीयः कर्कटस्य च ॥ ८२ ॥ पष्ठस्तु सिंहराशेश्च कन्याया दशमः स्मृतः ॥ तृतीयस्तु तुलाराशेर्वृश्चिकस्य च सप्तमः ॥ ८३ ॥ चतुर्थो धन्विनो ज्ञेयो मकरस्याऽष्टमस्तथा ॥ कुंभस्यैकादशः प्रोक्तो मीनस्य द्वादशः स्मृतः ॥ ८४ ॥ घातचंद्रा इमे वर्ज्या यात्रायां

राजदर्शने ॥ विवाहेवाहनारोहे युद्धे भैषज्यसेवने ॥ विवाहादिशुभेऽन्यत्र नैते चिंत्या मनीषिभिः ॥ ८५ ॥

अथ घातचंद्र लिखतेहैं—मेषराशिको जन्मका चंद्रमा घातक है, वृषको पांचवां, मिथुनको नौवां, कर्कको दूसरा ॥ ८२ ॥ सिंहको छठा, कन्याको दशवां, तुलाको तीसरा, वृश्चिकको सातवां ॥ ८३ ॥ धनुको चौथा, मकरको आठवां, कुंभको ग्यारहवां, मीनराशिको बारहवां चंद्रमा घातक होताहै ॥ ८४ ॥ यह घातकचंद्रमा यात्रामें, राजदर्शनमें, विवाहमें, सवारीपर चढनेमें, युद्धमें, औषध सेवनमें, विवाहादि शुभ कार्योंमें वर्जित है और अन्य कार्योंमें शुभ है ऐसा पंडितोंको विचारना चाहिये ॥ ८५ ॥

अथ घातनक्षत्राणि।

मेषे मघा वृषे हस्तो मिथुने स्वातिरुच्यते ॥ कर्कटे चानुराधाख्यं सिंहे मूलं प्रकीर्तितम् ॥ ८६ ॥ कन्यायां श्रवणो ज्ञेयस्तुलायां शततारका ॥ वृश्चिके रेवतीधिष्ण्यं भरणी धनुषि स्मृता ॥ ८७ ॥ मकरे रोहिणी कुंभे चार्द्राश्लेषा तु मीनभे॥एतानि घातधिष्ण्यानि जन्मराशौ नरस्य च॥८८॥

अथ घात नक्षत्र लिखतेहैं—मेषराशिको मघा नक्षत्र घातहै, वृषको हस्त, मिथुनको स्वाति, कर्कको अनुराधा, सिंहको मूल, कन्याको श्रवण, तुलाको शतभिषा, वृश्चिकको रेवती, धनुको भरणी, मकरको रोहिणी, कुंभको आर्द्रा, मीनको आश्लेषा मनुष्योंकी जन्मराशिपर यह घातक नक्षत्र कहेहैं ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

अथ घातवाराः।

मेषे रविर्बुधः कर्के मिथुने चंद्र एव च ॥ कन्यावृषभसिंहेषु शनिः स्यान्मकरे कुजः ॥ ८९ ॥ धनुर्वृश्चिकमीनेषु शुक्रे तुलकुंभयोः॥जीवश्चैते जन्मराशौ घातवारा बुधैः स्मृ

अब घातवार लिखतेहैं–मेष राशिवालेको रविवार, कर्क राशिवालेको बुधवार, मिथुन राशिको चंद्रवार, कन्या वृष सिंह राशिवालेको शनिवार, मकर राशिवाले मनुष्योंको मंगलवार ॥ ८९ ॥ धनु वृश्चिक मीन राशिवालेको शुक्रवार, तुला और कुंभ राशिवालेको बृहस्पतिवार घातहै पंडितोंने जन्मराशिपर ये घातवार कहेहैं ॥९०॥

अथ घाततिथयः।

मेषवृश्चिकयोर्नंदा भद्रा मिथुनकर्कयोः ॥
कन्यावृषभमीनेषु पूर्णा घाततिथिः स्मृता ॥ ९१ ॥

अब घाततिथियें लिखतेहैं–मेष और वृश्चिक राशिको नंदा तिथि; मिथुन और कर्कराशिको भद्रा; कन्या, वृष, मीन राशिको पूर्णा घाततिथि हैं ॥ ९१ ॥

अथ घाततिथीनां त्याज्यघटिकाः।

कार्ये त्वावश्यके नाडीषट्कं घाततिथौ बुधैः ॥
आदिमं संपरित्याज्यं नो निंद्याः शेषनाडिकाः ॥ ९२ ॥

अब घाततिथिओंकी त्याज्यघटिका लिखतेहैं–आवश्यक कार्य होय तो तिथिके आदिकी छह घडी पंडितोंने त्याज्य कहीहैं और शेष घडी शुभ होतीहैं निंदित नहीं ॥ ९२ ॥

अथावश्यके घातचंद्रस्य नक्षत्रपादास्त्याज्याः।

मेषेषु कृत्तिकाद्योंघ्रि १ वृषे चित्राद्वितीयकः २ ॥ युग्मे शतेतृतीयोंघ्रि ३ मघाया अपि कर्कटे ॥ ९३ ॥ धनिष्ठाद्य १ स्तथा सिंहे स्त्रियां चार्द्रातृतीयकः ३ ॥ तुले मूलद्वितीयोंघ्रि २ रलौ चाहेस्तृतीयकः ॥ ९४ ॥ पूभातुर्यो धनुषि हि मघातुर्यो ४ मृगे तथा ॥ कुंभे मूलचतुर्थोऽ ४ घ्रिर्मीने पूभातृतीयकः ॥ ९५ ॥ त्याज्या घातविधौ चोक्तपादा आवश्यके बुधैः ॥ ९६ ॥

अब आवश्यकमें घातचंद्रका नक्षत्रपाद त्याज्य लिखतेहैं—मेष राशिवालेको कृत्तिकाका पहिला चरण, वृष राशिवालेको चित्राका दूसरा चरण, मिथुन राशिवालेको शतभिषाका तीसरा चरण, कर्क राशिवालेको मघाका तीसरा चरण॥९३॥सिंह राशिवालेको धनिष्ठाका पहिला चरण, कन्या राशिको आर्द्राका तीसरा चरण, तुला राशिको मूलका दूसरा चरण, वृश्चिक राशिको आश्लेषाका तीसरा चरण ॥ ९४ ॥ धनु राशिको पूर्वाभाद्रपदका चौथा चरण, मकर राशिको मघाका चौथा चरण, कुंभ राशिवालेको मूलका चौथा चरण, मीन राशिवालेको पूर्वाभाद्रपदका तीसरा चरण त्याज्य है. पंडितोंने आवश्यक कार्यमें घात चंद्रमाविषे नक्षत्रोंके उक्त चरण त्याज्य बतायेहैं॥९५।९६॥

अथ सूर्यादयो घातग्रहाः। तत्र घातसूर्याः।

वेदे ४ भा ८ऽर्का १२श्च नंदें ९दु १ रस६ दिक् १० शैल-
७ संमिताः ॥ रुद्र ११ नेत्रा २ ग्नि ३ संख्याश्च घातसूर्या-
स्त्विमेऽजतः ॥ ९७ ॥

अब सूर्यादि घातग्रह लिखतेहैं—तहां पहिले घातसूर्य लिखतेहैं—मेषादिक राशियोंके क्रमसे चौथे, आठवें, बारहवें, नौवें, जन्मके, छठे, दशवें, सातवें, ग्यारहवें, दूसरे, तीसरे सूर्य घातक होतेहैं॥९७॥

अथ घातचंद्राः प्रसंगात्पुनरपि।

इंदु १ बाणां ५ क ९ नेत्रां२ग ६ दिग१० ग्नि ३ नग ७
संख्यकाः ॥ वेदा ४ष्टे ८ शा ११र्क १२ संख्यांका मेषाद्वा-
तेंदवः क्रमात् ॥ ९८ ॥

अब प्रसंगसे पुनः घातचन्द्र लिखतेहैं—जन्मका, पांचवाँ, नौवां, दूसरा, छठा, दशवां, तीसरा, सातवां, चौथा, आठवां, ग्यारहवां, बारहवां चंद्रमा मेषादिक राशियोंकेलिये क्रमसे घात होताहै ॥ ९८ ॥

अथ घातभौमाः।

बाणां ५ कें ९ दु १ रसा ६ शा १० क्ष् २ शैल ७ रुद्रे

११ भ ८ संमिताः ॥ सूर्या १२ ऽम्य ३ ब्धि ४ मिता मेषात्क्रमाद्घातधरात्मजाः ॥ ९९ ॥

अव घात भौम लिखतेहैं-पांचवां, नौवाँ, जन्मका, छठा, दशवां, दूसरा, सातवां, ग्यारहवां, आठवां, बारहवां, तीसरा, चौथा मंगल क्रमसे मेषादि राशियोंकेलिये घात होताहै ॥ ९९ ॥

अथ घातबुधाः ।

नेत्रां २ गा ६ शा १० ऽग्नि ३ शैले ७ श ११ वेदा ४ ष्टे ८ ष्वं ५ क ९ संमिताः ॥ द्वादशे १२ न्दु १ मिता घातबोधनाः क्रमतस्त्वजात् ॥ १०० ॥

अब घात बुध लिखतेहैं-दूसरा, छठा, दशवां, तीसरा, सातवां, ग्यारहवां, चौथा, आठवां, पांचवां, नौवां, बारहवां, जन्मका मेषादिराशियोंको क्रमसे बुध घात होताहै ॥ १०० ॥

अथ घातगुरवः ।

रसा ६ शा १० नेत्र २ शैले ७ श ११ वह्नि ३ नागा ८ ऽर्क १२ संमिताः ॥ नंदे ९ न्दु १ ब्धी ४ षु ५ संख्यास्तु घातेज्या मेषतः क्रमात् ॥ १०१ ॥

अब घातगुरु लिखतेहैं-छठा, दशवां, दूसरा, सातवां, ग्यारहवां, तीसरा, आठवां, बारहवां, नौवाँ, जन्मका, चौथा, पांचवां बृहस्पति मेषादि राशियोंके क्रमसे घात होताहै ॥ १०१ ॥

अथ घातभृगवः ।

शैल ७ दिग् १० वह्नि ३ नागा ८ ऽर्क १२ वेद ४ नंदे ९ दुभि १ मिताः ॥ आशा १० ऽश्वि २ बाणां ५ ग ६ संख्या घातशुक्रास्तु मेषभात् ॥ १०२ ॥

अब घात भृगु लिखतेहैं-सातवां, दशवां, तीसरा, आठवां, बारहवां, चौथा, नौवां, जन्मका, दशवां, दूसरा, पांचवां, छठा घात शुक्र मेषादि राशियोंको क्रमसे होताहै ॥ १०२ ॥

अथ घातशनयः।

वह्नि ३ शैले ७ श ११ वेदा ४ ऽष्ट ८ सूर्य १२ वाणां ५ क ९ पणिताः ॥ दि १० गिंदु १ नेत्र २ संख्याश्च मेषाद्वातशनैश्चराः ॥ १०३ ॥

अथ घातशनि लिखतेहैं–तीसरा, सातवां, ग्यारहवां, चौथा, आठवां, बारहवां, पांचवां, नौवां, छठा, दशवां, जन्मका, दूसरा शनैश्चर मेषादि राशियोंकेलिये क्रमसे घात होताहै ॥ १०३ ॥

अथ स्त्रीणां घातचंद्राः।

भू १ नागा ८ श्वां ७ क ९ वेदा ४ ग्नि ३ रसा ६ ऽध्या २ शा १० शिवे ११ षु ५ भिः ॥ सूर्यैश्च १२ प्रमिता मेषा-द्वातचंद्रा मृगीदृशाम् ॥ १०४ ॥

अथ स्त्रियोंके घातचंद्र लिखतेहैं–जन्मका, आठवां, सातवां, नौवां,

अथ तिथ्यादिग्रहघातचक्रम्।

राशि	तिथि	वार	नक्षत्र	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	स्त्रीघातचं.
मेष	नंदा	रवि	मघा	४	१	५	२	६	७	३	१
वृष	पूर्णा	शनि	हस्त	८	५	९	६	१०	१०	७	८
मिथुन	भद्रा	चंद्रमा	स्वाति	१२	९	१	१०	२	३	११	७
कर्क	भद्रा	बुध	अनुरा.	९	२	६	३	७	८	४	९
सिंह	जया	शनि	मूल	१	६	१०	७	११	१२	८	४
कन्या	पूर्णा	शनि	श्रवण	६	१०	२	११	३	४	१२	३
तुला	रिक्ता	बृहस्प	शत.	१०	३	७	४	८	९	५	६
वृश्चिक	नंदा	शुक्र	रेवती	७	७	११	८	१२	१	९	२
धनु	जया	शुक्र	भरणी	११	४	८	५	९	१०	६	१०
मकर	रिक्ता	मंगल	रोहिणी	११	८	१२	९	१	२	१०	११
कुंभ	जया	बृहस्प.	आर्द्रा	२	११	३	१२	४	५	१	५
मीन	पूर्णा	शुक्र	आश्ले.	३	१२	४	१	५	६	२	१२

चौथा; तीसरा, छठा, दूसरा, दशवाँ ग्यारहवां, पांचवां, वारहवां चंद्रमा स्त्रियोंकेलिये मेषादिराशियोंके क्रमसे घात होताहै ॥ १०४ ॥

अथ चंद्रवासस्तत्फलम् ।

मेषसिंहधनुःसंस्थः पूर्वस्यां दिशि चंद्रमाः ॥ दक्षिणस्यां वसेन्नित्यं कन्यावृषभनक्रगः ॥ १०५ ॥ तुलामिथुनकुंभस्थः पश्चिमायां निशाकरः ॥ कर्कवृश्चिकमीनेषु गतस्तिष्ठेत्तथोत्तरे ॥ १०६ ॥ संमुखेऽब्जेऽर्थलाभः स्यात्सुखं संपच्च दक्षिणे ॥ पृष्ठगे निधनं यातुर्वामभागे वसुक्षयः ॥ ॥ १०७ ॥ चंद्रवासस्त्वयं प्रोक्तो दिशो राश्यनुसारतः ॥ लोकाद्वा व्यवहाराय मूलं तस्य विचिंत्यताम् ॥ १०८ ॥

अथ चन्द्रवास और उसका फल लिखतेहैं—मेष सिंह और धनुका चंद्रमा पूर्व दिशामें रहताहै.कन्या, वृष, मकरका चंद्रमा दक्षिण दिशामें रहताहै ॥ १०५॥ तुला और मिथुन, कुंभका चंद्रमा पश्चिम दिशामें रहताहै. कर्क, वृश्चिक, मीनका चंद्रमा उत्तर दिशामें रहताहै ॥१०६॥ चंद्रमा सम्मुख होय तो अर्थलाभ होताहै और दक्षिणमें होय तो सुख और संपत्ति होतीहै और पीठपीछे होय तो जानेवालेकी मृत्यु होतीहै और वामभागमें होय तो धनकी हानि होतीहै ॥ १०७ ॥ दिशाकी राशिके अनुसार लोकसे व्यवहारके लिये यह चंद्रमाका वास कहाहै इसका मूलकारण विचारना चाहिये ॥ १०८ ॥

अथावश्यकैकस्मिन्नपि राशौ घटिकात्मकचंद्रवासश्चतुर्दिक्षु कैश्चिदुक्तः ।

नाड्यः सप्तदश प्राच्यां याम्यां तिथिमिता १५ स्ततः ॥ ततः स्वर्गमिताः २१ प्रत्यगुत्तरस्यां तु षोडश १६ ॥१०९॥ पुनः सप्तदश १७ प्राच्यां दक्षिणस्यां चतुर्दश १४ ॥

पश्चिमे नखसंख्या २० स्ता उदीच्यां पंचभूमिताः १५ ॥ ११० ॥ वारद्वयं भ्रमश्चेंदोः स्ववासस्थानतः क्रमात् ॥ एकराशिस्थितोपीह तद्दिशाजं फलं दिशेत् ॥ १११ ॥

अब आवश्यकमें एक राशिमें घटिकात्मक चंद्रवास चतुर्दिक्षुमें किसीका कहा लिखतेहैं—चन्द्रमा सत्रहघडी पूर्वमें और पंद्रहघडी दक्षिणमें, इक्कीसघड़ी पश्चिममें, सोलहघड़ी उत्तरमें ॥१०९॥ और फिर सत्रहघड़ी पूर्वमें, चोदहघडी दक्षिणमें, वीसघड़ी पश्चिममें, पंद्रहघड़ी उत्तरमें रहताहे ॥ ११० ॥ अपने निवासस्थानके क्रमसे चंद्रमाका दोवार भ्रमण होताहे. यद्यपि चंद्रमा एकराशिमें स्थितभी रहताहे परन्तु फल उसी दिशाका देताहे जिसमें कि, वह स्थितहे ॥ १११ ॥

अथ योगिनीवासः ।

नवमीप्रतिपत्तिथ्योः प्राच्यां तिष्ठति योगिनी ॥ अग्निकोणे तृतीयायामेकादश्यां तथैवहि ॥ ११२ ॥ त्रयोदश्यां च पंचम्यां दक्षिणस्यां तु योगिनी ॥ द्वादश्यां नैर्ऋते ज्ञेया चतुर्थ्यामपि सर्वदा ॥ ११३ ॥ चतुर्दश्यां च षष्ठ्यां च पश्चिमायां दिशि ध्रुवम् ॥ वायुकोणे तु सप्तम्यां पूर्णिमायां तथैव च ॥११४॥ योगिन्युत्तरदिग्भागे द्वितीयादशमीदिने ॥ अमायां च तथाष्टम्यामेशान्यां योगिनी भवेत् ॥११५॥ योगिनी संमुखे द्यूते गमे युद्धे च मृत्युदा ॥ अशुभा वामभागस्था पृष्ठे दक्षे जयप्रदा ॥ ११६ ॥

अब योगिनीवास लिखतेहैं—नोमी और पड़वा तिथिमें योगिनी पूर्वमें रहतीहे, तृतीया और एकादशीको अग्निकोणमें योगिनी रहतीहे ॥ ११२ ॥ त्रयोदशी और पंचमीको दक्षिणमें योगिनी रह[illegible] द्वादशी और चौथको नैर्ऋत्यमें योगिनी रहतीहे ॥ ११३ [illegible] और षष्ठीको पश्चिममें योगिनी रहतीहै. सप्तमी और

वायव्यमें योगिनी रहतीहै ॥ ११४ ॥ द्वितीया और दशमीको उत्तरमें योगिनी रहतीहै, अमावस्या और अष्टमीको ईशानमें योगिनी रहतीहै ॥ ११५ ॥ जुआ खेलनेमें, यात्रामें, युद्धमें सम्मुख योगिनी मृत्यु देनेवाली, वामभागमें अशुभ और पीठकी तथा दाहिनी योगिनी जय देनेवाली होतीहै ॥ ११६ ॥

अथ तात्कालिकयोगिनी ।

प्राच्युत्तराग्निनैर्ऋत्ययाम्यपश्चिमवायुषु ॥ ऐशान्यां योगिनी गच्छेत्स्वदेशः कथितः क्रमात् ॥ ११७॥ यामार्द्धं भोगकालोस्यास्तिथौ द्विश्रयणं सदा ॥ तात्कालयोगिनी चैषा जयदा पृष्ठदक्षिणे ॥ ११८ ॥

अब तात्कालिकयोगिनी लिखतेहैं—पूर्व, उत्तर, अग्निकोण, नैर्ऋत्य, दक्षिण, पश्चिम, वायव्य, ईशान इन दिशाओंमें योगिनी क्रमसे आधेआधे प्रहर निवास करतीहै और एक तिथिमें योगिनीका भ्रमण दोबार होताहै यहही तात्कालयोगिनी कहातीहै पीठकी और दाहिनी जय देनेवाली होतीहै ॥ ११७ ॥ ११८ ॥

अथ कालपाशः ।

उत्तरस्यां रवेर्वारे वायौ चंद्रदिने भवेत् ॥ भौमवारे प्रतीच्यां तु नैर्ऋत्यां बुधवासरे ॥ ११९ ॥ यमाशायां गुरोर्वारे वह्नेर्दिशि भृगोर्दिने॥ प्राच्यां दिशि शनेर्वारे कालः प्रोक्तो मनीषिभिः ॥ १२० ॥ कालस्याभिमुखः पाशो वैपरीत्यं तयोर्निशि॥तावुभौ संमुखौ त्याज्यौ वामदक्षिणगौ शुभौ १२१

अब कालपाश लिखतेहैं—रविवारको उत्तरमें, सोमवारको वायव्यमें; मंगलको पश्चिममें, बुधको नैर्ऋत्यमें ॥ ११९ ॥ बृहस्पतिको दक्षिणमें, शुक्रको अग्निकोणमें, शनैश्चरको पूर्वमें काल रहताहै ऐसा पूर्वपंडितोंने कहाहै ॥ १२० ॥ और कालके सम्मुख पाश रहताहै

और रात्रिमें दोनों विपरीत रहतेहैं अर्थात् दिनमें जिधर काल होताहै उस दिशामें रात्रिमें पाश रहताहै और दिनमें जिस दिशामें पाश रहताहै उसी दिशामें रात्रिमें काल रहताहै दोनों काल और पाश सम्मुख त्याज्यहैं और वाम, दक्षिणमें शुभ होतेहैं ॥ १२१ ॥

अथ यामार्द्धात्मकश्च द्विविधो राहुः।

पूर्वाद्दिवा पराद्रात्रौ षष्ठींषष्ठींदिशं तमः ॥
यामार्द्धं भ्रमतीशानात्तुर्यांतुर्यां घटीद्वयम् ॥ १२२ ॥

अब यामार्द्धात्मक द्विविध राहु लिखतेहैं–राहु पूर्वसे दिनमें और पश्चिमसे रात्रिमें आधे आधे प्रहर भ्रमण करताहै, छठी छठी दिशामें जाताहै दूसरे प्रकारका राहु ईशान दिशासे चौथीचौथी दिशामें दोदोघडी रहताहै ॥ १२२ ॥

एतदेव स्पष्टयति। अथ दिवार्द्धयामराहुः।

राहुर्यामार्द्धमानेन याति सूर्योदयात्क्रमात् ॥
शक्रवायुयमेशांबुवह्निग्लौरक्षसां दिशि ॥ १२३ ॥

इसी बातको स्पष्ट लिखतेहैं–सूर्योदयसे लेकर आधेआधे प्रहर राहु क्रमसे पूर्व, वायव्य, दक्षिण, ईशान, पश्चिम, आग्निकोण, उत्तर, नैर्ऋत्य दिशामें रहताहै ॥ १२३ ॥

अथ रात्रावर्द्धयामराहुः।

रात्रौ वरुणवह्नींदुरक्षःशक्रमरुद्दिशि ॥
याम्यां शैवदिशि प्रोक्तो भ्रमो यामार्द्धमानतः ॥ १२४ ॥

अब रात्रिमें अर्द्धयामराहु लिखतेहैं–रात्रिमें राहु आधेआधे प्रहर पश्चिम, आग्नेय, उत्तर, नैर्ऋत्य, पूर्व, वायव्य, दक्षिण इन दिशाओंमें क्रमसे भ्रमण करताहै ॥ १२४ ॥

अथ मुहूर्तात्मकराहुः।

ईशांतकमरुच्छक्ररक्षश्चंद्रानलांभसाम् ॥
दिशि भ्रमत्यगुर्नाडीद्वयमानाद्दिवानिशम् ॥ १२५ ॥
ज्ञेयोऽत्र षोडशांशस्तु मुहूर्तोयं दिवानिशम् ॥ १२६ ॥

अव मुहूर्त्तात्मकराहु लिखतेहैं-ईशान, दक्षिण, वायव्य, पूर्व, नैर्ऋत्य, उत्तर, आग्नेय, पश्चिम इन दिशाओंमें राहु दोदोघड़ी रात्रि दिन भ्रमण करताहै ॥ १२५ ॥ यहांपर दिनका अथवा रात्रिका सोलहवां भाग मुहूर्त्त होताहै ऐसा जानना चाहिये ॥ १२६ ॥

अथ राहुफलम् ।

द्विविधः पृष्ठगो राहुः शुभदो दक्षिणेपि च ॥
स चेत्स्याद्योगिनी युक्तस्तदा युद्धे जयो ध्रुवम् ॥ १२७ ॥
वामगः संमुखस्त्याज्यो यत्नाद्युद्धे शुभेप्सुना ॥ १२८ ॥

अव राहुफल लिखतेहैं-दोनों प्रकारका राहु पीठपीछे और दाहिना शुभदायक होताहै और जो योगिनीयुक्त होय तो युद्धमें अवश्य जय होतीहै ॥ १२७ ॥ शुभ चाहनेवाला मनुष्य युद्धमें वाम तथा सन्मुख राहुको यत्नपूर्वक त्याग देय ॥ १२८ ॥

अथ परिघदंडः ।

कृत्तिकातश्चतुर्दिक्षु सप्तसप्त च पूर्वतः ॥
पारिघं लंघयेन्नैव वायव्याऽनलदिग्गतम् ॥ १२९ ॥

अव परिघदंड लिखतेहैं-कृत्तिकासे लेकर सातसात नक्षत्र पूर्वादि दिशाओंमें क्रमसे लिखै वायव्यसे लेकर अग्निकोणतक खेंचाहुआ ऐसा परिघदंड होताहै तिसका उल्लंघन नहीं करे ॥ १२९ ॥

अथ परिघे विदिङ्निर्णयः ।

पूर्वदिग्द्वारभैर्यायाद्दिशमग्नेः प्रदक्षिणाम् ॥
विदिक्ष्वेवं तथान्यासु जयेप्सुनृपतिः सदा ॥ १३० ॥

अव परिघमें विदिङ्निर्णय लिखतेहैं-पूर्वदिग्द्वारके नक्षत्रोंमें दाहिने मार्गसे अग्निकोणमें यात्रा करे. दक्षिणदिशाके नक्षत्रोंमें नैर्ऋत्यकोणमें यात्रा करे. पश्चिमदिशाके नक्षत्रोंमें वायव्यकोणमें

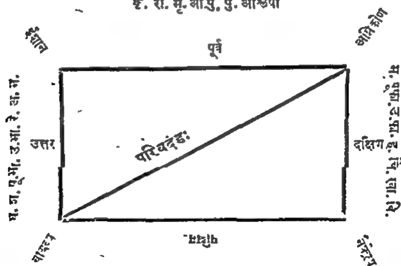
यात्रा करै और उत्तरदिशाके नक्षत्रोंमें ईशानकोणमें यात्रा करै. जय चाहनेवाले राजाको इस प्रकारसे कहेहुए नक्षत्रोंमेंही यात्रा करनी चाहिये ॥ १३० ॥

अथावश्यके परिघोल्लंघनम् ।

कृत्ये चावश्यके गच्छेद्विलङ्घ्य खलु पारिघम् ॥
त्यक्त्वा शूलं सदा शुद्धिर्दिग्लग्नस्य तदा नृपः ॥ १३१ ॥

अब आवश्यकमें परिघोल्लंघन लिखतेहैं–आवश्यक कार्यमें परिघको उल्लंघन करकेभी राजा यात्रा करै परन्तु दिशाशूलको त्याग देय और दिशाकी लग्न शुद्ध होय ॥ १३१ ॥

अथ परिघदंडचक्रम



अथ सर्वदिग्गमने श्रेष्ठानि भानि ।

पुष्यहस्तानुराधाश्वे सर्वदिग्गमनं शुभम् ॥ १३२ ॥

अब सर्वदिग्गमनमें श्रेष्ठ नक्षत्र लिखतेहैं–पुष्य, हस्त, अनुराधा, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें सब दिशाओंकी यात्रा शुभ होतीहै ॥१३२॥

अथ वक्रग्रहस्य वारादि त्याज्यम् ।

ग्रहः केंद्रगतो वक्री लग्नं वा वक्रिवर्गगम् ॥
वक्रिखेटस्य वारे वा तत्र यातुर्विनाशनम् ॥ १३३ ॥

अब वक्रग्रहके वारादि त्याज्य लिखतेहैं—केंद्रस्थग्रह वक्रीहोय अथवा वक्रीग्रहके षड्वर्गमें लग्न होय अथवा वक्रीग्रहका वार होय तो यात्रा करनेवालेका विनाश होताहै ॥ १३३ ॥

अथानुकूल्यम् ।

दिवा सौम्यायने सूर्ये यायादुत्तरपूर्वयोः ॥ चन्द्रे सौम्यायने रात्रौ प्रोक्ता यात्रा तयोर्दिशोः ॥ १३४ ॥ सूर्ये याम्यायने गच्छेत्प्रत्यग्दक्षिणयोर्दिवा ॥ दिशयोस्त्वेतयोश्चंद्रे रात्रौ याम्यायनं गते ॥१३५॥ उभौ सौम्यायने यायात्तदा चोत्तर-पूर्वयोः ॥ तौ चेद्याम्यायने प्रत्यग्याम्ययोस्तु दिवानिशम्॥ ॥१३६॥ अन्यथा गमने नृणां भवेद्बंधो वधोपि वा ॥१३७॥

अब आनुकूल्य लिखतेहैं—उत्तरायण सूर्यमें दिनकेसमय उत्तर और पूर्वकी यात्रा शुभ होतीहै और उत्तरायण चंद्रमामें रात्रिके समय पूर्वोक्त दोनों दिशा पूर्व और उत्तरकी यात्रा शुभ होतीहै १३४॥ यदि सूर्य दक्षिणायन होय तो दिनके समय पश्चिम और दक्षिण दिशामें जाना शुभ होताहै और जो चंद्रमा दक्षिणायन होय तो रात्रिके समय पूर्वोक्त पश्चिम और दक्षिणकी यात्रा शुभ होतीहै।१३५॥ और यदि सूर्य तथा चंद्रमा दोनोंही उत्तरायणमें होंय तो उत्तर और पूर्वकी यात्रा शुभ होतीहै और जो दोनोंही दक्षिणायन में होंय तो पश्चिम और दक्षिणकी यात्रा रात्रि तथा दिनके समय शुभ होतीहै ॥ १३६ ॥ इन योगोंसे अन्यथा यात्रा करने वाले मनुष्योंका बन्धन अथवा वध होताहै ॥ १३७ ॥

अथ त्रिविधः प्रतिशुक्रः ।

यत्रोदेति भृगुर्यत्नात्तां दिशं संमुखीं त्यजेत् ॥ भार्गवाधिष्ठितो राशिर्दिशि वा यत्र लग्नतः ॥ १३८ ॥ कृत्तिकादिषु दिग्द्वारभेषु यत्र स्थितोऽथ वा ॥ त्याज्या सापि दिशा यस्मात्संमुखस्त्रिविधो भृगुः ॥ १३९ ॥

अब त्रिविध प्रतिशुक्र लिखतेहैं–जिस दिशामें शुक्रका उदय होताहै यदि वही दिशा सम्मुख होय तो यत्नपूर्वक त्याग देवे अथवा शुक्र जिस राशिपर होय वह राशि यात्रालग्नसे जिस दिशामें स्थित होय वह दिशा सम्मुख होय तो यत्नपूर्वक त्याज्य होतीहै ॥ १३८ ॥ अथवा जिन कृत्तिकादिक दिग्द्वारनक्षत्रोंपर शुक्र स्थित होय उन्ही नक्षत्रोंकी दिशा सम्मुख त्याज्य होतीहै क्योंकि, यह तीनप्रकारका सम्मुख शुक्र होताहै ॥ १३९ ॥

अथ प्रतिशुक्रदोषापवादः ।

रेवत्यां मेषगे चंद्रे भवत्यंधो भृगोः सुतः ॥ यात्रादौ नैव दोषाय संमुखो दक्षिणोपि वा ॥ भृग्वादिगोत्रजातानां न दोषः प्रतिशुक्रजः ॥ १४० ॥

अब प्रतिशुक्रदोषापवाद लिखतेहैं–रेवती नक्षत्र और मेषके चंद्रमामें अर्थात् अश्विनी, भरणी, कृत्तिकाका प्रथम चरणतक शुक्र अंधा होताहै तब यात्रादिकमें सन्मुख और दक्षिणभी शुभ होताहै और (भृग्वादिगोत्र) भृगु, कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, अंगिरा, भरद्वाज, वत्स इन गोत्रोंवाले मनुष्योंकेलिये सम्मुख शुक्रका दोष नहीं होताहै ॥ १४० ॥

अथ गमने शुक्रस्यास्तादिदोषः ।

वक्रे नीचगते खेटेर्जिते चाऽस्तं गते भृगौ ॥
यो गच्छेत्स वशं याति प्रबलोपि द्विषां नृपः ॥ १४१ ॥

अव गमनमें शुक्रका अस्तादि दोष लिखते हैं-यदि शुक्र वक्री होय अथवा नीच राशिका होय अथवा किसी ग्रहसे पराजित होय तो यात्रा करनेवाला प्रवल राजाभी शत्रुओंके वशमें होजाता है ॥ १४१ ॥

अथ बुधोपि संमुखस्त्याज्यः ।

अनुकूले बुधे यायादित्थं भूतेपि भार्गवे ॥
संमुखस्थे बुधे सर्वे वृथा खेटाः शुभा अपि ॥ १४२ ॥

अव बुधका भी संमुख त्याज्य लिखते हैं-यदि बुध अथवा शुक्र अनुकूल होय तो यात्रा करै और जो सम्मुख बुध होय तो सब शुभ ग्रहभी वृथा होजाते हैं ॥ १४२ ॥

अथ सामान्ययात्रायां प्रतिशुक्रादिदोषाऽभावः ।

नृणां प्रथमयात्रायां प्रतिशुक्रादिदूषणम् ॥
जयार्थिनो नृपस्यापि नान्येषां तु कदाचन ॥ १४३ ॥

अव सामान्य यात्रामें प्रतिशुक्रादिदोषाभाव लिखते हैं-मनुष्योंकी प्रथम यात्रामें सामने शुक्रादि दोष होताहै और जयार्थी राजाकोभी सामने शुक्रका दोष होताहै और अन्य पुरुषोंकेलिये यात्रामें शुक्रका दोष नहीं होताहै ॥ १४३ ॥

अथावश्यकतीर्थयात्रायां च न दोषः ।

अर्द्धोदयोपरागादौ पुण्ययोगेषु दुर्लभे ॥
तीर्थार्थी तु सुखं यायात्कालेष्वस्तादिकेष्वपि ॥ १४४ ॥

अव आवश्यक तीर्थयात्रामें अदोष लिखते हैं-अर्द्धोदययोग ग्रहण आदि पर्वोंमें, दुर्लभ पुण्ययोगमें तीर्थार्थी अस्तादिक काल होनेपरभी सुखपूर्वक यात्रा करै ॥ १४४ ॥

अथ मार्गे शुक्रास्तादौ तत्रैव स्थितिः ।

मध्यमार्गे तु यात्रायां भृगावस्तेथ संमुखे ॥
तावत्कालमुषित्वा च शुभे काले व्रजेन्नृपः ॥ १४५ ॥

अब मार्गमें शुक्रास्तादि होनेसे वहीं स्थिति लिखते हैं-यदि यात्रा करनेपर मार्गके मध्यमें शुक्रका अस्त होय अथवा सामने शुक्र होय तो तबतक राजा वहीं ठहरारहे, शुभकाल आनेपर यात्रा करे ॥ १४५ ॥

अथ यात्रायां लग्नविचारः। तत्रादौ त्याज्यलग्नानि।

कुंभलग्ने च कुंभांशे नो गच्छेत्सर्वथा नृपः ॥ मीने मीनांशके यातुः पंथा वक्रो धनक्षतिः ॥१४६॥ निषिद्धा गमने कैश्चिन्मीनवृश्चिककर्कटाः ॥ लग्नस्था वा नवांशस्थाः प्रोक्ता राज्ञां जयार्थिनाम् ॥ १४७ ॥ भूभुजां जन्मलग्नाद्वा जन्मराशेश्च लग्नगे ॥ निधने निधनेशे वा गमनं निधनाय वै ॥१४८॥ वैरिणो जन्मराशेस्तु रिपुभे वा तदीश्वरः॥ यात्राकाले विलग्नस्थे सापि यात्रा विषायते ॥ १४९ ॥

अब यात्रामें लग्नविचार लिखते हैं-तहां पहिले त्याज्य लग्न लिखते हैं-कुम्भ लग्न और कुंभके नवांशमें राजा किसी प्रकारसे यात्रा न करे और मीनलग्न तथा मीनके नवांशामें जानेवाला मार्गसे लौट आताहै अथवा उसके धनका नाश होताहै ॥ १४६ ॥ और किन्हीं आचार्योंने ऐसा कहा है कि, मीन, वृश्चिक, कर्क, लग्न अथवा इन लग्नोंके नवांशाभी यात्रामें वर्जित हैं, जयार्थी राजाओंके लिये अवश्यही त्याज्य हैं ॥ १४७ ॥ राजाओंकी जन्मलग्नसे अथवा जन्मराशिसे आठवीं लग्न होय अथवा अष्टमेश लग्नमें होय तो यात्रामें मृत्युकारक होताहै ॥ १४८ ॥ और वैरीकी जन्मराशिसे यात्राके समय छठीलग्न होय अथवा उसकी जन्मराशिका स्वामी लग्नमें होय तो वह यात्रा विषके समान होती है अर्थात् अशुभ होती है ॥ १४९ ॥

अथ शुभलग्नानि।

जन्मराशीश्वरो जन्मलग्नेशो वा शुभग्रहः ॥ तौ विलग्नगतौ वा तद्राशिलग्ने शुभो गमः ॥ १५० ॥ लग्ने वर्गोत्तमे

वेंदौ यात्रोक्ता कार्यसिद्धये ॥ अंभोराशौ तदंशे वा नौकायानं प्रशस्यते ॥ १५१ ॥ जनौ यः शुभयुग्राशिर्वैशिसंज्ञोऽथवा भवेत् ॥ स्वारिभान्निधनस्थो वा स राशिर्लग्नगः शुभः ॥ १५२ ॥ श्रेष्ठा शीर्षोदये लग्ने यात्रा सर्वार्थदायिनी॥ राजयोगोचिते लग्ने प्रशस्ता वसुधाभुजाम् ॥ १५३ ॥

अब शुभलग्न लिखते हैं—जन्मराशिका स्वामी अथवा जन्मलग्न का स्वामी अथवा शुभग्रह लग्नमें होय अथवा उसकी राशि लग्नमें होय तो यात्रा शुभ होती है ॥ १५० ॥ लग्न वा चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांशामें होय तो यात्रा कार्यसिद्धिकेलिये होती है. जल राशिकी लग्नमें अथवा जलराशिके नवांशमें नौकामें बैठकर जाना शुभ होता है ॥ १५१ ॥ जन्मकालमें जो राशि शुभग्रहयुक्त होय अथवा (वैशिसंज्ञक) सूर्याक्रांतराशिसे दूसरी राशिकी लग्न यात्रामें होय अथवा शत्रुकी राशिसे आठवीं राशिकी लग्न होय तो यात्रा शुभ होती है ॥ १५२ ॥ शीर्षोदयलग्नोंमें यात्रा श्रेष्ठ और सर्वार्थदायिनी होतीहै और राजाओंकेलिये राजयोगोचितलग्नोंमें यात्रा श्रेष्ठ होती है ॥ १५३ ॥

अथ दिग्राशयः।

मेषादिराशयो दिक्षु चतसृष्वपि पूर्वतः॥ पूर्वतस्त्रिक्रमाद्विज्ञैः प्रोक्ता दिग्द्वारसंज्ञकाः ॥ १५४ ॥ लग्ने दिग्द्वारराशौ च यात्रा स्याज्जयकारिणी ॥ प्रतिलोमे तु विघ्नार्तिकारिणी भंगदायिनी ॥ १५५ ॥

अब दिग्राशियें लिखते हैं—मेषादिक राशियें पूर्वादिक चारों दिशाओंमें क्रमसे तीनवार गणना करनेसे दिग्द्वारसंज्ञक होती हैं. अर्थात् मेष, सिंह, धनु राशि पूर्वमें; वृष, कन्या, मकर दक्षिणमें; मिथुन, तुला, कुम्भ पश्चिममें और कर्क, वृश्चिक, मीन राशि

उत्तरमें रहती हैं ॥ १५४ ॥ राजा जिस दिशामें यात्रा करै उसी दिशाकी लग्न होय तो यात्रा जय करनेवाली होती है और जो इससे विपरीत होय अर्थात् दिग्द्वारलग्न पीठ पीछे होय तो विघ्न, दुःख करती तथा भंग देनेवाली होती है ॥ १५५ ॥

अथ दिगीशाः।

रविः शुक्रः कुजो राहुः शनिश्चंद्रो बुधो गुरुः ॥
पूर्वादीनां क्रमादेते दिशामीशाः प्रकीर्त्तिताः ॥ १५६ ॥

अब दिगीश लिखते हैं—सूर्य, शुक्र, मङ्गल, राहु, शनि, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति क्रमसे ये ग्रह पूर्वादि दिशाओंके स्वामी कहे हैं॥१५६॥

अथ लालाटी।

दिगीशः स्वीयदिक्संस्थो लालाटी कथितो ग्रहः ॥
लग्नादौ संमुखस्त्याज्यो गमे मृत्युकरो यतः ॥१५७॥

अब लालाटी लिखते हैं—दिशाका स्वामी ग्रह अपनी दिशाकी लग्नादिकोंमें स्थित होय तो लालाटी कहाता है यात्रामें सन्मुख त्याज्य है, क्योंकि, यह यात्रामें मृत्युकारक है ॥ १५७ ॥

अथ दिगीशेऽन्यकेंद्रग शुभं फलम्।

दिगीशे केंद्रगे गच्छेन्न तु लालाटिगे क्वचित् ॥ १५८ ॥

अब दिगीशके अन्य केन्द्रमें शुभफल लिखते हैं—कहीं ऐसाभी कहा है कि, दिशाका स्वामी ग्रह केंद्रमें होय तो यात्रा करै क्योंकि, लालाटीयोग नहीं होता है ॥ १५८ ॥

अथ लालाटस्पष्टीकरणम्।

प्राच्यां लग्नगते सूर्ये शुक्रे चायगतेऽनिले ॥ भौमे कर्म १०
गते याम्यां रंध्रेके ८। ९ ऽगौ च नैर्ऋतौ ॥ १५९ ॥
शनौ द्यूने ७ च वारुण्यां वायौ पुत्रारिगे ५। ६ विधौ ॥

बुधे तुर्ये तथोदीच्यामीशान्यां द्वित्रिगे २ । ३ गुरौ ॥ १६० ॥
इत्थं लालाटिगे खेटे संमुखे गमनं त्यजेत् ॥ १६१ ॥

अब लालाटस्पष्टीकरण लिखते हैं-लग्नमें सूर्य होय तो पूर्वमें लालाटयोग होताहै और शुक्र ग्यारहवें स्थानमें होय तो अग्निकोणमें, मङ्गल दशवें स्थानमें होय तो दक्षिणमें और राहु आठवें वा नौवें स्थानमें होय तो नैर्ऋत्यमें ॥ १५९ ॥ शनैश्चर सातवें स्थानमें होय तो पश्चिममें और चन्द्रमा पांचवें या छठे स्थानमें होय तो वायव्यमें, बुध चौथे स्थानमें होय तो उत्तरमें और बृहस्पति दूसरे वा तीसरे स्थानमें होय तो ईशानमें लालाट योग होता है यात्रामें सम्मुख त्याग देवे ॥ १६० ॥ १६१ ॥

अथोक्तसमये लग्नाद्यलाभे उक्तान्यदिक्षु प्रशस्ता यात्रा ।

उषः शस्तं विना प्राचीं यामीं याने विनाऽभिजित् ॥
निशीथस्तु विनोदीचीं गोधूलिर्वारुणीं विना ॥ १६२ ॥

अब उक्त समयमें लग्नादिके अलाभमें उक्तसे अन्य दिशामें प्रशस्त यात्रा लिखते हैं-पूर्वदिशाके विना अन्य दिशाओंकी यात्रामें प्रातःकाल शुभ होता है और दक्षिणदिशाके विना अन्य दिशाकी यात्रामें अभिजित् मुहूर्त शुभ होताहै और उत्तर दिशाके विना अन्य दिशाओंकी यात्रामें अर्द्धरात्रिका समय शुभ होता है और पश्चिम दिशाके विना अन्य दिशाओंकी यात्रामें गोधूलि मुहूर्त शुभ होताहै ॥ १६२ ॥

अथ यात्रायां श्रेष्ठा नेष्टाश्च ग्रहाः ।

हित्वा सप्तमगं शुक्रं केंद्रकोणे शुभा शुभाः ॥ पापाश्चोपचये शस्ता याने नो दशमः शशी ॥ १६३ ॥ चंद्रस्तु गमने नेष्टो लग्नारिव्ययरंध्रयूनेगः ॥ षष्ठाष्टरिःफस्थो लग्नेशोपि

न शोभनः ॥१६४॥ सुरेज्यस्याहितो लग्ने सत्खेटोपि न शोभनः ॥ पापोपि चेत्सुहृत्तस्य तनौ भव्यफलप्रदः ॥ ॥ १६५ ॥ जनने जन्मलग्नेशाज्जन्मराशीश्वरोदये ॥ सुहृच्चेत्कर्मगः खेटो नेष्टोपीष्टो विलग्नगः ॥ १६६ ॥

अब यात्रामें श्रेष्ठ और नेष्टग्रह लिखते हैं—सातवें स्थानमें शुक्रको छोड कर केंद्र और त्रिकोणमें सब शुभग्रह शुभ होते हैं और उपचय ३।६।१०।११ स्थानमें पापग्रह यात्रामें शुभ होते हैं और दशवें स्थानमें चन्द्रमा शुभ नहीं होता है ॥ १६३ ॥ लग्न, बारहवें, आठवें स्थानमें चन्द्रमा होय तो यात्रामें नेष्ट होता है और सातवें, छठे, आठवें, बारहवें स्थानमें लग्नेश होय तोभी यात्रामें अशुभ होता है ॥ १६४ ॥ बृहस्पतिका शत्रु शुभग्रहभी लग्नमें स्थित होय तो शुभ नहीं होताहै और जो बृहस्पतिका मित्र पापग्रहभी लग्नमें होय तो शुभफल देताहै ॥ १६५ ॥ जन्मकुंडलीमें जन्मलग्नेशसे अथवा जन्मराशीश्वरग्रहकी लग्नसे दशमस्थानमें बैठाहुआ नेष्टग्रह यदि जन्मलग्न वा जन्मराशिके स्वामीग्रहका मित्र होय और फिर वहही नेष्ट ग्रह यात्राकी लग्नमें बैठा होय तो शुभ होताहै ॥ १६६ ॥

अथ यात्रायां योगप्रशंसा ।

वक्ष्यमाणैः शुभैर्योगैर्यात्रा सिद्ध्येन्महीभुजाम् ॥ भूदेवानां तु सद्भैस्तु चौराणां शकुनैर्भवेत् ॥१६७॥ विषायतेऽमृतं योगाद्विषमप्यमृतायते ॥ विहाय स्वं फलं खेटा दद्युस्तद्योगजं फलम् ॥ १६८ ॥ तिथिवासरयोगेषु लग्नेंदुकरणोडुषु ॥ दुष्टेष्वपि शुभा यात्रा योगरुक्ता मनीषिभिः ॥ १६९ ॥

अब यात्रामें योगप्रशंसा लिखतेहैं—आगे कहेहुए शुभयोगों राजाओंकी यात्रा शुभ होतीहै और ब्राह्मणोंकी यात्रा

तारा, चंद्रमा आदि करके शुभ होतीहै और चोरोंकी यात्रा शुभशकुनों करके शुभ होतीहै ॥ १६७ ॥ योगके कारणसे अमृत विष होजाताहै और विष अमृत होजाताहै सब ग्रह अपना फल छोड़कर योगका फल देने लगजातेहैं ॥ १६८ ॥ तिथि, वार, योग, लग्न, चंद्रमा, करण, नक्षत्र ये सब दुष्ट होनेपरभी मुनीश्वरोंने योगोंमें यात्रा शुभ कहीहै ॥ १६९ ॥

अथ योगाः ।

लग्ने गुरौ १ रिपौ भौमे लाभे ११ ऽर्के १२ सहजे३शनौ॥ जयत्याशु रिपून्यानेऽनुकूलो यदि भार्गवः ॥ १७० ॥ लग्ने गुरौ बुधे तुर्ये ४ खे १० ब्जे भ्रातृ ३ गते रवौ ॥ सुते ५ शुक्रे रिपौ ६ भौमे मंदे यात्राऽतिशोभना ॥१७१॥ गुरौ लग्ने १ ष्टमे ८ चंद्रे षष्ठे ६ सूर्ये जयत्यरीन् ॥ तनौ १ जीवे ऽथवा शेषैर्वित्ताय २ । ११ स्थैर्जयो गमे ॥१७२॥ लग्ने१ सूर्ये विधौ द्यूने ७ धनस्थै २ र्ज्ञेज्यभार्गवैः ॥ प्रयाति नृपतिः सौरीञ्जयेत्तार्क्ष्य इवोरगान् ॥ १७३ ॥ वित्ते ज्ञे सहजेऽर्कगे भार्गवे यायिनां जयः ॥ लग्नेऽर्के वा शनौ षष्ठे खेऽब्जे १० गच्छन्नरीञ्जयेत् ॥१७४॥ मंदे कुजे तनौ १ खे १०ऽर्के शुक्रे च विदि लाभगे ११॥संव्रजन्भूपतिः शत्रून्विजित्य श्रियमश्नुते ॥ १७५ ॥ मंदारौ त्रिषडायस्थौ बलिनो ज्ञेज्यभार्गवाः ॥ प्रयाणे भूपतेर्यस्य वसुधा तस्य हस्तगा ॥१७६॥ लग्ने १ जीवे विधौ द्यूने ७ चतुर्थे ४ज्ञे तथा भृगौ ॥ पापैस्त्रिगे ३ महीपालः प्रस्थितो लभते श्रियम् ॥१७७॥ लाभे ११ ऽर्के खे १० बुधे शुक्रे दुश्चिक्ये ३ भूमिजे शनौ ॥ द्यूने ७ऽब्जे तनुगे १ जीवे प्रस्थितस्य भवेज्जयः ॥ १७८॥ लग्नेऽब्जे वा गुरौ षष्ठे ६ सूर्ये व्योम १० गते शनौ ॥ सुते ५ ज्ये हिबुके ४ शुक्रे राजा हंति गमे रिपून् ॥१७९॥ बलि-

नींदुसुते लग्ने १ केंद्रे १।४।७।१० जीवेथ निर्बले॥
त्रिषष्ठांत्यंकगे ३।६।१२।९ चंद्रे संव्रजन्क्षयमाप्नुयात्॥
॥ १८० ॥ शुक्रे तुर्यत्रिलाभस्थे ४।३।११ केंद्रस्थ १।
४।७।१० गुरुवीक्षिते ॥ सप्ताऽष्टांकगतैः ७।८।९
पापैर्योगोयं वहुलाभदः ॥१८१॥ शुभैर्दृष्टे बुधे व्योम १०
रिपु ६ लग्न १ तुरीय ४ गे ॥ योगोयं जयदः पापैर्घून ७
लग्नां १ त्य १२ वर्जितैः॥१८२॥ ईज्ये लग्ने १ स्वलाभस्थैः
११ पापै राजागमो भवेत् ॥ घूने ७ वा वोधने शुक्रे तुर्ये
४ ज्जे प्रोक्तवत्फलम् ॥१८३॥ षडाद्याष्ट ६।१।८ गतैः
शुक्रजीवाऽब्जैर्गमने जयः ॥ तुर्ये ४ वोशनसि प्रोक्तं ज्ञे च
मंदेपि तत्फलम् ॥१८४॥ बुधभार्गवयोरंतर्याते कुमुदवांधवे॥
तुर्यस्थे ४ ज्ये जयत्याशु गमनेऽरीन्नरेश्वरः ॥१८५॥ लग्ना-
स्तायंबुवह्निस्थैः १।७।६।४।३ शुक्रेज्यारबुधार्कजैः॥
योगोयं क्रमतः प्रोक्तो गमने जयदो बुधैः॥ १८६॥ षड्-
त्रिखाऽरींदुवेदेश ६।३।१०।६।१।४।११ संस्थितैस्तपना-
दिभिः॥ गोचरैः क्रमतो जीववारे योगोयमुत्तमः ॥१८७॥
जीवेंगेऽर्केरिगे ६ भौमे त्रिगे रंध्रगते ८ भृगौ ॥ ज्ञे घूने च
शुभा यात्रा भूभुजां जयदायिनी॥१८८॥ शुक्रेर्केज्येस्त्रितुर्य-
३।४ स्थैः शत्रुस्थे ६ मंदभूमिजे ॥ यात्रा भूमिभुजां शस्ता
शत्रुवृंदविदारिणी॥१८९॥ नवांशाद्ध्रोमसंयुक्तादंशे शततमे-
स्थिते ॥ गुरौ वा भार्गवे यात्रा शत्रुसंघविदारिणी ॥१९०॥
शतांशाद्यूर्ध्वगे चांद्रे भास्करात्मजभौमयोः ॥ यात्रायां
नृपतिर्हंति विद्विषां महतीं चमूम् ॥ १९१ ॥ शुक्रो दारा-
द्दूरोवापि मंदार्कोत्तरऋक्षगे ॥ वोधने गमने राजा जयेच्चैव
द्विपद्दलम् ॥१९२॥ नैरंतर्येण खेटाश्चेद्यर्कस्थानेषु पंचसु ॥
संस्थिताः पृष्ठदिग्भागे याने राज्ञां जयप्रदाः ॥ १९३ ॥

तारा, चंद्रमा आदि करके शुभ होतीहै और चोरोंकी यात्रा शुभशकुनों करके शुभ होतीहैं ॥ १६७ ॥ योगके कारणसे अमृत विष होजाताहै और विष अमृत होजाताहै सब ग्रह अपना फल छोड़कर योगका फल देने लगजातेहैं ॥ १६८ ॥ तिथि, वार, योग, लग्न, चंद्रमा, करण, नक्षत्र ये सब दुष्ट होनेपरभी मुनीश्वरोंने योगोंमें यात्रा शुभ कहीहै ॥ १६९ ॥

अथ योगाः ।

लग्ने गुरौ १ रिपौ भौमे लाभे ११ ऽर्के १२ सहजे ३ शनौ ॥ जयत्याशु रिपून्यानेऽनुकूलो यदि भार्गवः ॥ १७० ॥ लग्ने गुरौ बुधे तुर्ये ४ खे १० ऽब्जे भ्रातृ ३ गते रवौ ॥ सुते ५ शुक्रे रिपौ ६ भौमे मंदे यात्राऽतिशोभना ॥१७१॥ गुरौ लग्ने १ ष्टमे ८ चंद्रे पष्ठे ६ सूर्ये जयत्यरीन् ॥ तनौ १ जीवे ऽथवा शेषैर्वित्ताय २ । ११ स्थैर्जयो गमे ॥१७२॥ लग्ने १ सूर्ये विधौ द्यूने ७ धनस्थै २ र्ज्ञेज्यभार्गवैः ॥ प्रयाति नृपतिः सोरीञ्जयेत्तार्क्ष्य इवोरगान् ॥ १७३ ॥ वित्ते ज्ञे सहजेऽर्कगे भार्गवे यायिनां जयः ॥ लग्नेऽर्के वा शनौ पष्ठे खेऽब्जे १० गच्छन्नरीञ्जयेत् ॥१७४॥ मंदे कुजे तनौ १ खे १० ऽर्के शुक्रे च विदि लाभगे ११॥संव्रजन्भूपतिः शत्रून्विजित्य श्रियमश्नुते ॥ १७५ ॥ मंदारौ त्रिषडायस्थौ बलिनो ज्ञेज्यभार्गवाः ॥ प्रयाणे भूपतेर्यस्य वसुधा तस्य हस्तगा ॥१७६॥ लग्ने १ जीवे विधौ द्यूने ७ चतुर्थे ४ ज्ञे तथा भृगौ ॥ पापैस्त्रिगे ३ महीपालः प्रस्थितो लभते श्रियम् ॥१७७॥ लाभे ११ ऽर्के खे १० बुधे शुक्रे दुश्चिक्ये ३ भूमिजे शनौ ॥ द्यूने ७ ऽब्जे तनुगे १ जीवे प्रस्थितस्य भवेज्जयः ॥ १७८॥ लग्नेऽब्जे वा गुरौ पष्ठे ६ सूर्ये व्योम १० गते शनौ ॥ सुते ५ ज्ये हिबुके ४ शुक्रे राजा हंति गमे रिपून् ॥१७९॥ बलि-

नींदुसुते लग्ने १ केंद्रे १ । ४ । ७ । १० जीवेथ निर्बले ॥
त्रिषष्ठांत्यंकगे ३ । ६ । १२ । ९ चंद्रे संव्रजञ्छ्रियमाप्नुयात्॥
॥ १८० ॥ शुक्रे तुर्यत्रिलाभस्थे ४ । ३ । ११ केंद्रस्थ १ ।
४ । ७ । १० गुरुवीक्षिते ॥ सप्ताऽष्टांकगतैः ७ । ८ । ९
पापैर्योगोयं बहुलाभदः ॥१८१॥ शुभैर्दृष्टे बुधे व्योम १०
रिपु ६ लग्न १ तुरीय ४ गे ॥ योगोयं जयदः पापैर्द्यून ७
लग्नां १ त्य १२ वर्जितैः॥१८२॥ इंज्ये लग्ने १ स्वलाभस्थैः
११ पापे राजागमो भवेत् ॥ द्यूने ७ वा वोधने शुक्रे तुर्ये
४ ज्ञे प्रोक्तवत्फलम् ॥१८३॥ षडायाष्ट ६ । ११ । ८ गतैः
शुक्रजीवाऽब्जैर्गमने जयः ॥ तुर्ये ४ वोशनसि प्रोक्तं ज्ञे च
मंदेपि तत्फलम् ॥१८४॥ बुधभार्गवयोरंतर्याते कुमुदबांधवे॥
तुर्यस्थे ४ ज्ये जयत्याशु गमनेऽरीन्नरेश्वरः ॥१८५॥ लग्ना-
स्तायबुवह्निस्थैः १।७ । ६ । ४ । ३ शुक्रेज्यारबुधार्कजैः ॥
योगोयं क्रमतः प्रोक्तो गमने जयदो बुधैः॥ १८६ ॥ षट्-
त्रिखाऽरींदुवेदेश ६।३।१०।६।१।४।११ संस्थितैस्तपना-
दिभिः॥ गोचरैः क्रमतो जीववारे योगोयमुत्तमः ॥१८७॥
जीवेंगेऽर्केऽरिगे ६ भौमे त्रिगे रंध्रगते ८ भृगौ ॥ ज्ञे द्यूने च
शुभा यात्रा भूभुजां जयदायिनी॥१८८॥ शुक्रेंज्यैस्त्रितुर्य-
३।४ स्थैः शत्रुस्थे ६ मंदभूमिजे ॥ यात्रा भूमिभुजां शस्ता
शत्रुवृंदविदारिणी॥१८९॥ नवांशार्द्रामसंयुक्तादंशे शततमे-
स्थिते ॥ गुरौ वा भार्गवे यात्रा शत्रुसंघविदारिणी ॥१९०॥
शतांशाद्यूर्ध्वगे चांद्री भास्करात्मजभौमयोः ॥ यात्रायां
नृपतिर्हंति विद्विषां महतीं चमूम् ॥ १९१ ॥ शुक्रो दारा-
द्गुरोर्वापि मंदार्कोत्तरऋक्षगे ॥ वोधने गमने राजा जयेच्चैव
द्विपद्गलम् ॥१९२॥ नैरंतर्येण खेटाश्चेद्यर्कस्थानेषु पंचसु ॥
संस्थिताः पृष्ठदिग्भागे याने राज्ञां जयप्रदाः ॥ १९३ ॥

अब योग लिखतेहैं-लग्नमें बृहस्पति, छठे मंगल, ग्यारहवें सूर्य, तीसरे स्थानमें शनैश्चर और शुक्र अनुकूल होय तो यात्रा करनेपर राजा शीघ्रही शत्रुओंको जीत लेताहै ॥ १७० ॥ लग्नमें बृहस्पति, चौथे बुध, दशवें चंद्रमा, तीसरे सूर्य, पांचवें शुक्र, छठे मंगल शनैश्चर होय तो यात्रा अतिशुभ होतीहै ॥ १७१ ॥ बृहस्पति लग्नमें, चंद्रमा आठवें, सूर्य छठे स्थानमें होंय तो राजा शत्रुओंको जीतलेताहै अथवा लग्नमें बृहस्पति होय और शेषग्रह दूसरे, ग्यारहवें स्थानमें बैठेहोंय तो यात्रा करनेपर विजय होतीहै ॥ १७२॥ लग्नमें सूर्य, सातवें स्थानमें चंद्रमा, दूसरे स्थानमें बुध, बृहस्पति, शुक्र होंय तो यात्रा करनेवाला राजा इसप्रकार शत्रुओंको जीतलेताहै जैसे कि, गरुड़ सर्पोंको जीतलेताहै ॥ १७३ ॥ दूसरे स्थानमें सूर्य बुध, तृतीयमें तथा लग्नमें शुक्र होय तो यात्रा करनेवालोंकी विजय होतीहै अथवा लग्नमें सूर्य, छठे शनैश्चर, दशवें चंद्रमा होय तो यात्रा करनेवाला शत्रुओंको जीतलेताहै ॥ १७४ ॥ लग्नमें मंगल, शनैश्चर; दशवें स्थानमें सूर्य; ग्यारहवें स्थानमें शुक्र, बुध होय तो इस योगमें यात्रा करनेवाला राजा शत्रुओंको जीतकर लक्ष्मीको प्राप्त करताहै ॥ १७५ ॥ शनैश्चर, मंगल तीसरे, छठे, ग्यारहवें स्थानमें स्थित होंय और बुध, बृहस्पति, शुक्र बलवान् होंय तो यात्रा करनेसे राजाके हाथमें पृथ्वी प्राप्त होतीहै॥१७६॥ लग्नमें बृहस्पति, सातवें चंद्रमा, चौथे स्थानमें बुध तथा शुक्र, तीसरे स्थानमें पापग्रह होंय तो यात्रा करनेवाला राजा स्त्रीको पाताहै ॥ १७७ ॥ ग्यारयवें घरमें सूर्य, दशवें घरमें बुध शुक्र, तीसरे घरमें मंगल शनैश्चर, सातवें घरमें चंद्रमा, लग्नमें बृहस्पति होंय तो यात्रा करनेवालेकी जय होतीहै ॥ १७८ ॥ लग्नमें चंद्रमा अथवा बृहस्पति, छठे स्थानमें सूर्य, दशवें स्थानमें शनैश्चर, पांचवें स्थानमें

बृहस्पति, चौथे स्थानमें शुक्र होंय तो यात्रा करनेपर राजा शत्रुओंका नाश करताहै ॥ १७९ ॥ लग्नमें बलवान् बुध होय; केंद्रमें निर्बल बृहस्पति होय; तीसरे, छठे, बारहवें, नौवें स्थानमें चंद्रमा होय तो यात्रा करनेवाला लक्ष्मीको पाताहै ॥ १८० ॥ शुक्र चौथे, तीसरे, ग्यारहवें स्थानमें बैठाहोय और केंद्रस्थ बृहस्पतिसे दृष्ट होय तथा सातवें, आठवें, नौवें स्थानमें पापग्रह होय तो यह योग यात्रामें बहुलाभदायक होताहै ॥१८१॥ शुभग्रहोंसे दृष्ट बुध दशवें, छठे लग्नमें, चौथे स्थानमें बैठाहोय तो यह योग जयदायक होताहै. सातवें, लग्नमें, बारहवें स्थानमें पापग्रह नहीं होय और लग्नमें बृहस्पति होय; दशवें, ग्यारहवें स्थानमें पापग्रह होय तो यात्रा करनेवाले राजाको राज्यकी प्राप्ति होतीहै अथवा सातवें स्थानमें बुध वा शुक्र होय; चौथे स्थानमें चंद्रमा होय तो (पूर्वोक्तफल) राज्यकी प्राप्ति होतीहै ॥ १८२ ॥ १८३ ॥ छठे, लग्नमें, आठवें स्थानमें शुक्र, बृहस्पति, चंद्रमा होंय तो यात्रा करनेपर विजय होतीहै और चौथे स्थानमें शुक्र वा बुध अथवा शनैश्चर होय तो (पूर्वोक्तफल) विजय होतीहै ॥ १८४ ॥ बुध और शुक्रके मध्यमें चंद्रमा होय तथा चौथे स्थानमें बृहस्पति होय तो यात्रा करनेपर राजा शीघ्रही शत्रुओंको जीतलेताहै ॥ १८५ ॥ लग्नमें, सातवें, छठे, चौथे, तीसरे स्थानमें क्रमसे शुक्र, बृहस्पति, मंगल, बुध, शनैश्चर होय तो यह योग पंडितोंने यात्रामें जयदायक कहाहै ॥ १८६ ॥ गोचरमें सूर्यादिग्रह क्रमसे छठे, तीसरे, दशवें, छठे, जन्मके, चौथे, ग्यारहवें होंय और बृहस्पतिका दिन होय तो यह योग यात्रामें उत्तम होताहै ॥१८७॥ बृहस्पति लग्नमें, सूर्य छठे, मंगल तीसरे, शुक्र आठवें, बुध सातवें स्थानमें होय तो यात्रा राजाओंके लिये शुभ और जयदायिनी होतीहै ॥ १८८ ॥ शुक्र, सूर्य, बृहस्पति तीसरे, चौथे स्थानमें स्थित

होंय और शनैश्चर, मंगल छठे स्थानमें स्थित होंय तो राजाओंकी यात्रा शत्रुसमूहकी नाश करनेवाली होतीहै ॥ १८९ ॥ मंगलयुक्त नवांशासे सौवें अंशमें बृहस्पति वा शुक्र स्थित होय तो यात्रा शत्रुओंके समूहकी नाश करनेवाली होतीहै ॥ १९० ॥ शनैश्चर और मंगलसे सौअंशोंसे अधिक बुध होय तो यात्रा करनेपर राजा शत्रुओंकी महती सेनाका नाश करताहै ॥ १९१ ॥ शुक्र वा मंगल अथवा बृहस्पतिसे अथवा शनैश्चर सूर्यसे आगेकी राशि वा नक्षत्रपर बुध होय तो यात्रामें राजा शत्रुओंकी सेनाको जीतलेताहै ॥ १९२ ॥ बारहवें स्थानको छोड़कर (पृष्ठदिग्भाग) चक्रके उत्तरार्द्धके पांच स्थानोंमें यदि लगातार क्रमसे सब ग्रह होंय तो यात्रा करनेपर राजाओंको जय देनेवाले होतेहैं ॥ १९३ ॥

अथ योगाधियोगयोगाधियोगाः ।

बुधेज्यभृगुपुत्राणामेकश्चेत्केंद्र १।४।७।१०।५।९ कोणगः ॥ तदा योगोऽत्र गमने क्षेमो भवति भूभुजाम् ॥१९४॥ अधियोगो भवेद्वाभ्यामत्र क्षेमजयौ ध्रुवम् ॥ त्रिभिर्योगाधियोगोत्र यशःक्षेमधनागमाः ॥ १९५ ॥

अब योग अधियोग योगाधियोग लिखतेहैं—यदि बुध, बृहस्पति, शुक्र इनमेंसे एकग्रह केंद्र अथवा त्रिकोणमें होय तो योग होताहै, इस योगमें यात्रा करनेसे राजाओंका कल्याण होताहै ॥ १९४ ॥ और पूर्वोक्त तीनों ग्रहोंमेंसे दो ग्रह केंद्र अथवा त्रिकोणमें होंय तो अधियोग होताहै इसमें यात्रा करनेसे कल्याण तथा जय अवश्य होती है और यदि तीनों ग्रह केंद्र वा त्रिकोणमें होंय तो योगाधियोग होता है इसमें यात्रा करनेसे यश, क्षेम और धनकी प्राप्ति होती है ॥१९५॥

अथ मितं समं बृहदिति त्रिविधं गमनम् ।

प्रयाणं मितसंज्ञं तद्यावद्वादशयोजनम् ॥ ततोऽधिकं समं यावत्पंचविंशतियोजनम् ॥ १९६ ॥ अत ऊर्ध्वं बृहत्प्रोक्तं

खंडावधि बुधैरिदम् ॥ योगिनीफलपंचांगकालजांस्तु मिते-
गमे ॥१९७॥ समे तु तैः समं दोषांल्लग्नजानपि संत्यजेत् ॥
दोषान्प्राक्कथितान्योगयात्रोत्थांश्च बृहद्गमे ॥ १९८ ॥

अब मित सम बृहत् यह त्रिविध गमन लिखतेहैं—बारह यो-
जनतककी यात्रा (मितसंज्ञक) थोडी होती है और पचीस योजन
तककी यात्रा सम होती है ॥ १९६ ॥ और इससे अधिक योजन
की यात्रा बृहत् होती है ऐसा पंडित लोग कहते हैं. मित या-
त्रामें योगिनी, दिशाशूल, पंचांग और समयका दोष इनको त्याग
देवे ॥ १९७ ॥ और सम यात्रामें योगिन्यादिसे सहित लग्नदोषको
भी त्यागदेवे और बृहत् यात्रामें पूर्वोक्त सब दोषों और यात्राके
कुयोगोंको त्यागदेवे ॥ १९८ ॥

अथ विजयदशम्याः प्रशंसा ।

आश्विने दशमी शुक्ला विजया सर्वसिद्धिदा ॥
श्रवणेन युतात्यंतजयदा नृपतेर्गमे ॥ १९९ ॥

अब विजयदशमीकी प्रशंसा लिखतेहैं—आश्विन मासके शुक्ल
पक्षकी दशमी विजया कहाती है. सर्वसिद्धिकी देनेवाली होतीहै
और जो श्रवण नक्षत्रसे युक्त होय तो राजाके लिये यात्रामें जय
दनेवाली होतीहै ॥ १९९ ॥

अथ चित्तोत्साहादिप्राशस्त्यम् ।

प्रसादैश्चेतसः श्रेष्ठैर्निमित्तैः शकुनैः शुभैः ॥ प्राप्य लग्नबलं
राज्ञां गच्छतां विजयो ध्रुवम् ॥ २०० ॥ चेतोविशुद्धिः
प्रबला निमित्ताच्छकुनादपि ॥ सत्यामस्यामतो यायान्नैव
यायात्तु तां विना ॥ २०१ ॥

अब चित्तोत्साहादि प्राशस्त्य लिखतेहैं—चित्तकी अत्यन्त प्रसन्नतासे
और शुभ शकुन तथा निमित्तोंसे और बलवान् लग्न होनेसे यात्रा

करनेवाले राजाओंकी अवश्य विजय होती है ॥ २०० ॥ निमित्त और शकुनसे चित्तकी प्रसन्नता प्रबल होती है, जब चित्तकी प्रसन्नता होय तब यात्रा करै और जो न होय तो यात्रा नहीं करै॥२०१॥

अथ यात्रायां शकुनादिप्राशस्त्यम् ।

यात्रायां शकुनं जीव उपो गर्गः प्रशंसति ॥
अंगिरा मानसोत्साहं विष्णुर्वाचं द्विजन्मनाम् ॥ २०२ ॥

अब यात्रामें शकुनादिप्राशस्त्य लिखतेहैं—यात्रामें बृहस्पतिजी शकुनकी प्रशंसा करतेहैं, अंगिरा ऋषि मनके उत्साहकी प्रशंसा करतेहैं और विष्णु भगवान् ब्राह्मणोंके वचनकी प्रशंसा करतेहैं॥२०२॥

अथोत्सवाद्यसमाप्तौ यात्रा न कार्या ।

प्रतिष्ठोद्वाहमुत्साहं व्रतं चौलं च सूतकम् ॥
असमाप्य न गंतव्यमार्तवं योषितामपि ॥ २०३ ॥

अब उत्सवादिकी असमाप्तिमें यात्रा नहीं करनेको लिखतेहैं— प्रतिष्ठा, विवाह, उत्सव, व्रत, मुंडन, सूतक, स्त्रियोंका ऋतुभाव इन सबको विना समाप्तकिये यात्रा नहीं करना चाहिये ॥ २०३ ॥

अथाकालवृष्टिदोषः ।

अकालवर्षणं प्रोक्तं पौषान्मासचतुष्टये ॥ भूयान्दोषो महावृष्टावल्पो दोषोऽल्पवर्षणे ॥ २०४ ॥ न दोषो वृष्टिजस्तावद्यावद्भूर्न पदांकिता ॥ अकालवर्षणे जाते कृत्येऽत्यावश्यके त्यजेत् ॥ २०५ ॥ त्र्यहं पौषे द्व्यहं माघं दिनमेकं तु फाल्गुने चैत्रे घटीद्वयं दोषो नायं गर्भसमुद्भवे ॥ २०६ ॥

अब अकाल वृष्टिदोष लिखतेहैं—पौष, माघ, फाल्गुन, चैत्र इन चार महीनोंमें अकालवर्षा कहीहै, बहुत वर्षा होय तो बहुत और थोड़ी वर्षा होय तो थोड़ा दोष होताहै ॥ २०४ ॥ जबतक पृथ्वीमें चरणका चिह्न नहीं प्रतीत होय तबतक अकालवृष्टिका दोष नहीं

होताहै, अकालवृष्टिको आवश्यक कृत्यमें त्यागदेवे ॥ २०५ ॥ तीन दिन पौषमें, दोदिन माघमें, एकदिन फाल्गुनमें, दोघडी चैत्रमें अकालवृष्टिका दोष होताहै और वर्षाका गर्भ उत्पन्न होनेमें यह अकालवृष्टिका दोष नहीं होताहै ॥ २०६ ॥

अथाकालवृष्टिदोषपरिहारः ।

सूर्याचंद्रमसोर्बिंबे कृत्वा हेममये तदा ॥
दत्त्वा भूमिपतिर्यायात्कार्येऽत्यावश्यके सति ॥ २०७ ॥

अब अकालवृष्टिदोषपरिहार लिखतेहैं—आवश्यक कार्य होय तो राजा अकालवृष्टिमें सूर्य और चन्द्रमाकी सुवर्णमयी प्रतिमा बनवाकर दान करे तिसपिछे यात्रा करे तो दोष नहीं होताहै ॥२०७॥

अथकस्मिन्दिने यात्राप्रवेशयोर्विचारः ।

ग्रामाद्ग्रामांतरं राजा यद्येकस्मिन्दिने व्रजेत् ॥ तदा वारर्क्षशूलादिप्रतिशुक्रं न चिंतयेत् ॥२०८॥ एकस्मिन्दिवसे यात्रा प्रवेशोपि यदा भवेत् ॥ कालः प्रवेशिकस्तत्र विचार्यो न तु यात्रिकः ॥२०९॥ प्रवेशानंतरं यात्रा प्रवेशो गमनात्तथा ॥ नवमेह्नि तिथौ धिष्ण्ये नैव कुर्यान्नरः क्वचित् ॥ २१० ॥

अब एकदिनमें यात्रा और प्रवेशके विचार लिखतेहैं—राजा एक गांवसे दूसरे गांवमें जाकर एक दिनमेंही फिर घर पहुंच जाय तो वार, नक्षत्र, दिशाशूल आदि और सम्मुख शुक्रका विचार नहीं करे ॥२०८॥ यदि एकदिनमेंही यात्रा और प्रवेश होंय तो प्रवेशका समय विचारे और यात्राकालका विचार न करे ॥ २०९ ॥ मनुष्यको चाहिये कि, प्रवेशके पीछे यात्रा और यात्राके पीछे प्रवेश; नौवें दिन नौवीं तिथि, नौवें नक्षत्रमें कभी न करे ॥ २१० ॥

अथ यात्राविधिः ।

हुत्वा पावकमभ्यर्च्य देवद्विजदिगीश्वरान् ॥ कृतस्वस्त्ययनो

विप्रैर्दत्त्वा दानं नरेश्वरः ॥ २११ ॥ गम्यदिग्पालमिंद्राद्यं ध्यायन्हृष्टमना व्रजेत् ॥ २१२ ॥

अब यात्राविधि लिखतेहैं–अग्निमें हवन और देवता, ब्राह्मण, दिशाके स्वामीका पूजन करके ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराय ब्राह्मणोंको दान दे तदनन्तर जानेकी दिशाके अधिपतिका ध्यान करताहुआ राजा प्रसन्न मनसे यात्रा करै ॥ २११ ॥ २१२ ॥

अथ नक्षत्रदोहदम्।

कुल्माषांस्तिलसंमिश्रांस्तंडुलान्माषकांस्तथा ॥ गव्यं दधि घृतं दुग्धं मृगमेणस्य शोणितम् ॥२१३॥ पायसं चापमांसं च मृगं शाशं च षाष्टिकान् ॥ प्रियंगुकमपूपांश्च मसूरांन्स-त्फलं तथा ॥ २१४ ॥ कूर्मं च सारिकां गोधां शाल्यं मांसं हविष्यकम् ॥ कृसरान्नं च मुद्गान्नं यवानां पिष्टमेव च॥२१५॥ मत्स्यान्नं चैव चित्रान्नं दध्योदनमिदं क्रमात् ॥ अश्विभाद्दो-हदं प्राश्य गच्छन्विजयते नृपः ॥ २१६ ॥

अब नक्षत्रदोहद लिखतेहैं–अश्विनी नक्षत्रमें कुलथी, भरणीमें तिलमिले चावल, कृत्तिकामें उडद, रोहिणीमें गौका दही, मृग-शिरामें गौका घी, आर्द्रामें गौका दूध, पुनर्वसुमें मृगका मांस, पुष्यमें मृगका रुधिर ॥२१३॥ आश्लेषामें खीर, मघामें नीलकंठका मांस, पूर्वाफाल्गुनीमें मृगका मांस, उत्तराफाल्गुनीमें खरहेका मांस, हस्तमें साठी, चित्रामें मालकांगनी, स्वातिमें पूए, विशाखा-में मसूर, अनुराधामें अच्छा फल, ज्येष्ठामें कछवेका मांस, मूलमें मैनाका मांस, पूर्वाषाढामें गोहका मांस, उत्तराषाढामें शल्यका मांस, अभिजित्‌में हविष्यान्न, श्रवणमें खिचडी, धनिष्ठामें मूंग, शतभिषामें जवका आटा ॥ २१४ ॥ २१५ ॥ पूर्वाभाद्रपदामें मछलीके मांसयुक्त अन्न, उत्तराभाद्रपदामें चित्रान्न, रेवतीमें दहीभात दोहद होताहै.

अश्विन्यादि नक्षत्रोंके क्रमसे यह दोहद वर्णन कियाहै इसका भक्षण करके जानेवाला राजा विजयको प्राप्त होताहै ॥ २१६ ॥

अथ तिथिदोहदम् ।

पक्षादितस्तिथौ चार्कपत्रं तंडुलवारि च ॥ घृतं श्राणा हविष्यान्नं हेमतोयमपूर्वकम् ॥ २१७ ॥ बीजपूरं जलं शुद्धं गोमूत्रं च यवान्नकम् ॥ पायसं च गुडं चासृक् मुद्गान्भुक्त्वा व्रजेन्नरः ॥ २१८ ॥

अब तिथिदोहद लिखतेहैं–(पक्षादितिथि)प्रतिपदामें आकका पत्ता, द्वितीयामें चावलोंका जल, तृतीयामें घृत, चतुर्थीमें यवागू, पंचमीमें हविष्यान्न, षष्ठीमें सुवर्णका जल, सप्तमीमें पुए ॥ २१७ ॥ अष्टमीमें बिजौरा नींबू, नवमीमें शुद्धजल, दशमीमें गोमूत्र, एकादशीमें यवान्न, द्वादशीमें खीर, त्रयोदशीमें गुड, चतुर्दशीमें रुधिर, पौर्णमासीमें मूंगका भोजनकरके यात्रा करे ॥ २१८ ॥

अथ वारदोहदम् ।

रसालां पायसं चाद्यात्कांजीमुष्णं पयो दधि ॥
पयोऽशृतं तिलान्सूर्याद्दोहदं गमने क्रमात् ॥ २१९ ॥

अब वारदोहद लिखतेहैं–रविवारमें ईखका पदार्थ, सोमवारमें खीर, मंगलमें कांजी, बुधमें गरम दूध, बृहस्पतिमें दही, शुक्रमें ओटाहुआ दूध, शनैश्चरमें तिल भक्षण करके यात्रा करे ॥ २१९ ॥

अथ दिग्दोहदम् ।

प्राचीं गच्छेद्घृतं प्राश्य दक्षिणाशां तिलोदनम् ॥
पश्चिमां दोहदं मीनमुदीचीं तु पयस्तथा ॥ २२० ॥

अब दिग्दोहद लिखतेहैं–घी खायकरके पूर्वदिशाकी यात्रा करे, तिल मिश्रित भात खा करके दक्षिणकी यात्रा करे मछलीका मांस खाय करके पश्चिमकी यात्रा करे, दूध खायकरके उत्तरकी यात्रा करे ॥ २२० ॥

अथ दोहदाऽलाभेऽस्पर्शत्वे च तद्ध्यानम् ।

दोहदस्याप्यलाभे तु ध्यात्वा तद्दोहदं व्रजेत् ॥ २२१ ॥

अब दोहदके नहीं मिलनेसे उसका ध्यान लिखतेहैं-दोहद न मिलसकै तो उसका ध्यान करकेही यात्रा करे ॥ २२१ ॥

अथ वहन्नाडीपदेन गच्छेदेतस्य प्रसंगाद्देहस्वरविचारः ।

यदुक्तं स्वरतत्त्वज्ञै रहस्यं यामलादिषु ॥ वक्ष्ये तच्चोपयुक्तं च संक्षेपाद्गमनादिषु ॥२२२॥ नाडीडा वामगा चांद्री पिंगला दक्षिणा रवेः ॥ सुषुम्ना शांभवी मिश्रा सा तु योगींद्रगोचरा ॥ २२३ ॥

अब जो नाडी वहतीहोय उसीतरफके पांव उठाकर चलै इसी प्रसंगसे देहस्वरविचार लिखतेहैं-स्वरतत्त्वके जाननेवालोंने यामलादि तन्त्रोंमें जो रहस्य वर्णन करेहैं उनको यात्राका उपयोगी समझकर संक्षेपसे कहतेहैं ॥२२२॥ बांई नाडी इडानामकी है, जिसका स्वामी चंद्रमा है और दाहिनी नाडी पिंगला नामकी है, जिसका स्वामी सूर्यहै और दोनों नाडी मिलकर चलें तो सुषुम्ना नामकी कहातीहै जिसका स्वामी शम्भुहै और यह नाडी योगीद्रोंके जाननेमें अतीहै ॥ २२३ ॥

अथ तिथिपरत्वेन स्वरोदयः ।

शुक्ले प्रतिपदारंभादादौ चंद्रतिथित्रयम् ॥ ततो दिनत्रयं सूर्यो ज्ञेयमेवं पुनःपुनः ॥२२४॥ कृष्णे तु प्रथमं सूर्यस्ततश्चंद्रोऽन्यदुक्तवत् ॥ निजनाड्युदयाद्घस्रः पंच स्वीयस्वरोदयः ॥ ततोऽन्यस्य तथा चैवं तिथौ द्वादश संक्रमात् ॥ २२५ ॥

अब तिथिपरत्वसे स्वरोदय लिखतेहैं—शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर प्रथम तीनतिथि चंद्रमाकी होतीहैं और फिर तीनतिथि सूर्यकी होतीहैं इसप्रकार वारवार गिनकर जाने अर्थात् प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया चंद्रमाकी तिथिहैं और चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी सूर्यकी तिथिहैं. सप्तमी, अष्टमी, नवमी चंद्रमाकी हैं. दशमी, एकादशी, द्वादशी सूर्यकी; त्रयोदशी, चतुर्दशी, पौर्णमासी चंद्रमाकी तिथिहैं ॥ २२४॥ कृष्णपक्षमें प्रथम तीन तिथि सूर्यकी और फिर तीन तिथि चंद्रमाकी होतीहैं इसी प्रकार पहिलेके तुल्य जाननी. अपनी नाडीके उदयसे लेकर प्रथम पाँचघड़ी अपना स्वर रहताहै और फिर दूसरेका स्वर आजाताहै अर्थात् सूर्यका स्वर होय तो प्रथम पांचघडीतक रहताहै फिर पांचघडी चंद्रमाका और फिर पांचघड़ी सूर्यका इत्यादि. यदि चंद्रमाका स्वर उदय होय तो प्रथम पांचघडीतक चंद्रमाका फिर पांचघडी सूर्यका और फिर चंद्रमाका इस प्रकार एकातिथिमें वारहवार दोनों स्वर चलतेहैं ॥ २२५ ॥

अथ वारपरत्वेन निजस्वरोदयः।

त्रयः सूर्यस्वरा ज्ञेया भानुजीवधरात्मजाः ॥ शनिभार्गवचंद्रज्ञाः प्रोक्ताश्चंद्रस्वरा इमे॥ २२६ ॥ स्ववारे स्वस्वरारंभो नाड्यः पंचोदयाद्रवेः ॥ निजस्वरोदितं कार्यं स्ववारे स्वस्वरोदये ॥२२७॥ काले सूर्यस्वरस्येन्दोः स्वरे चेंदो रवेः स्वरे॥ उद्वेगश्चाशुभं हानिः स्वस्वकालेऽखिलं शुभम्२२८॥

अब वारपरत्वसे निजस्वरोदय लिखतेहैं—रवि, वृहस्पति, मंगल वारमें सूर्यका स्वर रहताहै और शनि, शुक्र, चंद्र, वुध इन वारोंमें चंद्रमाका स्वर रहताहै ॥ २२६॥ अपने वारमें सूर्यके उदयसे लेकर पांचघडी अपना स्वर और फिर पांचघड़ी दूसरेका स्वर रहताहै अर्थात् प्रथम सूर्यका होय तो फिर चंद्रमाका और जो प्रथम चंद्र-

माका होय तो फिर सूर्यका स्वर रहताहै इसी प्रकार जानना चाहिये. जिस स्वरमें जो कार्य करना कहाहै उसको उसीके वार और उसी स्वरमें करे ॥ २२७ ॥ सूर्यका समय होय तव चंद्रमाका स्वर होय और चंद्रमाका समय होय तव सूर्यका स्वर होय तो कार्यमें (उद्वेग) घवराहट, अशुभ फल, तथा हानि होतीहै और अपने २ कालमें सब स्वर शुभ होतेहैं ॥ २२८ ॥

अथ प्रातः स्वस्वरपूर्वमुत्थानम् ।

प्रातर्नित्यं समुत्तिष्ठेत्स्ववारस्य स्वरेण हि ॥ अयने दक्षिणेऽब्जस्य स्वरेणैवोत्तरे रवेः ॥ २२९ ॥ निजस्वरो यदा कार्ये न चेत्संप्रोक्तवत्तदा ॥ प्राणायामादियत्नेन वाहयेत्तं स्वरं सुधीः ॥ २३० ॥

अब प्रातःकालमें स्वस्वरपूर्वक उठना लिखतेहैं-जिस वारका जौनसा स्वर होय उसीमें प्रातःकाल सोतेसे उठे अथवा दक्षिणायनमें चंद्रस्वरसे और उत्तरायणमें सूर्यस्वरसे जागै ॥ २२९ ॥ कार्यके अनुकूल अपना स्वर उक्तरीतिसे न चलताहोय तो बुद्धिमान्को चाहिये कि, प्राणायामादि यत्नोंसे उसी स्वरको चलावै जिसमें कि, वह कार्य करना चाहिये ॥ २३० ॥

अथ चंद्रस्वरकृत्यम् ।

प्रवेशोद्वाहयात्राश्च वस्त्रालंकारधारणम् ॥ संधिः शुभानि कार्याणि कार्याणींदुस्वरोदये ॥ २३१ ॥ पौष्टिकं शांतिकं प्रीतिरौषधं च रसायनम् ॥ योगाभ्यासादिकं कर्म सिद्ध्येत्सर्वं विधोः स्वरे ॥२३२॥ श्रांतः शोकविपार्तश्च मूर्च्छितो ज्वरितोपि च ॥ सज्जनस्य प्रवोधे च चन्द्रनाडीं प्रवाहयेत् ॥ २३३ ॥

अब चंद्रस्वरकृत्य लिखतेहैं-प्रवेश, विवाह, यात्रा, वस्त्रालंकारधारण, मिलापकरना, तथा सब शुभकार्य चंद्रस्वरके उदयमें करने

चाहिये ॥२३१॥ पौष्टिक और शांतिक कार्य, प्रीतिकार्य, औषधकार्य, रसायन कर्म, योगाभ्यासादि सब कर्म चंद्रस्वरमें सिद्ध होतेहैं॥२३२॥ थकाहुआ, शोक और विषसे पीडित, मूर्छायुक्त, ज्वरयुक्त पुरुष चंद्रमाके स्वरको चलावै एवं सज्जन पुरुषके समझानेमेंभी चंद्रमाकी नाडीको चलावै ॥ २३३ ॥

अथ सूर्यस्वरकृत्यम्।

कुर्यात्सूर्यस्वरे युद्धं व्यवहारं च भोजनम्॥मैथुनं विग्रहं द्यूतं स्नानं भंगं भयं तथा ॥२३४॥ विद्विषां मारणं स्तंभं मोहनोच्चाटनं वशम् ॥ सूर्यनाड्यामियात्सिद्धिमत्युग्रं कर्म चाखिलम् ॥ २३५ ॥ मंदाग्निभोजनादूर्ध्वं वश्यार्थं योषितामपि ॥ सूर्यनाड्यां नरः स्वप्यात्प्रयत्नेनापि सर्वदा ॥ ॥ २३६ ॥ आलिंगने प्रसंगे यो वश्यार्थं शयने स्त्रियाः ॥ चंद्रस्वरं स्वसूर्येण सकामस्तु पिवन्भवेत् ॥ २३७ ॥

अव सूर्यस्वरकृत्य लिखतेहैं—सूर्यस्वरमें युद्ध, व्यवहार, भोजन, मैथुन, विग्रह, जुआ, स्नान, भंग, भयकार्य करै ॥ २३४ ॥ शत्रुओंका मारण, स्तंभन, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण ये सब कार्य सूर्यस्वरमें करने चाहिये तथा अत्युग्र सब कर्मभी सिद्धिको प्राप्त होतेहैं॥२३५॥ मंदाग्निमें भोजनकरनेके पीछे तथा स्त्रियोंको वशमें करनेके लिये पुरुष सूर्यस्वरमें यत्नसे सदैव सोवै ॥ २३६ ॥ कामीपुरुष सेजपर आलिंगन तथा प्रसंगमें स्त्रीको वशमें करनेके लिये अपने सूर्यस्वरसे स्त्रीके चंद्रस्वरको पीतारहे अर्थात् अपना दाहिना स्वर और स्त्रीका वायाँस्वर चलता होय तो स्त्रीके साथ प्रसंग तथा शयन करै ॥२३७॥

अथ वहन्नाडीस्वरकृत्यम्।

पूर्णनाडीस्थिते पूर्णं कार्यं सिद्ध्यति प्रच्छके ॥ शून्यनाडीस्थिते शून्यं संक्रमेऽपि न सिद्ध्यति ॥२३८॥ अग्रे दत्त्वा

व्रजेद्धीमान्पूर्णनाड्याः पदत्रयम् ॥ प्रवेशसमये नाड्या यात्राद्यं सर्वसिद्धिदम् ॥ २३९ ॥ दूरे युद्धे स्वरश्चांद्रः समासन्ने रवेः शुभम् ॥ यायी चंद्रस्वरे जेता स्थायी सूर्यस्वरे जयी ॥ २४० ॥ रिक्तमंगं रिपुः कृत्वा वहन्नाड्यां स्थितो जयेत् ॥ शून्यभागे स्थितः शत्रुर्हन्यते नात्र संशयः ॥२४१॥

अब बहते हुए नाडीस्वरकृत्य लिखतेहैं—पूछनेवाला पूर्णनाडीमें बैठा होय तो कार्य पूर्णसिद्ध होताहै और यदि पूछनेवाला शून्यनाडीमें बैठा होय तो कार्य शून्य रहताहै तथा पूछनेवाला चलते फिरतेमें प्रश्न करे तो कार्यकी सिद्धि नहीं होतीहै ॥ २३८ ॥ बुद्धिमानको चाहिये कि, पूर्ण नाडीमेंही प्रथम तीन चरण धरकरके यात्रा करे, इसी प्रकार प्रवेशके समयभी पूर्णनाडीमेंही प्रथम तीनचरण उठावे तो यात्रादिक सर्वकार्य सिद्धिदायक होतेहैं ॥ २३९ ॥ युद्ध दूर होय तो चंद्रस्वर और निकट होय तो सूर्यस्वर शुभ होताहै. यात्रा करनेवाले राजाकी चंद्रस्वरमें जीत होतीहै और स्थायी राजा सूर्यस्वरमें विजयी होताहै ॥ २४० ॥ यदि स्थायी शत्रुराजा नाडीके शून्य अंगको चलाताहुआ युद्ध करै तो जयको प्राप्त होताहै और जो स्थायीशत्रु नाडीके शून्य भागमें युद्ध करै तो निस्संदेह माराजाताहै ॥ २४१ ॥

अथ पंचघट्यात्मके स्वरे तत्त्वोदयः ।

तत्त्वानि पंच भूरापस्तेजो वायुर्नभः क्रमात् ॥
एकैकस्य घटीभोगे पंचघट्यात्मके स्वरे ॥ २४२ ॥

अब पंचघट्यात्मकस्वरमें तत्त्वोदय लिखतेहैं—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश ये पांच तत्त्व क्रमसे एक एक घटीके भोगमें होतेहैं अर्थात् एकएक घटीभर एकएक तत्त्व रहताहै यही स्वर पंचघट्यात्मक होताहै ॥ २४२ ॥

अथ तत्त्वानां प्रचारः।

भुवो मध्ये जलस्याधः सर्वदोर्ध्वं च तेजसः ॥
वायोस्तिर्यक्प्रवाहः स्यात्संक्रमे नभसो द्वयोः ॥२४३॥

अब तत्त्वोंका विचार लिखतेहैं—पृथ्वीतत्त्वका प्रवाह मध्यमें चलताहै, जलतत्त्वका स्वर नीचाहोकर चलताहै अग्नितत्त्वका स्वर ऊंचाहोकर चलताहै, वायुतत्त्वका स्वर तिरछा होकर चलताहै और आकाश तत्त्वके स्वरमें दो गति होतीहैं ॥ २४३ ॥

अथ स्वरतत्त्वानां फलम्।

विजयस्तैजसे तत्त्वे सिद्धिराप्ये रणे भवेत् ॥
भूतत्त्वे सक्षतं युद्धे वायौ भंगोऽथ खे मृतिः ॥ २४४ ॥

अब स्वर तत्त्वोंका फल लिखतेहैं—अग्नितत्त्व होय तो युद्धमें विजय होतीहै और जलतत्त्व होय तो युद्धमें सिद्धि होतीहै और पृथ्वी तत्त्व होय तो युद्धमें घाव लगताहै वायु तत्त्व होय तो युद्धमें भंग होताहै और आकाशतत्त्व होय तो मृत्यु होतीहै ॥ २४४ ॥

अथ यात्रासमये गमनविधिः।

स्वस्य देवस्य वा गेहाद्गुरोर्वा मुख्ययोषितः ॥ हविष्यं प्राश्य भूपालो ब्राह्मणैरनुमोदितः ॥ २४५ ॥ शृण्वन्सन्मंगलान्येव संयायाद्विजयी प्रभुः ॥ गम्यदिक्संमुखं दत्त्वा वहन्नाडीपदं पुरः ॥ २४६ ॥ द्वात्रिंशच्च पदान्यस्मान्निर्गत्य वसुधापतिः ॥ देवज्ञद्विजवर्येभ्यः सहेमतिलपात्रकम् ॥ ॥ २४७ ॥ घृतपात्रं च सद्द्रव्यं दत्त्वा रोहेच्च वाहनम् ॥ केश्चित्तु दक्षिणं पादमग्रे दत्त्वा व्रजेदिति ॥ २४८ ॥ प्रोक्तं तत्तु स्वकालोक्तस्वरश्चेन्न भवेत्तदा ॥

अब यात्रासमयमें गमनविधि लिखतेहैं—अपने देवताके वा गुरुके अथवा मुख्य स्त्रीके घरसे हविष्यान्न भोजन करके ब्राह्मणोंसे

आज्ञा माँग ॥ २४५ ॥ शुभ मंगल शब्दोंको सुनताहुआ राजा यात्रा करे तो विजयको प्राप्त होताहै. जौनसी दिशाको जाना होय उसी दिशाके सम्मुख प्रथम वह चरण उठाके धरै कि, उस समय जौनसा स्वर चलता होय ॥ २४६ ॥ उस स्थानसे बत्तीस कदम चलकर राजा ज्योतिषी ब्राह्मणोंके लिये सुवर्णसहित तिलपात्र ॥२४७॥ तथा द्रव्यसहित घृतपात्र दान करके सवारीपर चढे. किन्हीं आचार्योंका ऐसा कथन है कि, दाहिने पाँवको आगे धरकर यात्रा करै ॥ २४८ ॥ परन्त ऐसा उस समय करना चाहिये कि, जब अपने समयका स्वर नहीं होय तो ॥

अथ प्रतिदिशं याने वाहनानि ।

प्राच्यां गजं रथं याम्यां प्रतीच्यां तुरगोत्तमम् ॥
उदीच्यां शिबिकां भूपः समारुह्य व्रजञ्जयेत् ॥ २४९ ॥

अब प्रतिदिशाके जानेमें वाहन लिखतेहैं–पूर्वमें हाथी, दक्षिणमें रथ, पश्चिममें उत्तम घोडा, उत्तरमें पालकीपर चढकर राजा यात्रा करै तो जयको प्राप्त होताहै ॥ २४९ ॥

अथ दिश्युक्तवाहनाभावे ध्यानम् ।

दिश्युक्तवाहनाऽभावे ध्यात्वातद्वाहनं व्रजेत् ॥ २५० ॥

अब दिशाओंमें उक्तवाहनके अभावमें ध्यान लिखतेहैं-दिशाओंकी कही हुई सवारी न मिलसके तो उन सवारियोंका ध्यानही करके यात्रा करे ॥ २५० ॥

अथ स्वगमनविलंबे प्रतिनिधित्वेन प्रस्थानम् ।

विलंबः स्वगमे राज्ञः कार्याचेद्यदि चेत्स्वयम् ॥ छत्रचामर-शस्त्रादिगम्याशां प्रति प्रेषयेत् ॥ २५१ ॥ चालयेयुश्च विप्राद्या उपवीतमथायुधम् ॥ क्षौद्रं धात्रीफलं चापि प्रस्थाने वात्मनः प्रियम् ॥ २५२ ॥

अब स्वगमनके विलम्बमें प्रतिनिधिद्वारा प्रस्थान लिखतेहैं—यदि कार्यादिकोंके कारण राजाको अपनी यात्रा करनेमें विलम्ब होय तो अपना छत्र, चँवर, शस्त्र आदि वस्तुको गन्तव्य दिशामें भेजदेय ॥ ॥ २५१ ॥ ब्राह्मणलोग यज्ञोपवीतको, राजालोग आयुधको, वैश्य शहतको और शूद्र आमलेके फलको गन्तव्यदिशामें भेजदेवे अथवा जो वस्तु जिसको प्यारी होय उसकोही प्रस्थानमें भेजनी चाहिये ॥ २५२ ॥

अथ प्रस्थितस्य वसतिप्रदेशाः ।

गर्गो गेहांतरं गेहाद्भृगुः सीमांतरं जगौ ॥ प्रस्थानं तु भरद्वाजो बाणविक्षेपणावधि ॥ २५३ ॥ पुराद्बहिर्वसिष्ठोन्ये धनुषां शतपंचकम् ॥ केचिच्छतद्वयं चैके धनुर्दशमितं जगुः ॥ २५४ ॥ एतदुक्तमिते देशे गम्याशाभिमुखो नृपः ॥ संप्रस्थितस्तदा यात्रा सुमुहूर्तफलप्रदा ॥ २५५ ॥

अब प्रस्थानका वासस्थान लिखतेहैं—गर्गाचार्यका मत है कि, एकघरसे दूसरे घरको प्रस्थान भेजे, शुक्राचार्यका ऐसा मत है कि, एक गांवसे दूसरे गांवकी सीमामें प्रस्थान भेजे और भरद्वाज ऋषिका ऐसा मत है कि, जितनीदूरपर बाण गिरताहै उतनी दूरपर प्रस्थान भेजे ॥ २५३ ॥ वसिष्ठजीके यह मत है कि, पुरसे बाहिर प्रस्थान भेजे और अन्य आचार्योंका ऐसा मत है कि, पांचसौ धनुष भूमिपर प्रस्थान भेजे, किन्हीं आचार्योंका मत है कि, दोसौ धनुषके आगे प्रस्थान भेजे और कोई आचार्य ऐसा कहतेहैं कि, दश धनुषके आगे प्रस्थान भेजे. जानना चाहिये कि, दो हाथका प्रमाण धनुषका होताहै । गन्तव्य दिशाके सामने जानेवाला राजा उक्त दूरीपर प्रस्थान करे तो यात्रा सुमुहूर्त्तका फल देतीहै ॥ २५४ ॥ २५५ ॥

अथ कृतप्रस्थानस्यापि ततो गमः ।

धृतप्रस्थानको वापि स्वयं संप्रस्थितोपि वा ॥
ततोपि गमने चिंत्यं सच्चंद्रशकुनादिकम् ॥ २५६ ॥

अब कृतप्रस्थानकाभी गमन लिखतेहैं–रक्खेहुए प्रस्थानकी जगहसे अथवा आपही प्रस्थान किया हो तो उस स्थानसे भी राजा, यात्रा करते समय शुभचंद्रमा तथा शकुनका विचार करै ॥ २५६ ॥

अथ प्रस्थितस्य गमनावधिः ।

प्रथमेह्नि नृपः क्रोशं द्वितीयेऽहनि योजनम् ॥
क्रोशषट्कं तृतीयेह्नि यथेच्छं तु ततः परम् ॥ २५७ ॥

अब प्रस्थान कियेहुये राजाकी गमनकी वधि लिखतेहैं–प्रथम दिन राजा एककोश चलै, दूसरेदिन एकयोजन अर्थात् चारकोश चले, तीसरेदिन छह कोश और इससे परे इच्छानुसार चले ॥२५७॥

अथ प्रस्थाने प्रस्थितस्य कार्यवशाद्विलंबे दिननिर्णयः ।

प्रस्थाने भूपतिस्तिष्ठेन्नैकत्र दशरात्रकम् ॥
सप्तरात्रं तु सामंतः पंचाहं प्राकृतो जनः ॥ २५८ ॥

अब प्रस्थानमें प्रस्थितका कार्यवशासे विलंबमें दिननिर्णय लिखतेहैं–प्रस्थान करनेके पीछे राजा दशरात्रितक एकजगह न ठहरे और (सामंत) सूबा सात रात्रितक एकजगह न रहै और (प्राकृतजन) साधारण मनुष्य पाँच दिनतक एकत्र न ठहरे ॥ २५८ ॥

अथ दिक्परत्वेन प्रस्थानम् ।

सप्ताहान्येव पूर्वस्यां प्रस्थानं पंच दक्षिणे ॥ पश्चिमे त्रीणि शस्तानि सौम्यायां तु दिनद्वयम् ॥२५९॥ स्वयं पंचदिनं

तिष्ठेद्दिनं भार्या दशावरम् ॥ त्रिर्मंत्री वाहनं सप्त स्वर्णं मासं द्विरायुधम् ॥ २६० ॥

अब दिक्परत्वसे प्रस्थान लिखतेहैं—पूर्वदिशाकी यात्रामें सात दिन, दक्षिणदिशाकी यात्रामें पांच दिन, पश्चिममें तीन दिन और उत्तरमें दो दिन प्रस्थान रहे तो शुभ होताहै ॥ २५९ ॥ राजा स्वयं प्रस्थान करै तो पांच दिन और स्त्री प्रस्थान करै तो दश दिन और मंत्री करै तो तीन दिन ठहरै, यदि सवारीको प्रस्थानमें भेजे तो सात दिन, सुवर्णको भेजे तो एकमास और शस्त्रको भेजे तो दो मास प्रस्थानकी जगहमें रहै ॥ २६० ॥

अथ प्रस्थानोक्तदिनाधिक्ये पुनर्यात्रा ।

राज्ञश्चातिक्रमश्चेत्स्यात्प्रस्थानस्योदितावधेः ॥
सन्मुहूर्ते पुनर्यात्रां कुर्याद्गेहात्ततोपि वा ॥ २६१ ॥

अब प्रस्थानोक्तदिनाधिक्यमें पुनर्यात्रा लिखतेहैं—प्रस्थानकी जगहमें ठहरनेके लिये जितने दिनोंकी अवधि पहिले कहचुकेहैं यदि उनसे अधिकदिन राजाको लगजाँय तो घर आयकर अथवा उसी जगहसे शुभ मुहूर्तमें फिर यात्रा करै ॥ २६१ ॥

अथ यात्रायाः पूर्वं त्याज्यानि ।

यात्राह्नात्पूर्वतः सप्तरात्रौ स्त्रीसेवनं त्यजेत् ॥ प्रासक्तश्चेन्नृपश्चैकरात्रं तु सर्वथैव हि ॥ २६२ ॥ जह्याद्दुग्धं त्रिरात्रात्तु क्षौरं च पंचवासरात् ॥ तैलं विरेकं वमनं क्षौद्रं तद्वासरे त्यजेत् ॥२६३॥ क्रोधं च सुरतं तैलं पक्वमांसं गुडं पयः ॥ सेवित्वा नृपतिर्गच्छँल्लभते विविधापदः ॥२६४॥ अवमान्य स्त्रियं विप्रान्विरुद्धय स्वजनैः सह ॥ ऋतुमत्यां च भार्यायां गच्छन्मृत्युमवाप्नुयात् ॥ २६५ ॥ ऋतुस्नानोत्तरं नार्या यात्रा

त्यावश्यकी यदि ॥ कृतभोगो नरो यायाद्दानं शांतिं विधाय च ॥ २६६ ॥

अब यात्रामें पूर्व त्याज्य लिखतेहैं–यात्राके दिनसे सात दिन पहले स्त्री सेवन त्याग देय, यदि राजा स्त्रीप्रसंगमें अत्यंत आसक्त ही होय तो एकरात्रि पहिलेसे स्त्री प्रसंग अवश्यही त्यागदेय ॥२६२॥ और तीन रात्रि पहिले दूध और पांच दिन पहिलेसे क्षौर बनवाना त्यागदेय और यात्राके दिन तैल मलना, दस्त करना, वमन करना, शहदखाना त्यागदेय ॥ २६३ ॥ क्रोध, रति, तैल, पकाहुआ मांस, गुड, दूध इतनी वस्तुओंमेंसे किसीका सेवन करके राजा यात्रा करै तो अनेक आपदाओंको भोगताहै ॥ २६४ ॥ स्त्रीका अपमान करके, स्वजन तथा ब्राह्मणोंसे विरोध करके अथवा अपनी स्त्री रजोवती होय तो यात्रा करनेवाला राजा मृत्युको प्राप्त होताहै ॥ ॥ २६५ ॥ यदि आवश्यक यात्रा होय तो मनुष्य ऋतुस्नानके पश्चात् स्त्रीसम्भोग करके दान और शान्ति करै तदनन्तर यात्रा करै तो कल्याण होताहै ॥ २६६ ॥

अथ यात्रायां शुभशकुनाः ।

दधि दूर्वाक्षतारौप्यं पूर्णकुंभोथ सर्षपाः॥ दीपो गोरोचनाऽदर्शोप्रज्वलन्हव्यवाहनः ॥ २६७ ॥ वेदघोषः शुभा वाचो जयमंगलसंयुताः ॥ शंखदुंदुभिवीणादिमृदुमर्दलनिःस्वनाः ॥ २६८ ॥ सिद्धमन्नं च तांबूलं मीनो दुग्धं घृतं मधु ॥ मदिरा रुधिरं मांसं भक्ष्यं नानाविधं फलम् ॥२६९॥ इक्षवः सितपुष्पाणि पद्ममुद्धृतगोमयम् ॥ ध्वजः सिंहासनं छत्रं कृपाणांकुशमायुधम्॥२७०॥ दोलावितानसद्वस्त्रं रत्नालंकारदीपिकाः॥ विप्रो भूपो गुरुर्वृद्धः पुत्रपौत्रादिभिर्वृतः॥२७१॥ दैवज्ञः कन्यका योषा सुभगा पुत्रसंयुता ॥ वारांगना तपस्वी

च वदान्योथ नरः शुचिः ॥ २७२ ॥ रजको धौतवस्त्रं च शवो रोदनवर्जितः ॥ तोयार्थ्यपूर्णकुंभश्चानुगः पृष्ठे मृदों-जनम् ॥२७३॥ गजो वाजी रथो धेनुः सवत्सा तु विशेषतः ॥ श्वेतो वृषोऽन्यवर्णोपि बद्धैकश्चेत्तदा शुभः ॥२७४॥ वर्णी स्वमित्रमुष्णीषं दर्भो हंसो मयूरकः ॥ नकुलश्च भरद्वाजश्चापश्छागस्तथैव च ॥ २७५ ॥ चित्तोत्साहकरं वस्तु शुभान्येतानि दर्शनात् ॥ २७६ ॥

अब यात्रामें शुभशकुन लिखतेहैं—दही, दूर्वा, अक्षत, चांदी, जलभराहुवा घडा, सरसों, दीपक, गोरोचन, दर्पण, प्रज्वलित अग्नि ॥ २६७ ॥ वेदका शब्द, शुभ वाणी, जयमंगल, शंख, दुंदुभी, वीणाआदि, मृदंग, डफ आदिके शब्द ॥२६८॥ सिद्ध अन्न,ताम्बूल, मछली, दूध, घी, शहत, मदिरा, रुधिर, मांस, नानाप्रकारके भक्ष्य फल ॥ २६९॥ ईखके पदार्थ, श्वेत फूल, कमल, उठायाहुआ गोवर, ध्वजा, सिंहासन, छत्र, कुश, शस्त्र ॥ २७० ॥ हिंडोला, तंबू, शुभ वस्त्र, रत्न, आभूषण, मसाल, ब्राह्मण, राजा, गुरु, पुत्रपौत्रादिसे युक्त वृद्ध पुरुष ॥ २७१ ॥ ज्योतिषी, कन्या, सौभाग्यवती स्त्री, पुत्रयुक्ता सुन्दरी स्त्री, तपस्वी, दाता मनुष्य, पवित्र मनुष्य ॥ २७२॥ धोवी, धुलेहुए वस्त्र, रोदनरहित मुर्दा, जलकी इच्छावाला पुरुष खाली घडा लिये पीठके पीछे, मिट्टी, अञ्जन, ॥ २७३ ॥ हाथी, घोडा, रथ, सवत्सा गौ, श्वेत वैल और अन्य वर्णकाभी वैल जो कि, अकेलाही वंधा होय तो शुभ होता है ॥ २७४ ॥ ब्रह्मचारी अपना मित्र, पगडी, कुश, हंस, मोर, न्योला, टिटहरी पक्षी, नीलकंठ पक्षी, वकरा ॥ २७५ ॥ और चित्तमें उत्साह करनेवाली वस्तु ये सब शुभ हैं. यात्राके समय देखनेमें आवें तो कल्याण होताहै ॥ २७६ ॥

अथ शुभवस्तुनि विशेषः ।

कीर्त्तनाच्छ्रवणं श्रेष्ठं श्रवणात्तु विलोकनम् ॥ दर्शनात्स्पर्शनं चैषां दध्यादीनां गमादिषु ॥ २७७ ॥ शुभदं दर्शनं येषा-मभिवाद्यैव तान्नृपः ॥ कृत्वा दक्षिणतः सर्वान्गच्छन्सि-द्धिमवाप्नुयात् ॥ २७८ ॥

अब शुभवस्तुमें विशेष लिखतेहैं–यात्रादि कार्योंमें शकुनकी दध्यादिक शुभ वस्तुओंका नाम लेनेसे उनका श्रवण करना श्रेष्ठ होताहै और श्रवण करनेसे देखना श्रेष्ठ होताहै और देखनेसे स्पर्श करना श्रेष्ठ होताहै ॥ २७७ ॥ जिनका दर्शन शुभदायक है उनको प्रणाम करके अपने दक्षिण भागमें लेताहुआ यात्रा करने-वाला राजा सिद्धिको प्राप्त होताहै ॥ २७८ ॥

अथ दुःशकुनाः ।

कार्पासं कृष्णधान्यं च लोहकारश्च रोदनम् ॥ लोहं च रक्तपुष्पं च गुडस्तैलं क्षुतं तथा ॥ २७९ ॥ पिण्याकं तृणतक्राणि भस्मास्थिलवणं तुषः ॥ पाषाणेंधनचर्मादि सधूम्रो वह्निरौषधम् ॥ २८० ॥ मत्तो वांतः खलो हिंस्रो मुंडितश्च बुभुक्षितः ॥ जटिलश्च तथा रोगी संन्यासी मलिनो रिपुः ॥२८१॥ खंजो नग्नोंगहीनश्च तैलाभ्यक्तोथ गर्भिणी ॥ काषायवस्त्रधारी च मुक्तकेशोऽथ पाशवान् ॥ २८२ ॥ वंध्या च शृंखले चौरः पंढो यानपलायनम् ॥ खरोष्ट्रमहि-षारूढाः कुवाक्यश्रवणं तथा ॥ २८३ ॥ कृष्णसर्पोऽथ मंडूकः सरठो ग्रामसूकरः ॥ कृपणः पतितो व्यंगः कुब्जोंधो बधिरो जडः ॥ २८४ ॥ आर्द्रवासोथ विधवा स्वर्णकारो रजस्वला ॥ उपानत्कर्दमांगी च पुरीषं च वसा तृणम् ॥ ॥ २८५ ॥ तथा रजस्वलापुष्पं कृष्णोक्षा महिषो वृषः ॥

स्वगेहदहनं युद्धं मार्जारं स्वकुले कलिः ॥ २८६ ॥ गोक्षुतं प्राणिनामंगशिरःश्रोत्रप्रकंपनम् ॥ मार्जारान्मार्गरोधश्च स्खलनं रिक्तकुंभकः ॥ एते दुःशकुना याने सर्वकार्यनिषेधकाः ॥ २८७ ॥

अब दुश्शकुन लिखतेहैं—कपास, काला अन्न, लुहार, रोनेका शब्द, लोह, लाल फूल, गुड़, तैल, छींकका शब्द, तिलोंकी खल, तृण, मट्ठा, भस्म, हाड़, लवण, फूस भूसी, पत्थर, इंधन, चमड़ा, धुआँसहित अग्नि, औषध ॥ २७९ ॥ २८० ॥ उन्मत्त, भ्रान्त, दुष्ट, हिंसक मनुष्य, मुंडित, भूखा, जटाधारी, रोगी, संन्यासी, मलिन, शत्रु ॥ २८१ ॥ लंगडा, नंगा, अङ्गहीन, तैलका उबटन लगाये हुए मनुष्य, गर्भिणी, गेरुआ वस्त्रधारी, खुलेहुए बालोंवाला, फाँसी हाथमें लियेहुए पुरुष ॥ २८२ ॥ वंध्या स्त्री, शाँकल लियेहुए चौर, नपुंसक, सवारीका भागना, गधा, ऊंट, भैंस इन पर चढाहुआ मनुष्य, कुवाक्यका श्रवण ॥ २८३ ॥ काला सर्प, मेंडक, कर्केटा, ग्रामसूकर, कृपण मनुष्य, पतित मनुष्य, कुवड़ा, लंगडा, अंधा, बहरा, जड़, गीलेवस्त्र पहिरेहुए मनुष्य, विधवा स्त्री, सुनार, रजस्वला स्त्री, कीचमें सनाहुआ जूता, विष्ठा, चर्बी, तृण ॥२८४॥२८५॥ रजस्वलाके रुधिरसे सना वस्त्र, काला बैल, भैंसा, साँढ़, अपने घरमें आग लगजाना, विलावोंकी लडाई, अपने कुलमें लडाई ॥ २८६ ॥ गौकी छींक, प्राणियोंके अंग शिर कानोंका काँपना, विलावोंसे मार्गका रुकजाना, ठोकर लगकर रपटना, खाली घड़ा, यह सब दुश्शकुन यात्रामें सर्वकार्योंके नाशक होतेहैं ॥ २८७ ॥

अथ महाऽपशकुनाः।

क्षिका विडालसर्पाभ्यां मार्गरोधो मृतेर्वचः ॥ मार्जारं माहिषं युद्धं शुनः कर्णप्रकंपनम् ॥ अतिधूमान्वितो वह्निः पडेते मरणप्रदाः ॥ २८८ ॥

अब महापशकुन लिखतेहैं-छींक होना, विलाव और सर्पसे मार्गका रुकजाना, मृत्युके वचन सुनना, विलावोंका युद्ध, भैंसोंका युद्ध होना, कुत्तेका कान फटफटाना, अतिधूमयुक्त अग्निका दीखना, ये छह अपशकुन मरणदायक हैं ॥ २८८ ॥

अथ दुःशकुना वामतस्त्याज्याः ।

एते दुःशकुना वामे कृताश्चेच्छकुनोत्तरम् ॥
अदुष्टा एव ते ज्ञेयाः शकुना दक्षिणे शुभाः ॥ २८९ ॥

अब दुश्शकुन वाममें त्याज्य लिखतेहैं-यह दुश्शकुन यात्रा करनेवालेके बाईं ओर होय तो शकुन होने पीछे शुभ होजातेहैं और शुभ शकुन दाहिनी ओर होय तो श्रेष्ठ होतेहैं ॥ २८९ ॥

अथ केषांचित्कीर्त्तनं केषांचिद्दर्शनं शुभमशुभं च ।

शशजाहकगोधानां सर्पसूकरयोरपि ॥ कीर्त्तनं शुभदं नाम्ना नो रुतं न च दर्शनम् ॥२९०॥ ऋक्षवानरयोर्याने दर्शनं च रुतं शुभम् ॥ नामसंकीर्तनं नेष्टं दक्षिणे च खरस्वनः२९१॥

अब किसीका कीर्त्तन और किसीके दर्शनका शुभाशुभ लिखतेहैं-खरहा, कछुआ, गोह, सर्प, सूकर इतने जीवोंके नामका कीर्त्तन शुभ होताहै और इनका शब्द तथा दर्शन शुभ नहीं होताहै ॥ २९० ॥ यात्राके समय रीछ और वानरका दर्शन तथा शब्द शुभ होताहै और इनके नामका उच्चारण तथा दाहिनी ओर गधेका शब्द नेष्ट होताहै ॥ २९१ ॥

अथ वामभागे शुभाः ।

सूकरी कोकिला पल्ली छुच्छुका पिंगला रला ॥ पोतकी च शिवा सर्वे पुमाख्या वामगाः शुभाः ॥ मध्याह्नोत्तरतः श्रेष्ठौ चापनभ्रू च वामगौ ॥ २९२ ॥

अब वामभागमें शुभ लिखतेहैं—सूकरी, कोकिला, छिपकली, छुछूँदरि, पिंगला, रला, पोदकी, लोखड़ी तथा पुरुषसंज्ञक जीव वामभागमें शुभ होतेहैं. मध्याह्नके उपरान्त नीलकंठ और न्योला वामभागमें शुभ होतेहैं ॥ २९२ ॥

अथ वामभागे शुभस्वनः।

खरोलूकशृगालानां वामे पृष्ठे शुभः स्वनः ॥ २९३ ॥

अब वामभागमें शुभ शब्द लिखतेहैं—गधा, उल्लू, गीदड़ इनका शब्द बाईं ओर तथा पीठ पीछे होय तो शुभ होताहै ॥२९३॥

अथ दक्षिणभागे शुभः।

श्रीकंठो वानरो भासश्छिक्करः पिक्को रुरुः ॥ श्वा ऋक्षो वायसः श्रेष्ठाः स्त्रीसंज्ञाश्चापि दक्षिणे ॥ वनश्वमृगवस्ताश्च संध्यायां दक्षिणे शुभाः ॥ २९४ ॥

अब दक्षिणभागमें शुभ लिखतेहैं—नीलकंठ, वानर, गिद्ध, शिकरा, मैना, रुरुनामका मृग, कुत्ता, रीछ, कौआ और स्त्रीसंज्ञक जीव दाहिनी ओर शुभ होतेहैं और भेडिया, मृग, और अज सन्ध्या समयमें दक्षिणभागमें श्रेष्ठ होतेहैं ॥ २९४ ॥

अथ प्रदक्षिणगताः शुभाः।

प्रदक्षिणगताः शस्ता याने तु मृगपक्षिणः ॥ विषमाश्चेदति- श्रेष्ठा व्रजंतो भूपतेर्मृगाः ॥ वामा दक्षिणगाः श्रेष्ठा मृगबभ्रु- पतत्रिणः ॥ २९५ ॥

अब प्रदक्षिणगत शुभ लिखतेहैं—राजाकी यात्राके समय मृग और पक्षी दक्षिणभागमें श्रेष्ठ होतेहैं और यदि वे मृग तथा पक्षी (विषम) एक, तीन, पांच आदि चलरहे होंय तो अतिश्रेष्ठ होतेहैं अथवा वामभागसे दक्षिणको मृग, न्योला, पक्षी चलरहे होंय तो श्रेष्ठ होतेहैं ॥ २९५॥

अथ वामगाः शुभाः ।

शृगालः सारमेयश्च दक्षिणाद्वामगः शुभः ॥ २९६ ॥

अव वामगत शुभ लिखतेहैं–गीदड़, वा कुत्ता दाहिनी ओरसे बाँईओरको जाय तो शुभ होताहै ॥ २९६ ॥

अथाऽत्र विशेषः ।

पूर्वदिग्गमने पूर्णवदनश्छिक्करः पिकः॥वामगो दक्षिणे काकः शुभोन्यत्र गमेऽन्यथा ॥ २९७ ॥ चापः पूर्णाननो व्योम्नि विधत्ते यदि तोरणम् ॥ अन्यो वा विजयस्तत्र काकश्चेन्मरणं ध्रुवम् ॥ २९८ ॥

अव यहां विशेष लिखतेहैं–पूर्वदिशाकी यात्रामें मांसको मुखमें लियेहुए शिकरा वा कोकिलका दर्शन होय तो शुभ होताहै और दक्षिणदिशाकी यात्रामें कौआ दाहिनीओरको जाय तो शुभ होताहै और अन्य दिशाकी यात्रामें कौआका अन्यथा फल होताहै अर्थात् अशुभ होताहै ॥ २९७ ॥ यदि नीलकंठ पक्षी (पूर्णानन) मांसको मुखमें लियेहुए आकाशमें तोरण वनारहाहोय अर्थात् तोरणके आकार उड़ता होय अथवा कोई अन्यपक्षी माँसलिये आकाशमें उड़ताहोय तो विजय होतीहै और जो वह अन्यपक्षी कौआ होय तो निश्चयही मरण होताहै ॥ २९८ ॥

अथ शुनश्चेष्टाविशेषः ।

शीर्षोदरहनुघ्राणहृत्कंठस्कंधपृष्ठकम् ॥ श्वा दक्षिणेनपादेन कंडूयन् गमनादिषु ॥ २९९ ॥ लाभं क्षेमं जयं धत्ते दक्षिणांगे विशेषतः ॥ वामपादेन सर्वस्य नाशं प्रोक्तफलस्य च ॥ ३०० ॥ विष्ठापंकादिलिप्तांगः श्रवणास्फालनं श्रुतम्॥ दंतप्रकाशनं निद्रालस्यं कुर्वन्मृतिप्रदः ॥ ३०१ ॥

अव शुनका चेष्टाविशेष लिखतेहैं–यात्रादि कार्योंके समय कुत्ता अपने दाहिने पाँवसे शिर, पेट, ठोडी, नाक, छाती, कंठ, कंधा,

पीठ को खुजलावै तो ॥ २९९ ॥ लाभ, क्षेम, विजय होतीहै और दाहिने अंगको खुजलावै तो विशेष लाभ क्षेमादिकी प्राप्ति होतीहै. तथा बायें पाँवसे खुजलावे तो सर्वफलका नाश होताहै ॥ ३०० ॥ विष्ठा वा कीचड़से सनाहुआ कुत्ता कानोंको फटफटावै अथवा छींके वा दाँत फैलाव अथवा नींद तथा आलस्ययुक्त होवै तो मरणप्रद होताहै ॥ ३०१ ॥

अथ यात्रोक्तशकुनानां वामदक्षिणभागयोः प्रवेशादौ व्यत्ययः।

प्रवेशे निम्नगोत्तारे नष्टसंवीक्षणे भये ॥ इडानाड्याः प्रवाहे च द्यूते भैषज्यकर्मणि ॥ ३०२ ॥ युद्धे ते व्यत्यया ज्ञेयाः प्रागुक्ताः शकुनाश्च ये ॥ वामे वा दक्षिणे ये च संप्रोक्ताः शकुनाश्च ते ॥ ३०३ ॥ वैपरीत्येन विज्ञेयाः प्रवेशे नृपतेर्बुधैः ॥ यात्रोक्ताः शकुना ये च त एव नृपदर्शने ॥ ३०४ ॥

अब यात्रोक्तशकुनोंका वामदक्षिणभागोंके प्रवेशादिमें व्यत्यय लिखतेहैं-प्रवेशमें, नदी उतरनेमें, नष्टवस्तुके खोजनेमें, भयमें (इडानाड़ी) वामस्वरके चलनेमें; जूआ खेलनेमें, औषधके कर्ममें॥३०२॥ युद्धमें, पूर्वोक्त शकुन विपरीत जानने अर्थात् शुभ अशुभ और अशुभ शुभ होजातेहैं और जो शकुन बायें वा दाहिने भागमें शुभ वा अशुभ कहेगयेहैं वे सब शकुन राजाके प्रवेशसमय विपरीत जानने और जोजो शकुन यात्रामें कहेहैं वेही शकुन राजाके दर्शनमें विचारने चाहिये ॥ ३०३ ॥ ३०४ ॥

अथ वायोः शुभाशुभसूचकत्वम्।

शुभदो दक्षिणे पृष्ठे मंदः शीतोथ मारुतः ॥
प्रचंडः संमुखे वामे भंगदः समरादिषु ॥ ३०५ ॥

अब वायुका शुभाशुभसूचकत्व लिखतेहैं—दाहिने और पीठपीछे मंद शीतल पवन चले तो यात्रा शुभदायक होतीहै और सामने

वा वायें भागमें प्रचण्ड पवन चलै तो युद्धादिकमें भंगदायक होताहै ॥ ३०५ ॥

अथ शकुनादौ शुभाऽशुभदिग्विचारः ।

अर्धयामावशेषाया रात्रेर्यामप्रमाणतः ॥ अष्टास्वपि क्रमादिक्षु भ्रमणं भास्वतः स्मृतम् ॥ ३०६ ॥ ज्वलंती भानुना युक्ता प्रोषिता दग्धसंज्ञिता ॥ गम्या धूमवती चैता दीप्तास्तिस्रोऽशुभा दिशः ॥ ३०७ ॥ आभ्यः शांताभिधास्तिस्रः पंचम्यः शुभदा दिशः ॥ मध्यमं दिग्द्वयं मिश्रं विज्ञेयं शकुनादिषु ॥ ३०८ ॥

अब शकुनादिमें शुभाऽशुभदिग्विचार लिखतेहैं–आधेप्रहर रात्रि वाकीरहे तबसे प्रहर २ भर सूर्य आठों दिशाओंमें क्रमसे रहतेहें इस प्रकार सूर्यका भ्रमण कहाहै ॥३०६॥ जिस दिशामें सूर्य होय वह दिशा ज्वलती नामकी होतीहै और जिस दिशाको सूर्य त्यागते हें वह दग्धसंज्ञक होतीहै और जिस दिशामें सूर्य जावेंगे वह दिशा धूमवती संज्ञक होतीहै यह तीनों दिशा (दीप्ताः) जलतीहुई होतीहैं और अशुभ हैं ॥ ३०७ ॥ इनसे पांचवीं पांचवीं तीन दिशाएँ शान्तानामकी शुभदायक हैं और मध्यकी दो दिशा मिश्रसंज्ञक हैं ये सब शकुनादिकोंमें विचारनी चाहिये ॥ ३०८ ॥

अथ दुःशकुने जाते कर्त्तव्यमाह ।

याने दुःशकुने साज्यं स्वर्णं दत्त्वा व्रजेत्सुखम् ॥ आद्यदुःशकुने प्राणानेकादशमितान्व्रजेत् ॥ ३०९ ॥ स्थित्वा सुशकुनं भूयो दृष्ट्वा तुष्टो व्रजेत्पुनः ॥ द्वितीयो गमने भूपो दुष्टेऽपि शकुने व्रजेत् ॥ ३१० ॥ प्रतीक्ष्य षोडशप्राणान्गच्छेन्नैव तृतीयके ॥ विरुद्धे शकुने पादौ प्रक्षाल्याचम्य भूपतिः ॥ स्थित्वा तु क्षीरवृक्षाधो भूयः स शकुनैर्व्रजेत् ॥ ३११ ॥

अब दुश्शकुन होनेसे कर्त्तव्य लिखतेहैं–यात्राके समय दुःशकुन होनेपर घृतसहित सुवर्णदान करके सुखपूर्वक यात्रा करै आदिमें दुश्शकुन होय तो ग्यारह श्वास जितनी देरमें आवैं उतनी देर ठहर जाय और फिर शुभ शकुन होय तो उसको देखकर प्रसन्न होताहुआ फिर यात्रा करै. दूसरी यात्रामेंभी दुष्ट शकुन होय तो सोलह श्वास लेकर यात्रा करै और तीसरी वार फिर दुष्टशकुन होय तो यात्रा नहीं करै. विरुद्ध शकुन होय तो राजा पांव धोय आचमन कर दूधवाले वृक्षके नीचे वैठ जाय और फिर शुभ शकुन होय तो यात्रा करै ॥ ३०९ ॥ ३१० ॥ ३११ ॥

अथ यात्रायां त्याज्यदोषाणां संग्रहः ।

तिथ्यर्क्षायनमासाहर्भवाः शूलादयश्च ये ॥ संमुखस्थो भृगुः सौम्यो भृगोर्वक्रादिकं तथा ॥ ३१२ ॥ लालाटी पारिघो दंडो रजः सूतकमुत्सवः ॥ मृतपक्षोऽर्कषड्रिक्तातिथयः १२ । ६ । ४ । ९ । १४ पापवासराः ॥ ३१३ ॥ पृष्ठवामगतश्चंद्रोऽभिद्याम्यां भपंचकम् ॥ जन्मराशिभतो रंध्रं लग्नं शत्रुभतोऽरिभम् ॥ ३१४ ॥ रिपुराशिभपौ लग्ने लग्नांशौ कुंभमीनगौ ॥ लग्नं पृष्टोदयं पृष्ठदिक्स्थमृक्षं शनिस्तु खे ॥ ॥३१५॥ द्यूने शुक्रस्तथा केंद्रे वक्री वक्रगवासरः॥ एतेन्येपि विवाहोक्ता दोषा नेष्टाः प्रयाणके ॥ ३१६ ॥

अब यात्रामें त्याज्य दोषोंका संग्रह लिखतेहैं–दूषित तिथि, दूषित नक्षत्र, दूषित अयन, दोषयुक्त मास, दोषयुक्त वार, दिशाशूल आदि, सम्मुख शुक्र सम्मुख बुध, शुक्रका वक्रत्व, अस्तत्व आदि ॥३१२॥ लालाटीयोग, परिघदंड योग, रजस्वलाका दोष, सूतक, उत्सव, मृतपक्षके नक्षत्र, द्वादशी, षष्ठी, रिक्ता तिथि; पापवार ॥ ३१३ ॥ पीछे वायें चंद्रमा, दक्षिणदिशाकी यात्रामें अभिजित् मुहूर्त्त, धनिष्ठादि

नक्षत्रपंचक, जन्मराशि और जन्मलग्नसे आठवीं लग्न और शत्रुकी राशिसे छठी लग्न तथा शत्रुकी राशि और जन्मलग्नके स्वामी दोनों यात्राकी लग्नमें होय; कुंभ, मीन लग्न तथा कुंभ, मीन राशिके नवांशा पृष्ठोदय अर्थात् मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर लग्नें, पीठपीछेकी दिशामें स्थित नक्षत्र, दशवें स्थानमें शनैश्चर, सातवें स्थानमें शुक्र, केंद्रमें वक्रीग्रह, वक्रीग्रहका वार ये दोष और जो विवाहमें कहेहैं वे सब दोष यात्रामें नेष्ट होतेहैं ॥ ३१४ ॥ ३१५ ॥ ३१६ ॥

अथात्र युद्धयात्राप्रसंगाद्द्यूतम् ।

अधोवक्त्रे च नक्षत्रे वारे चोपचयावहे ॥ चंद्रतारावलोपेते कुमारे शुभवासरे ॥ ३१७ ॥ कालजे दिग्भवे वापि स्वस्य पूर्णवले स्वरे ॥ योगिनीकालदिक्शूलचंद्रतारानुकूल्यके ॥ ३१८ ॥ दशायामष्टवर्गे वा गोचरे लाभगे खगे ॥ युद्धोक्तजयदे योगे शोभने देहजे स्वरे ॥ ३१९ ॥ द्यूतं कार्यं विनोदाय धनलाभाय भूमिपैः ॥ पूर्वादितश्चतुर्दिक्षु नंदाद्यास्तिथयः क्रमात् ॥ ३२० ॥ मध्ये पूर्णा इमे पंच ह्यकाराद्याः स्वरास्तथा ॥ तिथिदिक्चरतश्चैवं घटीपञ्चप्रमाणतः ॥ ३२१ ॥ तात्कालिकः क्रमाज्ज्ञेयो दिक्स्वरस्तत्त्ववेदिभिः ॥ वालप्रभृतयोवस्थास्तेषां ज्ञेयाः क्रमाद्बुधैः ॥ ३२२ ॥ पूर्णो जयः स्वरे यूनि वाले वाताज्जयो भवेत् ॥ ईषद्वातात्कुमारे च वृद्धे भंगो मृतो मृतिः ॥ ३२३ ॥ स्वयं स्वरवलोपेतदिशि स्थित्वाऽथ शात्रवम् ॥ कृत्वाऽन्यत्र दिशि द्यूतं युद्धं कुर्वञ्जयेन्नृपः ॥ ३२४ ॥

अब यहां युद्धयात्राकेप्रसंगसे द्यूत लिखतेहैं–अधोमुख नक्षत्र होय, उपचय स्थान अर्थात् जन्मलग्न और जन्मराशिसे तीसरा, स्थिर ग्रहके वारमें छठा, दशवां, ग्यारहवां स्थान चंद्रमा और

ताराके वलसे युक्त कुमारावस्थाका स्वर होय, शुभवार होय, काल और दिशाका स्वर, अर्थात् जिस समय जिस दिशामें मुख करके जुआ खेले तव उस काल और दिशाका जो स्वर पहिले कह चुकेहैं सो वलवान् होय और अपना स्वरभी वलीहोय, योगिनी, काल, दिशाशूल, चंद्रमा, तारा ये सव अनुकूल होंय ॥ ३१७ ॥ ॥ ३१८ ॥ दशामें वा अष्टकवर्गमें अथवा गोचरमें ग्यारहवें स्थानमें ग्रह होय, युद्धोक्त जयदायक योगहोय, देहजस्वर शुभ होय ॥३१९॥ तो राजा-लोगोंको आनंद और धनलाभ होनेके लिये जुआ खेलना चाहिये. पूर्वादिक चारों दिशाओंमें क्रमसे नंदादिक तिथि रहतीहैं और मध्यमें पूर्णातिथि रहतीहै इसी प्रकार पूर्वादिक दिशाओंमें क्रमसे आकारादि चार स्वर निवास करतेहैं और मध्यमें ओंकारस्वर रहताहै इसी प्रकार तिथियोंका दिक्स्वर छह छह घडीके प्रमाणसे तात्का-लिक दिक्स्वर होताहै तत्त्ववेदियोंको ऐसा जानना चाहिये और उन स्वरोंकी वालादि पांच अवस्थाएँ क्रमकरके होतीहैं ॥ ३२० ॥ ॥ ३२१ ॥ ३२२ ॥ युवा स्वर होय तो पूर्ण विजय होतीहै, वाल स्वर होय तो चोटलगकर विजय होतीहै, कुमार स्वर होय तो कुछ चोट लगनेसे विजय होतीहै, वृद्ध स्वर होय तो भंग होताहै और मृत्यु स्वर होय तो मृत्यु होतीहै ॥ ३२३ ॥ राजा जाय तो स्वर-वलयुक्त दिशामें स्थित होकर शत्रुको स्वरवलहीन दिशामें स्थित करके जुवा खैले वा युद्ध करे तो विजयको पाताहै ॥ ३२४ ॥

अथ यात्रानिवृत्तौ गृहप्रवेशः ।

प्रवेशो भूपतेर्यात्रानिवृत्तौ निजमंदिरे ॥ श्रेष्ठो वारे गुरौ शुक्रे बुधे चंद्रे शनैश्चरे ॥३२५॥ चित्रोत्तरानुराधाख्ये रोहिणी-रेवतीमृगे ॥ त्यक्त्वा रिक्ताममां सूर्यं भौमं लग्नं चरं त्वम् ॥३२६॥पुष्ये हस्ते घनिष्ठायां शतेप्युक्तः शुभः परैः॥३२७॥

अब यात्रानिवृत्तिमें गृहप्रवेश लिखतेहैं—यात्रासे लौटनेपर राजाका अपने घरमें प्रवेश होना बृहस्पति, शुक्र, बुध, चंद्र, शनैश्चर वारमें श्रेष्ठ होताहै ॥ ३२५ ॥ चित्रा, तीनों उत्तरा, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें गृहप्रवेश श्रेष्ठ होताहै परन्तु रिक्ता, अमावस्या तिथि रवि और मंगल वार, चर लग्न और चर लग्नका नवांशा इनको त्यागदेवे ॥ ॥ ३२६ ॥ किन्ही आचार्योंने ऐसा कहाहैकि, पुष्य, हस्त, धनिष्ठा, शतभिषा इन नक्षत्रोंमें गृहप्रवेश श्रेष्ठ होताहै ॥ ३२७ ॥

अथ गृहप्रवेशेऽन्यनक्षत्राणां फलम् ।

श्रवस्त्रये पुनर्वस्वोः स्वातिपुष्याश्विभेषु च ॥ प्रवेशे च पुनर्यात्रा शीघ्रं भवति भूपतेः ॥ ३२८ ॥ स्वस्य नाशः प्रवेशे स्यात्पूर्वासु भरणीमघे ॥ आर्द्राऽश्लेषाभिधे मूले ज्येष्ठायां पुत्रनाशनम् ॥ ३२९ ॥ कृत्तिकायां गृहे दाहो विशाखायां मृतिःस्त्रियाः ॥ ३३० ॥

अब गृहप्रवेशमें अन्यनक्षत्रोंका फल लिखतेहैं—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसू, स्वाति, पुष्य, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें राजाका प्रवेश होय तो फिर शीघ्रही यात्रा होतीहै ॥ ३२८ ॥ तीनों पूर्वा, भरणी, मघा इन नक्षत्रोंमें प्रवेश होय तो अपनाही नाश होताहै. आर्द्रा, आश्लेषा, मूल, ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें प्रवेश होय तो पुत्रका नाश होताहै ॥ ३२९ ॥ कृत्तिकामें होय तो गृहमें अग्नि लगै और विशाखामें गृहप्रवेश होय तो स्त्रीकी मृत्यु होय ॥ ३३० ॥

अथ लग्नबलम् ।

स्थिरेंगेंशे शुभैरर्थकेंद्रकोणत्रिलाभगैः १।४।७।१०।५।९।३।११ ॥ पापैर्लाभत्रिषट् ११।३।६ संस्थैः

शुद्धे तुर्ये ४ तथाष्टमे ८ ॥ ॥ ३३१ ॥ प्रवेशो भूभुजामिष्टो
विजनुर्भाष्टमे स्मृतः ॥ ३३२ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त-
गणपतौ प्रवेशांतं यात्राप्रकरणं विंशम् ॥ २० ॥

अब लग्नबल लिखतेहैं–स्थिर लग्न और स्थिरलग्नका नवांश होय, दूसरे, केंद्र, त्रिकोणमें शुभग्रह होंय; ग्यारहवें, तीसरे, छठे स्थानमें पापग्रह होंय; चौथा और आठवाँ स्थान शुद्ध होय जन्म-लग्नसे आठवीं लग्न नहीं होय तो राजाओंका गृहप्रवेश शुभ होताहै ॥ ३३१ ॥ ३३२ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृतेमुहूर्त्तगणपतौ
पंडितवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासम-
लंकृतं प्रवेशान्तं यात्राप्रकरणं विंशम् ॥ २० ॥

अथ वास्तुप्रकरणम् तत्रादौ वासार्थे शुभाशुभोग्रामः ।

स्वनामराशितो ग्रामराशिर्व्यंकेषुदिक्शिवैः २ । ९ । ५ ।
१० । ११ ॥ संमितश्चेत्तदा स्वस्य तद्ग्रामे वास उत्तमः ॥१॥
रोगोऽष्टव्ययोस्तुर्ये ८।१२।४ वैरमाद्ये च सप्तमे १ । ७ ॥
हानिः षष्ठे तृतीये ६।३ च ग्रामराशौ स्वनामभात् ॥ २ ॥

अब वास्तुप्रकरण लिखतेहैं–तहाँ पहिले वासार्थ शुभाशुभ ग्राम लिखतेहैं–अपने नामकी राशिसे ग्रामकी राशि दूसरी, नौवीं, पांचवीं, दशवीं, ग्यारहवीं होय तो उस ग्राममें अपना निवास उत्तम होताहै ॥१॥ अपने नामकी राशिसे ग्रामकी राशि आठवीं, चौथी, बारहवीं होय तो रोग होताहै और पहिली, सातवीं होय तो वैर होताहै. छठी, तीसरी होय तो हानि होतीहै ॥ २ ॥

अथ काकिणीविचारः ।

स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गान्वितं गजैः ॥ भजेच्छे-
षास्तु काकिण्यः कार्याश्चैवं परस्परम् ॥ ३ ॥ अधिका
यस्य काकिण्यो भवेदन्यस्य सोऽर्थदः ॥ इत्थं काकिणि-
काधिक्ये निवसेन्नगरे नरः ॥ ४ ॥

अव काकिणी विचार लिखतेहैं–अपने वर्गको दूना करके उसमें परवर्गको जोडदेय उसमें आठका भाग देनेसे जो वचै सो परस्पर काकिणी होतीहै, जिसकी काकिणी अधिक होय सो दूस॰ रेके लिये धनदायक होताहै इस प्रकार जिस नगरकी काकिणी अधिक होय मनुष्यको चाहिये कि, उसी नगरमें निवास करे॥३॥४॥

अथ ग्रामे निवासदिग्विचारः ।

मध्ये ग्रामस्य गोद्वंद्वनक्रसिंहाख्यराशयः ॥ मीनालिक-
न्यकाः १२ । ८ । ६ पूर्वे दक्षिणे कर्कराशिकः ॥ ५ ॥
धन्विनः पश्चिमे मेपतुलाकुंभा १ । ७ । ११ स्तथोत्तरे ॥
नो वसेयुर्नराः सौख्यधनलाभात्मजार्थिनः ॥ ६ ॥ वैनते-
येमुखा वर्गा वलिष्ठाः पूर्वतः क्रमात् ॥ स्वदिशास्थं गृहं
श्रेष्ठं पंचम्यां दिशि मृत्युदम् ॥ ७ ॥ ग्रामे चतुर्षु कोणेषु
वसेयुर्हीनजातयः ॥ विप्राद्यास्तु दिशास्वेव मध्ये वापि
सुखेप्सवः ॥ ८ ॥

अव ग्राममें निवासदिग्विचार लिखतेहैं–वृप, मिथुन, मकर, सिंह राशिवाले मनुष्य ग्रामके मध्यमें नहीं वसें. मीन, वृश्चिक, कन्या राशिवाले नर ग्रामके पूर्वदिशामें न वसें. कर्क राशिवाला दक्षिणमें न वसे ॥ ५ ॥ धनुराशिवाला पश्चिममें और मेप, तुला, कुम्भ राशिवाला उत्तरमें न वसे. सौख्य, धनलाभ, पुत्रके चाहनेवाले नर उक्त दिशाओंमें निवास नहीं करे ॥ ६ ॥ गरुडादि

वर्ग पूर्वादिक आठों दिशाओंमें क्रमसे रहतेहैं. अपने वर्गकी दिशामें घर बनाना श्रेष्ठ होता है और अपने वर्गकी दिशासे पांचवीं दिशामें घर बनावे तो वह घर मृत्युदायक होताहै ॥ ७ ॥ हीन जातिके मनुष्य तो ग्रामके चारों कोणोंमें वसें. परंतु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र जो कि, सुख चाननेवाले हैं वे अपनी दिशाओंमें अथवा ग्रामके मध्यमें निवास करें ॥ ८ ॥

अथ भूमिविचारः।

श्वेता भूमिस्तु विप्राणां रक्ता शस्ता धनुर्भृताम् ॥ विशां पीताथ शूद्राणां श्यामा मिश्रेतरस्य च ॥ ९ ॥ मधुरः कटुकस्तिक्तः कषायश्च रसाः क्रमात् ॥ आज्यासृग्धान्य-मद्यानां गंधा वर्णभवा इमे ॥ १० ॥ प्रागादिप्रवणा भूमिः क्षत्रादीनां शुभा क्रमात् ॥ सर्वदिक्प्रवणा भूमिर्विप्राणां तु गृहादिषु ॥ ११ ॥

अब भूमिविचार लिखतेहैं– श्वेतभूमि ब्राह्मणोंको, लालभूमि क्षत्रियोंको और पीली भूमि वैश्योंको, (श्याम) काली भूमि शूद्रोंको और सब रंगोंवाली भूमि इतर जनोंको श्रेष्ठ होतीहै ॥ ९ ॥ भूमिकी मिट्टी खानेमें मीठी होय तो ब्राह्मणोंको, कड़वी होय तो क्षत्रियोंको तीखी होय तो वैश्योंको और कसैली होय तो शूद्रोंको श्रेष्ठ होतीहै, जिस भूमिमें घृतकीसी गंध आवे वह भूमि ब्राह्मणोंको और रुधि-रकी गन्धवाली क्षत्रियोंको और अन्नकीसी गन्धवाली वैश्योंको और मद्यकीसी गन्धवाली भूमि शूद्रोंको श्रेष्ठ होतीहै. यह वर्णोंके गन्ध कहेहैं ॥ १० ॥ पूर्वादि दिशाओंमें नीची भूमि क्रमसे क्षत्रि-यादि तीन वर्णोंके लिये शुभ होतीहै और सब दिशाओंमें ढालू-भूमि ब्राह्मणोंकेलिये घर बनानेमें शुभ होतीहै ॥ ११ ॥

अथ भूमौ शल्यज्ञानम् ।

गृहप्रश्नाक्षरं पूर्वं यदि वर्गादिमं तदा ॥
शल्यं तद्दिशि जानीयाद्धपयैर्मध्यगं वदेत् ॥ १२ ॥

अब भूमिमें शल्यज्ञान लिखतेहैं—गृहके निमित्त प्रश्न करनेवाले मनुष्यके मुखसे पहिला अक्षर जिस वर्गका निकले उसी वर्गकी दिशामें (शल्य) हाड होताहै और यदि पूछनेवालेके मुखसे हपय इन अक्षरोंमेंसे कोई प्रथम निकले तो घरके मध्यमें (शल्य) होताहै ॥ १२ ॥

अथ गेहभुवः शुभाशुभपरीक्षा ।

गेहभूमौ खनेद्वर्त्तं हस्तमात्रं निशामुखे ॥
जलपूर्णं यदि प्रातः सजलं चेच्छुभं तदा ॥ १३ ॥

अब गृहभूमिकी शुभाऽशुभ परीक्षा लिखतेहैं—घर बनानेकी भूमिमें एकहाथ गहरा गड्ढा खोदे और फिर उसमें सन्ध्यासमय जल भरदेय यदि प्रातःकालतक जल भरा रहे तो वह भूमि मकान बनानेके लिये शुभ होतीहै ॥ १३ ॥

अथ गेहार्थभुवः शोधनं स्पष्टीकरणम् ।

ज्ञात्वा गृहोचितां भूमिमाजलं निखनेत्त्वधः ॥
आमृद्भेदं नृमात्रं वा पूरयेत्तच्च ह्यश्मभिः ॥ १४ ॥

अब गृहार्थ भूमिके शोधन स्पष्टीकरण लिखतेहैं—गृह बनानेके योग्य भूमि पहिचानकर उसको जलपर्यंत नीचेतक खोदे अथवा दूसरे प्रकारकी मट्टी जहां निकले वहांतक खोदे अथवा मनुष्यके बराबर खोदे और फिर उसको पत्थरोंसे भरदे तो शुद्ध होजातीहै ॥१४॥

अथ भूमिप्रथमखनने शुभाशुभफलम् ।

क्षेत्रे तु खन्यमाने प्राग्दृश्यंतेश्मान इष्टिकाः ॥ तदारोग्यं धनाप्तिः स्यात्कर्त्तुः सद्भवनादिषु ॥ १५ ॥ कपालांगारकेशास्थिदर्शने निधनं भयम् ॥ १६ ॥

अब भूमि प्रथमखननेमें शुभाऽशुभफल लिखतेहैं—मकान बनानेकी भूमि खोदी जानेपर यदि प्रथम पत्थर अथवा ईंटें निकलें तो वह मकान शुभ होताहै और बनानेवालेको आरोग्यता तथा धनकी प्राप्ति होतीहै ॥ १५ ॥ और यदि खोदते समय प्रथम कपाल, कोइला, भस्म, बाल, हाड दीखें तो स्थान बनानेवालेकी मृत्यु अथवा भय होतीहै ॥ १६ ॥

अथ समभूमौ दिक्साधनम् ।

साधिन्या वा जलेनापि कृत्वा भूमिं समां ततः ॥ तत्र दिक्साधनं कृत्वा गेहारंभं समाचरेत् ॥ १७ ॥ दिक्शुद्धिरहितं गेहं प्रासादो वा जलाशयः ॥ कुर्याद्धानिं मृतिं तस्मादादौ दिक्साधनं चरेत् ॥ १८ ॥ द्विघ्ना २ऽऽयाममितं सूत्रं द्विपाशं प्रांत्ययोर्दृढम् ॥ कृत्वायामतृतीयेंऽशे चिह्नं तत्कर्पणाय च ॥ १९ ॥ विस्तारार्द्धे तु कोणार्थं क्षेत्रमध्यगसूत्रतः ॥ प्रांत्ये शंकुद्वये पाशौ कृत्वाऽथो कर्पणाभिधम् ॥ ॥ २० ॥ चिह्नमाकृष्य कोणार्थे चिह्ने शंकुं निधापयेत् ॥ एवं कृते चतुःकोणाः स्वेष्टक्षेत्रे भवंति च ॥ २१ ॥

अब समभूमिमें दिक्साधन लिखतेहैं—साधिनी यन्त्रसे अथवा जलसे भूमिको (समान) इकसार करके दिक्साधन करे, तदनन्तर गृह बनानेका आरम्भ करे ॥ १७ ॥ दिक्शुद्धिसे रहित घर वा देवमंदिर अथवा जलाशय बनाया जाय तो वह हानि वा मृत्युको देताहै इस कारण प्रथम दिक्साधन करे ॥ १८ ॥ मकान बनानेके क्षेत्रकी जितनी लम्बाई होय उससे दूना सूत्र ले यहां पर हाथसे नापनेका प्रमाण जानना चाहिये उस सूत्रके दोनों सिरोंपर दो फाँसे दृढ बनावे और लम्बाईके तीसरे हिस्सेपर खेंचनेके लिये चिह्न करदेय ॥ १९ ॥ और चौडाईके आधे हिस्सेपर कोण बनानेकेलिये

अथ भूमौ शल्यज्ञानम् ।

गृहप्रश्नाक्षरं पूर्वं यदि वर्गादिमं तदा ॥
शल्यं तद्दिशि जानीयाद्धपयैर्मध्यगं वदेत् ॥ १२ ॥

अब भूमिमें शल्यज्ञान लिखतेहैं—गृहके निमित्त प्रश्न करनेवाले मनुष्यके मुखसे पहिला अक्षर जिस वर्गका निकलै उसी वर्गकी दिशामें (शल्य) हाड होताहै और यदि पूछनेवालेके मुखसे हपय इन अक्षरोंमेंसे कोई प्रथम निकलै तो घरके मध्यमें (शल्य) होताहै ॥ १२ ॥

अथ गेहभुवः शुभाशुभपरीक्षा ।

गेहभूमौ खनेद्वर्त्तं हस्तमात्रं निशामुखे ॥
जलपूर्णं यदि प्रातः सजलं चेच्छुभं तदा ॥ १३ ॥

अब गृहभूमिकी शुभाऽशुभ परीक्षा लिखतेहैं—घर बनानेकी भूमिमें एकहाथ गहरा गड्ढा खोदै और फिर उसमें सन्ध्यासमय जल भर देय यदि प्रातःकालतक जल भरा रहे तो वह भूमि मकान बनानेके लिये शुभ होतीहै ॥ १३ ॥

अथ गेहार्थभुवः शोधनं स्पष्टीकरणम् ।

ज्ञात्वा गृहोचितां भूमिमाजलं निखनेत्त्वधः ॥
आमृद्भेदं नृमात्रं वा पूरयेत्तच्च ह्यश्मभिः ॥ १४ ॥

अब गृहार्थ भूमिके शोधन स्पष्टीकरण लिखतेहैं—गृह बनाने योग्य भूमि पहिचानकर उसको जलपर्यंत नीचेतक खोदै अथवा दूसरे प्रकारकी मट्टी जहां निकलै वहांतक खोदे अथवा मनुष्यके बराबर खोदै और फिर उसको पत्थरोंसे भरदे तो शुद्ध होजातीहै॥१४॥

अथ भूमिप्रथमखनने शुभाशुभफलम् ।

क्षेत्रे तु खन्यमाने प्राग्दृश्यंतेश्मान इष्टिकाः ॥ तदारोग्यं धनाप्तिः स्यात्कर्त्तुः सद्भवनादिषु ॥ १५ ॥ कपालांगारकेशास्थिदर्शने निधनं भयम् ॥ १६ ॥

अब भूमि प्रथमखननेमें शुभाऽशुभफल लिखतेहैं—मकान बनानेकी भूमि खोदी जानेपर यदि प्रथम पत्थर अथवा ईंटें निकलें तो वह मकान शुभ होताहै और बनानेवालेको आरोग्यता तथा धनकी प्राप्ति होतीहै ॥ १५ ॥ और यदि खोदते समय प्रथम कपाल, कोइला, भस्म, बाल, हाड दीखें तो स्थान बनानेवालेकी मृत्यु अथवा भय होतीहै ॥ १६ ॥

अथ समभूमौ दिक्साधनम्।

साधिन्या वा जलेनापि कृत्वा भूमिं समां ततः ॥ तत्र दिक्साधनं कृत्वा गेहारंभं समाचरेत् ॥ १७ ॥ दिक्छु-द्धिरहितं गेहं प्रासादो वा जलाशयः ॥ कुर्याद्धानिं मृतिं तस्मादादौ दिक्साधनं चरेत् ॥ १८ ॥ द्विघ्ना२ऽऽयाममितं सूत्रं द्विपाशं प्रांत्ययोर्दृढम् ॥ कृत्वायामतृतीयेंऽघ्रौ चिह्नं तत्कर्षणाय च ॥ १९ ॥ विस्तारार्द्धे तु कोणार्थं क्षेत्रमध्यग-सूत्रतः ॥ प्रांत्ये शंकुद्वये पाशौ कृत्वाऽथो कर्षणाभिधम् ॥ ॥ २० ॥ चिह्नमाकृष्य कोणार्थे चिह्ने शंकुं निधापयेत् ॥ एवं कृते चतुःकोणाः स्वेष्टक्षेत्रे भवंति च ॥ २१ ॥

अब समभूमिमें दिक्साधन लिखतेहैं—साधिनी यन्त्रसे अथवा जलसे भूमिको (समान) इकसार करके दिक्साधन करै, तदनन्तर गृह बनानेका आरम्भ करै ॥ १७ ॥ दिक्शुद्धिसे रहित घर वा देवमंदिर अथवा जलाशय बनाया जाय तो वह हानि वा मृत्युको देताहै इस कारण प्रथम दिक्साधन करै ॥ १८ ॥ मकान बनानेके क्षेत्रकी जितनी लम्बाई होय उससे दूना सूत्र ले यहां पर हाथसे नापनेका प्रमाण जानना चाहिये उस सूत्रके दोनों सिरोंपर दो फाँसे दृढ बनावै और लम्बाईके तीसरे हिस्सेपर खेंचनेके लिये चिह्न करदेय ॥ १९ ॥ और चौडाईके आधे हिस्सेपर कोण बनानेकेलिये

दूसरा चिह्न करदेय तदनन्तर मकान वनानेकी भूमिके मध्यमें सूत्र डाले सूत्रके दोनों सिरोंपर कील गाडे दोनों सिरोंके फाँसे उन कीलोंमें ही लगायदेवे फिर खैंचनेकेलिये जो चिह्न सूत्रमें वनाया गयाहै उसको पकडकर खैंचे तव जहांपर कोणनाम चिह्न आकर पडे वहाँ कील गाडदेवे वहीं एक कोण होगा. इसी प्रकार उस सूत्रको दूसरी ओर फेरकर खैंचे तो दूसरा कोण होगा इसी प्रकार दो कोण औरभी वनालेवे तो अपने इष्टक्षेत्रमें चारों कोण वनजाते हैं ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ गृहस्यायाः ।

आयाः क्रमाद्ध्वजोः धूम्रः सिंहः श्वा वृषभः खरः ॥ गजो ध्वांक्ष इमे ज्ञेयाः प्राज्ञैर्गेहादिकर्मसु ॥ २२ ॥ विस्तारगुणितक्षेत्रस्यायामेऽथाष्टभि ८ र्हृते ॥ शेषे ध्वजादिकश्चायः प्रशस्तो विषमोऽखिलः ॥ २३ ॥ प्राचीतो वलिनश्चाया ध्वजाद्याः क्रमतस्त्विमे ॥ सर्वदिक्षु ध्वजे वक्रं सिंहे प्रागदक्षिणोत्तरम ॥ २४ ॥ प्राच्यां वृषे गजे याम्यपूर्वयोः शुभमालयम् ॥ ध्वजे प्रत्यङ्मुखे वापि सिंहे कुर्यादुदङ्मुखम्॥ ॥ २५ ॥ दक्षिणाभिमुखं नागे कुर्यात्प्राचीमुखं वृषे ॥ द्वात्रिंशद्धस्तकं यावदेकादशयवात्परम् ॥ २६ ॥ चिंत्यमायादिकं तावन्नो चिंत्यमधिके ततः ॥ अलिंदादिषु तार्णे वा मंदिरे वा चतुर्मुखे ॥ २७ ॥ आयादिकं तु नो चिंत्यं तार्णे मासादयोपि न ॥ २८ ॥

अव गृहका आय लिखतेहैं—ध्वज १, धूम्र २, सिंह ३, श्वान ४, वृषभ ५, खर ६, गज ७, ध्वांक्ष ८ क्रमसे ये आठ आयहैं,गृहादिक कर्मोंमें पण्डितोंको विचारने चाहिये ॥ २२ ॥ क्षेत्रकी चौडाईसे लम्बाईको गुणाकरै फिर उसमें आठका भाग देय जो शेष वचै सो

ध्वजादिक आय होतेहैं. विषम अङ्कके सब आय श्रेष्ठ होतेहैं ॥ २३ ॥ पूर्वादिक दिशाओंमें यह ध्वजादिक आय क्रमसे बलवान् होतेहैं अर्थात् जोनसा आय क्षेत्रका होय उसी आयकी दिशामें घरका द्वार रखना चाहिये और ध्वजनामक आयका द्वार सब दिशाओंमें होसक्ताहे और सिंहनामक आय होय तो पूर्व, दक्षिण, उत्तर दिशामें घरका द्वार होना चाहिये ॥ २४ ॥ वृषनामक आय होय तो घरका दरवाजा पूर्वदिशामें शुभ होताहे और गजनामक आय होय तो दक्षिण तथा पूर्वदिशामें मकानका दरवाजा शुभ होताहे और ध्वजनामक आय होय तो गृहका द्वार पश्चिममुखभी श्रेष्ठ होताहे और सिंहनामक आय होय तो घरका दरवाजा उत्तर मुख करे ॥ २५ ॥ और गजनामक आय होय तो गृहद्वार दक्षिणमुख करे तथा वृषभनामक आय होय तो गृहद्वार पूर्वमुख बनावे. ग्यारह जोसे लेकर बत्तीस हाथतकके क्षेत्रमें आयादिका विचार करना चाहिये और यदि इससे अधिक होय तो आयादिका विचार नहीं करे (अलिंद) गृहके बाहिर चबूतरेमें, तृणके घरमें, चारद्वारके मकानमें आयादिका विचार नहीं करे, तथा तृणके मकानमें मासादिकोंकाभी विचार नहीं करे ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

अथ क्षेत्रफलादायाद्यानयनम्।

क्रमान्नंदांकपण्णागत्रिनागाष्टाब्धिवारणैः ९। ९। ६। ८। ३। ८। ८। ४। ८॥ हते क्षेत्रफलेष्टांगनंदार्काष्टभसंख्यकैः ८। ६। ९। १२। ८। २७ ॥ २९ ॥ तिथ्यृक्षखाऽश्विभूभि १५। २७। १२० श्च तष्टे शेषमिते तथा ॥ क्रमादायोथ वारांशो द्रविणं व्ययधिष्ण्यके ॥ ३० ॥ तिथियोगस्तथायुष्यमेते ज्ञेया गृहादिषु ॥ ३१ ॥

अब क्षेत्रफलादिकोंका आनयन लिखतेहैं– जानना चाहिये कि, घरकी लम्बाई और चौडाईको परस्पर गुणाकरनेसे जो अंक होय

वही क्षेत्रफल होताहै, क्षेत्रफलको क्रमसे ९ । ९ । ६ । ८ । ३ । ८ । ८ । ४ । ८ इन अंकोंसे अलग अलग गुणाकरे और प्रत्येक गुणनफलमें ८ । ६ । ९ । ८ । १२ । २७ । १५ । २७ । १२० इन अंकोंसे क्रमकरके भाग देनेपर जो शेष बचे सो क्रमसे गृहादिकोंमें आय,वार, अंश, द्रव्य, व्यय, नक्षत्र, तिथि, योग, आयु जानै ॥२९॥३०॥३१॥

अथ नक्षत्राद्राशिज्ञानम् ।

अश्विन्यादित्रयं मेषे १ मघातस्त्रितयं हरौ ५ ॥
मूलात्रयं धनु ९ ष्येवं द्वेद्वे भे शेषराशिषु ॥ ३२ ॥

अब नक्षत्रसे राशिज्ञान लिखतेहैं—गृहके अश्विन्यादि तीन नक्षत्र होंय तो मेष राशि और मघासे तीन नक्षत्र होंय तो सिंहराशि और मूलसे तीन नक्षत्र होंय तो धनुराशि मकानकी जाननी और शेष राशियोंमें दोदो नक्षत्र मकानके जानै. उन्हींसे होडाचक्रके अनुसार राशिकी कल्पना करै ॥ ३२ ॥

अथ घटितम् ।

देशे ग्रामे पुरे गेहे प्रभौ मित्रेऽन्ययोषिति ॥ एकनाडी प्रशस्तस्याद्विरुद्धा भिन्ननाडिका ॥ ३३ ॥ गेहेगेहेशयोर्मैत्र्योर्वर्णाद्यास्तु विवाहवत् ॥ गेहेशालयभैक्ये तु मृत्युदं तद्गृहं स्मृतम् ॥ ३४ ॥

अब घटित लिखतेहैं—देश, ग्राम, पुर, गृह, (प्रभु) स्वामि, मित्र, अन्यस्त्री इनमें एकनाडी होय तो श्रेष्ठ होतीहै और भिन्ननाडी होय तो नेष्ट होतीहै ॥ ३३ ॥ घरमें घरकी राशिका स्वामी और घरके मालिककी राशिका स्वामी इन दोनोंकी मित्रतामें विवाहके समान वर्णादिका विचार करना चाहिये, गृहेश और गृहका एकनक्षत्र होय तो वह गृह मृत्युदायक होताहै ॥ ३४ ॥

अथ व्ययानयनम् ।

गेहनक्षत्रसंख्यांके नाग ८ तष्टे व्ययो भवेत् ॥
वह्वायं शुभदं चाल्पव्ययं वेश्म न चाऽन्यथा ॥ ३५ ॥

अब व्ययानयन लिखतेहैं—गृहके नक्षत्रकी संख्यामें आठका भाग देनेपर जो शेष बचे सो व्यय होताहै (बह्वाय) बहुतसी आमदनी वाला और अल्पखर्चवाला मकान श्रेष्ठ होताहै अन्यथा श्रेष्ठ नहीं होताहै ॥ ३५ ॥

अथेंद्रराजयमांशानयनम् ।

ध्रुवादिनामवर्णैश्च युक्ते क्षेत्रफले तथा ॥ त्रिभि ३ स्तष्टेंशकाः शेषे शक्रांतकनृपाः क्रमात् ॥ इंद्रभूपौ शुभावंशौ यमो नेष्टो गृहादिषु ॥ ३६ ॥

अब इन्द्रराजयमांशानयन लिखतेहैं—क्षेत्रफलमें ध्रुवादिनामके अक्षर जोडकर तीनका भाग देनेसे जो शेष बचे सो क्रमसे इन्द्र, यम, राजाका अंश होताहै गृहादिकोंमें इन्द्र और राजाका अंश शुभ तथा यमका अंश अशुभ होताहै ॥ ३६ ॥

अथ स्वेष्टायनक्षत्राभ्यां पिंडानयनम् ।

एकोनितेष्टधिष्ण्येन निघ्ना नेत्रशरेंदवः १५२ ॥ रूपोनेष्टायनिघ्नेंदुनागै ८१ युक्तास्तथा पुनः ॥ ३७ ॥ नगचंद्र १७ मितैर्युक्ता विभक्तास्ते नृपाश्विभिः २१६ ॥ शेषं क्षेत्रफलं खेटनक्षत्रायससुद्भवम् ॥ ३८ ॥

अब स्वेष्टाय और नक्षत्र इन दोनोंसे पिण्डानयन लिखतेहैं—गृहेशके नामका जो इष्टनक्षत्र होय उसमेंसे एक घटाकर शेषको एकसौबावन १५२ से गुणा करे और फिर इसी प्रकार अपने इष्टायमेंसे एक घटायकर शेषको इक्यासी ८१ से गुणाकरे जो अंक होय उनमें पूर्वोक्त अंक जोडकर सत्रह और जोडदे फिर उसमें दोसौसोलहका भाग देनेसे जो शेष बचे सो ग्रहनक्षत्रायससुद्भव क्षेत्रफल होताहै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

अब उदाहरण लिखतेहैं—जैसे नीलकंठनामक पुरुषका जन्मनक्षत्र अनुराधा है और अनुराधा नक्षत्रके साथ रोहिणी नक्षत्रका मेलापक संभव होताहै इसकारण नीलकंठका इष्टनक्षत्र रो॰ ॰

मानाहै और विषमआय सिंह तीसराहै अब इष्टनक्षत्र रोहिणीकी चारसंख्यामेंसे एक घटाया तो ३ तीन रहे इन तीनसे १५२ को गुणाकिया तो ४५६ हुए और इष्टआय ३ है इसमेंसे एक घटाया तो २ दो शेष रहे इन दोसे ८१ को गुणा तो १६२ हुए इनमें (१६२ + ४५६) पूर्वोक्तगुणांक जोडे तो ६१८ हुए इनमें १७ सत्रह जोडे तो ६३५ हुए अब इनमें २१६ का भाग दिया तो शेष २०३ बचे बस यहही गृहका खेटनक्षत्रायसमुद्भव क्षेत्रफल हुआ-

अथ क्षेत्रफलाद्दैर्घ्यविस्तारज्ञानम् ।

भक्ते क्षेत्रफले स्वेष्टविस्तारेण च दीर्घता ॥
स्वेष्टदीर्घतया भक्ते विस्तारो वेश्मनः स्फुटः ॥ ३९ ॥

अब क्षेत्रफलसे दैर्घ्यविस्तारज्ञान लिखतेहैं-क्षेत्रफलमें इष्ट चौड़ाईसे भाग लेनेपर जो लब्ध मिलै सो लम्बाई एवं क्षेत्रफलमें इष्ट लम्बाईसे भाग लेनेपर जो लब्ध मिलै सो गृहकी स्पष्ट चौड़ाई होतीहै ॥ ३९ ॥

अथ गृहारंभसमयः ।

चैत्रे शुक्लादिके शोको वैशाखे धान्यवर्धनम् ॥ ज्येष्ठे कर्त्तुर्भवेन्मृत्युराषाढे पशुपीडनम् ॥ ४० ॥ श्रावणे धनवृद्धिः स्यान्नाशो भाद्रपदे भवेत् ॥ आश्विने तु भवेद्युद्धं कार्त्तिके भृत्यनाशनम् ॥ ४१ ॥ लक्ष्मीलाभो भवेन्नॄणां मार्गे पौषेऽथ फाल्गुने ॥ माघे त्वग्निभयं विद्याद्गृहारंभे न संशयः ॥ ॥४२॥ त्यक्त्वा चतुर्दशीं षष्ठीं चतुर्थीमष्टमीममाम् ॥ नवमीं च रविं भौमं गृहारंभो विधीयते ॥४३॥ पुष्ये मृगेनुराधायां धनिष्ठायुगुलोत्तरे ॥ हस्तत्रये च रोहिण्यां रेवत्यां गृहमारभेत् ॥ सूतिकामंदिरं कुर्यात्पुनर्भेऽभिजिति श्रुतौ ॥ ४४ ॥

अब गृहारंभसमय लिखतेहैं-शुक्लादिक चैत्रमासमें गृहारंभ करे तो शोक होताहै और वैशाखमें गृहारंभ करे तो धान्यकी वृद्धि

होतीहै, ज्येष्ठमें करे तो गृह बनानेवालेकी मृत्यु होतीहै, आषाढमें गृहारंभ करे तो पशुओंको पीडा होताहै ॥ ४० ॥ श्रावणमें धनकी वृद्धि होतीहै. भाद्रपदमें नाश होतीहै; आश्विनमें युद्ध होताहै, कार्त्तिकमें भृत्यका नाश होताहै. अगहन, पौष, फाल्गुनमें गृहारंभ करै तो लक्ष्मीका लाभ और माघमें गृहारंभ करै तो अग्निका भय होताहै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ चतुर्दशी, षष्ठी, चतुर्थी, अष्टमी, अमावास्या, नवमी इन तिथियोंको और रवि तथा मंगल वारको छोडकर गृहारंभ करै ॥ ४३ ॥ पुष्य, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, हस्त, चित्रा, स्वाति, रोहिणी, रेवती इन नक्षत्रोंमें गृहारंभ करे और पुनर्वसू, अभिजित्, श्रवण इन नक्षत्रोंमें सूतिकाका गृह बनावे ॥ ४४ ॥

अथ गृहारंभे वृषभचक्रम्।

गृहारंभेऽर्कभाद्रामैः ३ शीर्षस्थैर्दाह ईरितः ॥ अग्रपादस्थितैर्वेदैः ७ शून्यं स्याद्वृषचक्रके ॥ ४५ ॥ स्थिरता पृष्ठपादस्थैर्वेदैः ११ पृष्ठे श्रियस्त्रिभिः १४ ॥ लाभो वेदै १८ र्दक्षकुक्षौ रामैः २१ पुच्छे पतिक्षतिः ॥ ४६ ॥ कुक्षौ वामेऽब्धिभि २५ र्नैस्वं मुखे पीडा त्रिभि २८ श्च भैः ॥

अब गृहारंभमें वृषचक्र लिखतेहैं—गृहारंभमें सूर्यके नक्षत्रसे तीन नक्षत्र वृषके शिरमें स्थितहैं, जिनका फल दाह होताहै और चारनक्षत्र वृषके अग्र पादोंमें स्थितहैं जिनका फल शून्यहै ॥ ४५ ॥ उससे आगे चार नक्षत्र वृषके पिछले पादोंमें स्थितहैं, जिनका फल स्थिरताहै और फिर तीन नक्षत्र पीठपर स्थितहैं, जिनका फल लक्ष्मीप्राप्तिहै. इससे आगे चार नक्षत्र दाहिनी कोखपर स्थितहैं, जिनका फल लाभहै और फिर तीन नक्षत्र पुच्छमें स्थितहैं, जिनका फल स्वामीका नाशहै ॥ ४६ ॥ और चारनक्षत्र बाईंकोखमें स्थितहैं

जिनका फल निर्धनताहै. तदन्तर तीन नक्षत्र मुखमें स्थितहैं, जिनका फल पीडाहै ॥

अथैतदेवपुनः स्पष्टम् ।

अर्कभात्सप्तभे ७ रुद्रै ११ दिग्भिः २८स्यादसदिष्टदम् ॥ ४७ ॥

अव उसीको पुनः स्पष्ट लिखतेहैं—सूर्यके नक्षत्रसे सात ७ ग्यारह ११, दश १० नक्षत्रोंका फल क्रमसे शुभ, अशुभकरके जानै ॥ ४७ ॥

अथ सौरमासाद्गेहादौ वास्तोर्मुखं पुच्छं कटिश्च ।

देवालये त्रये मीना १२ द्गेहे सिंहा ५ द्रवौ स्थिते ॥ जलाशये मृगाद्वास्तोर्मुखमीशाद्विलोमतः ॥ ४८ ॥ विलोमभ्रमणात्पृष्ठं गतायां विदिशि स्मृतम् ॥ तुर्यं स्वमुखतः पुच्छं सम्मुखायां दिशि स्थितम् ॥ इत्युक्ते पृष्ठदिग्भागे वास्तोः खातं गृहादिषु ॥ ४९ ॥

अव सौरमाससे गृहादिमें वास्तुका मुख पुच्छ कटि लिखतेहैं—देवमंदिर वनानेमें वास्तुका मुख मीनसे तीन अर्थात् मीन, मेष, वृषके सूर्यमें ईशानमें रहताहै (यहांपर वास्तुका भ्रमण उलटा होताहै ऐसा जानै) मिथुन, कर्क, सिंहके सूर्यमें वास्तुका मुख वायव्यमें रहताहै इत्यादि. गृह वनानेमें सिंहसे तीन राशियोंके सूर्यमें वास्तुका मुख ईशानमें और फिर तीन राशियोंके सूर्यमें वास्तुका मुख वायव्यमें इत्यादि और जलाशय वनानेमें मकरादि तीन राशियोंके सूर्यमें वास्तुका मुख ईशानमें और फिर तीन राशिके सूर्यमें वायव्यदिशामें वास्तुका मुख रहताहै इत्यादि चक्रमें स्पष्ट प्रतीत होजायगा। वास्तुके मुखसे चौथी जो विदिशा है वही वास्तुकी पुच्छ कहीगईहै और मुखसे पीछेकी जो विदिशाहै सो वास्तुकी पीठ कहीहै, पीठभागमेंही गृहादिककी नीम खोदनी चाहिये ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

अथ गृहे खातदिक्स्पष्टीकरणम् ।

आग्नेय्यां खननं कुर्यात्सिंहाद्राशित्रये रवौ ॥ ईशान्यां च तथा चोक्तं वृश्चिकादित्रये रवौ ॥ ५० ॥ कुंभादित्रितये वायौ नैर्ऋत्यां वृषभत्रये ॥ ५१ ॥

अब गृहमें खातदिक् स्पष्टीकरण लिखतेहैं—सिंह, कन्या, तुला-राशिके सूर्यमें आग्नेयदिशामें नीम खोदे और वृश्चिक, धनु, मकरके सूर्य होंय तो ईशानदिशामें नीम खोदे ॥ ५० ॥ कुंभ, मीन, मेपके सूर्य होंय तो वायव्यमें नीम खोदे और वृष, मिथुन, कर्कके सूर्य होंय तो नैर्ऋत्यमें नीम खोदे ॥ ५१ ॥

अथ वास्तुचक्रम् ।

०	ऐशान्याम्	वायव्य म्	नैर्ऋत्याम्	आग्नेय्याम्
देवालयारंभः	मीनमेषवृष-स्थिते सूर्ये वास्तुमुख	मिथुनकर्क-सिंहस्थिते सूर्ये वास्तुमुखं	कन्यातुलावृश्चिकस्थिते सूर्ये वास्तुमुखम्	धनुर्मकरकुंभ-स्थित सूर्ये वास्तुमुखं
गृहारंभः	सिंहकन्यातुला-स्थिते सूर्ये वास्तुमुखं	वृश्चिकधनुर्मकर-स्थिते सूर्ये वास्तुमुखं	कुंभमीनमेष-स्थिते सूर्ये वास्तुमुखं	वृषमिथुनकर्क-स्थित सूर्ये वास्तुमुखं
जलाशयारंभः	मकरकुंभमीन-स्थिते सूर्ये वास्तुमुखं	मेषवृषमिथुन-स्थिते सूर्ये वास्तु-मुखम्	कर्कसिंहकन्या-स्थिते सूर्ये वास्तुमुखं	तुलावृश्चिकधनुः-स्थिते सूर्ये वास्तुमुखं

अथ चांद्रमासाद्द्वारनिश्चयार्थं वास्तुशिरः ।

सिते भाद्रपदाद्वास्तुक्रमान्मासत्रिपुत्रिपु ॥ प्रागाशादिशिरोगेहे द्वारं शीर्षदिशि स्मृतम् ॥ ५२ ॥ वास्तोः शीर्षदिशो ज्ञेयं पुच्छं संमुखदिग्गतम् ॥ ५३ ॥

अब चन्द्रमाससे द्वारनिश्चयार्थ वास्तुशिर लिखतेहैं—भाद्रपद-मासकी शुक्लप्रतिपदासे तीनतीन मास क्रमसे पूर्वादि चारों दिशाओंमें

वास्तुका शिर होताहै; जिस दिशामें वास्तुका शिर होय उसी दिशामें गृहका द्वार रक्खै ॥५२॥ वास्तुके शिरकी दिशाके सामनेकी दिशामें पुच्छ जाने ॥ ५३ ॥

अथ वास्तोर्वामकुक्षौ खाते शंकुरोपणम् ।

अष्टाविंशतिकांशास्तु पुच्छात्सप्तदश त्यजेत् ॥ अंशे त्वष्टादशे खातं वामभागे च मध्यतः ॥ गेहारंभमुहूर्तेऽत्र शंकुं दत्त्वाश्मपूरणम् ॥ ५४ ॥

अब वास्तुके वामकुक्षिके खातेमें शंकारोपण लिखतेहैं-वास्तुकी पूंछसे लेकर मुखतक अट्ठाईस भाग करै जिनमें पूछकी तर्फसे सत्रह १७ भाग छोडकर मध्यभागसे वामभागमें जो अठारहवां भागहै उसमें गृहारम्भके मुहूर्त्तमें नीम खोदकर कील गाडदेय और फिर उसको पत्थरोंसे भरदेवे ॥ ५४ ॥

अथ संक्रांतिपरत्वेन गृहद्वारनिश्चयः ।

कुंभेर्के फाल्गुने मासि श्रावणे कर्कसिंहयोः ॥ पौषे नक्रे गृहं कुर्यात्पूर्वपश्चिमदिङ्मुखम् ॥ ५५ ॥ मार्गे तुलालिगे भानौ वैशाखे वृषभाजयोः ॥ दक्षिणदिङ्मुखं श्रेष्ठं मंदिरं नेष्टमन्यथा ॥५६ ॥

अब संक्रातिपरत्वसे गृहद्वारनिश्चय लिखतेहैं-फाल्गुन मासमें कुंभके, श्रावणमें कर्क और सिंहके, पौषमें मकरके सूर्य होय तो पूर्वपश्चिमद्वारका गृह बनावै ॥ ५५ ॥ मार्गशीर्षमें तुला और वृश्चिकके, वैशाखमें वृष और मेषके सूर्य होंय तो दक्षिणदिशामें द्वारवाला गृह बनाना श्रेष्ट होताहै. अन्यथा नेष्ट होताहै ॥ ५६ ॥

अथात्र केश्चिद्गेहारंभे विशेष उक्तः ।

मेषे १ चैत्रे वृषे २ ज्येष्ठे आषाढे कर्कटे ४ रवौ ॥ सिंहे ५ भाद्रपदे तौलि ७ आश्विने कार्त्तिके लिगे ॥ ५७ ॥ पौषे

नक्रे १० तथा माघे मकरे १० कुंभगेपि च ॥ प्रकुर्यान्मंदिरं विद्वानन्यैः कैश्चिदितीरितम् ॥ ५८ ॥ कृष्णपक्षादयो मासा विज्ञेया ह्यत्र सूरिभिः ॥ ५९ ॥

अब यहाँ गृहारंभमें किसीका विशेष उक्त लिखतेहैं– चैत्रमें मेषके, ज्येष्ठमें वृषके, आषाढमें कर्कके, भाद्रपदमें सिंहके, आश्विनमें तुलाके, कार्तिकमें वृश्चिकके ॥ ५७ ॥ पौषमें मकरके, माघमें मकर तथा कुंभके सूर्य होंय तो मकान बनावै ऐसा किन्ही आचार्योंने कहाहै ॥ ५८ ॥ पंडितलोगोंकरके यहांपर कृष्णपक्षादि मास जानना चाहिये ॥ ५९ ॥

अथ गेहे सुखार्थं तिथिविचारः ।

पूर्णिमाद्या नव त्याज्यास्तिथयः प्राङ्मुखे गृहे ॥ कृष्णपक्षे नवम्याद्या उत्तराभिमुखे तु षट् ॥ ६० ॥ पश्चिमाभिमुखे हेया दर्शाद्यास्तिथयो नव ॥ शुक्ले षट्च नवम्याद्यास्त्याज्या दक्षिणदिङ्मुखे ॥ ६१ ॥

अब गृहमें सुखार्थ तिथि विचार लिखतेहैं–पूर्वमुखवाला गृह बनानेमें पूर्णिमादि नौतिथि त्याज्य हैं और उत्तरमुखवाला गृह बनानेमें कृष्णपक्षकी नवमीसे लेकर छह तिथि त्याज्यहैं ॥ ६० ॥ और पश्चिममुखवाला गृह बनानेमें अमावास्यादि नौतिथि त्याज्यहैं और दक्षिणमुखवाला गृह बनानेमें शुक्लपक्षकी नवमीसे लेकर छह तिथि त्याज्यहैं ॥ ६१ ॥

अथ ध्रुवादिषोडशगृहाणि ।

ध्रुवं १ धान्यं २ जयं ३ नंदा ४ खरं५ कांतं ६ मनोरमम् ७ ॥ सुमुखं ८ दुर्मुखं ९ चोग्रं १० रिपुदं ११ वित्तदं तथा १२ ॥ नाश १३ आक्रंद १४ विपुले १५ विजयं १६ चेति षोडश ॥ ६२ ॥

अब ध्रुवादिषोड़शगृह लिखते हैं—ध्रुव १, धान्य २, जय ३, नंदा४, खर ५, कांत ६, मनोरम ७, सुमुख ८, दुर्मुख ९, उग्र १०, रिपुद ११, वित्तद १२, नाश १३, आक्रंद १४, विपुल १५, विजय १६ यह सोलह गृहहैं ॥ ६२ ॥

अथ ध्रुवादिगेहज्ञानम् ।

दिक्षुपूर्वादितश्चंद्र १ नेत्रां २ भोधि ४ गजे ८ मिताः ॥
गेहाद्यत्र भवेच्छालास्तदंकाः कथिता इमे ॥ ६३ ॥ शाला-
शांकयुतिः सैका ज्ञेयं गेहं ध्रुवादिकम् ॥ ६४ ॥

अब ध्रुवादिगेहज्ञान लिखतेहैं—पूर्वादि चारों दिशाओंमें मकानसे जिसदिशामें शाला होय उसके ये १ । २ । ४ ।८ अंक कहेहैं अर्थात् पूर्वमें होय तो एक और दक्षिणमें शाला होय तो दो और पश्चिममें होय तो चार और उत्तरमें होय तो आठ शालाध्रुवा होताहै शालाकी दिशाओंके अंक जोड़कर उनमें एकअंक और जोड़देवे तब जो अंक होय सो ध्रुवादिसंज्ञक गृह होताहै ऐसा जानै ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

अथ ध्रुवादिगेहानामक्षरसंख्या ।

आपष्ठं दशमं विश्वं १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । १० ।
१३ मंदिरं व्यक्षराभिधम् ॥ शेषेषु त्र्यक्षराणि ८ । ९ । ११ ।
१२ । १४ । १५ । १६ स्युः सप्तमं ७ चतुरक्षरम् ॥ ६५ ॥

अब ध्रुवादिगृहोंकी नामाक्षरसंख्या लिखतेहैं—पहिला, दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवां, छठा, दशवां, तेहरवां इन घरोंके नाममें दोदो अक्षर होतेहैं और शेष आठवां, नौवाँ, बारहवां, चौदहवां, पंद्रहवां सोलहवाँ इन गृहोंके नाममें तीनतीन अक्षर होतेहैं और सातवें घरके नाममें चार अक्षर होतेहैं ॥ ६५ ॥

अथ ध्रुवादिगेहज्ञानार्थं प्रस्तारः।

चत्वारो गुरवः स्थाप्या लघुमाद्यगुरोरधः ॥ विन्यस्याग्रे यथा चोर्ध्वं तथा शेषं प्रपूरयेत् ॥ ६६ ॥ एवं भूयो लघोः पश्चात्पूरयेद्गुरुभिः पुनः ॥ एवमेवाऽसकृत्कार्यं यावत्स्युर्लघवोऽखिलाः ॥६७॥ प्रादक्षिण्येन गेहस्य मुखाच्चालिंदसंज्ञकम्॥ लघुस्थानस्थिते चैवं भेदाः प्राच्यास्तु षोडश॥६८॥

अब ध्रुवादिगेहज्ञानार्थ प्रस्तार लिखतेहैं–प्रथम चार गुरु लिखै फिर पहिले गुरुके नीचे एक लघु रक्खे आगेको जैसे कि, ऊपर लिखे होंय वैसेही रखकर शेषभागको भरदेवे ॥६६॥ इसी प्रकार फिरभी लघुके नीचे भागको गुरु अक्षरोंसे भरदेवे इसी प्रकार वारंवार तबतक करताजाय जबतक कि, सब वर्ण लघु न होंय ॥६७॥ गृहके द्वारसे प्रदक्षिणता करके लघुस्थान की स्थितिमें अलिंदसंज्ञक गृह होताहै इसीप्रकार पूर्वदिशाके गृहोंके सोलह भेदहैं अन्य दिशाओंमेंभी इसी रीतिसे जाने ॥ ६८ ॥

चार वर्णके प्रस्तारका उदाहरण-यह है

ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	ऽ	३
।	।	ऽ	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	ऽ	५
।	ऽ	।	ऽ	६
ऽ	।	।	ऽ	७
।	।	।	ऽ	८
ऽ	ऽ	ऽ	।	९
।	ऽ	ऽ	।	१०
ऽ	।	ऽ	।	११
।	।	ऽ	।	१२
ऽ	ऽ	।	।	१३
।	ऽ	।	।	१४
ऽ	।	।	।	१५
।	।	।	।	१६

अथ प्रकारांतरेण प्रस्तारः।

लिखेदेकांतरादाद्ये एकमेकं गुरुं लघुम् ॥ द्वयंद्वयं द्वितीये तु चतुरश्चतुरस्त्रिके ॥ अष्टावष्टौ चतुर्थेयं प्रस्तारः षोडशावधि ॥ ६९ ॥

अब प्रकारान्तरसे प्रस्तार लिखतेहैं–पहिले तो एकएकके अंतरसे एकगुरु और एक लघु लिखे और फिर दूसरीपंक्तिमें दो गुरु

और दो लघु लिखै और तीसरी पंक्तिमें चार गुरु तथा चारलघु लिखै और चौथी पंक्तिमें आठ गुरु तथा आठ लघु लिखै यह प्रस्तार सोलह भाग तकका है ॥ ६९ ॥

अथ गेहारंभे लग्नबलविचारः ।

द्विःस्वभावे स्थिरे लग्ने शुभैर्व्ययांत्यगैर्ग्रहैः ॥
पापैरायारिगैः कुर्यान्मंदिरारंभणं बुधः ॥ ७० ॥

अब गेहारंभमें लग्नविचार लिखतेहैं—द्विस्वभाव तथा स्थिर लग्न होय, बारहवें आठवें स्थानको छोडकर अन्य स्थानोंमें शुभग्रह होंय और पापग्रह ग्यारहवें तथा छठे स्थानमें होंय तो बुद्धिमान् गृह बनानेका आरम्भ करै ॥ ७० ॥

अथ गेहारंभे शुभयोगाः ।

लग्ने १ गुरौ रवौ षष्ठे ६ द्यूने ७ ज्ञे भार्गवे सुखे ४ ॥ मंदे त्रिगे ३ कृतं तिष्ठेन्मंदिरं शरदां शतम् १०० ॥ ७१ ॥ तनौ शुक्रे सहोत्थे ३र्के षष्ठे ६ भौमे सुते गुरौ ॥ समारब्धं गृहं तिष्ठेद्धायनानां शतं २०० द्वयम् ॥ ७२ ॥ सूर्ये लाभ ११ गते शुक्रे तनौ नभसि १० चंद्रजे ॥ गेहं वर्षशता १०० युष्यं निर्मितं नृवरैर्भवेत् ॥ ७३ ॥ चतुर्थे वाक्पतौ लाभे ११ भौमे मंदे च खे १० विधौ ॥ अशीतिहायनायुष्यमारब्धं मंदिरं स्मृतम् ॥ ७४ ॥ शुक्रे स्वोच्चे १२ तनौ १ वापि जीवे पाताल ४ गेऽथवा ॥ लाभगे ११ वा शनौ स्वोच्चे संपद्युक्तं गृहं चिरम् ॥ ७५ ॥ लग्नस्थे १ स्वर्क्षगे चंद्रे केंद्रे जीवेऽथ खेचरैः ॥ स्वोच्चभिन्नांशगैर्गेहं लक्ष्म्या युक्तं स्थिरं भवेत् ॥ ७६ ॥

अब गेहारम्भमें शुभयोग लिखते हैं—लग्नमें बृहस्पति, छठे स्थानमें सूर्य, सातवें बुध, चौथे शुक्र, तीसरे शनैश्चर होय तो इस

मुहूर्तमें बनाया हुआ मकान सौवर्ष तक रहताहै ॥ ७१ ॥ लग्नमें शुक्र, तीसरे घरमें सूर्य, छठे घरमें मङ्गल, पांचवें बृहस्पति होय तो इस योगमें गृहारम्भ करनेसे दोसौ वर्षतक मकान रहताहै ॥ ७२ ॥ सूर्य ग्यारहवें, शुक्र लग्नमें, बुध दशवें स्थानमें होय तो इस योगमें बनायेहुए मकानकी आयु सौवर्षकी होतीहै ॥ ७३ ॥ चौथे स्थानमें बृहस्पति, ग्यारहवें मङ्गल और शनैश्चर, दशवें चन्द्रमा होय तो इस योगमें बनायाहुआ मकान अस्सीवर्षकी आयुवाला होताहै ॥ ७४ ॥ शुक्र उच्चका होय अथवा लग्नमें होय, बृहस्पति लग्नमें अथवा चौथे होय, शनैश्चर ग्यारहवें अथवा उच्चका होय तो इस योगमें बनायाहुआ मकान सम्पदायुक्त तथा बहुत उमरवाला होताहै ॥ ७५ ॥ कर्कराशिका चन्द्रमा लग्नमें होय, बृहस्पति केन्द्रमें होय अन्य ग्रह अपनी उच्चराशिके अथवा मित्रकी राशिके होंय तो इस योगमें बनायाहुआ गृह लक्ष्मीयुक्त तथा बहुत कालतक स्थिर रहताहै ॥ ७६ ॥

अथ नेष्टयोगः ।

नीचांशस्थैस्तथा खेटैर्निर्धनं मंदिरं हि तत् ॥ खेटश्चेत्कोपि खे १० द्यूने ७ परांशस्थेऽत्र मध्यतः ॥ ७७ ॥ कुर्याद्गेहं परायत्तं लग्नेशो यदि निर्बलः ॥ ७८ ॥

अब नेष्टयोग लिखते हैं—यदि नीचांशमें सब ग्रह स्थित होंय तो इस योगमें बनाया गृह मृत्युदायक होताहै. यदि कोई एक ग्रह भी शत्रुग्रहके नवांशमें स्थित होकर दशवें अथवा सातवें स्थानमें स्थित होय और लग्नेश निर्बल होय तो वह मकान वर्षभरके भीतर पराये हाथमें पहुँच जाताहै ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

अथ नक्षत्रविशेषेषु सत्सु फलम्।

पूर्वाषाढोत्तरापुष्ये आश्लेषारोहिणीमृगे ॥ जीवयुक्ते गुरोर्वारे गेहं धान्यसुतप्रदम् ॥ ७९ ॥ पूर्वाषाढामघाहस्तपुष्यमूलांत्यगे कुजे ॥ कुजेह्नि निर्मितं गेहं भस्मसादग्निना भवेत् ॥ ८० ॥ उफाहस्ताश्विनीचित्रारोहिणीमृगगे बुधे ॥ बुधेह्नि मंदिरारंभः सुखपुत्रार्थसिद्धये ॥ ८१ ॥ भरणीस्वात्यनुराधाज्येष्ठापूभाद्वये शनौ ॥ शनिवारे कृतं गेहं रक्षोभूतयुतं भवेत् ॥ ८२ ॥

अब नक्षत्रविशेषमें फल लिखतेहैं-पूर्वाषाढा, तीनों उत्तरा, पुष्य, आश्लेषा, रोहिणी, मृगशिरा इन नक्षत्रोंपर बृहस्पति होय तथा बृहस्पतिका वार होय तो इस योगमें बनाया हुआ गृह धान्य और पुत्रोंका देनेवाला होता है ॥ ७९ ॥ पूर्वाषाढा, मघा, हस्त, पुष्य, मूल, रेवती इन नक्षत्रोंपर मङ्गल स्थित होय तथा मङ्गलवार होय तो इस योगमें निर्म्माण कियाहुआ गृह अग्नि लग जानेसे भस्म होजाताहै ॥ ८० ॥ उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी, चित्रा, रोहिणी, मृगशिरा इन नक्षत्रोंपर बुधकी स्थिति होय और बुधका वार होय तो गृहारंभ करनेसे सुख, पुत्र, अर्थकी सिद्धि होतीहै ॥८१॥ भरणी, स्वाति, अनुराधा, ज्येष्ठा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रोंपर शनैश्चर होय तथा शनैश्चरका वार होय तो इस योगमें बनायाहुआ गृह राक्षस और भूतोंसे भरा रहताहै ॥८२॥

अथ द्वारशाखारोपः।

अश्विन्यामुत्तराहस्तपुष्यश्रुतिमृगेषु च ॥
रोहिण्यां स्वातिभेंत्ये च द्वारशाखां प्ररोपयेत् ॥ ८३ ॥

अब द्वारशाखारोप लिखतेहैं-अश्विनी, तीनों उत्तरा, हस्त, पुष्य, श्रवण, मृगशिरा, रोहिणी, स्वाति, रेवती इन नक्षत्रोंमें गृहद्वारकी चौखट लगाना शुभ होता है ॥ ८३ ॥

अथ द्वारचक्रम्।

सूर्यभाद्वेदभैः ४ शीर्षे संस्थितैर्धनसंपदः ॥ गृहस्योद्वासनं तस्मादष्टभिः १२ कोणसंस्थितैः ॥ ८४ ॥ शाखास्वष्टमितै २० स्तस्माद्धनं सौख्यं भवेद्गृहे ॥ देहल्यां तु त्रिभि २३ र्धिष्ण्यैर्मृत्युर्गृहपतेर्भवेत् ॥ ८५ ॥ चतुर्भिर्मध्यगैस्तस्माद्द्रव्यलाभसुखं भवेत् ॥ एतच्चक्रं विचार्य्यादौ द्वारं कुर्यात्स्वमंदिरे ॥ ८६ ॥

अब द्वारचक्र लिखतेहैं—सूर्यके नक्षत्रसे चार नक्षत्र द्वारके शिरमें स्थित हैं, जिनका फल धन और सम्पदाकारक है. इसके अनन्तर आठ नक्षत्र कोणमें स्थितहैं, जिनका फल (उद्वासन) ऊजड़ होताहै ॥ ८४ ॥ और फिर आठ नक्षत्र शाखाओंमें स्थितहैं, जिनका फल गृहमें धन तथा सौख्य होताहै. इसके आगे तीन नक्षत्र देहलीमें स्थितहैं, जिनका फल गृहके स्वामीकी मृत्यु होतीहै ॥ ८५ ॥ और फिर चार नक्षत्र द्वारके मध्यमें स्थित हैं, जिनका फल द्रव्यलाभ तथा सुख होताहै. प्रथम इस चक्रको विचार कर अपने मकानमें चौखट लगावै ॥ ८६ ॥

अथ राशिपरत्वेन द्वारस्य दिङ्निर्णयः।

मीना १२ ऽलि ८ कर्क ४ राशीनां गेहं प्राङ्मुखमीरितम् ॥ कन्यामिथुननक्राणां शस्तं दक्षिणदिङ्मुखम् ॥८७॥ तुला ७ वृषभ २ कुंभानां पश्चिमाभिमुखं स्मृतम् ॥ उदङ्मुखं धनुर्मेषसिंहराशिभुवां तथा ॥ ८८ ॥

अब राशिपरत्वसे द्वारका दिङ्निर्णय लिखतेहैं—मीन, वृश्चिक, कर्कराशिवालोंका गृह पूर्वाभिमुख कहाहै. कन्या, मिथुन, मकर राशिवालोंका गृहद्वार दक्षिणमुख शुभ होताहै ॥ ८७ ॥ तुला, वृष,

कुम्भ राशिवालोंका गृहद्वार पश्चिम मुख होना चाहिये. धनुष, मेष, सिंह राशिवालोंका गृहद्वार उत्तरमुख श्रेष्ठ होताहै ॥ ८८ ॥

अथ गवाक्षनिर्णयः ।

पूर्वोदितासु शस्तासु गवाक्षो दिक्षु कारयेत् ॥ ८९ ॥

अब गवाक्षनिर्णय लिखतेहैं—पूर्वोक्त श्रेष्ठ दिशाओंमें झरोखे बनाने शुभ होतेहैं ॥ ८९ ॥

अथ द्वारस्य तिर्यङ्मानप्रदेशनिर्णयः ।

आयामे नवधा भक्ते द्वारमेकांशमानतः ॥ प्राच्यां तूर्ये तृतीये वा रुद्रकोणाद्विधीयते ॥ ९० ॥ याम्यां षष्ठे चतुर्थे तुरीयेंशेऽथ पंचमे ॥ उदीच्यां च प्रतीच्यां वा सव्यमार्गेण धीमता ॥ ९१ ॥

अब द्वारका तिर्यङ्मानप्रदेशनिर्णय लिखतेहैं—दीवारकी लँबाईके नौभाग करनेपर एक भागके बराबर द्वार होताहै. पूर्वदिशामें ईशानकी तर्फसे जो तीसरा या चौथा भागहै उसमें द्वार बनावै ॥ ९० ॥ दक्षिण दिशामें छठे अथवा तीसरे भागमें द्वार बनाना शुभ होताहै और उत्तर वा पश्चिम दिशामें सव्यमार्गसे चौथे वा पांचवें भागमें द्वार शुभ होताहै ॥ ९१ ॥

अथ द्वारस्योच्चता ।

गेहोच्चस्य चतुर्थांशो द्विगुणो द्वार उच्छ्रयः ॥ ९२ ॥

अब द्वारकी उच्चता लिखतेहैं—गृहकी ऊंचाईके चौथे भागको दूना करै जितने हाथ होय उतनीही द्वारकी ऊंचाई करनी चाहिये ॥ ९२ ॥

अथ गेहोच्चम् ।

निस्तारषोडशोभागश्चतुर्भिर्यः करैर्युतः ॥
गेहोच्चं तन्मितं ज्ञेयं न्यूनाधिक्यमसत्स्मृतम् ॥ ९३ ॥

अब गेहोच्च लिखतेहैं—गृहकी चौडाईका सोलहवां भाग जितने हाथ होय उसमें चार हाथ और जोडदेवे तब जो अंक होय उतनेही हाथ गृहकी उँचाई जानै कमती बढती अशुभ होतीहै ॥ ९३ ॥

अथ द्वारादौ वेधविचारः ।

कोणमार्गभ्रमिद्वाराकर्दमस्तंभभूरुहे ॥
देवालयप्रकूपानां वेधो द्वारेथ संमुखे ॥ ९४ ॥

अब द्वारादिमें वेध लिखतेहैं—कोणमार्गके घुमावद्वारा घरके द्वारके सामने कीचड, खंभा, वृक्ष, देवालय, कूप होंय तो द्वारका वेध होताहै ॥ ९४ ॥

अथ वेधापवादः ।

गेहोच्चद्विगुणाधिक्ये प्रांतरे संस्थिते सति ॥
नैव कोणेषु वेधः स्याद्भित्तिमार्गान्तरेपि च ॥ ९५ ॥

अब वेधापवाद लिखतेहैं—गृहकी उँचाईके दूनेसे अधिक अन्तर होय अथवा भीत वा मार्ग बीचमें स्थित होय तो कोणोंमें वेध नहीं होताहै ॥ ९५ ॥

अथ षोडशगृहनिर्माणम् ।

प्राच्यास्तु क्रमतः स्नान १ पाक २ शय्या ३ युधस्य ४ च ॥ भोज ५ नस्यान्न ६ भांडार ७ देवतानां ८ गृहाः स्मृताः ॥ ९६ ॥ मथनाज्यपुरीषाख्यविद्याभ्यासशुचां क्रमात् ॥ रतिभैषज्ययोः सर्वधाम्नस्ते मध्यगा गृहाः ॥ ॥ ९७ ॥ अल्पत्वे वा भुवः शक्तेः स्नानादींश्च गृहान्बुधः ॥ शक्तेर्भुवोऽनुसारेण प्रकुर्वीत यथारुचि ॥ ९८ ॥ उलूखलांबुस्थानं च तथा चुल्ल्यादिकं सदा ॥ क्षालनं पितृपादानां गेहाद्दक्षिणतः शुभम् ॥ ९९ ॥

अब षोडशगृह निर्माण लिखतेहैं—पूर्वादिक आठों दिशाओंके क्रमसे स्नानघर १,पाकघर २, शय्याघर ३,शस्त्रघर४, भोजनघर५,अन्नघर ६,

कुम्भ राशिवालोंका गृहद्वार पश्चिम मुख होना चाहिये, धनुष, मेष, सिंह राशिवालोंका गृहद्वार उत्तरमुख श्रेष्ठ होताहै ॥ ८८ ॥

अथ गवाक्षनिर्णयः ।

पूर्वोदितासु शस्तासु गवाक्षो दिक्षु कारयेत् ॥ ८९ ॥

अब गवाक्षनिर्णय लिखतेहैं-पूर्वोक्त श्रेष्ठ दिशाओंमें झरोखे बनाने शुभ होतेहैं ॥ ८९ ॥

अथ द्वारस्य तिर्यङ्मानप्रदेशनिर्णयः ।

आयामे नवधा भक्ते द्वारमेकांशमानतः ॥ प्राच्यां तूर्ये तृतीये वा रुद्रकोणाद्विधीयते ॥ ९० ॥ याम्यां षष्ठे चतुर्थे तुरीयेंशेऽथ पंचमे ॥ उदीच्यां च प्रतीच्यां वा सव्यमार्गेण धीमता ॥ ९१ ॥

अब द्वारका तिर्यङ्मानप्रदेशनिर्णय लिखतेहैं-दीवारकी लँबाईके नौभाग करनेपर एक भागके बराबर द्वार होताहै. पूर्वदिशामें ईशानकी तर्फसे जो तीसरा या चौथा भागहै उसमें द्वार बनावै ॥ ९० ॥ दक्षिण दिशामें छठे अथवा तीसरे भागमें द्वार बनाना शुभ होताहै और उत्तर वा पश्चिम दिशामें सव्यमार्गसे चौथे वा पांचवें भागमें द्वार शुभ होताहै ॥ ९१ ॥

अथ द्वारस्योच्चता ।

गेहोच्चस्य चतुर्थांशो द्विगुणो द्वार उच्छ्रयः ॥ ९२ ॥

अब द्वारकी उच्चता लिखतेहैं-गृहकी ऊंचाईके चौथे भागको दूना करे जितने हाथ होय उतनीही द्वारकी ऊंचाई करनी चाहिये ॥ ९२ ॥

अथ गेहोच्चम् ।

विस्तारषोडशोभागश्चतुर्भिर्यः करैर्युतः ॥
गेहोच्चं तन्मितं ज्ञेयं न्यूनाधिक्यमसत्स्मृतम् ॥ ९३ ॥

अव गेहोच्च लिखतेहैं—गृहकी चौडाईका सोलहवां भाग जितने हाथ होय उसमें चार हाथ और जोडदेवे तव जो अंक होय उतनेही हाथ गृहकी ऊँचाई जानै कमती वढती अशुभ होतीहै ॥ ९३ ॥

अथ द्वारादौ वेधविचारः।

कोणमार्गभ्रमिद्वाराकर्दमस्तंभभूरुहे ॥
देवालयप्रकूपानां वेधो द्वारेथ संमुखे ॥ ९४ ॥

अव द्वारादिमें वेध लिखतेहैं—कोणमार्गके घुमावद्वारा घरके द्वारके सामने कीचड, खंभा, वृक्ष, देवालय, कूप होंय तो द्वारका वेध होताहै ॥ ९४ ॥

अथ वेधापवादः।

गेहोच्चद्विगुणाधिक्ये प्रांतरे संस्थिते सति ॥
नैव कोणेषु वेधः स्याद्भित्तिमार्गान्तरेपि च ॥ ९५ ॥

अव वेधापवाद लिखतेहैं—गृहकी ऊँचाईके दूनेसे अधिक अन्तर होय अथवा भीत वा मार्ग वीचमें स्थित होय तो कोणोंमें वेध नहीं होताहै ॥ ९५ ॥

अथ षोडशगृहनिर्माणम्।

प्राच्यास्तु क्रमतः स्नान १ पाक २ शय्या ३ युधस्य ४ च ॥ भोज ५ नस्यान्न ६ भांडार ७ देवतानां ८ गृहाः स्मृताः ॥ ९६ ॥ मथनाज्यपुरीषाख्यविद्याभ्यासशुचां क्रमात् ॥ रतिभैषज्ययोः सर्वधाम्नस्ते मध्यगा गृहाः ॥ ॥ ९७ ॥ अल्पत्वे वा भुवः शक्तेः स्नानादींश्च गृहान्बुधः ॥ शक्तेर्भुवोऽनुसारेण प्रकुर्वीत यथारुचि ॥ ९८ ॥ उलूखलं-

अब इष्टिकारम्भ और सुधालेप लिखतेहैं–उत्तरा, श्रवण, पुष्य, ज्येष्ठा, रेवती, रोहिणी, हस्त नक्षत्र; स्थिर लग्न; रवि, शनैश्चर, मङ्गल वार इनमें ईंट बनाना और चूनेसे मकानका पुतवाना श्रेष्ठ होताहै ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

अथ गृहोपकरणं वह्निकृत्यं च ।

पूभार्द्रारोहिणीपुष्य उत्तरात्रितयेऽश्विभे ॥
स्थितिर्महानसस्येष्टा गेहोपकरणैः सह ॥ १०४ ॥

अब गृहोपकरण और वह्निकृत्य लिखतेहैं–तीनों पूर्वा, आर्द्रा, रोहिणी, पुष्य, तीनों उत्तरा, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें रसोईके घरमें रसोईकी सब वस्तुएं लेकर रसोई बनाना शुभ होताहै ॥ १०४ ॥

अथ चित्रारंभः ।

हस्तत्रयेऽनुराधांत्ये मृगेश्विन्यां श्रवस्त्रये ॥ पुनर्भे रोहिणी-पुष्ये पूर्वाषाढाभिधे तथा ॥ १०५ ॥ नंदायां च शुभे वारे प्रकुर्याद्राजवेश्मनि ॥ चित्रं नानाविधं रम्यं शिल्पी रामा-यणं विना ॥ १०६ ॥

अब चित्रारंभ लिखतेहैं–हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, रेवती मृगशिरा, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, रोहिणी, पुष्य, पूर्वाषाढा इन नक्षत्रोंमें तथा ॥१०५॥ नंदा तिथि, शुभ वारसें, (शिल्पी) कारीगर राजगृहपर–रामायणके विना–नानाप्रकारके रमणीक चित्र–बनावे ॥ ०१६ ॥

अथ गृहांगणे शुभवृक्षाः ।

पुन्नागश्चंपकोऽशोकः पिप्पली दाडिमी शमी ॥ बकुलस्ति-लको द्राक्षा पिचुमंदोमरो जपा ॥ १०७ ॥ नारिकेलं तथा जाती पाटला गेहमल्लिका ॥ मल्लिकापुंगवंधूकाः पनसः सरसीरुहम् ॥ एते गृहांगणे वृक्षा आरोप्या मंगलप्रदाः ॥ १०८ ॥

वर्त्तनोंका घर ७,देवताघर ८ये आठ घर बनावे ॥९६॥ दही मथनेका घर१,घी धरनेका घर २,पुरीषका घर ३,विद्याभ्यासका घर ४, शोकका घर ५, रतिका घर ६, औषधियोंका घर ७, सब वस्तुओंका घर ८ ये आठघर क्रमसे पूर्वोक्त गृहोंके मध्यमें बनावै । अर्थात् पूर्व आग्नेयके मध्यमें दही मथनेका, आग्नेय और दक्षिणके मध्यमें घीका घर बनावे इत्यादि सब गृहोंके मध्यमें पूर्वोक्त घर बनावै ॥ ९७ ॥ भूमि अथवा अपनी शक्ति कम होय तो बुद्धिमान्को चाहिये कि, अपनी शक्ति तथा भूमिके अनुसारही यथारुचि बनावै ॥ ९८ ॥ ओखली, (जलस्थान) पंडेली, चूल्हा, तथा पितरोंके चरण धोनेका स्थान गृहसे दक्षिणकी ओर शुभ होताहै ॥ ९९ ॥

अथ कूपखननप्रदेशः ।

पुष्टि १ रैश्वर्यवृद्धि २ श्च पुत्रनाशो ३ मृतिः स्त्रियाः-४ ॥
मृतिः ५ संप ६ द्रिपोर्भीतिः ७ सौख्य ८ मीशानतः क्रमात्
॥१००॥गेहस्य मध्यभागेऽर्थनाशः कूपे कृते भवेत्॥१०१॥

अब कूपखननेके प्रदेश लिखतेहैं—गृहसे ईशानादि दिशाओंमें कुआँ खोदै तो क्रमसे यह फल होताहै पुष्टि १, ऐश्वर्यवृद्धि २, पुत्रनाश ३, स्त्रीकी मृत्यु ४, स्वामीकी मृत्यु ५, संपदा ६, शत्रुसे भय ७, सौख्य ८, अर्थात् घरसे ईशान दिशामें कुआँ खोदे तो पुष्टि और पूर्व दिशामें खोदे तो ऐश्वर्यवृद्धि आग्नेय दिशामें खोदे तो पुत्रका नाश होताहै इत्यादि सब फल जानै ॥ १०० ॥ और जो घरके मध्यभागमें कुआ बनावे तो द्रव्यका नाश होताहै ॥ १०१ ॥

अथेष्टिकारंभः सुधालेपश्च ।

उत्तराश्रवणे पुष्ये ज्येष्ठांत्ये रोहिणीकरे ॥ स्थिरेंगेऽर्के गुरौ गेहे-
ष्टिकारंभमाचरेत् ॥ १०२ ॥ तथा गेहे सुधालेप
[illegible] ॥ १०३ ॥

अब इष्टिकारम्भ और सुधालेप लिखतेहैं–उत्तरा, श्रवण, पुष्य, ज्येष्ठा, रेवती, रोहिणी, हस्त नक्षत्र; स्थिर लग्न; रवि, शनैश्चर, मङ्गल वार इनमें ईंट बनाना और चूनेसे मकानका पुतवाना श्रेष्ठ होताहै ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

अथ गृहोपकरणं वह्निकृत्यं च ।

पूभार्द्रारोहिणीपुष्य उत्तरात्रितयेऽश्विभे ॥
स्थितिर्महानसस्येष्टा गेहोपकरणैः सह ॥ १०४ ॥

अब गृहोपकरण और वह्निकृत्य लिखतेहैं–तीनों पूर्वा, आर्द्रा, रोहिणी, पुष्य, तीनों उत्तरा, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें रसोईके घरमें रसोईकी सब वस्तुएं लेकर रसोई बनाना शुभ होताहै ॥ १०४ ॥

अथ चित्रारंभः ।

हस्तत्रयेऽनुराधांत्ये मृगेश्विन्यां श्रवस्त्रये ॥ पुनर्भे रोहिणी-
पुष्ये पूर्वाषाढाभिधे तथा ॥ १०५ ॥ नंदायां च शुभे वारे
प्रकुर्याद्राजवेश्मनि ॥ चित्रं नानाविधं रम्यं शिल्पी रामा-
यणं विना ॥ १०६ ॥

अब चित्रारंभ लिखतेहैं–हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, रेवती मृगशिरा, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, रोहिणी, पुष्य, पूर्वाषाढा इन नक्षत्रोंमें तथा ॥१०५॥ नंदा तिथि, शुभ वारमें, (शिल्पी) कारीगर राजगृहपर–रामायणके विना–नानाप्रकारके रमणीक चित्र–बनावे ॥ ०१६ ॥

अथ गृहांगणे शुभवृक्षाः ।

पुन्नागश्चंपकोऽशोकः पिप्पली दाडिमी शमी ॥ वकुलस्ति-
लको द्राक्षा पिचुमंदोमरो जपा ॥ १०७ ॥ नारिकेलं तथा
जाती पाटला गेहमल्लिका ॥ मल्लिकापुंगवंधूकाः पनसः
सरसीरुहम् ॥ एते गृहांगणे वृक्षा आरोप्या मंगलप्रदाः॥१०८॥

अब गृहके आंगणोंमें शुभ वृक्ष लिखतेहैं-नागकेसर, चंपा, अशोक, पीपल, अनार, मौलसिरी, तालमखाना, दाख, नींव, आंवला, गुडहल॥१०७॥ नारियल, चमेली, पाढल, गृहवेला, जूही, सुपारी, दुपहरिया, कटहल, कमल ये वृक्ष घरके आंगनमें लगाने चाहिये क्योंकि, मंगलदायक हैं ॥ १०८ ॥

अथ गेहप्रदेशात्प्रतिदिशं वृक्षारोपणम् ।

न्यग्रोधं रोपयेत्प्राच्यां गेहाद्याम्यामुदुंबरम् ॥
उदग्दिशि च कर्कंधुं प्रतीच्यां कुंजराशनम् ॥ १०९ ॥

अब गेहप्रदेशसे प्रतिदिशामें वृक्षारोपण लिखतेहैं-मकानसे पूर्वकी ओर वडका वृक्ष और दक्षिणदिशाकी ओर गूलरका वृक्ष, उत्तर दिशाकी तर्फ बेरीका वृक्ष,पश्चिममें पीपलका वृक्ष लगावै१०९॥

अथ गृहांगणेऽशुभवृक्षाः ।

मातुलुंगं स्नुही रंभा हरिद्रा च मुनिद्रुमः ॥
एते दुःखप्रदा गेहे संजाता रोपिता अपि ॥ ११० ॥

अब गृहाङ्गणमें अशुभवृक्ष लिखतेहैं-बिजोरेका वृक्ष, सैंजना, केला, हलदी, सिर्स इतने वृक्ष घरमें उगिआवैं अथवा लगाये जावें तो दुःखदायी होतेहैं ॥ ११० ॥

अथ केषांचिन्मते सर्वेपि वृक्षा अंगणेऽशुभाः ।

केचिदूचुर्न चारोप्यो निजवासगृहांगणे ॥
कोपि वृक्षो यतः स्वर्णद्रुमोपि न शुभोंगणे ॥ १११ ॥

अब किन्हींके मतमें सभी वृक्ष अंगणमें अशुभ लिखतेहैं-किन्हीं आचार्योंने ऐसा कहाहै कि, अपने निवासगृहके आंगनमें कोईभी वृक्ष न लगावे क्योंकि, सोनेका वृक्षभी अंगनमें शुभ नहीं होताहै ॥ १११ ॥

अथ पुरग्रामप्राकारादीनां निर्माणे सूत्रसाधनम्।

प्राकारापत्तनग्रामनिर्मितौ सूत्रसाधनम् ॥
प्रशस्तं स्याच्छुभे काले गेहारंभोक्तभादिषु ॥ ११२ ॥

अब पुरग्रामप्राकारादिकोंके निर्माणमें सूत्रसाधन लिखतेहैं—परकोटा, शहर, गाँव इनके बनानेके समय गृहारंभोक्त नक्षत्रादिकोंमें तथा शुभसमयमें सूत्रसाधन श्रेष्ठ होताहै ॥ ११२ ॥

अथ देवालयमठाद्यारंभः।

गृहारंभोक्तनक्षत्रैर्मठं कुर्यात्तु साश्विभैः ॥
सर्वदेवालयं तैस्तु पुनर्भश्रवणान्वितैः ॥ ११३ ॥

अब देवालय और मठादिका आरम्भ लिखतेहैं—अश्विनीसहित गृहारंभोक्त नक्षत्रोंमें मठ बनावे और पुनर्वसू तथा श्रवणसहित गृहारंभके नक्षत्रोंमें सब देवमंदिर बनावे ॥ ११३ ॥

अथ जैन्यालयप्रपादरीणामारंभः।

पूर्वार्द्राभरणीधिष्ण्ये रोहिण्यां च स्थिरोदये ॥
शुभाहे जैन्यगेहस्य प्रपादर्योः कृतिः शुभा ॥ ११४ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ वास्तुप्रकरणमेकविंशम् ॥ २१ ॥

अब जैन्यालय और प्रपादरीओंका आरंभ लिखतेहैं—पूर्वा, आर्द्रा, भरणी, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें; स्थिर लग्नमें; शुभ वारमें जैनियोंका मकान तथा प्याऊ, दरीची, तेखाना बनाना शुभ होताहै॥११४॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं वास्तुप्रकरणमेकविंशम् ॥ २१ ॥

अथ गृहप्रवेशप्रकरणम् ।

प्रवेशं नवगेहस्य कुर्यात्सौम्यायने नृपः ॥ प्रारंभोदितमासेपि कृत्वा प्राग्वास्तुपूजनम् ॥ १ ॥ माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठाः शस्ता नवे गृहे ॥ प्रवेशे श्रावणो मार्गः कार्त्तिकोपि प्रशस्यते ॥ २ ॥ पुनर्विनिर्मिते जीर्णे गृहेप्युक्तस्तथैव हि ॥ आवश्यके प्रवेशे नो कुर्यादस्तविचारणाम् ॥ ३ ॥ त्र्युत्तरे चानुराधायां रेवत्यां रोहिणीद्वये ॥ चित्रायां प्रविशेद्गेहं द्वारभे तु विशेषतः ॥ ४ ॥

अथ गृहप्रवेशप्रकरण लिखतेहैं-उत्तरायण, तथा गृहारंभोक्त दिन, नक्षत्र, मासमें राजा प्रथम वास्तुका-पूजन करके नवीन गृहमें प्रवेश करे ॥ १ ॥ माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ ये महीनें नवीन गृहप्रवेशमें श्रेष्ठ होतेहैं. तथा श्रावण, मार्गशीर्ष, कार्त्तिकका-महीनाभी श्रेष्ठ कहा गयाहै ॥ २ ॥ यदि जो पुरानाघर फिर कर बनाया गया हो तो उसमेंभी पूर्वोक्त मुहूर्त्तसे प्रवेश करै और जीर्ण-गृहमें आवश्यक प्रवेश करना होय तो शुक्रादिके अस्तका विचार नहीं करना चाहिये ॥ ३ ॥ तीनों उत्तरा, अनुराधा, रेवती,रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा इन नक्षत्रोंमें गृहप्रवेश शुभ होताहै और द्वारके नक्षत्रोंमें विशेषकरके शुभ होताहै ॥ ४ ॥

अथ जीर्णगृहप्रवेशः ।

धनिष्ठाद्वितये पुष्ये त्र्युत्तरे रोहिणीद्वये ॥
चित्रास्वात्यनुराधांत्ये प्रविशेज्जीर्णमंदिरम् ॥ ५ ॥

अब जीर्णगृहप्रवेश लिखतेहैं-धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, रेवती इन नक्षत्रोंमें पुराने मकानमें प्रवेश करे ॥ ५ ॥

अथ प्रवेशेऽन्यनक्षत्रफलम् ।

श्रवणादित्रयेऽश्विन्यां स्वात्यां पुष्ये तथा करे.॥ पुनर्वस्वोः पुनर्यात्रा राजनाशो मघाभिधे ॥ ६ ॥ पूर्वात्रये भरण्यां च विशाखायां वधूक्षयः ॥ ज्येष्ठाऽऽश्लेषाख्यमूलार्द्रे कुमारो नाशमाप्नुयात् ॥ ७ ॥ कृत्तिकायां दहेद्गेहं प्रवेशे नवमंदिरे॥ तथा यात्रानिवृत्तौ च भूपानां फलमीदृशम् ॥ ८ ॥

अब प्रवेशमें अन्यनक्षत्रफल लिखतेहैं—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, स्वाति, पुष्य, हस्त, पुनर्वसू इन नक्षत्रोंमें प्रवेश करनेसे फिरभी यात्रा जलदी करनी पड़तीहै और यदि मघामें प्रवेश करे तो राजाका नाश होताहै ॥ ६ ॥ तीनों पूर्वा, भरणी, विशाखा इन नक्षत्रोंमें प्रवेश करे तो वधूका नाश होताहै और ज्येष्ठा, आश्लेषा, मूल, आर्द्रा इन नक्षत्रोंमें प्रवेश करे तो (कुमार) बालकका नाश होताहै ॥ ७ ॥ कृत्तिकामें प्रवेश करे तो गृहमें आग लगजातीहै. नवीन गृहप्रवेशमें तथा यात्रासे लौटकर गृहप्रवेश करनेमेंभी राजाओंको ऐसाही फल होताहै ॥ ८ ॥

अथ वारफलम् ।

गुरुशुक्रबुधाख्येषु वारेषु च सुखार्थदम् ॥
प्रवेशे तु शनौ स्थैर्यं किंचिच्चौरभयं भवेत् ॥ ९ ॥

अब वारफल लिखतेहैं—बृहस्पति, शुक्र, बुध इन वारोंमें प्रवेश करे तो सुख तथा धनका लाभ होताहै और शनैश्चरके दिन प्रवेश करे तो स्थिरता होतीहै परन्तु कुछ चोरका भय होताहै ॥ ९ ॥

अथ प्रवेशे त्याज्याः ।

चैत्रो मासः कुजार्कौ च रिक्ता दग्धास्तमा मृतिः ॥
दुष्टचंद्र इमे त्याज्या नवगेहप्रवेशने ॥ १० ॥

अब प्रवेशमें त्याज्य लिखतेहैं—चैत्रका महीना मंगल, शनैश्चर वार; रिक्ता, दग्धा, अमावास्या तिथि, मृत्युयोग, दुष्टचंद्रमा ये सब नवीन गहप्रवेशमें त्याज्यहैं ॥ १० ॥

अथ लग्नबलम्।

चरे लग्ने चरांशस्थे प्रवेशो न शुभावहः ॥ शुभांशेन युते चोपचयस्थे च चरेपि सत्॥११॥ शुभैः केंद्रत्रिकोणायद्वि-गैरायत्रिषष्ठगैः ॥ पापैः शुद्धेऽष्टमे तुर्ये विजनुर्भाष्टमेंगके ॥ ॥ १२ ॥ शुभे भकूटके गेहे विधायाग्रे द्विजन्मनः ॥ जल-पूर्णं घटं धृत्वा मांगल्येन गृहं विशेत् ॥ १३ ॥ रंध्रा ८-त्मज ५ कुटुंबाया ११ त्पंचभे भास्करे स्थिते ॥ पूर्वास्या-दिगृहे श्रेष्ठः क्रमाद्वामगतो रविः ॥ १४ ॥

अब लग्नबल लिखतेहैं—चर लग्न, तथा चरलग्नका नवांशा होय तो नवीन गृहप्रवेशमें शुभकारक नहीं होताहै अथवा शुभग्रहके नवांशासे युक्त चरलग्न होय अथवा उपचय ३। ६। १०। ११ स्था-नमें स्थित चरलग्न होय तो उसमेंभी शुभ होताहै ॥ ११ ॥ शुभ-ग्रह केंद्र अथवा त्रिकोण वा दूसरे स्थानमें बैठे होंय और पापग्रह-ग्यारहवें, तीसरे, छठे स्थानमें स्थित होंय आठवां, चौथा घर शुद्ध होय अर्थात् उनमें कोईग्रह नहीं होय और जन्मका नक्षत्र तथा राशि और जन्मलग्नसे आठवीं लग्न नहीं होय ॥ १२ ॥ गृह और स्वामीकी राशिका भकूट शुभहोय तो जलसे भरेहुए कलशस-हित ब्राह्मणोंको आगेकरके मंगलपूर्वक गृहमें प्रवेश करे ॥ १३ ॥ पूर्वादिक दिशाओंमें गृहका द्वार होय तो क्रमसे आठवें, पांचवें, दूसरे,ग्यारहवें स्थानसे पांचपांच स्थानोंके भीतर सूर्य होंय तो प्रवेश करनेवालेके वाइँतर्फ रहतेहैं अर्थात् गृहद्वार पूर्वको होय तो लग्नसे आठवें स्थानसे पांच घरोंके भीतर सूर्य प्रवेशकर्त्ताके वाम भागमें रहतेहैं और गृहद्वार दक्षिणको होय तो लग्नसे पांचवें स्थानसे

पांच घरोंके भीतर सूर्य होय तो प्रवेशकर्त्ताके वामभागमें रहतेहैं और गृहद्वार पश्चिमको होय तो लग्नसे दूसरे घरसे पांच घरोंके भीतर सूर्य होय तो प्रवेशकर्त्ताके वामभागमें रहतेहैं. यदि उत्तरमुख गृहद्वार होनेपर ग्यारहवें स्थानसे पांच घरोंके भीतर सूर्य होय तो प्रवेशकर्त्ताके वामभागमें रहतेहैं और गृहप्रवेशमें श्रेष्ठ होतेहैं ॥ १४ ॥

अथ गृहद्वारवशात्तिथयः ।

प्रवेशे प्राङ्मुखे पूर्णा नंदा याम्यमुखे शुभा ॥
भद्रा प्रत्यङ्मुखेऽथोदङ्मुखे गेहे तथा जया ॥ १५ ॥

अब गृहद्वारवशसे तिथियाँ लिखतेहैं—पूर्वमुखके गृहमें प्रवेश करे तो पूर्णातिथि और दक्षिण मुखके गृहमें नन्दातिथि, पश्चिम मुखके गृहमें भद्रातिथि और उत्तरमुखके गृहमें प्रवेश करे तो जयातिथि शुभ होती है ॥ १५ ॥

अथ गेहे तत्प्रवेशे च विशेषः ।

वेश्मकृत्यं दिवा शस्तं प्रवेशो रजनौ क्वचित् ॥
सतींद्वर्कबले यात्रा द्वादश्यां न भृगौ निशि ॥ १६ ॥

अब गृह और उसका प्रवेशमें विशेष लिखतेहैं—गृहकृत्य दिनमें श्रेष्ठ होतीहै और प्रवेशभी दिनमेंही श्रेष्ठ होताहै और कभीकभी रात्रिमेंभी शुभ होताहै. चन्द्रमा और सूर्यका बल होय तो यात्रा श्रेष्ठ होतीहै और द्वादशी तिथि, शुक्रके दिन रात्रिमें यात्रा नहीं करे ॥ १६ ॥

अथ गेहप्रवेशे कलशचक्रम् ।

अर्कभाद्भू १ मिते वक्त्रे वह्निदाहः प्रवेशने ॥ उद्वासोऽब्धि-
५ मितैः प्राच्यां याम्यां लाभोऽब्धि ९ संमितैः ॥ १७ ॥
पश्चिमेऽब्धि १२ मितैर्लक्ष्मीरुदग्वेद १७ मितैः कलिः ॥

नाशो युग २१ मितैर्मध्येऽधः कंठे त्रित्रि २७ भैः शुभम् ॥ १८ ॥

अब गृहप्रवेशमें कलशचक्र लिखतेहैं--सूर्यके नक्षत्रसे दिनके नक्षत्रतक गिने एक नक्षत्र १ कलशके मुखमें धरे जिसका फल प्रवेशके समय अग्निदाह होताहै और फिर चार नक्षत्र कलशचक्रके पूर्वमें धरै जिनका फल उजाड़ होताहै और फिर दक्षिणमें चार नक्षत्र धरै जिनका फल लाभ होताहै ॥ १७ ॥ और फिर चार नक्षत्र पश्चिममें धरै जिनका फल लक्ष्मीप्राप्ति होतीहै, तदनन्तर चार नक्षत्र उत्तरमें धरै जिनका फल कलह होताहै और इसके पीछे चार नक्षत्र मध्यमें धरै जिनका फल नाश और तीनतीन नक्षत्र नीचे तथा कण्ठमें धरै जिनका फल शुभ होताहै ॥ १८ ॥

अथ तदेव स्पष्टयति ।

भान्यष्टौ ८ सूर्यभात्षष्ठाद्द्वाविंशाच्चैव भानि षट् ॥
कुंभचक्रे वरिष्ठानि गेहं प्रविशतां नृणाम् ॥ १९ ॥

अब उसीको स्पष्ट लिखतेहैं--सूर्यके नक्षत्रसे जो छठा नक्षत्र होय उससे आठ नक्षत्र तथा सूर्यनक्षत्रसे जो बाईसवाँ नक्षत्र होय उससे छः नक्षत्र गृहमें प्रवेश करनेवाले मनुष्योंको श्रेष्ठ होतेहैं ॥ १९ ॥

अथ प्रवेशविधिः ।

यथोक्तसमये शय्यावितानैस्तोरणैर्युतम् ॥ वेदमंगलनिर्घोषैः संप्रविश्य गृहं शुभम् ॥२०॥ शिल्पिनं गणितज्ञं च विधिविज्ञं पुरोधसम् ॥ पूजयेच्च यथादेवं हेमरत्नैस्तथांबरैः ॥ २१ ॥

अब प्रवेशविधि लिखतेहैं--राजा पूर्वोक्त मुहूर्तमें शय्या, चन्दोवा, तोरणयुक्त गृहमें वेद और मङ्गलाचारके शब्दोंसहित प्रवेश करे तो शुभ होताहै ॥ २० ॥ कारीगर, गणितका जाननेवाला ज्योतिषी

पंडित, विधिका जाननेवाला, पुरोहित इन सबका सुवर्ण, रत्न-वस्त्रोंसे देवताके समान पूजन करे ॥ २१ ॥

अथ त्रिविधः प्रवेशः ।

अपूर्वो नवगेहादौ प्रवेशो मुनिभिः स्मृतः ॥ सपूर्वस्तु प्रवासांते पूर्वाऽपूर्व इतः परः ॥ २२ ॥ आरंभोदितभैर्भूपैः कार्योऽपूर्वः प्रवेशकः ॥ पूर्वाऽपूर्वोश्विनीमूलश्रवोपेतैः करस्थितैः ॥ २३ ॥ सपूर्वस्तूत्तराचित्रानुराधारेवतीमृगे ॥ रोहिण्यां कथितः प्राज्ञैः प्रवेशस्त्रिविधो गृहे ॥ २४ ॥

अब त्रिविध प्रवेश लिखतेहैं—मुनीश्वरोंने नवीन गृहादिकोंमें तीन प्रकारका प्रवेश कहाहै. अपूर्व, सपूर्व, पूर्वापूर्व इति । नवीन गृहादिकमें प्रवेश करे तो अपूर्व और यात्रासे लौटके प्रवेश करे तो सपूर्व और इससे अतिरिक्त पूर्वापूर्व प्रवेश कहाताहै॥२२॥गृहारंभोक्त नक्षत्रोंमें अपूर्व प्रवेश राजा करे और अश्विनी, मूल, श्रवण, हस्त इन नक्षत्रोंमें पूर्वापूर्व प्रवेश करे ॥ २३ ॥ तीनों उत्तरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मृगशिरा, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें सपूर्व गृहप्रवेश करे ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ २४ ॥

अथ वास्तुपूजनादिकं विना प्रवेशो न कार्यः ।

जातु न प्रविशेद्धीमाननाच्छन्नं नवं गृहम् ॥
कपाटरहितं तद्वद्वास्तुपूजनवर्जितम् ॥ २५ ॥

अब वास्तुपूजादिक विना प्रवेश नहीं करना लिखतेहैं—विना छप्परके अथवा विना पटाउके, विना द्वारके, विना वास्तुपूजनके घरमें प्रवेश नहीं करे ॥ २५ ॥

अथ वास्तुपूजनम् ।

श्रवस्त्रये मृगे मूलाऽनुराधांत्य करत्रये ॥ पुनर्भे त्र्युत्तरे पुष्ये रोहिण्यामश्विभे तथा ॥ २६ ॥ वास्तोरभ्यर्चनं शस्तं बलिदानपुरःसरम् ॥ २७ ॥

नाशो युग २१ मितैर्मध्येऽधः कंठे त्रित्रि २७ भैः शुभम् ॥ १८ ॥

अब गृहप्रवेशमें कलशचक्र लिखतेहैं–सूर्यके नक्षत्रसे दिनके नक्षत्रतक गिने एक नक्षत्र १ कलशके मुखमें धरै जिसका फल प्रवेशके समय अग्निदाह होताहै और फिर चार नक्षत्र कलशचक्रके पूर्वमें धरै जिनका फल उजाड़ होताहै और फिर दक्षिणमें चार नक्षत्र धरै जिनका फल लाभ होताहै ॥ १७ ॥ और फिर चार नक्षत्र पश्चिममें धरै जिनका फल लक्ष्मीप्राप्ति होतीहै, तदनन्तर चार नक्षत्र उत्तरमें धरै जिनका फल कलह होताहै और इसके पीछे चार नक्षत्र मध्यमें धरै जिनका फल नाश और तीनतीन नक्षत्र नीचे तथा कण्ठमें धरै जिनका फल शुभ होताहै ॥ १८ ॥

अथ तदेव स्पष्टयति ।

भान्यष्टौ ८ सूर्यभात्षष्ठाद्द्वाविंशाच्चैव भानि षट् ॥
कुंभचक्रे वरिष्ठानि गेहं प्रविशतां नृणाम् ॥ १९ ॥

अब उसीको स्पष्ट लिखतेहैं–सूर्यके नक्षत्रसे जो छठा नक्षत्र होय उससे आठ नक्षत्र तथा सूर्यनक्षत्रसे जो बाईसवाँ नक्षत्र होय उससे छः नक्षत्र गृहमें प्रवेश करनेवाले मनुष्योंको श्रेष्ठ होतेहैं ॥ १९ ॥

अथ प्रवेशविधिः ।

यथोक्तसमये शय्यावितानैस्तोरणैर्युतम् ॥ वेदमंगलनिर्घोषैः संप्रविश्य गृहं शुभम्॥२०॥ शिल्पिनं गणितज्ञं च विधिविज्ञं पुरोधसम् ॥ पूजयेच्च यथादेवं हेमरत्नैस्तथांबरैः ॥ २१ ॥

अब प्रवेशविधि लिखतेहैं–राजा पूर्वोक्त मुहूर्तमें शय्या, चन्दोवा, तोरणयुक्त गृहमें वेद और मङ्गलाचारके शब्दोंसहित प्रवेश करे तो शुभ होताहै ॥ २० ॥ कारीगर, गणितका जाननेवाला ज्योतिषी

पंडित, विधिका जाननेवाला, पुरोहित इन सबका सुवर्ण, रत्न-वस्त्रोंसे देवताके समान पूजन करे ॥ २१ ॥

अथ त्रिविधः प्रवेशः ।

अपूर्वो नवगेहादौ प्रवेशो मुनिभिः स्मृतः ॥ सपूर्वस्तु प्रवासांते पूर्वाऽपूर्व इतः परः ॥ २२ ॥ आरंभोदितभैर्भूपैः कार्योऽपूर्वः प्रवेशकः ॥ पूर्वाऽपूर्वोऽश्विनीमूलश्रवोपेतैः करस्थितैः ॥ २३ ॥ सपूर्वस्तूत्तराचित्रानुराधारेवतीमृगे ॥ रोहिण्यां कथितः प्राज्ञैः प्रवेशस्त्रिविधो गृहे ॥ २४ ॥

अब त्रिविध प्रवेश लिखतेहैं—मुनीश्वरोंने नवीन गृहादिकोंमें तीन प्रकारका प्रवेश कहाहै. अपूर्व, सपूर्व, पूर्वापूर्व इति। नवीन गृहादिकमें प्रवेश करे तो अपूर्व और यात्रासे लौटके प्रवेश करे तो सपूर्व और इससे अतिरिक्त पूर्वापूर्व प्रवेश कहाताहै॥२२॥गृहारंभोक्त नक्षत्रोंमें अपूर्व प्रवेश राजा करे और अश्विनी, मूल, श्रवण, हस्त इन नक्षत्रोंमें पूर्वापूर्व प्रवेश करे ॥ २३ ॥ तीनों उत्तरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मृगशिरा, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें सपूर्व गृहप्रवेश करे ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ २४ ॥

अथ वास्तुपूजनादिकं विना प्रवेशो न कार्यः ।

जातु न प्रविशेद्धीमानन्नाच्छन्नं नवं गृहम् ॥
कपाटरहितं तद्वद्वास्तुपूजनवर्जितम् ॥ २५ ॥

अब वास्तुपूजादिक विना प्रवेश नहीं करना लिखतेहैं—विना छप्परके अथवा विना पटाउके, विना द्वारके, विना वास्तुपूजनके घरमें प्रवेश नहीं करे ॥ २५ ॥

अथ वास्तुपूजनम् ।

श्रवस्त्रये मृगे मूलाऽनुराधांत्ये करत्रये ॥ पुनर्भे त्र्युत्तरे पुष्ये रोहिण्यामश्विभे तथा ॥ २६ ॥ वास्तोरभ्यर्चनं शस्तं बलिदानपुरःसरम् ॥ २७ ॥

अब वास्तुपूजन लिखतेहैं-श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृगशिरा, मूल, अनुराधा, रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाति, पुनर्वसू, तीनों उत्तरा, पुष्य, रोहिणी, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें बलिदानपूर्वक वास्तुका पूजन शुभ होताहै ॥ २६ ॥ २७ ॥

अथ नवदुर्गपुरप्रवेशः ।

रोहिणीरेवतीहस्तत्रये पुष्यश्रवस्त्रये ॥
अनुराधोत्तरे नव्ये पुरे दुर्गे प्रवेशनम् ॥ २८ ॥

अब नवदुर्गपुरप्रवेश लिखतेहैं-रोहिणी, रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाति, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अनुराधा, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें नवीन किलेमें प्रवेश करना शुभ होताहै ॥ २८ ॥

अथ जितस्य शत्रोः पुरप्रवेशः ।

विशाखाकृत्तिकापूभोत्तराषाढाभिधे तथा ॥
शनौ वार्के जितस्यारेर्विजयी नगरं विशेत् ॥ २९ ॥
इति श्रीमदैवज्ञरावलहरिशङ्करसूरिसूनुगणपतिकृते
मुहूर्त्तगणपतौ गृहप्रवेशप्रकरणं द्वाविंशम् ॥ २२ ॥

अब जितेहुए शत्रुके पुरमें प्रवेश लिखतेहैं-विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा इन नक्षत्रोंमें, शनैश्चर तथा रविवारमें विजयी राजा जीतेहुए वैरीके पुरमें प्रवेश करे ॥ २९ ॥

इति श्रीमदैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्मकृत-भाषाटीकासमलंकृतं गृहप्रवेशप्रकरणं द्वाविंशम् ॥२२॥

अथ देवालयादिप्रतिष्ठाप्रकरणम् ।

प्रासादामरयोः कार्या प्रतिष्ठाथोत्तरायणे ॥ तथा जलाशयारामोत्सर्गः शस्तो विचैत्रके ॥ १ ॥ चैत्रो मासः प्रतिष्ठायां

मध्यमः कैश्चिदीरितः ॥ शुक्लपक्षेनुराधांत्ये पुनर्भे रोहिणी-मृगे ॥ २ ॥ श्रवत्रयोत्तराहस्तत्रये पुष्ये विधौ शुभे ॥ स्ववारनक्षत्रतिथिषु मूर्त्तीनां स्थापनं स्मृतम् ॥ विष्ण्वादि-देवमुख्यानां विलग्ने शुभलौकिके ॥ ३ ॥

अब देवालयादिप्रतिष्ठाप्रकरण लिखतेहैं—देवमंदिर तथा देवप्रतिमाकी प्रतिष्ठा उत्तरायण सूर्यमें करनी चाहिये और जलाशय तथा बागकी प्रतिष्ठा चैत्रके महीनेको छोड़कर उत्तरायणमें शुभ होतीहै ॥ १ ॥ और किन्हीं आचार्योंने चैत्रका महीना प्रतिष्ठामें मध्यम कहाहै. शुक्लपक्ष, अनुराधा, रेवती, पुनर्वसू, रोहिणी, मृगशिरा ॥ २ ॥ श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, हस्त, चित्रा, स्वाति, पुष्य यह नक्षत्र और शुभ चन्द्रमा और अपने वार, नक्षत्र, तिथियोंमें शुभ लौकिकव्यवहारमें, शुभ लग्नमें विष्ण्वादि मुख्य २ देवता तथा अन्य मूर्तियोंका स्थापन शुभ होताहै ॥ ३ ॥

अथ देवताविशेषेण नक्षत्रविशेषः।

विष्णोः पूर्वोदिते भेनुराधाचित्राद्वयोस्सिते ॥ रोहिणी-श्रवणज्येष्ठापुष्ये चाभिजितीरितम् ॥ ४ ॥ विधिवासवयोः सम्यक्प्रतिष्ठापनमार्यकैः ॥ भानोर्हस्तेऽनुराधायां कुबेरस्कंधयोरपि ॥ ५ ॥ मूले दुर्गादिकानां च श्रवणे सुगतस्य हि ॥ रेवत्यां धर्महेरंबफणिप्रमथरक्षसाम् ॥ ६ ॥ यक्षभूतासुराणां च वाग्देव्याः स्थापनं स्मृतम् ॥ व्यासागस्त्य-ग्रहाणां च वाल्मीकेः पुष्यभे तथा ॥ ७ ॥ यत्र सप्तर्षयो यांति धिष्ण्ये तेषां तु तत्र च ॥ सर्वेषामेव रोहिण्यामुत्तरा-त्रितये तथा ॥ ८ ॥ धनिष्ठायां दिगीशानां प्रतिष्ठापनमी-रितम् ॥ ९ ॥

अव देवताविशेपसे नक्षत्र विशेष लिखतेहैं—विष्णुके पूर्वोक्त नक्षत्रोंमें तथा अनुराधा, चित्रा, स्वाति, मृगशिरा, रोहिणी, श्रवण, ज्येष्ठा, पुष्य, अभिजित् इन नक्षत्रोंमें ब्रह्मा तथा इन्द्रकी प्रतिष्ठा शुभ कहीहै. सूर्यकी प्रतिष्ठा हस्त नक्षत्रमें; कुवेर और स्वामि कार्त्तिककी प्रतिष्ठा अनुराधा नक्षत्रमें शुभ कहीहै ॥ ४ ॥ ५ ॥ दुर्गादि देवताओंकी प्रतिष्ठा मूलनत्रमें; बुद्धकी प्रतिष्ठा श्रवण नक्षत्रमें और धर्म, गणेश, शेष, प्रमथ, राक्षस ॥ ६ ॥ यक्ष, भूत, असुर, सरस्वती इतने देवताओंकी प्रतिष्ठा रेवती नक्षत्रमें शुभ होतीहै और व्यास, अगस्त्य, वाल्मीकि, नवग्रह इनकी प्रतिष्ठा पुष्य नक्षत्रमें शुभ होतीहै ॥ ७ ॥ और सप्तर्षियोंकी प्रतिष्ठा उस नक्षत्रमें करनी चाहिये जिसपर कि, वे स्थित हैं. रोहिणी, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें सब देवताओंकी प्रतिष्ठा शुभ होतीहै ॥ ८ ॥ और धनिष्ठा नक्षत्रमें दिक्पालोंकी प्रतिष्ठा शुभ कहीहै ॥ ९ ॥

अथ देवताविशेपेण लग्ने विशेषः ।

सिंहे सूर्यः शिवो द्वंद्वे लग्ने स्थाप्यः स्त्रियां हरिः ॥
कुंभे वेधाश्चरे क्षुद्रा द्व्यङ्गे देव्यः स्थिरेऽखिलाः ॥ १० ॥

अव देवताविशेपसे लग्नमें विशेप लिखतेहैं—सिंह लग्नमें सूर्यकी, मिथुनमें शिवकी, कन्या लग्नमें विष्णुकी, कुंभ लग्नमें ब्रह्माकी, चरलग्नमें क्षुद्रा अर्थात् चतुःषष्टि योगिनीयोंकी; द्विस्वभावलग्नमें देवी अर्थात् दुर्गाप्रभृतिकी और स्थिर लग्नमें सव देवताओंकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये ॥ १० ॥

अथ वारफलम् ।

प्रतिष्ठोग्रा तथा क्षेमा वह्निदा वरदा दृढा ॥
आनंददायिनी कल्पस्थायिन्यर्कादिवासरे ॥ ११ ॥

अव वारफल लिखतेहैं—अर्कादिवारोंमें जो प्रतिष्ठा होतीह उनको कहतेहैं कि, रविवारमें उग्रा, चन्द्रवारमें क्षेमा, मंगलवारमें

अग्निदा, बुधवारमें वरदा, बृहस्पतिवारमें दृढा, शुक्रवारमें आनन्ददायिनी और शनैश्चरवारमें कल्पस्थायिनी प्रतिष्ठा होतीहै ॥ ११ ॥

अथ देवताविशेषेण मासविशेषः।

याम्यायनेपि वाराहमातृभैरववामनान् ॥ महिषासुरहंत्रीं च नृसिंहं स्थापयेद्बुधः ॥ १२ ॥ श्रावणे स्थापयेल्लिंगमाश्विने जगदंबिकाम् ॥ मार्गशीर्षे हरिं चैव सर्वान्पौषेपि केचन ॥ १३ ॥

अब देवताविशेषसे मासविशेष लिखतेहैं—दक्षिणायनमें वाराहमूर्ति, मातृका, भैरव, वामन, दुर्गादेवी, नृसिंह इन देवताओंकी प्रतिष्ठा शुभ होतीहै ॥ १२ ॥ श्रावणमें शिवलिंगकी प्रतिष्ठा करै, आश्विनमें जगदंबिकादेवीकी, मार्गशीर्षमें विष्णुकी और पौषमें सब देवताओंकी प्रतिष्ठा करै ऐसा कोई आचार्य कहतेहैं ॥ १३ ॥

अथ प्रतिष्ठायां लग्नबलम्।

केंद्रकोणद्विलाभस्थैः शुभैः पापैश्च सेंदुभिः ॥
आयारिगैः सुतैश्वर्यप्रदा देवाः प्रतिष्ठिताः ॥ १४ ॥
इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसुनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ जलाशयारामदेवताप्रासादप्रतिष्ठाप्रकरणं त्रयोविंशम् ॥ २३ ॥

अब प्रतिष्ठामें लग्नबल लिखतेहैं—केंद्र, त्रिकोण, दूसरे, ग्यारहवें स्थानमें शुभग्रह होंय और चन्द्रमासहित पापग्रह ग्यारहवें तथा छठे स्थानमें होंय तो इस योगमें प्रतिष्ठा कियेहुए देवता, पुत्र और ऐश्वर्यके देनेवाले होतेहैं ॥ १४ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्म्मकृत-भाषाटीकासमलंकृतं जलाशयारामदेवताप्रासादप्रतिष्ठाप्रकरणं त्रयोविंशम् ॥ २३ ॥

अथ मिश्रप्रकरणम् । तत्रादावंगस्फुरणफलम् ।

अंगस्फूर्तिफलं वक्ष्ये दक्षिणांगसमुद्भवम् ॥ पुरुषाणां तु तज्ज्ञेयं वामभागे मृगीदृशाम् ॥ १ ॥ पृथ्वीलाभः शिरःस्थाने स्थानलाभो ललाटके ॥ भ्रियाप्तिः स्याद्भ्रुवोमध्ये भ्रुवोर्युग्मे सुखं महत् ॥ २ ॥ शुभवार्त्ताश्रुतिः कर्णे लोचने प्रियदर्शनम् ॥ दृक्कोणभागयोर्लक्ष्मीरधःपक्ष्मणि संजयः ॥ ३ ॥ गंडदेशे स्त्रियाः सौख्यं नासायां गंधजं सुखम् ॥ उत्तरोष्ठे तु वाग्वादश्चुंबनं चाधरे स्त्रियाः ॥ ४ ॥ हनूदेशे भयं ज्ञेयं मुखे मधुरभोजनम् ॥ भूपाप्तिः कंठदेशे स्याद्ग्रीवायां रिपुजं भयम् ॥ ५ ॥ ज्ञेयः पराजयः पृष्ठे स्कंधे मित्रसमागमः ॥ प्रियाप्तिर्बाहुदेशे स्यान्मध्ये बाह्वोर्धनागमः ॥६॥ द्रविणाप्तिं करे विद्याद्विजयं वक्षसि ध्रुवम् ॥ प्रमोदं च बलं कव्यां पार्श्वे प्रीतिमनुत्तमाम् ॥ ७ ॥ स्थानात्प्रचलनं नाभौ कोशवृद्धिरथांत्रके ॥ कोशाप्तिरुदने नार्या जघने पतिसंगमः ॥ ८ ॥ स्फिग्गुदे वाहनाप्तिः स्याल्लिंगे योषित्समागमः ॥ वृषणे पुत्रलाभश्चाभ्युदयो वस्तिदेशके ॥ ॥ ९ ॥ ऊरौ सद्वाससां प्राप्ती रिपुसंधिस्तु जानुनि ॥ क्वचिद्धानिस्तु जंघायां स्थानाप्तिश्चरणोपरि ॥ १० ॥ पादाधो लाभदं ज्ञेयमंगस्फूर्तिफलं त्विदम् ॥ वामे पुंसां फलं चैतद्बुधैर्ज्ञेयं विपर्ययात् ॥ ११ ॥ नराणां दक्षिणेंगे स्यादंगप्रस्फुरणे तथा ॥

अब मिश्रप्रकरण लिखतेहैं—तहां पहिले अङ्गस्फुरणफल लिखतेहैं—पुरुषोंके दाहिने अङ्ग और स्त्रियोंके वामाअङ्गका विचार करना चहिये ॥ १ ॥ शिरस्थान फडके तो पृथ्वीका लाभ होय, ललाट

फड़के तो स्थानका लाभ होय और भौंहोंका मध्यभाग फड़के तो प्रियवस्तुकी प्राप्ति होय और दोनों भौंहें फड़कें तो महान् सुख होताहै ॥२॥ कान फड़के तो शुभ वार्त्ता सुननेमें आवै और जो नेत्र फड़के तो प्यारेका दर्शन होय और नेत्रोंके दोनों कोणभाग फड़कें तो लक्ष्मीकी प्राप्ति होय और पलकके नीचे फड़के तो जय होतीहै ॥ ३ ॥ गाल फड़के तो स्त्रीका सुख, नाक फड़के तो गन्धका सुख, ऊपरका होठ फड़के तो वाग्विवाद और नीचेका होठ फड़के तो स्त्रीका चुम्बन प्राप्त होताहै ॥४॥ ठोड़ी फड़के तो भय, मुख फड़के तो मधुर भोजन, कंठ फड़के तो भूषणकी प्राप्ति, ग्रीवा फड़के तो शत्रुका भय ॥५॥ पीठ फड़के तो पराजय, कन्धा फड़के तो मित्रसमागम, भुजा फड़के तो प्यारेकी प्राप्ति, भुजाओंका मध्यभाग फड़के तो धनकी प्राप्ति ॥ ६ ॥ हाथ फड़के तो द्रव्यकी प्राप्ति, छाती फड़के तो विजय, कमर फड़के तो आनन्द और बलकी प्राप्ति, पसली फड़के तो अनुत्तम प्रीति ॥ ७ ॥ नाभि फड़के तो स्थानसे चलना, आँतें फड़कें तो खजानेकी वृद्धि, पेट फड़के तो खजानेकी प्राप्ति, स्त्रीकी जंघा फड़के तो पतिसे संगम ॥ ८ ॥ चूतड़ वा गुदा फड़के तो सवारीकी प्राप्ति, लिंग फड़के तो स्त्रीके साथ समागम, फोते फड़कें तो पुत्रलाभ, पेडू फड़के तो उदय होताहै ॥ ९ ॥ जंघा फड़कें तो शुभ वस्त्रोंकी प्राप्ति, घुटने फड़कें तो वैरीसे मिलाप और कभी जंघा फड़के तो हानिभी होतीहै, पाँवका ऊपरी भाग फड़के तो स्थानकी प्राप्ति ॥ १० ॥ (पांवके नीचे) तलवा फड़के तो लाभदायक होताहै. यह अंग फड़कनेका फल कहाहै। पुरुषका वामांग फड़के तो विपरीत फल होताहै, ऐसा बुद्धिमानोंको जान लेना चाहिये ॥ ११ ॥ इसी प्रकार स्त्रियोंका दाहिना अंग फड़के तोभी विलोम जानना अर्थात् अशुभ फल होताहै—

अथांगे तिलोत्पत्तौ कंडूत्यां चेदमेव फलम् ।

अंगस्फूर्तिसमा ज्ञेया लाञ्छनं मशकास्तिलाः ॥ १२ ॥ कंडूतिर्दक्षिणे पाणौ नृपाणां जयदा स्मृता ॥ अन्येषां लाभदा पादतले गमनकारिणी ॥ १३ ॥

अब अङ्गमें तिलोत्पत्ति और खुजलानेसे यही फल लिखतेहैं- पूर्वोक्त अंगोंमें ल्हसा, वा मस्सा, वा तिल होय तो अंग फड़कनेके समानही फल जानै. राजाओंका दाहिना हाथ खुजलावै तो विजय-दायक होताहै और अन्य पुरुषोंका हाथ खुजलावै तो लाभदायक होताहै और पाँवका तलवा खुजलावै तो मार्गचलना पड़ताहै १२॥१३॥

अथ पल्लीपतनफलम् । तत्र शुभाशुभतिथि-वारनक्षत्राणि ।

भूनेत्राऽग्निशरांगाशाविश्वादित्येशसंमिताः १ । २ । ३ । ५ । ६ । १० । १३ । १२ । ११ ॥ तिथयः शुभदा पल्ली-पातेन्यास्त्वशुभा मताः ॥ १४ ॥ सौम्यवाराः शुभाः प्रोक्ताः पापा दुष्टफलप्रदाः ॥ पुष्याऽश्विरोहिणीद्वंद्वपुनर्भो-फाकरत्रयम् ॥ १५ ॥ धनिष्ठांत्यानुराधाख्यं शतभं च शुभप्रदम् ॥ इतोन्यद्भं निषिद्धं स्यात्पल्लीपाते तथा नृणाम् ॥ १६ ॥ दक्षिणांगेखिले पुंसां वामांगे तु मृगीदृशाम् ॥ नाभौ हृद्युदरे चैव मस्तके हनुवर्जिते ॥ १७ ॥ पल्लीपातः शुभो ज्ञेयस्ततोऽन्यत्र न शोभनः ॥ यत्फलं पतने पल्ल्याः शरठारोहणेपि तत् ॥ १८ ॥ शरटस्य प्रपाते च पल्ल्या-रोहे वृथा फलम् ॥ स्नातव्यं स्पर्शने पल्ल्याः शरठस्य सवाससः ॥ १९ ॥ जन्मर्क्षे मृत्युयोगेह्नि दग्धे विष्टयादि-दूषिते ॥ लग्ने पापयुते चंद्रेष्टमेरिष्टं प्रजायते ॥ २० ॥ तत्र

शांतिं जपं होमं रुद्रं मृत्युंजयादिकम् ॥ पंचगव्ययुतं स्नानं कुर्यादाज्यावलोकनम् ॥ २१ ॥

अब पल्लीपतन लिखतेहैं—तहां शुभाऽशुभ तिथिवारनक्षत्रोंको लिखतेहैं—प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, दशमी, त्रयोदशी, द्वादशी, एकादशी ये तिथि छिपकलीके गिरपड़नेमें शुभ और अन्य तिथि अशुभ मानीहैं ॥ १४ ॥ शुभग्रहोंके वार शुभफलदायक और पापग्रहोंके वार अशुभफलदायक होतेहैं. पुष्य, अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति ॥ १५ ॥ धनिष्ठा, रेवती, अनुराधा, शतभिषा ये नक्षत्र पल्लीपातमें मनुष्योंके लिये शुभ और इनसे अन्य नक्षत्र अशुभ होतेहैं ॥१६॥ पुरुषोंके दाहिने सब अंगोंपर और स्त्रियोंके वामांगोंपर छिपकलीका गिरना शुभ होताहै. नाभि, हृदय, उदर, मस्तक इन अंगोंपर छिपकली गिरै तो स्त्रीपुरुष दोनोंके लिये शुभ होताहै ॥ १७ ॥ किन्तु ठोडीपर गिरै तो अशुभ होताहै तथा स्त्रीके दाहिने और पुरुषके वामांगपर गिरै तोभी अशुभ होताहै और जो फल छिपकलीके गिरनेका है वहही फल गिरगटके चढनेकाभी होताहै और गिरगटका गिरना और छिपकलीका चढना निष्फल होताहै. छिपकली स्पर्श करै तो स्नान करना चाहिये और जो गिरगटका स्पर्श होजाय तो वस्त्रोंसमेत स्नान करना चाहिये ॥ १८ ॥ १९ ॥ जन्म नक्षत्रमें, मृत्युयोगमें, दग्धदिनमें, भद्रादि दूषित दिनमें और पापग्रहयुक्त लग्नमें, अष्टमस्थ चंद्रमामें छिपकली गिरै अथवा गिरगट चढे तो अरिष्ट होताहै ॥ २० ॥ उस अरिष्टके निवारणार्थ शान्ति, जप, होम, रुद्राभिषेक, मृत्युंजय मंत्रका जप, पंचगव्यस्नान करै और घीका छायादान करै ॥ २१ ॥

अथ स्वस्यारिष्टज्ञानम् ।

यस्य सूर्यस्वरोजस्रं षोडशाहं वहेत्तदा॥सद्यो मृत्युस्ततो न्यूने न्यूनाहमिति मासके ॥ २२ ॥ एवं वामस्वरे सौख्यं तयो- र्नाशे मृतिः क्षणात् ॥ यस्य सूर्यायते चंद्रः सूर्यश्चंद्रायते तदा ॥ २३ ॥ अह्नोद्वयं त्रयं तस्य षण्मासाभ्यंतरे मृतिः ॥ निष्प्रभं भास्करं पश्येन्म्रियते दशभिर्दिनैः ॥ २४ ॥ जाग्र- त्पश्यति यः स्वप्नं सोपि वर्षं न जीवति ॥ न विंदेत्कर्ण- घोषं यो नासाग्रं रसनां ध्रुवम् ॥ २५ ॥ मेढ्रं वामं न पश्येद्यः षण्मासान्स न जीवति ॥ मणिबंधं ललाटस्थं यदि सूक्ष्मं न पश्यति ॥ २६ ॥ यो दुर्गंधिर्विना हेतुं निःश्रीको वाति- दीतिमान् ॥ कृशांगः स्थूलदेहःस्यात्क्षरत्केशनखोऽपि वा ॥ ॥ २७ ॥ स्वनद्वामेक्षणो वापि मासषट्कं न जीवति ॥ ध्रुवं विष्णोः पदं चैवाऽरुंधतीं मातृमंडलम् ॥ २८ ॥ भूगोलं चंद्रगं चिह्नमपश्यन्नैव जीवति ॥ कफो मज्जति यस्याप्सु पंकादौ खंडितं पदम् ॥ २९ ॥ स्नातस्य प्रागुरः शुष्येद्भू- मालिः स्याच्च मूर्धनि ॥ नो सुभुक्तौ धृतिं धत्ते स्थूलदेहः कृशोथ वा ॥ ३० ॥ विपर्यासः स्वभावस्य नो मात्यास्यं- गुलियत्रम् ॥ ३१ ॥

अब अपना अरिष्टज्ञान लिखतेहैं-जिस मनुष्यका (सूर्यस्वर) दाहिना स्वर निरन्तर सोलह दिन चलै तो उस मनुष्यकी शीघ्रही मृत्यु होतीहै और यदि सोलहदिनसे कम चलै तो कुछदिनकम एक मासमें मृत्यु होतीहै ॥ २२ ॥ इसीप्रकार बायाँस्वर चलै तो सुख होताहै और जो दोनों स्वर बंद होजायँ तो क्षणभरमें मृत्युहोजा- तीहै और जिस मनुष्यका चन्द्रस्वर सूर्यके सदृश होय और सूर्यस्वर चन्द्रके नाईं होय अर्थात् बायाँ स्वर दाहिने स्वरके समयमें और

दाहिनास्वर वायाँ स्वरके समयमें दो वा तीन दिन चलै तो छह महीनेके भीतर उस मनुष्यकी मृत्यु होतीहै और सूर्यको विना तेजका देखै तो दश दिनमें उसकी मृत्यु होतीहै ॥ २३ ॥ २४ ॥ और जो पुरुष जागते समय स्वप्नको देखै तो वह सालभर नहीं जीताहै और जिसको कानका शब्द न सुनपडै अथवा जिस पुरुषको अपनी नासिकाका अग्रभाग, जीभ, भौंहें, वायाँ लिंगभाग न दीखे तो वह छह महीने नहीं जीताहै और ललाट पर रक्खाहुआ हाथका पौंचा सूक्ष्म नहीं दीखै अर्थात् मोटा दीखे अथवा विना कारणके जिस पुरुषसे दुर्गंध निकलै वा शोभारहित होजाय अथवा अत्यंत तेजोयुक्त होजाय वा दुर्वल अंगवाला अत्यंत स्थूल शरीर होजाय अथवा ॥ २५ ॥ २६ ॥ केश और नख आपसे आप गिरनेलगें ॥ २७ ॥ वायां नेत्र वहने लगै तो वह मनुष्य छह महीने नहीं जीताहै. ध्रुव, विष्णुपद, अरुंधती, मातृमंडल, भूगोल और चन्द्रमाका श्याम चिह्न न दीखे तो जीता नहीं है. जिस मनुष्यका कफ जलमें डूबजाय, कीचड आदिमें पांवका चिह्न खंडित दीखै ॥ २८ ॥ २९ ॥ स्नान करनेके पश्चात् सब अंगोंसे प्रथम हृदय सूख जाय अथवा शिरमेंसे धुआँकी पंक्ति निकलै, अच्छे भोजन करनेपरभी धैर्य न रक्खे, मोटाशरीर दुर्वल होजाय ॥ ३० ॥ स्वभाव वदलजाय, भोजनके समय मुखमें तीन अंगुली न समावें तो शीघ्र मृत्यु होतीहै ॥ ३१ ॥

अथ संग्रामेऽशुभचिह्नम् ।

जिह्वाशोपः प्रकंपश्च तांबूले रागहीनता ॥
वर्णाः सगद्गदा यस्य तस्य मृत्यू रणे भवेत् ॥ ३२ ॥

अथ संग्राममें अशुभ चिह्न लिखतेहैं—जीभका सूखजाना, शरीरका काँपना, पान खानेपर मुखका लाल न होना, गद्गदवाणीका निकलना इन चिह्नोंवाले मनुष्यकी मृत्यु युद्धमें होतीहै ॥ ३२ ॥

अथ युद्धे जयलक्षणम् ।

प्रफुल्लितभुजश्चैव रोमांची स्थिरदृग्भटः ॥
धैर्योपेतः समुत्साही विजयी स रणे भवेत् ॥ ३३ ॥

अब युद्धमें जयलक्षण लिखतेहैं-प्रफुल्लित भुजाओंवाला, खडे हुए रोमांचोंवाला, स्थिर दृष्टिवाला, धैर्ययुक्त, उत्साहवाला योधा युद्धमें विजयी होताहै ॥ ३३ ॥

अथ छायापुरुषदर्शनप्रकारस्तत्फलञ्च ।

प्रातः पृथग्गते सूर्ये स्नात्वा प्रत्यङ्मुखो नरः ॥ संपूर्णावयवं तं चेत्संमुखं श्वेतमीक्षते ॥ ३४ ॥ यावदब्दं सुखं क्षेमं विजयं प्राप्नुयात्तदा ॥ पृष्ठे तस्मिञ्छिरोहीने मासषट्कं स जीवति ॥ ३५ ॥ विकर्णे हायनं चैकं व्यंसे चेन्मासससप्तकम् ॥ सरंध्रहृदये सप्त दशमासान्विहस्तके॥३६॥ विपार्श्वे निव्युरस्के द्वौ व्यास्ये मासं हि जीवनम् ॥ द्विदेहदर्शने मृत्युः सद्य एव न संशयः ॥ ३७ ॥

अब छायापुरुषदर्शनप्रकार और उसका फल लिखतेहैं-प्रातःकाल मनुष्य स्नान करके सूर्यकी ओर पीठ और पश्चिमको मुख करके खडा होवे और सामने अपनी छायाको देखे यदि संपूर्ण अंगोंसहित शरीरकी छाया श्वेत दीखे ॥ ३४ ॥ तो वर्षभर सुखक्षेम, विजयकी प्राप्ति रहतीहै और जो विना शिरके छाया दीखे तो छह मास जीताहै ॥ ३५ ॥ और जो विना कानोंकी छाया दीखे तो एक वर्ष और जो विनाकंधोंकी छाया दीखे तो सातमास और छिद्रोंसहित हृदय दीखे तोभी सात मास और विनाहाथोंकी छाया दीखे तो दशमास मनुष्य जीताहै ॥ ३६ ॥ और विनापसलीकी छाया दीखे अथवा विनाहृदयकी छाया दीखे तो दो मास और विनामुखकी छाया दीखे तो एक मास जीताहै और शरीरकी दो छाया दीखें तो निस्संदेह शीघ्रही मृत्यु होती है ॥ ३७ ॥

अथ प्रकारांतरेण फलम्।

मित्रनाशो विपादे च बंधुनाशो विबाहुके ॥ आत्मनाशो विशीर्षे स्यात्सर्वाभावे कुलक्षयः ॥ ३८ ॥ दुर्भिक्षं दारुणं देशे कर्बुरे च पराङ्मुखे ॥ विड्वरं धूम्रिते रूक्षे भिन्ने छिन्ने विघातनम् ॥ ३९ ॥ पीते रुजोऽरुणे हानिः कृष्णे मृत्युः प्रजायते ॥ ४० ॥

अब प्रकारान्तरसे फल लिखतेहैं-विनापैरकी छाया दीखे तो मित्रका नाश और विनाबाहुकी छाया दीखे तो बन्धुका नाश और विनाशिरकी छाया दीखे तो आत्माका नाश और सब छाया न दीखे तो कुलका नाश होताहै ॥ ३८ ॥ और यदि शरीरकी छाया कबरी दीखे तो अपने देशमें दारुण दुर्भिक्ष और धुँआँके रंगकी छाया दीखे अथवा रूखी दीखे तो रोग और जो शरीरकी छाया कटी टूटी हुई दीखे तो देशका विनाश होताहै ॥ ३९ ॥ और पीली दीखे तो रोग, लाल दीखे तो हानि, काली दीखे तो मृत्यु होतीहै ॥ ४० ॥

अथ स्वप्नदर्शनम्।

आद्ये यामे निशि स्वप्नो वर्षेण फलदो भवेत् ॥ द्वितीये मासपट्केन त्रिभिर्मासैस्तृतीयके ॥ ४१ ॥ प्रातः सद्यःफलः स्वप्नस्ततः स्वप्यान्न चेन्नरः ॥ रोगचिंतोद्भवा व्यर्थाश्चिर-पाकादि वीक्ष्यताम् ॥ ४२ ॥

अब स्वप्नदर्शन लिखतेहैं-रात्रिके प्रथम प्रहरमें स्वप्न देखे तो उसका फल सालभरमें होताहै और जो दूसरे प्रहरमें स्वप्न देखे तो छह महीनेमें, यदि तीसरे प्रहरमें स्वप्न देखे तो तीन महीनेमें ॥ ४१ ॥ और चौथे प्रहर प्रातःकालमें स्वप्न देखे.तो तुरन्त फल-

दायक होताहै परन्तु स्वप्न देखकर फिर यदि न सोवै तो उक्तफल होताहै और रोग तथा चिन्तासे उत्पन्न होनेवाले स्वप्न निष्फल होतेहैं वा चिरकालमें फल देनेवाले होते हैं ॥ ४२ ॥

अथ शुभदाः स्वप्नाः ।

सद्राजा ब्राह्मणा देवाः सिद्धगंधर्वकिन्नराः ॥ गुरुः श्वेतांबरा नारी तेषामाशीश्च दर्शनम् ॥ ४३ ॥ प्रासादगजशैलानां श्वेतोक्षासनवाजिनाम् ॥ दर्शनं रोहणं लाभः सिंहस्यारोहणं तथा ॥ ४४ ॥ छत्रध्वजसुवर्णाब्जरत्नरौप्यदधीनि च ॥ यवगोधूमसिद्धार्थाः फलं दीपश्च कन्यकाः ॥ ४५ ॥ श्रीखंडाक्षतदूर्वेक्षुदर्पणाः पुष्पितद्रुमाः ॥ लाभे वा दर्शने चैषां लाभः सौख्यं भवेद्यशः ॥ ४६ ॥ भोजनं रोदनं वीणावादनं नौप्ररोहणम् ॥ अगम्यागमनं विष्टालेपन शस्तमीरितम् ॥ ४७ ॥ आरूढो यो हि जागर्ति सपुष्पं फलितं द्रुमम् ॥ दष्टः श्वेताहिना दक्षे करे स्यात्स महाधनः ॥ ४८ ॥ रुधिरस्नानपानं च सर्पदंशो मृतिर्निजा ॥ शय्या हर्म्यासनानां च ज्वलनं सशिरच्छिदा ॥ ४९ ॥ रक्तस्रावो जलैः स्नानं मरणं मांसभक्षणम् ॥ सुरायाः पयसः पानं प्रशस्तं पायसाशनम् ॥ ५० ॥ कदलीकल्पवृक्षाश्च तीर्थं गंगादिकं सरित् ॥ तोरणं भूषणं राज्यं स्वप्नेश्च ग्रामवेष्टनम् ॥ ५१ ॥ वेदवाद्यादिनिर्घोषो गर्तान्निःसरणं तथा ॥ दंशो वृश्चिककीटानां तडागोद्यानदर्शनम् ॥ ५२ ॥ पीतं रक्तं फलं पुष्पं स्वप्ने प्राप्नोति यो नरः ॥ लभते सोचिरात्स्वर्णं पद्मरागमणिं तथा ॥ ५३ ॥ जयो द्यूते रणे वादे पुरुहूतध्वजेक्षणम् ॥ आत्मनो बंधनं शीर्षं बाह्वोरानंत्यमुत्तमम् ॥ ५४ ॥ अभिषेककरो विप्रो देवो वा छत्रधारणम् ॥

कुरुते महिषीव्याघ्रीगोसिंहीस्तन्यपानकम् ॥ ५५ ॥ स्वनाभौ तृणवृक्षाम्बुपुष्पाणामुद्भवस्तथा ॥ भुवो भूमिधरस्यापि क्रमणोत्क्षेपणे शुभे ॥ ५६ ॥ मणिसौवर्णरौप्यानां पात्रेवांभोजनीदले ॥ योऽश्नाति पायसं स्वप्ने स राज्यमधिगच्छति ॥ ५७ ॥ गौर्लिंगी ब्राह्मणो राजा पिता मित्रं च देवता ॥ यद्वदेत्सदसत्स्वप्ने तत्तथैव प्रजायते ॥५८॥ पूजितं शिवलिंगं च देवता वा यथाविधि ॥ स्वप्ने दृष्टाः प्रयच्छंति नराणां विपुलं धनम् ॥ ५९ ॥ त्यक्त्वा तक्राणि कार्पासं श्वेतवर्णं शुभं मतम् ॥ सर्वं कृष्णमसद्वित्वा गोदेवांश्च गजद्विजान् ॥ ६० ॥

अब शुभद स्वप्न लिखते हैं—सत्पुरुष राजा, ब्राह्मण, देवता, सिद्ध, गन्धर्व, किन्नर, गुरु, श्वेतवस्त्र पहिरीहुई स्त्री इन सबका दर्शन होय ॥ ४३ ॥ देवमंदिर, हाथी, पर्वत, श्वेत बैल, आसन, घोडा इनका दर्शन अथवा इन सबपर चढना वा इनका लाभ होना, सिंहपर चढना ॥ ४४ ॥ छत्र, ध्वजा, सुवर्ण, कमल, रत्न, चांदी, दही, जौ, गेहूं सरसों, फल, दीपक, कन्या ॥ ४५ ॥ चंदन, अक्षत, दूर्वा, ईख, दर्पण, पुष्पित वृक्ष इतनी वस्तुओंका दर्शन अथवा लाभ होय तो द्रव्यलाभ, सौख्य तथा यश मिलताहै ॥४६॥ भाजन, रोदन, वीणाका बजाना, नावपर चढना, अगम्या स्त्रीके साथ मैथुन करना, विष्टामें सन जाना इतनी वस्तु स्वप्नमें होंय तो शुभ होताहै ॥ ४७ ॥ जो पुरुष स्वप्नमें फूलेफले वृक्षपर चढकर जागताहै अथवा स्वप्नमें जिसके दाहिने हाथमें श्वेतसर्प डस लेताहै तो वह पुरुष महाधनी होताहै ॥४८॥ लोहूमें स्नान करना, लोहूका पीना, सर्पका डसना, अपनी मृत्यु होना, शय्या, महल, आसनका जलना, अपने शिरका कटना ॥ ४९ ॥ शरीरसे रुधिरका बहना,

जलसे स्नान करना, अपना मरना, मांस खाना,मदिरा या पानी पीना, खीरखाना ऐसे स्वप्न शुभ होतेहैं ॥ ५० ॥ केला, कल्पवृक्ष, तीर्थ, गंगादि नदी, तोरण, भूषण, राज्य, शुभ अन्नोंसे घिराहुआ ग्राम ॥ ५१ ॥ वेद और बाजेआदिका शब्द होना, गढ़हेसे निकलना, विच्छू कीड़ेआदिका काटना, तड़ाग और बगीचेका देखना, पीले तथा लाल फलफूलोंका प्राप्त होना ऐसे स्वप्न देखनेवाले मनुष्यको शीघ्रही सुवर्ण, पुखराज मणिका लाभ होताहै ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ जुआ वा युद्ध अथवा विवादमें विजय होना, इंद्रध्वजाका देखना, अपना बंधन होना, तथा अपने अनेक शिर और भुजाओंका होना ऐसे स्वप्न उत्तम होतेहैं ॥५४॥ अभिषेक करनेवाला ब्राह्मण अथवा देवता अपने ऊपर छत्र धारण करै और आप भैंस, व्याघ्री, गौ, सिंहनी इनके दूधका पान करै ॥ ५५ ॥ अथवा अपनी नाभिमें तृण, वृक्ष, जल, पुष्प उत्पन्न हुए देखे अथवा पृथ्वी और पर्वतको क्रमसे ऊपरको उड़ताहुआ देखे तो ऐसे स्वप्न शुभ होतेहैं ॥ ५६ ॥ मणि, सुवर्ण, चाँदीके पात्रोंमें अथवा कमलिनीके पत्तेपर जो मनुष्य स्वप्नमें पायस भोजन करताहै सो राज्यको पाताहै ॥ ५७ ॥ गौ, संन्यासी, ब्राह्मण, राजा, पिता, मित्र देवता इनमेंसे कोई एक स्वप्नमें जैसा (शुभाऽशुभ) बुराभला कहै वैसाही फल होताहै ॥५८॥ स्वप्नमें शिव-लिंगका तथा देवताका यथाविधि पूजन और दर्शन करै तो विपुल धनकी प्राप्ति होतीहै ॥ ५९ ॥ मट्टा और कपासको छोडकर संपूर्ण सफेद रंगकी वस्तु शुभ मानीहैं और गौ, देवता, हाथी, ब्राह्मण इनको छोडकर काले रंगकी सब वस्तुएँ अशुभ होतीहैं ॥ ६० ॥

अथाशुभस्वप्नाः ।

तैलाभ्यक्तोथ दिग्वासा आरूढो माहिषं खरम् ॥ उष्ट्रं
कृष्णं वृषं वाश्वं याम्यां गच्छन्न जीवति ॥ ६१ ॥ पाक-

स्थाने वने रक्तपुष्पाढ्ये सूतिकागृहे ॥ विकलांगो विशे-
त्स्वप्ने सोऽसुभिर्विप्रयुज्यते ॥ ६२ ॥ जतुकौंकुमसिह्वादि-
धातवो यस्य मंदिरे ॥ पतंति तरुतस्तस्य गेहदाराश्च चौरभीः
॥ ६३ ॥ नाभेरन्यत्र गात्रेषु तृणपुष्पद्रुमोद्गमः ॥ खरोष्ट्र-
कपिसर्पाद्यैर्यानं स्नेहस्य भक्षणम् ॥ ६४ ॥ कलुषेणांबुना-
मज्जाकर्दमैर्गोमयेन च॥स्नेहेन वपुषो लेपः कर्दमे विनिम-
ज्जनम् ॥ ६५ ॥ पातो दृग्दंतहस्तस्य जिह्वायाश्च त्रयं
तथा ॥ एते शोकप्रदाः स्वप्ना दृष्टा हानिकरा अपि ॥६६॥
स्वप्ने संदोलनं गीतं क्रीडितं स्फोटितं तथा ॥ हसितं
भर्त्सितं श्रोतोवहानीरे ह्यधोगतम् ॥ ६७ ॥ सूर्येंदुध्वज-
ताराणां पातः स्वस्य चितावपि ॥ रज्ज्वाच्छेदः शिरोभागे
कांस्यवर्णस्य धारणम् ॥ ६८ ॥ प्रवेशो जननीगर्भे दुष्ट-
मेतच्च रिष्टदम् ॥ करवीरमशोकं च लतापाशेन बंधनम् ॥
॥ ६९ ॥ कृष्णांबरधरा योषालिंगनं मृत्युकारकम् ॥
आरुह्य पुष्पितान्वृक्षान्यो विचिंत्य निजं वपुः ॥ ७० ॥
भूषयत्यरुणैः पुष्पैः सोपि प्राणैर्वियुज्यते ॥ धृतरक्तांबर-
श्लिष्टो हत्यामाप्नोति मानवः ॥ ७१ ॥ यस्तु धूमोयमात्मानं
व्याप्तं धूमेन चेक्षते ॥ भस्माज्यलोहलाक्षं च स च लक्ष्म्या
वियुज्यते ॥ ७२ ॥ क्रोष्टुकुक्कुटमार्जारगोधावभ्रुभुजंगमाः ॥
मक्षिका वृश्चिका दंशा दृष्टाः स्वप्ने न शोभनाः ॥ ७३ ॥
रत्नद्रव्यायुधोपानच्छय्याभूषाश्च योषिताम्॥ वस्त्रादिप्रियव-
स्तूनामपहारोऽर्थनाशकः ॥ ७४ ॥ विवाहोत्सवयोः शोको
भ्रंशे वा नखकेशयोः ॥ कराद्यवयवानां तु च्छेदने स्वप्रना-
शनम् ॥ ७५ ॥ वपनं श्मश्रुकेशानां नेत्ररुक्पतनं तथा ॥
कूपगर्तदरीध्वांतविवरेषु न शोभनम् ॥ ७६ ॥ कपोतश्येन-

गृध्राद्या ऋक्षकौशिकवायसाः ॥ शृगालशशकश्वानो दृष्टाः स्वप्ने न शोभनाः ॥ ७७ ॥ शष्कुलीकृशराश्राणागुडाऽपूपादिभक्षणम् ॥ गोमयं चोष्णपानीयं स्वप्ने पीतं न शोभनम् ॥ ७८ ॥ रक्तं पुरीषमूत्रे वा स्रवन्मृत्युमवाप्नुयात् ॥ रक्तकृष्णानि वासांसि कृष्णानि च बिभर्ति यः ॥ ॥ ७९ ॥ पितृकार्यं प्रकुर्वाणो म्रियते स न संशयः ॥ भूतप्रेतपिशाचाद्यैः श्वपचैः सह संगतः ॥ ८० ॥ आहूतो वाथ तैर्याम्यां स्वल्पाहैर्म्रियते तु सः ॥ असूर्यं दिवसं रात्रिं विचंद्रां गततारकाम् ॥ ८१ ॥ वृष्टिं योऽकालजां पश्येत्स्वप्ने सोपि विनश्यति ॥ सीसपित्तलकस्तारकांस्यताम्रायसंत्रपुः ॥ ८२ ॥ शुष्कवृक्षौषधं शिल्पी दृष्टाश्चैते न शोभनाः ॥ प्रासादच्छत्रभूधरशिखराणां ध्वजस्य च ॥ ॥ ८३ ॥ पतनं शक्रचापस्य नृपराष्ट्रविनाशनम् ॥ तारं कोलाहलाह्वाननिंदाक्रोशादिसंश्रवात् ॥ ८४ ॥ विंद्याद्राजभयं दंष्ट्रिशृंगिकीशाद्यभिद्रवात् ॥ ८५ ॥

अथ अशुभ स्वप्न लिखतेहैं—स्वप्नमें तैल मलेहुए, नंगा, भैंस वा गधेपर अथवा ऊँट, वा काले बैल, वा काले घोड़ेपर चढ़कर दक्षिण दिशाको जाताहुआ मनुष्य नहीं जीताहै ॥ ६१ ॥ स्वप्नमें रसोईघर वा लालफूलोंसे भरेहुए वन, वा सूतिका गृहमें अंगभंग पुरुष धसे तो उस मनुष्यके प्राणोंका वियोग होताहै अर्थात् मृत्युको प्राप्त होताहै ॥ ६२ ॥ जिसके घरमें वृक्षपरसे लाख, केसर, शिलाजीतआदि धातु गिरें तो उस मनुष्यके घरमें आग लगतीहै और चोरका भय होताहै ॥ ६३ ॥ नाभिको छोड़कर अन्य अंगोंमें तृण, पुष्प, वृक्ष उत्पन्न होंय अथवा गधा, ऊंट, बंदर, सर्प आदि जीवों पर चढ़कर यात्रा करे अथवा तैलघीका पान करे ॥ ६४ ॥ मैले

अशुद्ध जल, अथवा स्याही, चरवी, कीचड़, गोवर, तैल, घीका शरीरमें लेप करे अथवा कीचड, दंदलेमें डूवजाय ॥ ६५ ॥ नेत्र, दांत, हाथ, गिरपड़ें तीन जीभ होजायँ ऐसे स्वप्न देखै तो शोक और हानि होतीहै ॥ ६६ ॥ स्वप्नमें झूलना, गाना, खेलना, फोडना, हँसना, किसीको ललकारना, अथवा नदीके जलमें नीचेको चलाजाना ॥ ६७ ॥ अपनी चितामें सूर्य, चंद्रमा, ध्वजा, ताराओंका गिरना, रस्सीसे शिर काटना काँस्यवर्णका धारण करना ॥ ६८ ॥ माताके गर्भमें प्रवेश करना ऐसे स्वप्न दुष्ट फलदायक तथा रोगदायक होतेहैं कनेर और अशोक वृक्षका देखना, लताओंकी फाँसीमें बंधना ॥ ६९ ॥ कालेवस्त्र पहिरनेवाली स्त्रीका आलिंगन करना ऐसे स्वप्न मृत्युकारक होतेहैं. जो पुरुष पुष्पित वृक्षोंपर चढ़कर अपने शरीरको चिंतवन करताहुआ लाल फूलोंसे सजाताहै सोभी प्राण-वियोग अर्थात् मृत्युको प्राप्त होताहै और लालवस्त्रधारी पुरुष शरी-रसे मिलै तो यह स्वप्न देखनेवाले पुरुषको किसीकी हत्या लग-तीहै ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ॥ जो पुरुष अपने आपको धुवाँके समान अथवा धुँवासे व्याप्त देखे अथवा भस्म, घी, लोह, लाखको देखै तो लक्ष्मीसे वियुक्त होताहै अर्थात् लक्ष्मीकी हानि होतीहै. गीदड़, मुर्गा, विलाव, गोह, न्योला, सर्प, मक्खी, विच्छू, डांस इतने जीवोंको स्वप्नमें देखै तो शुभ नहीं होताहै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ रत्न, द्रव्य, शस्त्र, सवारी, शय्या, स्त्री, वस्त्रादिप्रियवस्तुकी चोरी होजाय अथवा यह वस्तु छिनजायँ तो द्रव्यका नाश होताहै ॥ ७४ ॥ स्वप्नमें विवाह अथवा उत्सव देखे तो शोक होताहै तथा नख और केश गिरपड़ें तो भी शोक होताहै. हाथआदि अंगोंका कटना देखे तो अपने आत्माका नाश होताहै ॥७५॥ स्वप्नमें मूँछ डाढीके वाल मुड़वाना, नेत्रोंका रोग होना, कूप, गड़हा, गुफा, अन्धकार,

विलमें गिरजाना देखै तो शुभ नहीं होताहै ॥ ७६ ॥ कबूतर वाज, गिद्ध, रीछ, उल्लू, कौआ आदि पक्षी, गीदड़, खरहा, कुत्ता, इनको स्वप्नमें देखै तो शुभ नहीं होताहै ॥ ७७ ॥ कचौडी, पूआ, खिचडी, पक्वान्न, गुड आदिका भक्षण करै और गोवर अथवा गरम पानीको स्वप्नमें पीवै तो अशुभ होताहै ॥ ७८ ॥ विष्ठा अथवा मूत्रमें रुधिर टपकता देखै तो मृत्यु होतीहै और जो मनुष्य स्वप्नमें लाल काले अथवा केवल काले वस्त्रोंको पहिनताहै ॥ ७९ ॥ और पितृकार्य श्राद्धादिको कररहा होय ऐसा स्वप्न देखै तो निस्संदेह मृत्युको प्राप्त होताहै स्वप्नमें भूत, प्रेत, पिशाचादि तथा श्वपचोंके साथ मिलाप होय अथवा वे भूतादि दक्षिण दिशाको खैंचकर लेजायँ तो वह पुरुष थोडे दिनोंमें मर जाताहै और जो पुरुष स्वप्नमें विनासूर्यका दिन तथा विनाचन्द्रमा और ताराओंकी रात्रिको देखै अथवा अकालवर्षाको देखै तो वह पुरुष भी विनाशको प्राप्त होताहै और सीसा, पीतल, जस्त, काँसी, तांवा, लोहा और रांगा देखै ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ अथवा सूखा वृक्ष, तथा औषधी, वढईको देखै तो अशुभ फल होताहै. देवमन्दिर, छत्र, पर्वत, शिखर, ध्वजा, इन्द्रधनुप इनका गिरना देखै तो राजाके राज्यका विनाश होताहै. उंचा शब्द, कोलाहलसे पुकारनेका शब्द, निंदाका शब्द, सुनै तो ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ राजभय होता है. सींगवाले, डाढवाले जीवों तथा वंदरोंको भागताहुआ देखै तो भी राजभय होताहै ॥ ८५ ॥

अथ स्वप्नस्य फलव्यवस्था।

ये दृष्टाः स्वं प्रति स्वप्नाः स्वस्यैव फलदाश्च ते ॥
परं प्रति च ते तस्य फलदाः किंचिदात्मनि ॥ ८६ ॥

अब स्वप्नकी फलव्यवस्था लिखतेहैं—जो स्वप्न अपने आत्माके लिये देखे गयेहैं वे अपने लियेही फलदायक होतेहैं और जो

स्वप्न अन्य पुरुपके प्रति देखे गयेहैं वे स्वप्न अन्य पुरुपके लिये विशेपफल और अपने लिये अल्प फलदायक होतेहैं ॥ ८६ ॥

अथ दुष्टस्वप्नदर्शने दोपशांतिः।

दुष्टे त्वालोकिते स्वप्ने निवेद्य ब्राह्मणाय च ॥ आशीर्भिस्तोपितो विप्रैः पुनः स्वप्यान्नरेश्वरः ॥ ८७ ॥ न ब्रूयाच्च पुनः स्वप्नं संस्नायात्पुण्यवारिभिः ॥ कार्यो मृत्युंजयो होमः शांतिं स्वस्त्ययनादिकम् ॥ ८८ ॥ सेवाऽश्वत्थगवां प्रातर्दानं स्वर्णादि शक्तितः ॥ श्रवणं भारतादीनां स्वप्नदोपनिवृत्तये ॥ ८९ ॥ बृहस्पतिप्रणीतं च स्वप्नाध्यायं पठेदपि ॥ ९० ॥

अव दुष्टस्वप्न दर्शनके दोपशांति लिखतेहैं—राजा दुष्ट स्वप्न देखै तो उस स्वप्नको ब्राह्मणोंसे निवेदन करके आशीर्वाद लेवे और फिर प्रसन्नतापूर्वक सोजाय ॥ ८७ ॥ और फिर सोनेसे जागै तो उस स्वप्नको किसीसे नहीं कहै पवित्र जलसे स्नान करै, मृत्युंजय मन्त्रका जप तथा होम, शांति, स्वस्तिवाचनादि कर्म्म करै ॥८८॥ प्रातःकाल पीपल, गौओंका पूजन यथाशक्ति सुवर्णादिका दान, भारतादिका श्रवण करै तो स्वप्नदोपकी निवृत्ति होतीहै ॥ ८९ ॥ अथवा बृहस्पतिप्रणीत स्वप्नाध्यायका पाठ करै तो भी स्वप्नदोपकी निवृत्ति होतीहै ॥ ९० ॥

अथोत्पाताः।

उत्पातास्त्रिविधा ज्ञेया दिव्यभौमांतरिक्षजाः ॥ भेपु दिव्यास्तथा वृक्षध्वजादावंतरिक्षजाः ९१ ॥ भूमौ भौमः क्रमादुग्रमध्यमाल्पफलप्रदाः ॥ ९२ ॥

अव उत्पात लिखतेहैं—दिव्य, भौम, आंतरिक्ष ये तीन प्रकारके उत्पात जानने चाहिये. नक्षत्रोंमें दिव्य उत्पात होताहै. अर्थात् नक्षत्र टूटे, वा ग्रहादिकोंमें युद्ध, वा निर्घात, उल्कापात, गन्धर्व-पुरदर्शन होय तो दिव्य उत्पात कहातेहैं और वृक्ष, वा ध्वजा आदि

टूटकर गिरें तो आन्तरिक्ष उत्पात कहातेहैं ॥ ९१ ॥ और पृथ्वी फटजाय अथवा पृथ्वीमेंसे अकस्मात् जल, वा अग्नि अथवा धुआँ आदि निकलने लगै तो भौम उत्पात कहातेहैं. इन तीनों प्रकारके उत्पातोंका फल क्रमसे उग्र, मध्यम तथा अल्प होताहै ॥ ९२ ॥

अथोत्पातानां संग्रहः ।

भूमिकंपो दिशां दाहो निर्घातो धूलिवर्षणम् ॥ उल्कापातस्तरुच्छेदो नभस्तो वृष्टिरश्मनाम् ॥ ९३ ॥ अंधकारो दिवा विद्युत्पातोप्यर्तुविपर्ययः ॥ विकृतिप्रसवो जंतो रवींद्वोश्च विपर्ययः ॥ ९४ ॥ ग्रहाणां वा युतिर्युद्धं स्वकाले यत्र जायते ॥ वर्षाकालं विना बिंबे रवीन्द्वोः परिमंडलम् ॥ ॥ ९५ ॥ अकस्मात्तु स्थलार्द्रत्वं खग्रासग्रहणद्वयम् ॥ बालस्त्रीद्विजवर्याणां वधः पीडा जनस्य च ॥ ९६ ॥ प्रासादस्य च देवस्य ध्वंसः पातो ध्वजस्य च ॥ ध्वजवक्रातिचारस्थाः सर्वे वा स्वर्क्षगाः खगाः॥ ९७॥ सर्वेप्येकर्क्षगाः खेटा एकर्क्षे शनिवाक्पती ॥ शुक्लपक्षे भृगोरस्तोदयो वा केतुदर्शनम् ॥ ॥ ९८ ॥ मुसलं खगपंक्तिस्थं व्यादिचंद्रार्कदर्शनम् ॥ चुल्ह्याग्न्युद्भवोऽकस्माज्जले धूमादिकं भवेत् ॥९९॥ उलूखलघरट्टादिचलनस्फोटनेपि वा ॥ प्रतिमायाः प्रकंपो वा हसनं रोदनं तथा॥१००॥भुवो विवरमित्याद्या उत्पातास्त्वपरेपि च ॥ ग्रंथांतराच्च ते ज्ञेयाः फलमेषां प्रवच्म्यथ॥१०१॥

अब उत्पातोंका संग्रह लिखतेहैं—भूमिकंप, दिग्दाह (निर्घात) पर्वत आदिका गिरना, धूलिकी वर्षा, उल्कापात, वृक्षका उखड जाना, आकाशसे पत्थरोंका बरसना ॥ ९३ ॥ दिनमें अन्धकार होना, बिजलीका गिरना, ऋतुका वदल होना अर्थात् शरदीमें गरमी और गरमीमें शरदी होय, मूढगर्भ अथवा विकारयुक्त जन्तु-

ओंका जन्म होय और सूर्यचन्द्रमाका विपर्य्यय अर्थात् स्वरूपमें कुछ बदल होय ॥ ९४ ॥ अपने समयपर ग्रहोंका युद्ध होय, वा युति होय और वर्षाकालके विना सूर्यचन्द्रमाके बिंबपर पारस होय ॥ ९५ ॥ अकस्मात् सूखी पृथ्वी गीली होजाय, खग्रास दो ग्रहण होंय, बालक, स्त्री, ब्राह्मणका वध होय, मनुष्योंको पीडा होय ॥ ९६ ॥ देवमंदिर, देवता, ध्वजा टूटकर गिरपडें. ध्वजा वा वक्र या अतिचारमें सब ग्रह स्थित होंय अथवा अपनी अपनी राशियोंपर स्थित होंय ॥ ९७ ॥ अथवा सब ग्रह एक राशिपर स्थितहोंय अथवा शनैश्चर बृहस्पति एकराशिपर स्थित होंय अथवा शुक्लपक्षमें शुक्रका अस्त उदय होय अथवा केतुका दर्शन होय ॥ ९८ ॥ ग्रहोंकी पंक्तिमें मूसलकी स्थिति होय. दो वा तीन अथवा और अधिक चंद्रमा वा सूर्य दीखें, चूल्हेमें अकस्मात् अग्नि पैदा होजाय, जलमें अचानक धुआँ उठने लगे ॥ ९९ ॥ ओखली, ढेंकुरी आदि आपसेआप चलें अथवा फूट जाँय, प्रतिमा काँपने लगे, वा हंसने लगे अथवा रोने लगे ॥ १०० ॥ पृथ्वीमें विल होजाय अर्थात् फट जाय ये सब उत्पात तथा अन्य उत्पात ग्रंथान्तरोंसे जानलेने चाहिये अब इनका फल कहतेहैं ॥ १०१ ॥

अथोत्पातफलज्ञानाय चतुर्विधमंडलम्।

कृत्तिकाभरणीपुष्यमघापूभाविशाखकाः ॥ पूर्वाफाल्गुनिकेतानि भानि सप्ताग्निमंडलम् ॥ १०२ ॥ मूलाऽऽश्लेषाशाताद्रांत्योत्तराभाद्रपदास्तथा ॥ पूर्वाषाढाभिधेतानिसप्तवारुणमंडलम् ॥ १०३ ॥ पुनर्भाफाश्विनीहस्तत्रितयं मृगशीर्षकम् ॥ वायुमंडलसंज्ञानि भानि सप्त स्मृतानि च ॥१०४॥ अभिजिच्चोत्तराषाढाऽनुराधाश्रवणद्वयम् ॥ ज्येष्ठा च रोहिणी भानि सप्त ऐन्द्रस्य मंडलम् ॥ १०५ ॥ भूकं-

पादिमहोत्पातो जायते यत्र मंडले ॥ तत्तत्स्वभावजं द्रव्यं जंतून्देशं च पीडयेत्॥१०६॥ वाय्वग्निमंडलोद्भूता अनिष्टाः परिकीर्त्तिताः ॥ १०७ ॥

अव उत्पातफलज्ञानके अर्थ चतुर्विध मंडल लिखतेहैं-कृत्तिका, भरणी, पुष्य, मघा, पूर्वाभाद्रपदा, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी ये सात नक्षत्र अग्निमंडलके हैं. मूल, आश्लेषा, शतभिषा, आर्द्रा, रेवती, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाषाढ़ा ये सात नक्षत्र जलमंडलके हैं ॥ १०२ ॥ ॥१०३॥ पुनर्वसू, उत्तराफाल्गुनी,हस्त, चित्रा, स्वाति, मृगशीर्ष ये सात नक्षत्र वायुमंडलके हैं ॥ १०४ ॥ अभिजित्, उत्तराषाढा, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, ज्येष्ठा,रोहिणी ये सात नक्षत्र चंद्रमंडलके हैं ॥१०५॥ भूकम्पादि महोत्पात जिस मंडलके नक्षत्रोंमें होंय तो उसीउसी-स्वभावके द्रव्य, जन्तु, देशको पीडा देतेहैं ॥ १०६ ॥ वायु तथा अग्नि मंडलमें उठे हुए उत्पात अनिष्टकारक कहेहैं ॥ १०७ ॥

अथोत्पातानां फलानि ।

प्रजाभीतिर्भुवः कंपे निर्घाते भूपतेर्मृतिः ॥ अवर्षणं च दिग्दाहे दुर्भिक्षं धूलिवर्षणे ॥१०८॥ महर्घं चाश्मनां वृष्टा-वुल्कापाते जनक्षयः ॥ राज्ञां नाशस्तरुच्छेदे विद्युत्पाते-वुशोषणम् ॥ १०९ ॥ ऋतौ विपर्यये रोगो दिवा ध्वांते प्रजाक्षयः ॥ राजविघ्नकरो जंतोर्विकृतिः प्रसवो मतः ॥ ॥ ११० ॥ रवींद्वोश्च विपर्यासे घोरो भवति विग्रहः ॥ युद्धे युद्धं खगेंद्राणां संयुतौ च महर्घता ॥ १११ ॥ रवींद्वोः परिघौ दूरे फलं चान्यत्र मंडले ॥ मध्यमे स्वीय-देशे स्यादन्यदेशे न दुष्यति ॥ ११२ ॥ द्वित्रिमंडलके तद्वत्तत्तत्स्थाननिवासिनाम ॥ छिन्ने खंडफलं चातिदूरेना-स्ति फलं त्विदम् ॥ ११२ ॥ श्वेते भयं च पीते रुग्वृष्टिर्नीले-

ऽरुणे रणः ॥ कृष्णे भूपक्षयो धूम्रे नीहारः परिधौ भवेत् ॥
॥ ११४ ॥ प्रावृट्कालं विनाऽन्यत्र परिधिश्च तदा त्विदम् ॥
तस्मिन्काले तु वृष्टिः स्यात्परिधौ रूक्षितौ सिते ॥ ११५ ॥
अकाले फलपुष्पाणामुदये धान्यनाशनम् ॥ स्थलार्द्रत्वे
स्थले वृष्टिर्महती परिकीर्तिता ॥ ११६ ॥ स्त्रीवधे चातिदु-
र्भिक्षं विप्रबालवधेपि तत् ॥ देवध्वंसे च तद्देशराजध्वंसः
प्रजायते ॥ ११७ ॥ सर्वग्रासे ग्रहे सर्ववस्तूनां च महर्घता ॥
दुर्भिक्षं कुरुते खेटा भौमाद्या वक्रगामिनः ॥११८॥ अति-
चारगताः सर्वे स्वर्क्षे स्वोच्चगता अपि ॥ ज्ञेया भद्रफला श्वे-
कराशिस्था देशनाशकाः ॥११९॥ स्यातामस्तोदयौ शुक्ले
पक्षे चेद्भार्गवस्य च ॥ राजयुद्धं तदा घोरं वृष्टिः स्यात्तु-
निरंतरम् ॥ १२० ॥ जीवार्कपुत्रयोर्योगे दुर्भिक्षं विग्रह-
स्तथा ॥ संग्रामश्चातिदुर्भिक्षं जायते मुसलोदये ॥ १२१ ॥

अब उत्पातोंका फल लिखतेहैं—भूमिकंप होय तो प्रजाको भय, निर्घात होय तो राजाकी मृत्यु, दिग्दाह होय तो वर्षाका अभाव, धूलीकी वर्षा होय तो दुर्भिक्ष होताहै ॥ १०८ ॥ पत्थरोंकी वर्षा होय तो महर्घ, उल्कापात होय तो मनुष्योंका नाश, वृक्ष उखडपडैं तो राजाओंका नाश, विजली गिरै तो (जलशोष) जल सूखजाय ॥ १०९ ॥ ऋतुका विपर्यय होय तो रोग, दिनमें अंधकार होय तो प्रजाका नाश और विकृत जीवोंका जन्म होय तो राजाके लिये विघ्नकारी होताहै ॥ ११० ॥ और सूर्य चंद्रमाका विपर्यय होनेसे घोर विग्रह होताहै, ग्रहोंका युद्ध होय तो जाराओंमें युद्ध, ग्रहोंमें युति होय तो महर्घता ॥ १११ ॥ सूर्य तथा चंद्रमाके मंडलपर पारस दूर वैठे तो उसका फल अन्य देशमें होताहै और जो मध्यम दूरीपर पारस वैठे तो अपने देशमें फल होताहै परन्तु अन्य देशमें दूषित नहीं होताहै ॥ ११२ ॥ और चंद्रमा वा सूर्यपर दो वा तीन

पारस वैठैं तो उनउन देशवासियोंके लिये फल होताहै और जो कटीहुई पारस वैठे तो खंडफल होताहै और जो सूर्य चंद्रमासे वहुत दूरीपर पारस वैठे तो यह फल नहीं होताहै ॥ ११३ ॥ श्वेत वर्णकी पारस वैठे तो भय, पीलेवर्णकी पारस वैठे तो रोग और नीलवर्णकी पारस वैठे तो वर्षा और लालवर्णकी वैठे तो युद्ध, कालेवर्णकी वैठे तो राजाका नाश, धूम्रवर्णकी पारस वैठे तो कुहर होताहै ॥११४॥ वर्षाकालके विना अन्य ऋतुओंमें जो परिधि होय तो यह उक्तफल होताहै और यदि वर्षाकालमें चंद्रमा वा सूर्यकी पारस रूखी वा श्वेतवर्णकी होय तो अवश्य वर्षा होतीहै ॥ ११५ ॥ और जो अकालमें फल वा पुष्पोंका उदय होय तो धान्यका नाश होताहै और जो सूखी भूमी अचानक जलसे गीली होजाय तो महती वृष्टि होतीहै ॥ ११६ ॥ स्त्रीका वध होय तो अतिदुर्भिक्ष तथा ब्राह्मण और वालकोंका वध होनेपरभी अतिदुर्भिक्ष होताहै. देव वा देवस्थानका नाश होय तो राजाका नाश होताहै ॥ ११७ ॥ सर्वग्रासग्रहण पडे तो सव वस्तु महँगी होजातीहैं और मंगलादिक ग्रह वक्री होंय तो दुर्भिक्ष होताहै ॥ ११८ ॥ यदि सव ग्रह अतिचारी होंय अथवा अपनीअपनी राशिके होंय वा उच्चके होंय तो शुभफलदायक जानने और यदि सव ग्रह एकराशिपर स्थित होंय तो देशका नाश होताहै ॥ ११९ ॥ यदि शुक्लपक्षमें शुक्रका उदय और अस्त होय तो राजाओंमें घोर युद्ध और लगातार वर्षा होतीहै ॥ १२० ॥ वृहस्पति और शनैश्चर एकराशिपर स्थित होंय तो दुर्भिक्ष तथा विग्रह होताहै और यदि मुसलका उदय होय तो संग्राम तथा अतिदुर्भिक्ष होताहै ॥ १२१ ॥

अथ केतवः ।

मुसल [illegible] तिधूम्रा [illegible] ये ॥ त [illegible]
खाकारा वियत्स्रोतोनिभास्त [illegible] २ ॥ इत्य [illegible]

१०० सर्वे राष्ट्रभंगकरा मताः ॥ धूम्रकेतूदये मृत्युर्जायते पृथिवीपतेः ॥ १२३ ॥ शिखास्रोतोनिभाः केचिच्छोभनाः परिकीर्तिताः ॥ सितः स्निग्धोऽल्पको दीर्घः शीघ्रोतीव शुभप्रदः ॥ १२४ ॥ वह्निभीरंबुरक्ताभे कृष्णवर्णो मृतिप्रदः ॥ शत्रुध्वजसमो नेष्टो धूम्रवर्णोपि तद्विधः ॥ १२५ ॥ नेष्टो द्वित्रिचतुःशूली ह्युत्पातः कथितो बुधैः ॥ रक्तपंक्तिनिभे स्वर्णवर्णे प्रागपरोदये ॥१२६॥ नृपनाशस्तथैशान्यां तैलाभे च महर्घता ॥ नाशकृत्कथितस्त्र्यस्त्रस्त्र्यस्त्रो वा तारकाप्रभः ॥ ॥ १२७ ॥ कबंधसदृशो याम्यां दुःखदो भूमिचारिणाम् ॥ यावद्दिवसमुत्पातः समुदेति नभस्तले ॥ १२८ ॥ तावन्मासं फलं धत्ते मासैर्वर्षाणि संवदेत् ॥ १२९ ॥

अब केतु लिखतेहैं—मूसलाकार, वा धूम्ररंग वाले, वा दीर्घपुच्छवाले, वा श्वेतशिखावाले, अथवा आसमानी रंगवाले, वा नदीके प्रवाहसरीखे इत्यादि सौ प्रकारके केतु हैं सब केतु राज्यका भङ्ग करनेवाले मानेगयेहैं. धूम्रकेतुका उदय होय तो राजाकी मृत्यु होतीहै ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ कुछ आचार्य कहतेहैं कि, शिखा और नदीके प्रवाहसरीखे केतु शुभ होतेहैं. सफेद, चिकना, छोटा, लंबा, शीघ्र चलनेवाला इतने केतु अति शुभफलदायक होतेहैं ॥ १२४ ॥ जलवर्ण वा लालवर्णके केतुका उदय होय तो अग्निका भय होता है. कालेरंगके केतुका उदय होय तो मृत्युप्रद होताहै. शत्रुध्वजके समान केतुका उदय होय अथवा धूम्ररंगके केतुका उदय होय तो नेष्टफल होताहै ॥ १२५ ॥ दो वा तीन वा चार शूलवाले केतुका उदय होय तो पंडितोंने उत्पात कहाहै. लालपंक्तिके समान अथवा सुवर्णके रंगसमान केतुका उदय पूर्वदिशा वा पश्चिमदिशामें होय तो ॥ १२६ ॥ राजाका नाश होताहै और ईशानदिशामें तेलके रंग-

वाले केतुका उदय होय तो महर्घ होताहै. तीन नोंकों वा तीन कोणोंवाले अथवा नक्षत्रके समान केतुका उदय होय तो प्रजाका नाश होताहै ॥ १२७ ॥ और दक्षिणदिशामें कवंधके समान केतुका उदय होय तो भूमिचारियोंको दुःखदायक होताहै. आकाशमें जितने दिन उत्पात उदय रहताहै ॥ १२८ ॥ उतनेही महीने फल देताहै. या जितने महीनेतक उत्पात उदय रहताहै उतनेही वर्ष फल देताहै ऐसा बतावै ॥ १२९ ॥

अथोत्पाताः ।

आरण्याः पशवो ग्रामं चेद्विशंति निजेच्छया ॥ कुरुते जनशून्यं तमुलूकोपि गृहं विशेत् ॥ १३० ॥ वल्मीकमिंद्रजालं वा यस्य सद्मनि जायते ॥ तदा गेहपतेर्नाशः कपोते वा गृहं गते ॥ १३१ ॥ द्व्यादिचंद्रार्कबिंबे स्याद्रोगो भीती रणे मृतिः ॥ ग्रहाभावे फलं नेष्टं द्व्यादिजीवे तु शोभनम् ॥ ॥ १३२ ॥ धरणीविवरे देशे नृपनाशोरिपोर्भयम् ॥ त्रयोदशदिनः पक्षो यस्मिन्वर्षे भवेत्तदा ॥ प्रजानाशोथ दुर्भिक्षं तथा भूमिभुजां क्षयः ॥ १३३ ॥

अब उत्पात लिखतेहैं—यदि वनेलेपशु अपनी इच्छासे ग्राममें प्रवेश करें तो वह ग्राम मनुष्योंसे शून्य होजाताहै अथवा घरमें उलूक घसे तो वह घरभी मनुष्योंसे शून्य होजाताहै ॥ १३० ॥ जिस मनुष्यके घरमें बँवई वा इंद्रजाल उत्पन्न होय अथवा जंगली कबूतर घरमें बसें तो उस घरके स्वामीका नाश होताहै ॥ १३१ ॥ चन्द्रमा और सूर्यके बिंब दो अथवा दोसे अधिक दीखें तो रोग, भय तथा युद्धमें मृत्यु होतीहै और जो नवग्रह नहीं दीखें तो नेष्ट फल होताहै और जो दो वा दोसे अधिक तीन वा चार बृहस्पति दीखें तो शुभफल होताहै ॥ १३२ ॥ पृथ्वीमें विवर होजाय तो देश

तथा राजाका नाश और शत्रुसे भय होता है और जिस वर्षमें तेरहदिनका पक्ष होताहै उसवर्षमें प्रजाका नाश, दुर्भिक्ष तथा राजाओंका क्षय होताहै ॥ १३३ ॥

अथ निर्घातस्वरूपं तत्फलञ्च ।

प्रचंडवातसंजातनिर्घातपतनं भुवि ॥ पक्षिदीते रुते नेष्टं नृपहा भास्करोदये ॥ १३४ ॥ निर्घातश्चंडशब्दोथ गच्छे-स्तान्नाशयेद्दिशम् ॥ द्विजान्क्षत्रियवैश्यांश्च हन्याद्यामैः क्रमाद्दिवा ॥ १३५ ॥ अस्ते चैवांत्यजानर्थान्प्रहरेश्च यथा-क्रमात् ॥ यामिन्यां धान्यपैशाचान्हन्याच्चैव तुरंग-मान् ॥ १३६ ॥

अब निर्घातस्वरूप और उसका फल लिखतेहैं–प्रचण्डपवनसे उत्पन्न होनेवाला निर्घात पृथ्वीपर गिरै, पक्षी दिनमें रोनेका शब्द करें तो अशुभ होताहै. सूर्यके उदयपर निर्घात गिरे तो राजाकी हानिकारक होताहै ॥ १३४ ॥ निर्घात अथवा प्रचण्डशब्द जिस दिशाको जाय उसी दिशाका नाश होताहै. दिनके प्रथम प्रहरमें निर्घात गिरै या प्रचण्ड शब्द होय तो ब्राह्मणोंका, दूसरे प्रहरमें क्षत्रियोंमें, तीसरे प्रहरमें वैश्योंका, चौथे प्रहरमें शूद्रोंका नाश करताहै. अस्तके समय गिरे तो अन्त्यजोंका, रात्रिके दूसरे प्रहरमें निर्घात गिरै तो द्रव्योंका, तीसरे प्रहरमें गिरे तो धान्य तथा पिशा-चोंका, चौथे प्रहरमें गिरे तो घोडोंका नाश होताहै ॥ १३५ ॥ १३६ ॥

अथोल्कालक्षणं तत्फलञ्च ।

धरणी प्राणिसंचारा घोरसत्त्वा विनिर्मिता ॥ तटत्तटद्रवा विद्युज्ज्वलंती दीर्घवक्रपात् ॥ १३७ ॥ अल्पपुच्छाग्निभा धिष्ण्या द्विहस्तापसमीपगा ॥ तिर्यगूर्ध्वगता श्वेता रक्ता तन्वी तु तारका ॥ उल्कातिविविधाकारा कृष्णपुच्छाति-दारुणा ॥ १३८ ॥

अब उल्कालक्षण और उसका फल लिखतेहैं-धरणी, प्राणिसञ्चारा, घोरसत्त्वा, तटत्तटद्द्रवा, विद्युज्ज्वलंती, दीर्घवक्रपातु, अल्पपुच्छा, अग्निभा, धिष्ण्या, द्विहस्ता, अपसमीपगा, तिर्यग्गता, ऊर्द्ध्वगता, श्वेता, रक्ता,तन्वी, ताडका इत्यादि नानाप्रकारकी उल्का होतीहैं. तिसमें कालीपूंछकी अतिदारुण कहीहै और पूर्वोक्त उल्काओंका स्वरूप उनके नामोंके अर्थसे जानलेना चाहिये ॥१३७॥१३८॥

अथ दिग्दाहफलम्।

दिग्दाहः पीतवर्णश्चेद्भूमिपालं निहंति सः॥ अग्निवर्णो निजं देशं वर्णानुत्तरतः क्रमात् ॥ १३९॥ धूम्रोऽल्पसस्यतां कुर्यात्कृष्णो देशं तु निर्मलम् ॥ प्राच्यां भूमिभुजं हन्यादैशान्यादिविदिक्क्रमात् ॥१४०॥ वैश्याञ्छिल्पिजनांश्चौरान्तुरंगान्क्रमतस्त्वथ॥ निशि स्वर्णनिभः सव्यवायौ खे विमले शुभः ॥ १४१ ॥

अब दिग्दाहफल लिखतेहैं-यदि पीले रंगका दिग्दाह होय तो राजाको मारताहै. अग्निवर्णका दिग्दाह होय तो अपने देशका नाश करताहै. उत्तरदिशामें दिग्दाह होय तो ब्राह्मणोंका, पूर्वमें होय तो क्षत्रियोंका, दक्षिणमें होय तो वैश्योंका, पश्चिममें होय तो शूद्रोंका नाश करताहै ॥ १३९ ॥ धूम्रवर्णका दिग्दाह होय तो खेती थोडी होतीहै. कालेवर्णका होय तो देशकी निर्मलता होतीहै, पूर्वमें होय तो राजाओंका, ईशानमें होय तो वैश्योंका, आग्नेयमें होय तो शिल्पिजनोंका, नैर्ऋत्यमें होय तो चोरोंका, वायव्यमें होय तो घोडोंका नाश करताहै. रात्रिमें दक्षिण पवन चले तथा आकाश निर्म्मल होनेपर सुवर्णके रंगसा दिग्दाह होय तो शुभ होताहै ॥ १४० ॥ १४१ ॥

अथ भूकंपफलम्।

भूकंपो यामतो वर्णक्रमाद्धन्याद्दिवानिशम् ॥ वायुमंडलजो भूपसस्यांबुमगधं तथा ॥ १४२ ॥ ग्रामान्नमुदकं वह्निमंडलोत्थो निहंति च ॥ इंद्रमंडलजो भूपांस्तथा गुर्जरदेशकान् ॥ ॥ १४३ ॥ भूपालांश्चीनदेशांश्च प्रचेतोमंडलोद्भवः ॥१४४॥

अब भूकम्पफल लिखतेहैं–दिनके अथवा रात्रिके समय प्रथम प्रहरमें भूकम्प होय तो ब्राह्मणोंका, दूसरे प्रहरमें होय तो क्षत्रियोंका, तीसरे प्रहरमें होय तो वैश्योंका और चौथे प्रहरमें होय तो शूद्रोंका नाश होता है. वायुमण्डलके नक्षत्रोंमें भूकंप होय तो राजा, खेती, जल तथा मगधदेश का नाश होताहे ॥ १४२ ॥ और अग्निमंडलसे उत्पन्नहुआ भूकंप ग्राम, अन्न, जलका नाश करताहै और इंद्रमंडलका कियाहुआ भूकंप होय तो राजाओं और गुर्जर देशोंका नाश होताहै और वरुणमंडलका किया हुआ भूकंप होयतो चीन देशके राजाओंका नाश होताहे ॥ १४३ ॥१४४॥

अथ रजोवृष्टिदर्शनम्।

रजश्चेच्छादयेद्ग्रामप्रमुखान्नृपतींस्तदा ॥ भयं तद्दिशि धूम्राभे तस्मिन्कृष्णे रुजां भयम् ॥ १४५ ॥ रजः सूर्योदये व्योम च्छादयेद्वित्र्यहं यदा ॥ तदा रोगाः प्रभूताः स्युर्निशामेकां तु भूपतेः ॥ १४६ ॥ नित्यं रात्रिद्वयं नैःस्वं क्षुद्भयं त्रिचतुर्दिनम् ॥ पंचाहं चेद्भयं घोरमृते कालं च शैशिरम् ॥१४७॥

अब रजो वृष्टि लिखतेहैं–यदि धूलि ग्राम,शहर आदिको अथवा राजाओंको ढक देय तो उस दिशामें भय होताहे जिसदिशामें वह धूलि जाय; यदि धूम्ररंगकी वा कालेरंगकी धूलि जिस दिशामें वर्षे उसी दिशामें रोगोंका भय होताहे ॥१४५॥ यदि सूर्योदयके समय धूलि आकाशको ढक देय और दो वा तीन दिन बराबर छाईरहे तो बहुतसे रोग पैदा होतेहैं और जो एकरात्रिभर छाईरहे तो राजाका

नाश होताहै ॥ १४६ ॥ और दोरात्रि बराबर धूलि छाईरहै तो निर्धनता तथा क्षुधाका भय होताहै, शिशिर ऋतुके विना अन्य ऋतुमें तीन वा चार वा पांच दिन धूलि आकाशमें छाईरहै तो घोर भय होताहै ॥ १४७ ॥

अथ गांधर्वनगरं तत्फलञ्च ।

गांधर्वनगरं हंति वर्णाञ्छ्वेतादिवर्णकम् ॥ क्रमात्पूर्वदिशो भूपामात्यसैन्यपुरोहितान् ॥ १४८ ॥ सध्वजं निर्धनं कुर्यादायुधाग्निनिभं भयम् ॥ १४९ ॥

अब गांधर्वनगरका फल लिखतेहैं—अकाशमें गांधर्वनगर श्वेतरँगका होय तो ब्राह्मणोंका, लालरंगका होय तो क्षत्रियोंका, पीलेरँगका होय तो वैश्योंका और श्यामरंगका होय तो शूद्रोंका नाश करताहै और यदि गांधर्वनगर पूर्वदिशामें होय तो राजाका, दक्षिणमें होय तो मंत्रीका, पश्चिममें निकलै तो सेनाका और उत्तरमें निकलै तो पुरोहितका नाश करताहै ॥ १४८ ॥ ध्वजासहित निकलै तो निर्धन और आयुध तथा अग्निके समान निकलै तो भय करताहै ॥ १४९ ॥

अथैषामुत्पातानां फलपाकसमयः ।

षड्भिर्मासैर्भुवः कंपे जायते फलमुक्तवत् ॥ दिग्दाहे विकृतौ भूतौ केतुनिर्घातयोस्त्रिभिः ॥ रजोग्निवर्षणे सद्य उत्पातेऽन्यत्र हायनात् ॥ १५० ॥

अब इन उत्पातोंका फलपाकसमय लिखतेहैं—भूकंप हाेंय तो उक्तफल छह महीनेमें और दिग्दाह तथा विकृतप्राणीका जन्म, केतु, निर्घात ये उत्पात होंय तो इनका फल तीन महीनेमें और रज तथा अग्निकी वर्षा होय तो तुरन्त और अन्य प्रकारका उत्पात होय तो एकवर्षमें फल होताहै ॥ १५० ॥

अथ वृष्टिविकृतिस्तत्फलञ्च ।

अकाले रुङ्नृपार्त्तिश्च सप्ताहं ह्यभ्रकेऽपि च ॥ वर्षणे वाऽसृजो नैःस्वं भवेन्मांसादिभिर्मृतिः ॥ १५१ ॥ भयमंगारकैर्धान्यैः फलाद्यैः स्यान्न संशयः ॥ देशनाशस्तु कोष्णांबुरक्तवृष्टौ प्रजायते ॥ १५२ ॥ दीप्ते सूर्ये प्रतीपा स्याच्छाया चेदीतितो भयम् ॥ इंद्रचापेऽतिवृष्टिः स्याद्व्योम्नि चंडांशुदीपिते ॥ १५३ ॥

अब वृष्टिविकृतिफल लिखतेहैं–अकालवर्षा होय तो रोग, राजपीडा रहतीहै और जो सात दिनतक आकाशमें बादल छाया रहै तोभी यही फल होताहै और जो रुधिरकी वर्षा होय तो निर्धनता होतीहै और यदि मांसादिसहित वृष्टि होय तो मृत्यु होतीहै ॥१५१॥ अंगारोंके साथ वर्षा होय अथवा धान्य तथा फलादिकोंके सहित वर्षा होय तो भय होताहै और गर्म जल अथवा रुधिरकी वर्षा होय तो देशका नाश होताहै ॥ १५२ ॥ दिनमें छाया प्रतिकूल हो अर्थात् उलटी छाया होय तो ईति ⊙ से भय होतीहै और इंद्रधनुष दीखे तो अतिवर्षा होतीहै तथा आकाशमें सूर्यकी अत्यन्त तेजी वा दीप्त किरणें होंय तोभी अत्यंत वर्षा होतीहै ॥ १५३ ॥

अथ पक्षिमृगादिविकृतिस्तत्फलं च ।

ग्राम्यारण्यास्तथा नीरस्थलजा द्युनिशाचराः ॥ प्राणिनो व्यत्ययं याताः स्वचक्रं पीडयंत्यमी ॥ १५४ ॥ संध्याकाले हि दीप्तायां दिशो मार्गे पतत्रिणः ॥ क्रोशंति जंबुकादीनां संघा द्वारे च तद्दिशि ॥ १५५ ॥ विहगा वियति व्यस्तचक्रा यांत इतस्ततः ॥ कुक्कुटोऽस्ते च गोर्नक्तं हेमंते रौति

⊙ अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषकाः शलभाः शुकाः ॥ स्वचक्रं परचक्रं च सप्तैते ईतयः स्मृताः ॥

कोकिलः ॥ १५६ ॥ खराः श्वानोऽथवा स्वैरं प्रक्रीडंतिपर-
स्परम् ॥ ईत्यादिविकृतौ चक्रे पीडा भवति भूयसी ॥१५७॥

अब पक्षिमृगादिविकृति और उसका फल लिखतेहैं—ग्राम, वन, जल, स्थल, दिन, रात्रिके विचरनेवाले जीव विपरीतभावको प्राप्त होंय अर्थात् ग्रामके जीव वनमें और वनके ग्राममें एवं जलके स्थलमें और स्थलके जीव जलमें और दिनके विचरनेवाले रात्रिमें और रात्रिके विचरनेवाले दिनमें विचरैं तो अपने राज्यको पीडा होतीहै ॥ १५४ ॥ संध्यासमय (दीप्तदिशा) पश्चिमदिशाके मार्गमें पक्षी बोलें अथवा पश्चिमदिशाके द्वारपर गीदडोंके समूह रोवैं ॥ १५५ ॥ और आकाशमें पक्षी विपरीत चक्र बाँधकर चारोंओरको इधरउधर उडैं और मुर्गा अस्तके समय, गौ रात्रिमें, कोकिल हेमंत ऋतुमें बोलैं ॥ १५६ ॥ गधे और कुत्ते परस्पर क्रीडा करैं इत्यादि विकार उत्पन्न होंय तो अपने राज्यमें बहुत पीडा होतीहै ॥ १५७ ॥

अथान्येप्यशुभदा उत्पाताः ।

अस्थिक्षिपति गेहे श्वा संमुखोस्ते च रोदिति ॥ यस्य तद्गे-
हनाशः स्यात्षण्मासाभ्यंतरे तदा ॥ १५८ ॥ रौति सूर्यो-
दये श्वा चेद्ग्रामांते सूर्यदिङ्मुखः ॥ भूपनाशस्तदा चास्ते
कृपीशा नाशमाप्नुयुः ॥१५९॥ स्तंभद्वारनिपातश्चेद्धूमोत्प-
त्तिर्विनाग्निना ॥ युध्यन्ते बालकाः स्वैरं काष्ठलोष्टैः परस्प-
रम् ॥ १६० ॥ तदा भूपभयं घोरं विज्ञेयं दीर्घदर्शिभिः ॥
अंगना बालका माता ब्रुवते यत्स्वभावतः ॥ सत्यं तज्जा-
यते यस्माद्गूढा चेयं सरस्वती ॥ १६१ ॥

अब अन्यभी अशुभदायक उत्पात लिखतेहैं—यदि कुत्ता हड्डी लाकर घरमें डालदे अथवा अस्तके समय जिसके घरमें सूर्यके सामने मुख करके रोवे तो छह मासके भीतर उस घरका नाश

होजाताहै ॥ १५८ ॥ यदि कुत्ता सूर्योदयके समय सूर्यकी ओर मुख करके ग्रामके अंतमें रोवै तो राजाका नाश होताहै और जो अस्तके समय सूर्यकी ओर मुख करके रोवै तो खेती करनेवालोंका नाश होताहै ॥ १५९ ॥ मकान, खंभा अथवा दरवाजा गिरपडै, विना-अग्निके धुँआँ उठै और काष्ठ वा मट्टीके ढेलोंसे बालक परस्पर युद्ध करें ॥ १६० ॥ तो दीर्घदर्शियोंने राजाकेलिये घोर भय होताहै ऐसा कहाहै. स्त्री, बालक, माता अपने स्वभावसे जो बात कहैं सो सत्य होजातीहै क्योंकि, यह गुप्त (सरस्वती) बातहै ॥ १६१ ॥

अथोत्पातदोषाऽपवादः ।

स्वस्वशांत्या होमजपैर्विनश्यंति च सर्वशः ॥
सप्ताहाभ्यंतरे वृष्ट्या शुभया वा न दुःखदाः ॥ १६२ ॥

अब उत्पातदोषापवाद लिखतेहैं—अपनी अपनी शांति करनेसे और होम, जप करनेसे सब उत्पातोंका अशुभ फल नाशको प्राप्त होजाताहै और उत्पात होनेसे सात दिनके भीतर जलकी वर्षा होय तो दुःखदायक नहीं होताहै अर्थात् उत्पातका अशुभफल नष्ट होजाताहै ॥ १६२ ॥

अथोत्पातानामुपसंहाराः ।

भ्रांतिश्च धूपकेतुश्च दिग्दाहो भूमिकंपकः ॥ भुवो गर्त्तश्च निर्घात उल्कापातादयोऽपरे ॥ १६३ ॥ यस्मिन्देशे प्रजायन्ते महोत्पाता महाभयाः ॥ प्रजापीडा भवेत्तत्र विनाशः पृथिवीपतेः ॥ १६४ ॥ तदा शांतिर्विधातव्या देशे ग्रामे पुरेऽखिलेः ॥ शांत्या दोषा विनश्यंति त्वन्यथा रिष्टमद्भुतम् ॥ १६५ ॥

अब उत्पातोंका उपसंहार लिखतेहैं—भ्रांति, धूम्रकेतु, दिग्दाह, भूकम्प, भूमिगर्त्त, निर्घात, उल्कापातादि अन्य महोत्पात ॥ १६३

जिस देशमें होतेहैं उस देशमें महाभय, प्रजापीडा, राजाका विनाश होताहे ॥ १६४ ॥ इसी कारण देशमें, ग्राममें, पुरमें सब मनुष्योंको शांति करनी चाहिये. क्योंकि, शांति करनेसे सब दोष विनाशको प्राप्त होजातेहैं अन्यथा अद्भुत अरिष्ट होताहे ॥ १६५ ॥

अथ काकस्पर्शफलम् ।

मस्तके वायसस्पर्शे दारिद्र्यं मरणं कलिः ॥ कट्यां स्कंधे महाभीती रिष्टं चैव प्रकीर्त्तितम् ॥ १६६ ॥ योषितां मस्तके भर्तुर्विनाशो वा सुतस्य च ॥ १६७ ॥

अब काकस्पर्शका फल लिखतेहैं—मस्तकपर कौएका स्पर्श हो जाय तो दारिद्र्य, मरण तथा कलह होतीहै और कमर अथवा कन्धेपर स्पर्श होजाय तो महाभय तथा रिष्ट होताहै ॥ १६६ ॥ और यदि स्त्रियोंके मस्तकपर कौएका स्पर्श होजाय तो भर्त्ता वा पुत्रका विनाश होताहे ॥ १६७ ॥

अथ कदाचित् काकस्पर्शेऽपि दोषाऽभावः ।

वृक्षाधो वाथ सिद्धान्नभक्ष्ये दध्यादियोगतः ॥ काकस्पर्शो न दोषायाऽकस्माच्चेद्दूषणं तदा ॥ १६८ ॥ षण्मासाभ्यंतरे मृत्युः काकमैथुनदर्शने ॥ तद्दोषशांतये ककशांतिं कुर्याद्विचक्षणः ॥ १६९ ॥ कपोतो वायसः पक्षी सरठो मूर्ध्नि चेत्पतेत् ॥ षण्मासाभ्यंतरे तस्य स्वामिनो वा मृतिस्तदा ॥ ॥ १७० ॥ इत्युत्पातलक्षणफलम् ॥

अब कदाचित्काकस्पर्शमें भी दोषाभाव लिखतेहैं—वृक्षके नीचे अथवा पक्वान्नको खाताहुआ अथवा दध्यादिके साथ खाते समय कौआ मस्तकादि अंगोंका स्पर्श करे तो दोष नहीं होताहे ॥ १६८ ॥ और जो काकमैथुनका दर्शन होय तो छह महीनेके भीतर मृत्यु होतीहै, इस कारणसे बुद्धिमानको चाहिये कि, उसका दोष दूर

करनेके लिये काकशांति करै ॥ १६९ ॥ कबूतर, कौआ, छिपकली, कर्केटा इनमेंसे कोईएक शिरपर गिरै तो छह महीनेके भीतर उसके स्वामीकी मृत्यु होतीहै ॥ ९७० ॥ ॥ इति उत्पातलक्षण ॥

अथ छिक्काफलम् ।

औषधेऽध्ययने वादे वाहने शयनेऽशने ॥ बीजवापे बुधैः प्रोक्तं शोभनं सतसु-क्षुतम् ॥ १७१ ॥ मृत्युर्वह्निभयं हानि-स्तुष्टिर्द्रव्यागमः सुखम्॥क्लेशोऽर्थागमनं प्रोक्तं दिक्षु छिक्का-फलं क्रमात् ॥ यामार्द्धसंख्यकाष्ठातो विज्ञेयं च पृथक् पृथक् ॥ १७२ ॥

अब छिक्काफल लिखतेहैं—औषध खाना, वनाना, पढना, वाद-विवाद करना, सवारीपर चढना, शयन करना, भोजन करना, बीज बोना इन सात कार्योंमें पंडितोंने छींकको शुभ कहाहै ॥१७१॥ मृत्यु, अग्नि, भय, हानि, तुष्टि, द्रव्यागम, सुख, क्लेश, अर्थागम पूर्वादि आठ दिशाओंमें क्रमसे छींक होय तो उक्तफल होताहै. आधेप्रहरकी गिनती लगायकर पूर्वादि दिशाओंमें छींकका यह उक्तफल पृथक् पृथक् जानलेना चाहिये ॥ १७२ ॥

अत्रोदाहरणं यथा ।

आद्यर्द्धप्रहरे प्राच्यां द्वितीयेऽग्निदिशि क्रमात् ॥
तृतीये याम्यदिग्भागे फलमुक्तं विचक्षणैः ॥ १७३ ॥

यहां उदाहरण लिखतेहैं—सूर्योदयसे आधे प्रहरके भीतर पूर्वदिशामें छींक होय तो पूर्वोक्तफल जाने. तदनंतर आधे प्रहरके भीतर आग्नेयमें फिर आधे प्रहर दक्षिणमें, उससे आगे आधे प्रहर नैर्ऋत्यमें छींक होय तो पूर्वोक्तफल होताहै. इसी प्रकार सब दिशाओंकी छींकका फल विचार लेना चाहिये. ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ १७३ ॥

अथार्घकांडः । तत्रादौ वर्षे राजादिसप्तनाथविचारः ।

चैत्रे मासि सिते पक्षेऽर्कोदये प्रतिपत्तिथौ ॥ यो वासरः स राजा स्यात्तस्मिन्वर्षे ततः फलम् ॥ १७४ ॥ मेषेऽर्कस्य प्रवेशे यो वारो मंत्री स कथ्यते ॥ चापे धान्यपतिर्ज्ञेय आर्द्रायां जलदाधिपः ॥ १७५ ॥ रसाधिपस्तुलायां स्यात्कर्के सस्यपतिस्तथा ॥ मकरे स्वर्णरत्नादिनीरसेशो बुधैः स्मृतः ॥ १७६ ॥

अब अर्घकांड लिखतेहैं-तहां पहिले वर्षके राजादि सप्तनाथ विचार लिखतेहैं-चैत्रमासके शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको सूर्योदयके समय जो वार होय वहही उस वर्षका राजा होताहै, उससे सालका फल विचारै ॥१७४॥ मेषके सूर्यकी संक्रांति जिस वारमें लगै वहही वार मंत्री कहाताहै और जिस वारमें धनुकी संक्रांति लगै वहही वार धान्यपति कहाताहै और जिस दिन आर्द्रा लगै वह वार मेघाधिप होताहै ॥१७५॥ जिस वारमें तुलाकी संक्रांति लगै वह वार रसाधिप होताहै और कर्ककी संक्रांतिका वार शस्याधिप होता है और मकरकी संक्रांतिका वार स्वर्णरत्नाद्यधिपति तथा नीरसाधिपति होताहै ॥ १७६ ॥

अथ विंशोपकानयनम् ।

शके त्रि ३ घ्ने हृते शैलै ७ र्लब्धं स्थाप्यं पृथक्कचित्॥ शेषं द्वि २ घ्नं शरै ५ र्युक्तं वर्षा स्याच्च ततः पुनः ॥ १७७ ॥ लब्धं शाके प्रकल्प्यैवं कर्तव्या प्रोक्तवत्क्रिया ॥ धान्यं २ तृणं ३ ततः शीत ४ मुष्ण ५ मारुत ६ वृद्धयः ७ ॥ नाशोथ ८ विग्रहश्चैवं जायंते क्रमशस्त्विमे ॥ १७८ ॥

अब विंशोपकानयन लिखतेहैं-शाकेको तीन गुणा करके सात-का भाग देनेसे जो लब्ध मिले उसको कहीं अलग स्थापित करे

शेषरहे अंकको दोगुणा करके उसमें पांच जोड देवे जो अंक होय सो उतने विश्वे वर्षा होतीहै ॥ १७७ ॥ और फिर पूर्वोक्त लब्ध जो कि, अलग स्थापितहै उनको शाका मानकर उक्तवत् क्रिया करनेसे धान्य २, तृण ३, शीत ४, उष्ण ५, वायु ६, वृद्धि ७, नाश ८, विग्रह ९ इन सबके विश्वा इसी क्रमसे बनजातेहैं ॥ १७८ ॥

अथ सर्वनिष्पत्तिर्धर्मसत्यके च।

वर्षादिनवकस्याथ योगे दशहृते पुनः ॥
तल्लब्धं निष्पत्तिरुक्ता सार्धार्द्धं धर्मसत्यके ॥ १७९ ॥

अब सर्वनिष्पत्ति और धर्म तथा सत्य लिखतेहैं—वर्षादिक जो नौ वस्तु हैं तिनके सब विश्वोंको जोडकर दशका भाग देनेसे जो लब्ध मिले सो (निष्पत्ति) सिद्धिके विश्वे निकलतेहैं और फिर निष्पत्तिके आधे विश्वे धर्म और धर्मके आधे विश्वे सत्य बन जाताहै ॥ १७९ ॥

अथ क्षुधाद्यानयनम्।

शाके सप्त ७ गुणे नंदै ९ र्भक्ते लब्धं तु तत्क्वचित् ॥
निधाय द्विगुणं शेषं सैकं क्षुत्स्यात्ततः पुनः ॥ १८० ॥
लब्धं शाकं प्रकल्प्यैवं कर्तव्या प्रोक्तवत्क्रिया ॥ तृपा २
निद्रा ३ तथाऽलस्य ४ मुद्यमः ५ शांतिरेव ६ च ॥१८१॥
क्रोधो ७ दंडो ८ ऽथ मित्रत्व ९ मुत्सवः १० पाप ११-
पुण्यके १२ ॥ १८२ ॥

अब क्षुधादि आनयन लिखतेहैं—शाकेको सात गुणा करके नौका भाग देनेसे जो लब्ध मिले. उसको कहीं अलग स्थापित करदेवे और शेप रहे अंकको दूना करके उसमें एक और जोडदेवे तो क्षुधाके विश्वे निकल आतेहैं ॥ १८० ॥ और उसी लब्धको इसी प्रकार शाका मानकर पूर्वोक्त क्रिया करनेसे तृपा २, निद्रा ३, आलस्य ४, उद्यम ५

शांति ६, ॥१८१॥ क्रोध ७, दंड ८, मित्रत्व ९, उत्सव १०, पाप ११, पुण्य १२ इन सबके विश्वे निकलतेहैं ॥ १८२ ॥

अथ प्रकारांतरेण क्षुधाद्यानयनम्।

शाके वेदै ४ र्हते शैलै ७ र्भक्ते लब्धं च पूर्ववत् ॥ शेषं च द्विगुणं सैकं १ क्षुधा १ तृष्णा २ सुषुप्तिका ३ ॥ १८३ ॥ आलस्य ४ मुद्यमः ५ शांतिः ६ क्रोधो ७ लोभोऽ८ थ भेदकः ९ ॥ दंडोऽथ १० मैथुनं ११ चौर्यं १२ रसनिष्पत्तिरेव १३ च ॥ १८४ ॥ फलनिष्पत्ति १४ रुत्साहः १५ पुण्यं १६ पापं १७ तथैव च ॥ सर्वनिष्पत्ति १८ रित्येवं संपत्तिश्च १९ यथाक्रमात् ॥ १८५ ॥

अब प्रकारान्तरसे क्षुधादिका आनयन लिखतेहैं-शाकेको चारसे गुणा करके सातका भाग देनेपर जो लब्ध मिलैं तिनको अलग रखदेवे और शेषको दूना करके उसमें एक और जोडदेवे तो क्षुधाके विश्वे निकलतेहैं और फिर लब्धांकको शाका मानकर पूर्वोक्त क्रिया करनेसे तृषा २, निद्रा ३ ॥ १८३ ॥ आलस्य ४, उद्यम ५, शांति ६, क्रोध ७, लोभ ८, भेद ९, दंड १०, मैथुन ११, चोरी १२, रसनिष्पत्ति १३, फलनिष्पत्ति १४, उत्साह १५, पुण्य १६, पाप १७, सर्वनिष्पत्ति १८, संपत्ति १९ इन सबके यथाक्रमसे विश्वे निकलतेहैं ॥ १८४ ॥ १८५ ॥

अथोग्रत्वाद्यानयनम् ।

शाकश्चाष्टगुणः ८ खेटै ९ र्भक्तो लब्धं च पूर्ववत् ॥ द्वि २-घ्नं शेषं त्रिभि ३ र्युक्तमुग्रत्वं १ च रसोद्भवः २॥१८६॥ फलोत्पत्ति ३ स्तथा व्याधी ४ रोगनाश ५ स्तथैव च ॥ आचार ६ श्चाप्यनाचारो ७ मृति ८ र्जन्म ९ ततः परम् ॥ १८७ ॥ चौरोपशमनं १० वह्निर्भीति ११ रग्निः शमः १२ क्रमात् ॥

अब उग्रत्वादिका आनयन लिखतेहैं–शाकेको आठगुणा करके नौका भाग देनेसे जो लब्ध मिलै उसको पूर्ववत् अलग लिखदेवे और शेषांकको दूना करके तीन जोडदेवे तो उग्रत्वके विश्वे निकल आतेहैं फिर अलग लिखेहुए पूर्वोक्त लब्धांकको शाका मानकर पूर्वोक्तवत् क्रिया करनेसे रसोत्पत्ति २, फलोत्पत्ति ३, व्याधि ४, रोगनाश ५, आचार ६, अनाचार ७, मृत्यु ८, जन्म ९ और फिर ॥ १८६ ॥ १८७ ॥ चौरोपशमन १०, अग्निभय ११, अग्नि शांति १२ इन सबके विश्वे यथाक्रमसे निकल आतेहैं ॥

अथ शलभाद्यानयनम् ।

शाके त्रिघ्ने ३ हृते नंदै ९ लब्धं स्थाप्यं तदुक्तवत् ॥ द्विघ्नं २ शेषं त्रिभिर्युक्तं शलभो मूषकस्तथा ॥ १८८ ॥ देविकं पीतताम्रे च चक्रं च परचक्रकम् ॥ १८९ ॥

अब शलभादिका आनयन लिखतेहैं–शाकेको तीनगुणा करके नौका भाग देनेसे जो लब्ध मिले उसको पहिलेकी न्याँई अलग स्थापित करदेवे और शेषांकको दोगुणाकरके तीन और जोड़देवे तो टीडीके विश्वे बनजातेहैं और फिर पूर्वोक्त लब्धको शाका मानकर पूर्ववत् क्रिया करनेसे मूषक २ ॥ १८८॥ देविक ३, पीतल४, ताम्र ५, स्वचक्र ६, परचक्र ७ इन सबके विश्वे निकल आतेहैं ॥१८९॥

अथ प्रकारांतरेण शलभाद्यानयनम् ।

शैल ७ घ्नो नव ९ हृच्छाकः शेषं द्विघ्नं २ युतं त्रिभिः ३॥ शलभो १ मूषको २ देवं ३ पीतं ४ ताम्रं ५ स्वचक्रकम्॥ ६ ॥ परचक्रा ७ गमश्चैवं क्रमाज्ज्ञेयं च पूर्ववत् ॥ १९० ॥

अब प्रकारान्तरसे शलभाद्यानयन लिखतेहैं–शाकेको सातगुणा करके नौका भाग देनेसे जो लब्ध मिलें उनको अलग लिख देवे और शेषांकको दोगुणा करके तीन जोडदेवे तो टीड़ीके विश्वे

निकल आतेहैं और फिर लब्धांकको शाका मानकर- पूर्वोक्तवत् क्रिया करनेसे मूषक २, दैव ३, पीतल ४, ताम्र ५, स्वचक्र ६, परचक्र ७ इन सबके विश्वे क्रमसे जानेजातेहैं ॥ १९० ॥

अथोद्भिज्जादिप्राण्यानयनम् ।

शके बाणै ५ र्नगै ७ रर्कै १२ रीशै ११ र्निघ्ने पृथक्पृथक् ॥
रामभक्तेऽवशेषं यद्द्विघ्नं २ पंच ५ युतं क्रमात् ॥ १९१ ॥
उद्भिज्जः १ स्वेदज २ श्चैव जरायुः ३ प्रभवोंऽडजाः ४ ॥ १९२ ॥

अब उद्भिज्जादिप्राणियोंका आनयन लिखतेहैं—शाकेको चारजगह लिखकर क्रमसे पांच ५, सात ७, बारह १२, ग्यारह ११ से अलगअलग गुणा करदेवे और फिर अलगअलग तीनका भाग देवे जो शेषांक बचै उनको अलगअलग दोसे गुणा करके चारों जगह पांचपांच जोड़ देवे तो क्रमसे उद्भिज्ज १, स्वेदज २, जरायुज ३, अंडज ४ इन सबके विश्वे निकल आतेहैं ॥ १९१ ॥ १९२ ॥

अथ युगानां प्रमाणम् ।

द्वात्रिंशद्भिः सहस्रैश्च युक्तं लक्षचतुष्टयम् ॥ प्रमाणं कलिवर्षाणां प्रोक्तं पूर्वमहर्षिभिः ॥ १९३ ॥ युगानां कृतमुख्यानां क्रमान्मानं प्रजायते ॥ कलेर्मानं क्रमान्निघ्नं चतु ४ स्त्रि ३ द्वि २ मितैस्तदा ॥ १९४ ॥ कृतमानम् १७२८००० ॥ त्रेतामानम् १२९६००० । द्वापरमानम् ८६४००० ॥ कलिमानम् ४३२००० ॥ महायुगप्रमाणम् ४३२०००० ॥

अब युगोंका प्रमाण लिखतेहैं—चारलाखबत्तीसहजार ४३२००० वर्ष कलियुगका प्रमाणहै ऐसा पूर्वमहर्षियोंने कहाहै ॥ १९३ ॥ और कलियुगके वर्षप्रमाणको क्रमसे चार, तीन, दोसे गुणा करदेनेपर सत्ययुग, त्रेता, द्वापर युगका प्रमाण बनजाताहै ॥ १९४ ॥ सत्यु-

गका प्रमाण १७२८००० । त्रेतायुगका प्रमाण १२९६००० । द्वापरयुगका प्रमाण ८६४०००। कलियुगका प्रमाण ४३२००० वर्षोंका है॥

अथ गतकलिमानानयनम्।

खगशैलेंदुरामा ३१७९ र्देर्युक्ताः शाकाः कलेर्गताः ॥
तैर्विहीनं कलेर्मानं शेषं शेषकलेर्मितिः ॥ १९५ ॥

अब गतकलिमान लानेकी विधि लिखतेहैं—शाकेमें ३१७९ इकतीससो उनासी जोडदेनेसे कलियुगके गतवर्षोंका प्रमाण निकल आताहै और कलियुगका प्रमाण चार लाख बत्तीस हजारमेंसे गतकलिके वर्ष घटाय देनेसे जो शेष बचे सो कलियुगके शेषवर्ष होतेहैं ॥ १९५ ॥

अथ धर्मानयनम्।

खाभ्रखाभ्रांकवेदैश्च ४९०००० कलिशेषसमा युताः ॥
कलिमानेन संभक्ता यल्लब्धं धर्मराशयः ॥ १९६ ॥

अब धर्म्मानयन लिखतेहैं—कलियुगके शेषवर्षोंमें चार लाख नव्वे हजार ४९०००० जोडकर (कलिमान) चारलाख बत्तीसहजारका भाग देनेसे जो लब्ध मिलें सो धर्मकी राशि अर्थात् विश्वे होतेहैं ॥ १९६ ॥

अथ प्रकारांतरेण धर्मज्ञानम्।

शाकार्द्धं च युतं जीवराशिभिस्त्र्युद्धृते शके ॥
लब्धं पुण्यं च तन्न्यूना विंशतिः पापमुच्यते ॥ १९७ ॥

अब प्रकारान्तरसे धर्मज्ञान लिखतेहैं— शाकेके आधेको बृहस्पतिकी राशिमें जोड़कर तीनका भाग देनेसे जो लब्ध मिले सो पुण्य और उसी पुण्यको बीसमें घटादेवे तो शेषको पापके विश्वे जाने ॥ १९७ ॥

अथायव्ययानयनार्थे ध्रुवांशकाः ।

रसा ६ स्तिथ्यो १५ गजाः ८ शैलचंद्रा १७ नंदेंदव १९ स्तथा ॥ स्वर्गा २१ दिशः १० क्रमाज्ज्ञेया रव्यादीनां ध्रुवा इमे ॥ १९८ ॥

अब आयव्यय आनयनार्थं ध्रुवांशक लिखतेहैं–छह ६, पंद्रह १५ आठ ८, सत्रह १७, उन्नीस १९, इक्कीस २१, दश १० ये ध्रुवांक क्रमसे सूर्यादि ग्रहोंके कहेहैं ॥ १९८ ॥

अथ मेषादिराशीनामायव्ययाः ।

निजराशिपतेर्वर्षस्वामिनो ध्रुवयोगके ॥ त्रिघ्ने ३ वाण ५ युते भक्ते तिथिभिः १५ शेषसंमिताः ॥ १९९ ॥ आयाः स्युस्त्रिगुणे ३ लब्धे शरा ५ ढ्यास्तिथिभि१५र्हृते ॥ शेषे व्ययाः क्रमात्स्वस्य राशीनां कथिता बुधैः ॥ २०० ॥

अब मेषादिराशिओंके आयव्यय लिखतेहैं–अपनी जन्मराशिके स्वामीका ध्रुवांक और संवत्सरके राजाका ध्रुवांक इन दोनोंको जोडकर तीनगुणा करनेपर जो अंक होय उसमें पांच जोड़कर १५ पंद्रहका भाग देनेसे जो शेष बचे वह (आय) लाभ होताहै और पंद्रहका भाग देनेसे जो लब्ध मिले उनको तीनगुणा करके पाँच जोडदेवे और पंद्रहका भाग देवे जो शेष बचे सो खर्च होताहै इसी प्रकार क्रमसे अपनी अपनी राशियोंका आयव्यय जाने ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ ११९ ॥ २०० ॥

अथ शकात्सुभिक्षादिज्ञानम् ।

शके त्रिघ्ने ३ युते वाणैः ५ शैलै ७ र्भक्तेऽथ शेषकैः ॥ क्रमान्मध्यं १ सुभिक्षं २ च दुर्भिक्षं ३ च सुभिक्ष ४- कम् ॥ २०१ ॥ महर्घं ५ समता ६ ज्ञेया चैकतो रौरवं तु खे ० ॥ २०२ ॥

अब शाकेसे सुभिक्षादिज्ञान लिखतेहैं—शाकेको तीनगुणा करके पांच जोडदेवे फिर उस योगांकमें सातका भाग देनेसे एक बचे तो मध्यम १, दो बचें तो सुभिक्ष २, तीन बचें तो दुर्भिक्ष ३, चार बचें तो सुभिक्ष ४, पांच बचें तो महर्घ ५, छह बचें तो समता ६ और शून्य बचे तो घोरता जाने ॥ २०१ ॥ २०२ ॥

अथ संवत्सरात्सुभिक्षादिज्ञानम् ।

त्रिघ्ने ३ संवत्सरे युक्ते शरै ५ र्भक्तेऽथ सप्तभिः ७ ॥ चतुर्द्विकमिते ४ । २ शेषे सुभिक्षं विपुलं भवेत् ॥ २०३ ॥ त्रि ३ पंचके ५ च दुर्भिक्षं षड्भू ६ । १ संख्ये च मध्यमम् ॥ शून्ये तु रौरवं ज्ञेयं फलं वर्षे बुधैः स्मृतम् ॥२०४॥

अब संवत्सरसे सुभिक्षादिज्ञान लिखतेहैं—संवत्सरको तीनगुणा करके उसमें पांच जोडदेवे और फिर सातका भाग देनेसे चार, दो शेष बचें तो बहुत सुभिक्ष होताहै ॥ २०३ ॥ और तीन, पांच बचें तो दुर्भिक्ष और छह वा एक बचे तो मध्यम और शून्य शेष बचे तो रौरव फल जाने ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ २०४ ॥

अथ प्रकारांतरेण संवत्सरात्फलम् ।

द्वि २ घ्नः संवत्सरो रामै ३ र्हीनो भक्ते नगै ७ स्ततः ॥ शेषे बाणमिते युग्मे २ सुभिक्षं हायने भवेत् ॥ २०५ ॥ वेदे ४ चंद्र १ मिते ज्ञेयं दुर्भिक्षं खे० तु रौरवम् ॥ रसा ६ ऽनल ३ मिते मध्यमेतद्वर्षफलं बुधैः ॥ २०६ ॥

अब प्रकारान्तरसे संवत्सर परसे सुभिक्षादि ज्ञान लिखतेहैं—संवत्सरको दूना करके उसमेंसे तीन घटाय देवे शेषमें सातका भाग देनेसे पांच वा दो बाकी बचें तो उस वर्षमें सुभिक्ष होताहै ॥ २०५ ॥ और चार अथवा एक शेष बचे तो दुर्भिक्ष और शून्य

वचे तो भयंकर और छह वा तीन शेष वचें तो मध्यम फल होताहै ॥ २०६ ॥

अथ वर्षे राजादीनां संक्षेपात्फलम् ।

राजाऽमात्यादिकानां च वच्मि संक्षेपतः फलम् ॥ गुरुशुक्रेंदवोऽधीशाः संति चेज्जनसौख्यदाः ॥ २०७ ॥ सुभिक्षं शोभना वृष्टिर्देशे स्वास्थ्यं प्रकुर्वते ॥ शनिभौमौ प्रकुर्वातां दुर्भिक्षं विग्रहं भयम् ॥२०८॥ अल्पसौख्यप्रदः सौम्यः खलु-दुःखप्रदो रविः ॥ फलं सविस्तरं चैषां विज्ञेयं संहितादिषु ॥ २०९ ॥ तथा प्रभवमुख्यानां हायनानां पृथक्पृथक् ॥ नास्माभिर्लिख्यते चात्र ग्रंथविस्तरभीतितः ॥ २१० ॥

अब वर्षमें राजादिकोंका संक्षेपसे फल लिखतेहैं-यदि बृहस्पति, शुक्र, चंद्रमा इनमेंसे कोई वर्षका राजा होय तो मनुष्योंको सुखदायक होताहै ॥ २०७ ॥ और सुभिक्ष, शोभन वर्षा, देशमें (स्वास्थ्य) नीरोगता रहतीहै और शनि वा मङ्गल संवत्सरके राजा होंय तो दुर्भिक्ष, विग्रह, भय रहताहै ॥२०८॥ बुध राजा होय तो अल्पसौख्यदायक होताहै, सूर्य राजा होय तो दुःखदायक होतेहैं; इन सब ग्रहोंका विस्तारसहित फल संहितादि ग्रंथोंमेंसे जान लेना चाहिये॥ ॥ २०९ ॥ तथा पृथक्पृथक् प्रभवादिक संवत्सरोंकाभी फल संहितादि ग्रंथोंसेही जानना चाहिये हमने यहांपर ग्रंथविस्तारके भयसे नहीं लिखाहै ॥ २१० ॥

अथ दीपमालिकायोगे नेष्टं फलम् ।

दर्शे चायुष्मतो स्वातौ पापाहे मासि कार्त्तिके ॥
प्रदोषे चेत्प्रजापीडा राजयुद्धाद्युपद्रवाः ॥ २११ ॥

अब दीपमालिकाके योगमें नेष्टफल लिखतेहैं-कार्त्तिकमासमें अमावास्याके दिन प्रदोषके समय स्वातीनक्षत्र और पापग्रहका वार

तथा आयुष्मान् योग होय तो प्रजापीडा तथा राजयुद्धादि उपद्रव होतेहैं ॥ २११ ॥

अथ ज्येष्ठप्रतिपदि योगः।

ज्येष्ठे शुक्ले तिथावाद्ये चंद्रेज्यभृगुवासरे ॥
सुभिक्षं शोभना वृष्टिर्दुर्भिक्षं पापवासरे ॥ २१२ ॥

अब ज्येष्ठप्रतिपदाके योग लिखतेहैं—ज्येष्ठमासमें शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको चंद्र वा बृहस्पति वा शुक्र वार होय तो सुभिक्ष तथा सुन्दर वर्षा होतीहै और पापवार होय तो दुर्भिक्ष होताहै ॥ २१२ ॥

अथाषाढद्वितीयानवमीयोगः।

आषाढे शुक्लपक्षे च द्वितीयानवमीदिने ॥ चंद्रेज्यभृगुवाराः स्युः सुवृष्टिश्च समर्घता ॥ २१३ ॥ बुधे साम्यं रवौ तापः कुजे वृष्टिर्न जायते ॥ शनिवारे प्रजापीडा दुर्भिक्षं रौरवं तदा ॥ २१४ ॥

अब आषाढ शुक्लमें द्वितीया और नवमीका योग लिखतेहैं—आषाढमासमें शुक्लपक्षकी द्वितीया वा नवमीके दिन चंद्रमा, बृहस्पति वा शुक्र वार होय तो सुवृष्टि तथा समर्घता होतीहै ॥ २१३ ॥ और बुधवार होय तो समता, रविवार होय तो ताप, मङ्गलवार होय तो अवृष्टि, शनिवार होय तो प्रजापीडा, दुर्भिक्ष तथा भयंकरता होतीहै ॥ २१४ ॥

अथ शनिराशिफलम्।

गुर्जरेऽजे १ शनौ पीडा प्रभासे च वृषस्थिते २॥ मरुस्थले च युग्मर्क्षे ३ कर्के ४ काश्मीरमंडले ॥ २१५ ॥ शक्रप्रस्थे च सिंहर्क्षे ५ कन्यास्थे ६ मालवे तथा ॥ तुलादित्रितये पृथ्व्यां दुर्भिक्षं जनपीडनम् ॥ सुभिक्षं मकरे कुंभे मीने सर्वप्रजाक्षयः ॥ २१६ ॥

अब शनिराशिका फल लिखतेहैं-मेषराशिका शनैश्चर होय तो गुर्जरदेशमें पीडा, वृषराशिका शनैश्चर होय तो प्रभासक्षेत्रमें पीडा, मिथुनराशिका शनैश्चर होय तो मारवाडदेशमें पीडा, कर्कका शनैश्चर होय तो काश्मीरदेशमें पीडा ॥ २१५ ॥ सिंहराशिका होय तो दिल्लीके देशमें, कन्याका होय तो मालवदेशमें; तुला, वृश्चिक, धनुका होय तो पृथ्वीपर दुर्भिक्ष तथा मनुष्यपीडा; मकर कुम्भका शनैश्चर होय तो सुभिक्ष और मीनका शनैश्चर होय तो सर्वप्रजाका नाश होताहै ॥ २१६ ॥

अथ कूर्मचक्रम् ।

कूर्मचक्रे शनिर्मध्ये ततः प्राच्यादिषु क्रमात् ॥ नाशयेत्क्रमतो देशान्कृत्तिकाद्यैस्त्रिभिस्त्रिभिः ॥ २१७ ॥ निजाधिष्ठितभैर्देशानंतर्वेदिमुखां ३ स्ततः ॥ मागधांश्च ६ कलिंगा-९ दीनवन्तिक १२ मुखांस्तथा ॥ २१८ ॥ ततः कौंकणपौंड्रा १५ दीन्सिंधुसौराष्ट्र १८ कादिकान् ॥ पौलिंदचीनकाद्यांश्च कुरुकाश्मीरमत्स्यकान् ॥ २१९ ॥ खसवाह्लीकलाट२७याद्यन्नवखंडानिमांस्तथा ॥ दृष्ट्वा स्वाधिष्ठितादेशादन्यांश्च यमदिग्गतान् ॥ २२० ॥

अब कूर्मचक्र लिखतेहैं-नौ कोठेका कूर्मचक्र लिखे और कृत्तिकादि तीनतीन नक्षत्र मध्यभागसे लेकर पूर्वादि आठों दिशाओंमें क्रमसे लिखदेवे जिस खंडके तीननक्षत्रोंमेंसे किसी नक्षत्रपर शनैश्चर अधिष्ठित होय उसी देशका नाश करताहै तथा अपने अधिष्ठित देशसे अन्य दक्षिणदेशोंकाभी नाश करताहै. यहां-पर सत्ताईस नक्षत्रोंके नौखंड वर्णन कियेगयेहैं जैसे मध्यखंड अन्तर्वेद्यादिक ३, पूर्वदिशाका खंड मागधादिक ६, अग्निकोणका खंड कलिंगादिक ९, दक्षिणका खंड अवन्तिकादिक १२ ॥ २१७ ॥ ॥ २१८ ॥ नैर्ऋत्यका खंड कौंकण पौंड्रादिक १५, पश्चिमकाखंड

सिंधु सौराष्ट्रकादिक १८, वायव्यका खंड पौलिंद चीनादिक २१, उत्तरका खंड कुरु, काश्मीर, मत्स्यकादिक २४ ॥२१९॥ और ईशानका खण्ड, खस वाह्लीक, लाटादिकदेशहैं सो नीचे चक्रमें समझलेने चाहिये ॥ २२० ॥

रेवती. अश्विनी, भरणी, खस वाहिकलाटादि देश ईशानखंड	आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य मगधादि देश. पूर्व खंड.	आश्लेषा, मघा, पूं फा. कलिंगादि देश आग्नेयखंड.
शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तरा. कुरु काश्मीर मत्स्यादिदेश. उत्तरखंड.	कृ० रो० मृ अन्तर्वेद्यादिक देश. मध्यखंड.	उत्तराफा. हस्त, चित्रा. अवन्तिकादि देश दक्षिणखण्ड.
उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा पौलिंद, चीनकादि देश वायव्यखंड.	ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा सिंधु सौराष्ट्रकादि देश ~ पश्चिमखंड.	स्वाति-विशाखा-अनुराधा, कोंकण पौंड्रकादिदेश नैर्ऋत्यखंड

अथ शनिचारप्रसंगाच्छनिचक्रम्।

शनिभाद्वानिकृच्चैकं १ मुखेऽथो वेदभे ५जयः ॥ भुजे दक्षे ततः पड्भि ११ रंघ्रैश्च भ्रमणं ततः ॥२२१॥ भुजे वामेऽब्धि १५ भे रोगो हृत्स्थैः शरमितैः २० श्रियः ॥ त्रिभिर्भे २३ मस्तके राज्यं नेत्रे ह्युडुद्वये २५ सुखम् ॥ भद्वये २७ गुह्यगे मृत्युः शनिचक्रे फलं क्रमात् ॥ २२२ ॥

अब शनिचारके प्रसंगसे शनिचक्र लिखतेहैं—शनिके नक्षत्रसे जन्मके नक्षत्रतक गिने प्रथम एक नक्षत्र शनैश्चरचक्रके मुखमें लिखे जिसका फल हानिकारक है और फिर चार नक्षत्र दाहिनी भुजामें लिखे जिनका फल विजय और फिर छह नक्षत्र चरणोंमें लिखे जिनका फल भ्रमण ॥ २२१ ॥ और फिर चार नक्षत्र बांई भुजामें लिखे जिनका फल रोग और फिर पांचनक्षत्र हृदयमें लिखे जिनका

फल लक्ष्मी और फिर तीन नक्षत्र मस्तकमें लिखे जिनका फल राज्य और फिर दो नक्षत्र नेत्रोंमें लिखे जिनका फल सुख; तदनन्तर दो नक्षत्र गुदामें लिखे जिनका फल मृत्यु होतीहै ॥ २२२ ॥

अथ ग्रहचारवशान्महर्घादि ।

सर्वधान्यं महर्घं स्याच्छुक्रक्षेत्रगते कुजे ॥ राहौ मंदे च दुर्भिक्षं शुभं चंद्रग्रहे स्थिते ॥ २२३ ॥ बुधर्क्षे भास्करे चंद्रे विरोधो धरणीभुजाम् ॥ तत्रार्कनंदने चंद्रे सर्वधान्यमहर्घता ॥ २२४ ॥ शनौ राहौ शनिक्षेत्रे तृणाऽभावात्पशुक्षयः ॥ विरोधो भूभुजां भौमे वृष्टिः स्याद्भूयसी बुधे ॥ २२५ ॥ कुजर्क्षे राहुमंदज्ञैर्नश्यंति पशवो नराः ॥ महर्घं भृगुपुत्रेण शेषैः खेटैः फलं शुभम् ॥ २२६ ॥ क्रूरा वक्रगताः खेटाः सौम्या यद्यतिचारगाः ॥ तदा भूपक्षयं युद्धं जगद्घोरभयार्दनम् ॥ २२७ ॥

अब ग्रहचारके वशसे महर्घादि लिखतेहैं–(शुक्रक्षेत्र) तुला, वा वृषराशिका मंगल होय तो सर्वधान्य मँहगे रहतेहैं और यदि शुक्रक्षेत्री राहु वा शनैश्चर होय तो दुर्भिक्ष रहताहै और जो (चंद्रमा की राशि) कर्कके मंगल, राहु, शनैश्चर होंय तो शुभफल होताहै ॥ २२३ ॥ यदि (बुधकी राशि) कन्या मिथुनके सूर्य तथा चंद्रमा होंय तो राजाओंमें विरोध होताहै और जो बुधकी राशिके शनैश्चर चंद्रमा होंय तो सब धान्य महँगे रहतेहैं ॥ २२४ ॥ शनि वा राहु (शनैश्चरकी राशि) मकर वा कुंभके होंय तो तृणका अभाव होनेसे पशुओंका नाश होताहै और यदि शनिकी राशिपर मंगल होय तो राजाओंमें विरोध होताहै और बुध होय तो बहुत वर्षा होतीहै ॥ २२५ ॥ मंगलकी राशिपर शनैश्चर, राहु, बुध होय तो पशु तथा मनुष्योंका नाश होताहै और मंगलकी राशिपर शुक्र होय

तो सब भाव महंगा रहताहै और शेषग्रह मंगलकी राशिपर होंय तो शुभ फल होताहै ॥ २२६ ॥ यदि क्रूरग्रह वक्रीहोंय और सौम्य-ग्रह अतिचारी होंय तो राजाओंका नाश तथा युद्ध होताहै और जगत्के लिये घोरभय तथा पीडा होतीहै ॥ २२७ ॥

अथ प्रतिमासमर्घज्ञानाय चंद्रोदयज्ञानम् ।

ऊर्ध्वभागे तु विज्ञेया राहुराशिप्रकोष्टकाः ॥ तिर्यग्भागे तु विज्ञेया रविराशिप्रकोष्टकाः ॥ २२८ ॥ चक्रे तत्रार्कराह्वोश्च घटिकाः परिकीर्तिताः ॥ प्रोह्य दर्शघटीः षष्ट्यां ६० शेषा घट्यो युतास्तथा ॥ २२९ ॥ दिनमानघटीभिस्ता घटीभ्यो राहुसूर्ययोः ॥ अधिकाश्चेत्तदा चंद्रदर्शनं प्रतिपद्यते॥२३०॥

अब प्रतिमासमें अर्घज्ञानके लिये चंद्रोदयज्ञान लिखतेहैं—ऊर्द्ध्व-भागमें राहुकी राशिके कोठे जानै और तिरछे भागमें सूर्यकी राशिके कोठे जानै इस प्रकार बनेहुए चक्रमें सूर्य और राहुकी घटी कही-गईहैं सिद्धान्तग्रंथोंमें इस चक्रका वर्णनहै अमावास्याकी घटियोंको साठिमेंसे घटादेवे शेषरही घटियोंमें दिनमानकी घटी जोड़देवे चक्रलिखित राहुसूर्यकी घटियोंके जोड़से पूर्वोक्त घटियोंका जोड़ अधिक होय तो शुक्लपक्षकी प्रतिपदाके दिन चंद्रोदयका दर्शन होताहै और जो कम होय तो चंद्रोदयका दर्शन नहीं होताहै २२८॥२२९॥२३०

अथ चंद्रस्य शृंगोन्नतिस्तत्फलञ्च ।

चंद्रो याम्योन्नतो मीनमेषगोऽभ्युदितो मतः ॥ समशृंगो वृषे कुंभे शेषभेषूत्तरोन्नतः ॥ २३१ ॥ याम्योन्नते च दुर्भिक्षं विड्वरः स्यात्समे विधौ ॥ सुभिक्षं सौम्यदिग्भागे चोन्नते मृगलाञ्छने ॥ २३२ ॥ शूलाकारे विधौ भीतिः प्रोदिता महती रुता ॥ २३३ ॥

अब चंद्रकी शृंगोन्नति और उसका फल लिखतेहैं-मीन, मेषका चंद्रमा होय तो दक्षिणशृंगोन्नत कहाहै. वृष, कुंभ राशिके चंद्रमाका उदय होय तो समशृंग होताहै शेषराशियोंके चंद्रमाका उदय होय तो उत्तर शृंगोन्नत होताहै ॥ २३१ ॥ दक्षिणोन्नत चंद्रमा होय तो दुर्भिक्ष और समशृंगोन्नत चंद्रमा होय तो मध्यमफल और उत्तर-शृंगोन्नत चंद्रमा होय तो सुभिक्ष होताहै ॥२३२॥ और त्रिशूलाकार चंद्रमाका उदय होय तो महाभय और पुकार होतीहै ॥ २३३ ॥

अथ रवेर्वामदक्षिणभागयोश्चंद्रोदयफलम् ।

यदि शुक्लद्वितीयायां वामे चंद्रोदयो रवेः ॥ शुभं तदाखिले मासि नो शुभं दक्षिणोदये ॥ २३४ ॥ चंद्रोदये बृहत्संज्ञे भवेद्धान्यं समर्घकम् ॥ जघन्यभे महर्घं च ज्ञेयं धान्यं समे समम् ॥ २३५ ॥

अब रविके वामदक्षिणभागमें चन्द्रोदयफल लिखतेहैं- यदि शुक्लपक्षकी द्वितीयाके दिन सूर्यसे वाम भागमें चंद्रमाका उदय होय तो संपूर्णमासमें शुभ फल होताहै और सूर्यसे दक्षिणभागमें चंद्रमाका उदय होय तो शुभ फल नहीं होताहै ॥ २३४ ॥ बृहत्सं-ज्ञक नक्षत्रोंमें चंद्रमाका उदय होय तो अन्नसस्ता और जघन्यसं-ज्ञक नक्षत्रोंमें चंद्रमाका उदय होय तो अन्नका भाव महँगा और समसंज्ञक नक्षत्रोंमें चंद्रमाका उदय होय तो अन्नका भाव सम रहताहै ॥ २३५ ॥

अथ प्रतिमासेदर्शफलम् ।

शुभवारान्विते दर्शे स्यात्सुभिक्षं प्रजासुखम् ॥
पापवारान्विते दुःखं तथा धान्यमहर्घता ॥ २३६ ॥

अब प्रतिमासमें दर्शका फल लिखतेहैं-यदि शुभवारसे युक्त अमावास्या होय तो सुभिक्ष और प्रजाको सुख होताहै और जो

पापवारयुक्त अमावास्या होय तो दुःख तथा धान्य महँगा रहताहै ॥ २३६ ॥

अथैकमासे पञ्चवारफलम्।

शुक्लाद्यमासि चेत्पंच पापखेटस्य वासराः ॥ प्रजापीडा भवेत्तत्र धान्यस्यापि महर्घता ॥ २३७ ॥ मासे पंच शुभा वारा यद्येकस्मिन्प्रजायते ॥ सुभिक्षं सर्वसस्यानां तदा सर्वसुखी जनः ॥ २३८ ॥

अब एकमासमें पांचवारका फल लिखतेहैं—शुक्लप्रतिपदासे लेकर अमावास्या तक मासमें पापग्रहोंके पांचवार पडें तो उस मासमें प्रजापीडा और अन्नका भाव महँगा रहताहै ॥ २३७ ॥ और यदि एकमासमें पांच शुभवार पडें तो सम्पूर्ण अन्नोंका सुभिक्ष और सबजन सुखी रहतेहैं ॥ २३८ ॥

अथ प्रतिमासं संक्रांतिवशात्समर्घमहर्घज्ञानम्।

सुभिक्षं संक्रमे सौम्यवारेऽधिकमुहूर्तके ॥ महर्घं पापवारे वा मुहूर्ते चाक्षभू १५ मिते ॥ २३९ ॥ पूर्वसंक्रमभाद्विनिमिते भे संक्रमे रवेः ॥ सुभिक्षं स्याच्चतुःपंचमिते भे च महर्घता॥ षष्ठे भे संक्रमे चातिदुर्भिक्षं रौरवं भवेत् ॥ २४० ॥

अब प्रतिमासमें संक्रांतिके वशसे समर्घमहर्घज्ञान लिखतेहैं—यदि शुभवारमें पैंतालीस मुहूर्त्त संक्रांति होय तो सुभिक्ष होताहै और पापवारमें पंद्रह १५ मुहूर्त्त संक्रांति होय तो अन्नका भाव महँगा रहताहै ॥ २३९ ॥ पहिली संक्रांतिके नक्षत्रसे दूसरे तीसरे नक्षत्रमें सूर्यकी संक्रांति होय तो सुभिक्ष और चौथे पांचवें नक्षत्रमें सूर्यकी संक्रान्ति होय तो अन्नका भाव महँगा और छटे नक्षत्रमें सूर्यकी सांक्रांति होय तो अतिदुर्भिक्ष तथा भयंकरता होतीहै ॥ २४० ॥

अथ ग्रीष्मशारदधान्यनिष्पत्तिज्ञानम् ।

वृषसंक्रमणे भानोः केंद्रस्वाय १।४।७।१०।२।
११ गतैः शुभैः ॥ शारदीधान्यनिष्पत्तिरुत्तमा कथिता
बुधैः ॥ २४१ ॥ पापैरवस्थितैः स्वल्पा मिश्रैर्मिश्रा प्रकी-
र्तिता ॥ पापे द्यून ७ गते नश्येदुत्पन्नमपि सस्यकम्
॥ २४२ ॥ द्यूनशत्रु ७ । ६ गते पापे निष्पत्तिः स्वल्पका
भवेत् ॥ इत्थं वृश्चिकसंक्रांतौ विज्ञेयं ग्रैष्मधान्यकम्॥२४३॥

अब ग्रीष्मशारदधान्यनिष्पत्तिज्ञान लिखतेहैं—वृषके सूर्यकी संक्रांति लगनेके समय केंद्र १ । ४ । ७ । १० । और दूसरे ग्यारहवें स्थानमें शुभग्रह होंय तो शरत्कालके अन्नकी उत्पत्ति उत्तम होतीहै ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ २४१ ॥ और जो उक्तस्थानोंमें पापग्रह बैठे होंय तो शरत्कालके अन्नकी उत्पत्ति थोड़ी होतीहै और जो शुभ तथा पापग्रह दोनों मिलेजुले बैठे होंय तो पूर्वोक्त अन्नकी उत्पत्ति मध्यम होतीहै और यदि सातवें स्थानमें पापग्रह होंय तो उत्पन्न हुआभी अन्न नष्ट होजाताहै ॥ २४२ ॥ और सातवें तथा छठे स्थानमें पापग्रह होंय तो थोडा अन्न उत्पन्न होताहै. इस प्रकार वृश्चिककी संक्रान्ति लगनेके समय ग्रीष्म कालके अन्नकी उत्पत्ति जानलेनी चाहिये ॥ २४३ ॥

अथ संग्रहसमयः ।

चापादित्रितये सूर्ये सौम्यैर्युक्तेक्षिते ग्रहैः॥ शरद्धान्यं समर्घं
स्याद्ग्राह्यं तद्धान्यजीविभिः ॥ २४४॥ पापैर्युक्तेक्षिते धान्यं
महर्घं जायतेऽखिलम् ॥ एवं मेषत्रिगे ग्रैष्मे विधौ ज्ञेयं विच-
क्षणैः ॥ २४५ ॥

अब संग्रहके समय लिखतेहैं—धनु, मकर, कुंभके सूर्य शुभग्रहोंसे दृष्ट वा युक्त होंय तो शरत्कालका अन्न मन्दा होताहै. भँडसाल

करनेवालोंको ग्रहण करना चाहिये ॥२४४॥ और जो सूर्य पापग्रहोंसे युक्त वा दृष्ट होंय तो सब अन्नोंका भाव महँगा होजाताहै इसी प्रकार मेष, वृष, मिथुन राशिके चंद्रमासे ग्रीष्मकालके अन्नका विचार करै ऐसा पंडितोंको जानना चाहिये ॥ २४५ ॥

अथ संक्रांतिवशाद्दर्शपौर्णमासयोरुत्पातादिवशाद्धान्यादीनां समर्घमहर्घताज्ञानम् ।

ग्रैष्मं सस्यं १ ततो मूलं २ रसधान्यं ३ घृतादिकम् ४ ॥ हेमाद्यं ५ तुरगो ६ वस्त्रं ७ मणिः ८ काचा ९ वु १० धान्यकम् ११ ॥२४६॥ मूलं १२ च क्रमतो ज्ञेयं मेषाद्यर्के खलेक्षिते॥दर्शे वा पूर्णिमायां चेदुपरागोतिवर्षणम् ॥२४७॥ परिवेषस्तथा दंड उल्कापाताद्युपद्रवाः ॥ जायंतेऽत्र तदा तेषां वस्तूनां च महर्घता ॥ २४८ ॥ रवौ सौम्येक्षिते ज्ञेय उत्पातोत्र समर्घता ॥

अथ संक्रांतिके वशसे तथा दर्श और पौर्णमासियोंमें उत्पातादि वशसे धान्यादिकोंका समर्घताज्ञान लिखतेहैं—ग्रीष्मकालकी खेती १, मूल २, रसधान्य ३, घृतादिक ४, सुवर्णादिक ५, घोड़ा ६, वस्त्र ७, मणि ८, काच ९, जल १०, अन्न ११ ॥ २४६ ॥ मूल १२ ये वस्तुएँ क्रमसे मेषादिराशियोंके सूर्यको पापग्रह देखते होंय तो महँगी होजातीहैं. यदि अमावास्या वा पौर्णमासीके दिन ग्रहण अथवा अतिवर्षा होय अथवा सूर्यचंद्रपर पारस बैठे, दंडका उदय होय, उल्कापात होय इत्यादि उपद्रव होंय तो पूर्वोक्त वस्तुओंका भाव महँगा होजाताहै ॥ २४७ ॥ २४८ ॥ और सूर्यको शुभग्रह देखते होंय तो उत्पात नहीं होताहै तथा अन्नका भाव मन्दा रहता है ॥

अथ वृक्षादौ पुष्पफलाद्यैर्धान्यादिनिष्पत्ति-वृष्टिज्ञानम् ।

वृक्षादौ बहुभिः पुष्पैर्महावृष्टिः प्रजायते ॥ यत्र स्वल्पतरा वृष्टिर्दूर्वाभिश्चेक्षवोधिकाः ॥ २४९ ॥ मधूकैर्बहुगोधूमा यवाः स्युर्वटजैः फलैः ॥ सुभिक्षं नागनिंबैः स्याच्छालवृक्षैस्तु शालयः ॥ २५० ॥ अश्वत्थादधिकं धान्यमर्जुनादधिकं जलम् ॥ क्षेममाम्रैश्च पालाशैः कोद्रवा जंबुतस्तिलाः॥२५१॥ दुर्भिक्षं खदिरे रोगाः कुटजैः परिकीर्तिताः ॥ २५२ ॥

अब वृक्षादिमें पुष्पफलादि करके धान्यादिनिष्पत्ति और वृष्टि-ज्ञान लिखतेहैं—वृक्षादिकोंपर वहुत फूल आवैं तो महावर्षा होतीहै और थोडे फूल आवें तो थोडी वर्षा होतीहै और दूब वहुत पैदा होय तो ईख वहुत होतीहै ॥ २४९ ॥ और महुएपर वहुत फूल फल आवें तो गेहूं अधिक होतेह और वडके वृक्षपर वहुतसे फल लगें तो जौ अधिक होतेहैं और नागफनी वा नीवमें वहुत फल लग तो सुभिक्ष होताहै और सालक वृक्षपर वहुत फल लगैं तो धान साठी अधिक होतेहैं ॥ २५० ॥ पीपलके वृक्षोंपर वहुत फूलफल आनेसे अन्न अधिक होताहै. अर्जुन वृक्षोंपर वहुत फूलफल आनेसे जल अधिक वर्षताहै. आम्रके वृक्षोंपर वहुत फूल फल आनेसे कल्याण अधिक रहता है, ढाक फूलें फलें तो कोदों अधिक होतेहैं. जामुन वहुत फूले फलै तो तिल अधिक होतेहैं ॥ २५१ ॥ खैरके वृक्षपर वहुत फूलफल लगें तो दुर्भिक्ष होताहै और कुटै-याके वृक्षपर वहुत फलफूल आवें तो रोग वहुत होतेहैं ॥ २५२ ॥

अथाषाढ्यां पौर्णमास्यां वायुपरीक्षा ।

आषाढे पूर्णिमायां च प्रदोषे वा दिवानिशम् ॥ प्राच्यां वायोस्तु वृष्टिः स्याद्धान्यनिष्पत्तिरुत्तमा ॥ २५३ ॥ अल्प-

वृष्टिस्तथाऽऽग्नेय्यामग्नेर्भीतिर्महर्घता ॥ अनावृष्टिर्भवेद्याम्यां प्रजापीडा महर्घता ॥ दुर्भिक्षं रौरवं घोरमनावृष्टिश्च नैर्ऋते ॥ २५४ ॥ वारुण्यां च महावृष्टिर्धान्योत्पत्तिस्तु मध्यमा॥वायौ वायुः प्रचंडः स्याद्वृष्टिर्धान्यं च मध्यमम् ॥२५५॥ बहु धान्यं शुभा वृष्टिरुत्तरस्यां सुखी जनः ॥ ऐशान्यां सस्यसंपत्तिर्धनाढ्याः सुखिनो जनाः ॥ २५६ ॥

अब आषाढकी पौर्णमासीमें वायुपरीक्षा लिखतेहैं-आषाढकी पौर्णमासीके दिन प्रदोषके समय अथवा दिनमें वा रात्रिमें पूर्वका पवन चलै तो वर्षा और धान्यकी उत्पत्ति उत्तम होतीहै ॥ १५३ ॥ और आग्नेयदिशाका पवन चलै तो थोड़ी वर्षा तथा भय और महँगाभाव रहताहै और दक्षिणका पवन चलै तो (अनावृष्टि) वर्षाका अभाव, प्रजाको पीडा और महर्घता होतीहै और नैर्ऋत्यका पवन चलै तो घोर दुर्भिक्ष और भयंकर अनावृष्टि होतीहै ॥२५४॥ और पश्चिमका पवन चलै तो महावृष्टि तथा अन्नकी उपज मध्यम होतीहै और वायव्यका प्रचंड पवन चलै तो वर्षा तथा मध्यम अन्न होताहै ॥ २५५ ॥ उत्तरका पवन चलै तो बहुत अन्न, अच्छी वर्षा होतीहै और मनुष्य सुखी रहतेहैं और ईशानका पवन चलै तो खेतीकी संपत्ति और मनुष्य धनाढ्य तथा सुखी रहतेहैं ॥ २५६ ॥

अथाषाढ्यां धान्यादितोलनम् ।

आषाढ्यां सर्वधान्यानि संध्यायां च पृथक्पृथक् ॥ तोलयेद्वर्णमानेन जलादीनपि सर्वशः ॥ २५७ ॥ मंत्रैस्ततोऽभिमंत्र्याथ निशि तानधिवासयेत् ॥ तोलयेच्च पुनः प्रातस्तेन मानेन दैववित् ॥ २५८ ॥ वृद्धौ वृद्धिः समे साम्यं ह्रासे हानिस्तु तस्य च ॥ २५९ ॥

अब आषाढकी पूर्णिमामें धान्यादितोलन लिखतेहैं—आषाढकी पौर्णमासीको सायंकालमें सब अन्नोंको तथा जल आदि सब वस्तु-

ओंको अलग अलग वर्णमानसे तोलै और फिर उन सव अन्नादि वस्तुओंको मंत्रोंसे अभिमन्त्रित करके रातभर धरे रहनेदेय प्रातः काल होतेही ज्योतिषीपंडित उसी तोलसे उन सब वस्तुओंको फिर तोलै जो अन्न तोलमें वढजाय उसकी वृद्धि और जो समान रहे उसकी समता और जो घटजाय उसकी हानि होतीहै ऐसा जानै ॥ २५७ ॥ २५८ ॥ २५९ ॥

अथ होलिकावातपरीक्षा ।

होलिकासमये वायौ पूर्वे भूपनृणां सुखम् ॥ याम्यनैर्ऋत्यदिग्भागे दुर्भिक्षं च पलायनम् ॥ २६० ॥ प्रतीच्यामुत्तरे शैवे सुभिक्षं स्यात्प्रजासुखम् ॥ अग्नेर्भीतिरथाग्नेय्यां वायव्यां वहवोऽनिलाः ॥ २६१ ॥

अव होलिकावातपरीक्षा लिखतेहैं—होली जलानेके समय पूर्वका पवन चलै तो राजा और प्रजाको सुख होताहै और दक्षिण वा नैर्ऋत्य दिशाका पवन चलै तो दुर्भिक्ष तथा (पलायन) भागना होताहै ॥ २६० ॥ और पश्चिम उत्तर वा ईशानका पवन चलै तो सुभिक्ष तथा प्रजाको सुख होताहै और अग्निकोणका पवन चलै तो अग्निका भय और वायव्यका पवन चलै तो वहुत पवन चलताहै ॥ २६१ ॥

अथ वृष्टिज्ञानार्थं मेघगर्भज्ञानम् ।

मार्गे शुक्लादितो ज्ञेयो मेघगर्भसमुद्भवः ॥ तुहिनातपरिधेर्वृष्ट्या संध्यारागात्तथापि वा ॥ २६२ ॥ पौषेऽतिशीततो माघे संध्याभ्रादनिलादपि ॥ फाल्गुने ताम्रवर्णोऽर्कात्स्निग्धाभ्राद्धा खरानिलात् ॥ चैत्रे तु परिधेर्वृष्ट्या वायुना वाभ्ररेखया ॥ २६३ ॥

अब वृष्टिज्ञानार्थ मेघगर्भज्ञान लिखतेहैं—मार्गशीर्षमासके शुक्लपक्षसे लेकर मेघगर्भकी उत्पत्ति तुषारसे, पारस वैठनेसे, वर्षासे, संध्याके रंगसे जाननी चाहिये॥ २६२ ॥ और पौषमें अतिशीत पड़नेसे, माघमें संध्यासमयके वादलोंसे, पवनसे; फाल्गुनमें ताम्रवर्णके सूर्यसे, चिकने वादलोंसे, तीक्ष्ण पवनसे; चैत्रमें सूर्यचंद्रमापर पारस वैठनेसे, वर्षासे, पवनसे, वादलोंकी रेखासे मेघगर्भकी उत्पत्ति जानै ॥ २६३ ॥

अथ केषांचिन्मतांतरम् ।

केचिन्मार्गादिमासेषु प्रोचुर्गर्भस्य लक्षणम् ॥
गर्जनात्पवनात्तोयवर्षणाद्विद्युतोऽथवा ॥ २६४ ॥

अब किसीका मतान्तर लिखतेहैं—किन्हीं आचार्योंने ऐसा कहाहै कि, मार्गादि मासोंमें गर्जनेसे वा पवनसे वा जल वर्षनेसे वा विजली चमकनेसे मेघगर्भका लक्षण होताहै ॥ २६४ ॥

अथ शुभगर्भलक्षणानि ।

श्वेतनीलांडजाऽभ्रा ये न चातिविगलज्जलाः ॥ शस्तगर्भाश्च ते मेघा उदगीशानपूर्वजाः ॥ २६५ ॥ पुष्टिं प्रयांति ते गर्भा विद्युद्वाताभ्रगर्जितैः ॥ भाद्रापाढाद्वयोत्पन्ना विशाखोत्था बहूदकाः ॥ २६६ ॥

अब शुभगर्भलक्षण लिखतेहैं—सफेद तथा नीले रंगके पक्षीके समान वादल होय जिनमेंसे अतिजल न वर्षता होय अथवा उत्तर, ईशान, पूर्वदिशामें वादल होंय तो शुभगर्भ होतेहैं ॥ २६५ ॥ और वे गर्भ पुष्टिको प्राप्त होतेहैं. जिनमें विजली, पवन, वादलोंकी गर्जन होतीहोय और भाद्रपद तथा आपाढ इन दो महीनों अथवा विशाखा नक्षत्रमें उत्पन्नहुए गर्भ वहुत जल वर्षातेहैं ॥ २६६ ॥

अथ गर्भधारणदिनाद्वृष्टिज्ञानम् ।

वृष्टिर्गर्भाहमारभ्य पक्षैर्विश्वमिते १३ भवेत् ॥
रात्रिगर्भे दिवा वृष्टिर्दिवागर्भे निशि स्मृता ॥ २६७ ॥

अब गर्भधारणदिनसे वृष्टिज्ञान लिखतेहैं–गर्भदिनसे लेकर तेरहवें पक्षमें वर्षा होतीहै. जो गर्भ रात्रिमें रहाहोय तो दिनमें वर्षा होतीहै और यदि दिनमें रहाहोय तो रात्रिमें वर्षा होतीहै॥२६७॥

अथ प्रकारांतरेण गर्भाहाद्वृष्टिज्ञानम् ।

आरभ्यैकादशीं कृष्णां शुक्लादौ माघमासके ॥ द्वादशस्वपि चस्रेषु विद्युद्वाताऽभ्रगर्जितैः ॥ रोहिण्यादिषु सूर्यस्य भेषु वृष्टिर्भवेत्क्रमात् ॥ २६८ ॥

अब प्रकारान्तरसे गर्भदिनसे वृष्टिज्ञान लिखतेहैं–माघमासमें कृष्णपक्षकी एकादशीसे लेकर शुक्लपक्षकी सप्तमीतक बारहदिनके भीतर जिसरोज बिजली चमकै, पवन चलै, बादल गर्जै तो सूर्यके रोहिण्यादिक बारह नक्षत्रोंमें क्रमसे वर्षा होतीहै ॥ २६८ ॥

अथ पुनरन्यप्रकारेण मेघगर्भज्ञानं वृष्टिज्ञानं च ।

मूलर्क्षे भास्करे याते तदाऽऽरभ्य दशाहकम् ॥ विद्युदभ्रादिना गर्भो यत्रयत्र दिने भवेत् ॥ क्रमादार्द्रादिनक्षत्रे भानौ वृष्टिः प्रजायते ॥ २६९ ॥

अब फिर अन्यप्रकारसे मेघगर्भज्ञान और वृष्टिज्ञान लिखतेहैं–सूर्य जब मूल नक्षत्रपर जावैं तबसे लेकर दश १० दिनके भीतर जिसकिसीदिन बिजली चमकै, मेघ गर्जै, पवन चलै तो क्रमसे सूर्यके आर्द्रादि दश नक्षत्रोंमें वर्षा होतीहै ॥ २६९ ॥

अथ प्रकारांतरम् ।

मूलभाद्भरणीं यावद्भेषु चैकादशस्वपि ॥ पौषे मासि दिनर्क्षेषु गर्भस्त्वभ्रादिना भवेत् ॥ २७० ॥ तत आर्द्रादिगे सूर्ये क्रमाद्वृष्टिः प्रजायते ॥ २७१ ॥

अव प्रकारान्तर लिखतेहैं—पौषमासमें मूलनक्षत्रसे लेकर भरणीतक ग्यारह नक्षत्रोंमें बादल, विजली, पवन आदिसे गर्भ रहे तो ॥ २७० ॥ क्रमसे सूर्यके आर्द्रादि एकादश नक्षत्रोंमें वर्षा होतीहै ॥ २७१ ॥

पुनः प्रकारांतरम्।

अश्विन्यादिषु धिष्ण्येषु चैत्रे दशसु चेद्भवेत् ॥ अभ्रादिकं तदा गर्भ आर्द्रादौ वृष्टिदः क्रमात् ॥ मेषार्कदिनमारभ्य ज्ञेयमेवमथापि वा ॥ २७२ ॥

फिर प्रकारान्तर लिखतेहैं—चैत्रके महीनेमें अश्विन्यादि दश नक्षत्रोंमें मेघादिकरके गर्भ रहे तो वर्षाके आर्द्रादि दश नक्षत्रोंमें क्रमसे वर्षा होतीहै. इसी प्रकार मेषके सूर्यकी संक्रांतिके दिनसे लेकर दशदिनके भीतर जिसदिन गर्भ रहे आर्द्रादि दश नक्षत्रोंमें क्रमसे उसी नक्षत्रमें वर्षा होतीहै ॥ २७२ ॥

अथ सामान्यतोवृष्टिज्ञानम्।

यदि साभ्रं नभोऽमायां सुभिक्षं च भवेद्ध्रुवम् ॥ यद्यभ्रं दृश्यते व्योम्नि चैकादश्यां तु कार्त्तिके ॥ २७३ ॥ आषाढे मासि वृष्टिः स्यात्तदा भवति भूयसी ॥ मार्गाष्टम्यां यदा विद्युद्दर्पणं श्रावणे तदा ॥ २७४ ॥ पौषे कृष्णे दशम्यां चेद्वृष्टिर्भाद्रपदे तथा ॥ सप्तम्यां माघशुक्ले स्याद्भवेदभ्रादिकं यदा ॥ २७५ ॥ ज्येष्ठे मूले न चेद्वृष्टिः सुवृष्टिर्बहुला तदा ॥ २७६ ॥

अव सामान्य वृष्टिज्ञान लिखतेहैं—यदि अमावास्याके दिन आकाशमें बादल होंय तो निश्चयही सुभिक्ष होताहै और कार्त्तिकमासकी एकादशीके दिन आकाशमें बादल दीखैं तो ॥ २७३ ॥ आषाढ मासमें बहुत वर्षा होतीहै. यदि मार्गशीर्षकी अष्टमीके दिन

विजली चमकै तो श्रावणमें वर्षा होतीहै ॥२७४॥ यदि पौषकृष्ण-पक्ष दशमीके दिन वादल वा वर्षा होय तो भाद्रपदमें वर्षा होती है और यदि माघशुक्लपक्षकी सप्तमीके दिन वादल विजली आदि होय ॥ २७५ ॥ और ज्येष्ठके महीनेम मूलनक्षत्रके दिन वर्षा न होय तो वहुत वर्षा होतीहै ॥ २७६ ॥

अथ ज्येष्ठशुक्लाष्टम्यादिदिनचतुष्टये वायुफलम् ।

ज्येष्ठेऽष्टम्यास्तु शुक्लायाश्चतुर्षु दिवसेषु च ॥
श्रावणादौ क्रमाद्वृष्टिर्मदैः शस्तैः समीरणैः ॥ २७७ ॥

अब ज्येष्ठशुक्लाष्टम्यादि दिनचतुष्टयमें वायुफल लिखतेहैं-ज्येष्ठ मासकी शुक्लाष्टमीसे लेकर चारदिनके भीतर किसीदिन मन्द पवन चले तो क्रमसे श्रावणादिक चार महीनोंमें वर्षा होतीहै ॥ २७७ ॥

अथ स्वात्यादिषु वृष्टौ श्रावणादावनावृष्टिः ।

ज्येष्ठे चतुर्षु धिष्ण्येषु स्वातीमारभ्य वर्षणे ॥
क्रमाच्छ्रावणतो वृष्टिर्नो भवेत्तत्रतत्र च ॥ २७८ ॥

अब स्वात्यादिमें वृष्टि होनेसे श्रावणादिमें अनावृष्टि लिखतेहैं-ज्येष्ठ मासमें स्वात्यादि चार नक्षत्रोंमें किसी दिन वर्षे तो क्रमसे श्रावणादि चारमहीनोंके भीतर उसीसंख्याके महीनेमें वर्षा नहीं होतीहै ॥ २७८ ॥

अथाषाढद्वितीयादिषु चतुर्षु फलम् ।

आषाढे मासि शुक्लायां द्वितीयायां प्रवर्षणे ॥ तृतीयायां पुरो वायुर्मघो वा पूर्वदिग्गतः ॥ २७९ ॥ चतुर्थ्यां जलदः प्राच्यां दक्षिणो यदि मारुतः ॥ पंचम्यां पूर्वदिङ्मेघस्तदा श्रावणमासतः ॥ २८० ॥ ध्रुवं वृष्टिः शुभा ज्ञेया क्रमान्मासचतुष्टये ॥ चतुर्ष्वेषु दिनेष्वेव यदि वृष्टिर्निरंतरम् ॥२८१॥

तदा स्याददतिवृष्टिश्च धान्यनाशः प्रजायते ॥ याम्यप्रत्यग्भवे वायौ द्व्यहं दुर्भिक्षमीरितम् ॥ २८२ ॥ तृतीयापंचमीघस्रे यद्युदक्पूर्वजो मरुत् ॥ तदा स्याद्धान्यनिष्पत्तिर्वहुला वृष्टिरुत्तमा ॥ २८३ ॥

अव आषाढशुक्लद्वितीयादि चारतिथिमें फल लिखतेहैं—यदि आषाढमासमें शुक्लपक्षकी द्वितीयाके दिन वर्षा होय, तृतीयाके दिन पूर्वका पवन चले अथवा पूर्वदिशामें बादल होय ॥२७९॥ चतुर्थीके दिन पूर्वदिशामें वादल होय, दक्षिणका पवन चले और पंचमीके दिन पूर्वदिशामें वादल होय तो श्रावणादिक चार महीनोंमें ॥२८०॥ क्रमसे निश्चयही वहुत अच्छी वर्षा होतीहै और यदि इन द्वितीयादिक चार दिनोंमें लगातार वर्षा होय तो ॥ २८१ ॥ श्रावणादि चारों महीनोंमें अतिवृष्टि और धान्यका नाश होताहै अथवा पूर्वोक्त दो दिन दक्षिण वा पश्चिमका पवन चले तो दुर्भिक्ष होताहै॥२८२॥ यदि तृतीया वा पंचमीके दिन उत्तर वा पूर्व दिशाका पवन चले तो वहुत अन्नकी उपज और अच्छी वर्षा होतीहै ॥ २८३ ॥

अथ श्रावणशुक्लपंचमीफलम् ।

पंचम्याः श्रावणे शुक्ले द्व्यहे वृष्टिर्भवेद्यदि ॥
याम्यप्रत्यग्भवो वायुर्दुर्भिक्षं जायते तदा ॥ २८४ ॥

अव श्रावणशुक्लपंचमीका फल लिखतेहैं—यदि श्रावणशुक्लापंचमीसे लेकर दोदिनके भीतर वर्षा होय और दक्षिण वा पश्चिम दिशाका पवन चले तो दुर्भिक्ष होताहै ॥ २८४ ॥

अथ सूर्यस्य रेवत्यादिषु नक्षत्रेषु वृष्टेः फलम् ।

रेवत्यां वर्षणे तापं नश्येद्धान्यमथाश्विभे ॥ भरण्यां तद्द्वयं वृष्टिः कृत्तिकायां न चेद्रविः ॥ २८५ ॥ रोहिण्यां गर्जिते

वृष्टिर्ज्ञेया मासद्वयोत्तरम् ॥ मृगशीर्षे यदा न स्याद्भवेद्वृष्टि-र्बहूदका ॥ २८६ ॥

अब सूर्यके रेवत्यादि नक्षत्रमें रहते वृष्टिका फल लिखतेहैं—यदि सूर्यके रेवती नक्षत्रमें वर्षा होय तो ताप और अश्विनी नक्षत्रमें वर्षा होय तो अन्नका नाश और भरणी नक्षत्रमें वर्षा होय तो (द्वयम्) ताप तथा अन्नका नाश होताहै और जो कृत्तिका नक्षत्रमें वर्षा न होय तो वर्षाकालमें वर्षा होतीहै ॥ २८५ ॥ और रोहिणी नक्षत्रमें बादल गर्जे तो दो महीने पीछे वर्षा होतीहै और यदि मृगशीर्षमें वर्षा नहीं होय तो वर्षाकालमें बहुत जलकी वर्षा होतीहै ॥ २८६ ॥

अथ संक्रांतिदिने वृष्टिफलम् ।

संक्रांतिदिवसे वृष्टौ मार्गकार्त्तिकयोर्यदा ॥ वर्षं तन्मध्यमं ज्ञेयं पौषे माघे तु चोत्तमम् ॥ २८७ ॥ सुभिक्षं च शुभा वृष्टिः फाल्गुनादिचतुष्टये ॥ रोगश्चाषाढमासे स्याच्छ्रावणे वृष्टिरुत्तमा ॥ २८८ ॥ भाद्रे रोगस्तथा सौख्यमाश्विने वर्षणं भवेत् ॥ २८९ ॥

अब संक्रांतिदिनमें वृष्टिफल लिखतेहैं—मार्गशीर्ष और कार्त्तिक मासकी संक्रांतिके दिन वर्षा होय तो मध्यम वर्षा होतीहै। पौष और माघमासमें संक्रान्तिके दिन वर्षा होय तो उत्तम वर्षा होती है ॥२८७॥ और फागुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ मासमें संक्रांतिके दिन वर्षा होय तो सुभिक्ष तथा शुभवृष्टि होतीहै। आषाढमासमें संक्रांतिके दिन वर्षा होय तो रोग होताहै और श्रावणमें संक्रांतिके दिन वर्षे तो उत्तम वर्षा होतीहै ॥ २८८ ॥ भाद्रपदमें संक्रांतिके दिन वर्षे तो रोग और आश्विन मासमें संक्रांतिके दिन वर्षा होय तो सौख्य होताहै ॥ २८९ ॥

अथ काकनीडफलम् ।

सद्वृक्षे काकनीडं स्यात्प्रतीच्यां वृष्टिरुत्तमा ॥ उदग्याम्ये भयं मध्ये नैर्ऋतावंतिमा स्मृता ॥ २९० ॥ अल्पवृष्टिरथाग्नेय्यां सदन्नं स्याच्छिवेनिले ॥ मध्ये मध्याय वृक्षाग्रे बहुला वृष्टिरीरिता ॥ २९१ ॥ ईतिभीतिर्महाघोरा नीडे सर्वदिशां गते ॥ नीडे सकंटके भीती रसानां जायते ध्रुवम् ॥ २९२ ॥ प्रागुदक्पश्चिमार्द्धस्य सुवृष्टिः केश्चिदीरिता ॥

अब काकनीडफल लिखतेहैं—यदि शुभ वृक्षपर कौएका घोंसला पश्चिम दिशामें होय तो वर्षा उत्तम होतीहै और उत्तर वा दक्षिण दिशामें होय तो भय होताहै और वृक्षके मध्यमें वा नैर्ऋत्यमें घोंसला होय तो वर्षाकालके अन्तपर वर्षा होतीहै ॥ २९० ॥ और आग्नेय दिशामें काकनीड होय तो अल्प वर्षा होतीहै और ईशान वा वायव्यमें होय तो अन्न अच्छा होताहै और वृक्षके मध्यमें होय तो मध्यम वर्षा होतीहै और वृक्षके अग्र भागमें होय तो बहुत वर्षा होतीहै ॥ २९१ ॥ और सब दिशाओंमें कौओंके घोंसले होंय तो महाघोर ईतिका भय होताहै और काँटोंसहित घोंसला होय तो रसोंके लिये भय होताहै ॥ २९२ ॥ किन्हीं आचार्योंने ऐसा कहाहै कि, पूर्व, उत्तर, पश्चिम दिशाओंके अर्द्धभागमें काकनीड होय तो अच्छी वर्षा होतीहै ॥

अथ टिट्टिभांडफलम् ।

स्थितेपूच्चप्रदेशेषु टिट्टिभांडेषु चोत्तमा ॥ वृष्टिः संजायते मासैरथोवक्रांडसंख्यकैः ॥ २९३ ॥ निम्नप्रदेशसंस्थेषु स्वल्पा वृष्टिः प्रजायते ॥ वृष्टिर्नैव भवेन्मासे चोर्ध्ववक्रांडसंख्यके ॥ २९४ ॥

अब टिट्टिभांडफल लिखतेहैं-टिटहटी ऊँचे स्थानपर अण्डे धरें तो उत्तम वर्षा होतीहै और जितने अंडोंके मुख नीचेको होंय उतने महीनोंमें वर्षा होतीहै ॥ २९३ ॥ और नीचे स्थानमें टिटहरी अण्डे धरें तो थोडी वर्षा होतीहै और उन अण्डोंमें जितने अंडोंके मुख ऊर्द्धको होंय उतने महीनोंमें वर्षा नहीं होतीहै ॥ २९४ ॥

अथ रोहिणीचक्रम् ।

द्वादशांशं लिखेच्चक्रं मेषसंक्रांतिभादितः ॥ चतुर्दिक्षु समुद्राश्च चतुष्कोणेषु पर्वताः ॥२९५॥ समुद्रपार्श्वयोरष्टौ तटस्तच्छैलयोस्तथा ॥ मध्येऽष्टौ संधयस्तत्र साभिजिद्भगणं न्यसेत् ॥ २९६ ॥ द्वयंद्वयं समुद्रेषु तथैकैकं तटादिषु ॥ रोहिणी संस्थिता यत्र ज्ञेयं वृष्टिफलं ततः ॥२९७॥ तटेषु शोभना वृष्टिर्महावृष्टिस्तु सागरे ॥ अनावृष्टिर्गिरौ देशे खंडवृष्टिस्तु संधिषु ॥ २९८ ॥

अब रोहिणी चक्र लिखतेहैं-बारह कोठोंका रोहिणीचक्र लिखै और उसचक्रमें मेषकी संक्रांति लगनेके दिन जौनसा नक्षत्र होय उससे लेकर अट्ठाईस नक्षत्र भरदेवे चारों दिशाओंमें समुद्र बनावै, चारों कोणोंमें पर्वत लिखै और समुद्रके दोनों करवटोंमें आठ तट बनावे तथा तट और पर्वतोंके बीचमें आठ संधि बनावै॥२९५॥२९६॥ इस चक्रमें अभिजित्सहित अट्ठाईस नक्षत्र इस प्रकारसे रक्खे कि, दोदो नक्षत्र समुद्रोंमें और एकएक नक्षत्र तटादिकोंमें लिखै जहाँ रोहिणी नक्षत्र पडे उसी स्थानसे वर्षाका फल जाने ॥ २९७ ॥ तटमें रोहिणी पडे तो शोभन वृष्टि और समुद्रमें पडे तो महावृष्टि और पर्वतमें पडे तो अनावृष्टि, संधियोंमें पडे तो खंडवृष्टि होतीहै॥२९८॥

साधि उत्तराभाद्रपद पर्वत पूर्वाभाद्रपद शतभिषा साधि	तट रेवती	समुद्र अ भ	तट कृ	सधि रोहिणी पर्वत मृगशिर आर्द्रा साधि
तट धनिष्ठा				पुनर्वसु तट
समुद्र अभिजित श्रवण		अथ रोहिणीचक्रम् ।		समुद्र पुष्य आश्लेषा
तट उत्तराषाढ				मघा तट
सधि पूर्वाषाढ मूल पर्वत ज्येष्ठा साधि	अनुराधा तट	समुद्र स्वाति विशाखा	चित्रा तट	साधि पूर्वाफा. उत्तराफा पर्वत हस्त साधि

अथ सप्तनाडीचक्रम् ।

कृत्तिकादिलिखेच्चक्रं साभिजित्सप्तनाडिकम् ॥ चंडा १ वायु २ स्तथा वह्निः ३ सौम्या ४ नीरा ५ जला ६ ऽमृता ७ ॥२९९॥ नाडीनां सप्त नामानि ज्ञेयान्येतानि पंडितैः ॥ क्रमान्मंदार्कभौमेज्यशुक्रज्ञाब्जास्तदीश्वराः ॥ ३०० ॥

अथ सप्तनाडीचक्र लिखतेहैं—कृत्तिकासे लेकर अभिजित्समेत अट्ठाईस नक्षत्रोंका सप्तनाडी चक्र लिखे. चंडा १, वायु २, अग्नि ३, सौम्या ४, नीरा ५, जला ६, अमृता ७ ॥२९९॥ नाडियोंके ये सात नाम हैं; यह पंडितोंको जानलेने चाहिये. इन सातों नाडियोंके क्रमसे शनैश्चर १, सूर्य २, मङ्गल ३, बृहस्पति ४, शुक्र ५, बुध ६, चन्द्रमा ७ स्वामीहैं ॥ ३०० ॥

अथ तदेव स्पष्टयति ।

चंडाख्या भरणीद्वंद्वं विशाखाद्वितयं शनेः ॥ ज्येष्ठाऽश्विरोहिणीस्वात्यो वायुनाडी रवेः स्मृता ॥ ३०१ ॥ चित्रा मूलो मृगोंत्यं च दहनाख्या कुजस्य च ॥ पूर्वापाढा करो भाद्रा सौम्यां नाडी बृहस्पतेः ॥ ३०२ ॥ पूभोपा च पुनर्धिष्ण्यमुफा नीरा भृगोः स्मृता ॥ पूभाशताभिजित्पुष्यं जलनाडी बुधस्य सा ॥ ३०३ ॥ श्रवोद्वयं मघाऽऽश्लेपा चंद्रोरमृतनाडिका ॥

अब उसीको स्पष्टकरके लिखतेहैं-भरणी, कृत्तिका, विशाखा, अनुराधा ये नक्षत्र चण्डनाडीके हैं; इनका स्वामी शनैश्वरहै. ज्येष्ठा, अश्विनी, रोहिणी, स्वाती ये नक्षत्र सूर्यकी वायुनाडीके हैं ॥ ३०१ ॥ चित्रा, मूल, मृगशिर, रेवती ये नक्षत्र मङ्गलकी अग्निनाडीके हैं. पूर्वाषाढा, हस्त, उत्तराभाद्रपद, आर्द्रा ये नक्षत्र बृहस्पतिकी सौम्यनाडीके हैं ॥ ३०२ ॥ पूर्वाभाद्रपद, उत्तराषाढा, पुनर्वसू, उत्तराफाल्गुनी ये नक्षत्र शुक्रकी नीर नाडीके हैं. पूर्वाफाल्गुनी, शतभिषा, अभिजित्, पुष्य ये नक्षत्र बुधकी जलनाडीके हैं ॥३०३॥ श्रवण, धनिष्ठा, मघा, आश्लेषा ये नक्षत्र चन्द्रमाकी अमृत नाडीके हैं ॥

अथैतासु ग्रहेषु संस्थितेषु फलम् ।

द्व्याद्या यद्येकनाडीस्थाः सौम्याः पापाश्च खेचराः ॥ तेभ्यो नाडीफलं वाच्यं सदसद्वा विचक्षणैः ॥ ३०४ ॥ चंडनाड्यां महावातान्वातनाड्यां तथाऽनिलम् ॥ वह्निनाड्यां स्थिता दाहं सौम्यनाड्यामथोदकम् ॥ ३०५ ॥ नीरनाड्यां पयोवृष्टिर्जलनाड्यां च वर्षणम् ॥ कुर्वंत्यमृतनाड्यां च महावृष्टिं नभश्चराः ॥ ३०६ ॥ एकोपि निजनाडीस्थो धत्ते

तत्तत्फलं ग्रहः ॥ कुजस्तु सर्वनाडीषु स्थितो नाडीसमुद्भवम् ॥ ३०७ ॥ आर्द्रादिऋक्षगते सूर्ये नाड्यैक्ये फलमुच्यते ॥ यद्दिने चैकनाडीस्थाः पापाः सौम्याश्च खेचराः ॥ ३०८ ॥ मिश्राश्चंद्रमसा युक्तास्तद्दिने वृष्टिरुत्तमा ॥ तोयराश्यंशगा मिश्रा तावद्वृष्टिं प्रकुर्वते ॥ ३०९ ॥ यावत्तोयांशगश्चंद्रः केवलाः स्वल्पवृष्टिदाः ॥ एभिश्च खेचरैः सौम्यैः पापैर्विद्धो यदा शशी ॥ ३१० ॥ पानीयं च तदा तुच्छं धान्यादीनां च नाशनम् ॥ यस्य खेटस्य नाडीस्थो विधुस्तेन ग्रहेण च ॥ ३११ ॥ युक्तश्चेद्वृष्टिदो ज्ञेयो यदि क्षीणतरो न हि ॥ चंद्रः पीयूषनाडीस्थो मिश्रैः खेटैश्च संयुतः ॥ ३१२ ॥ त्रिचतुःसप्तपंचाहं शुभवृष्टिप्रदो भवेत् ॥ जलनाडीस्थिते चंद्रे मित्रखेचरसंयुते ॥ ३१३ ॥ दिनार्द्धप्रत्यहं वृष्टिः पंचाहं जायते शुभा ॥ नीरनाड्यां गते चंद्रे मिश्रैः खेटैश्च संयुतः ॥ ३१४ ॥ पादोनत्रिदिनं वृष्टिर्बहुतोया भवेच्छुभा ॥ नीराख्यजलपीयूषनाडीस्थाः खेचराः क्रमात् ॥ ३१५ ॥ धृत्य १८ र्क १२ रस ६ संख्याकान्वासरान्बहुवृष्टिदाः ॥ सौम्यनाडीस्थिताः सर्वे त्र्यहं वृष्टिप्रदाः खगाः ॥ चंद्रवाय्वग्निनाडीस्था महावातातपप्रदाः ॥ ३१६ ॥ योगे शुभाधिके नाडी निर्जलाऽपि जलप्रदा ॥ योगे क्रूराधिके ज्ञेया सजला निर्जला बुधैः ॥ ३१७ ॥ सौम्यनाड्यां स्थिताः पापा अनावृष्टिकरा मताः ॥ शुभास्तोयांशकश्चेत्स्युः स्वल्पवृष्टिप्रदास्तदा ॥ ३१८ ॥ एकनाडिस्थिता भौमजीवचंद्रमसो यदि ॥ वारिपूर्णा भवेत्पृथ्वी बहुवृष्ट्या तदाऽखिला ॥ ३१९ ॥ भृगुसौम्यौ यदैकत्र स्यातां जीवान्वितौ तदा ॥ वृष्टिःस्याद्बहुलाकस्माच्चंद्रयोगे विशेषतः ॥ ३२० ॥

भृगुचंद्रमसौ पापैः खेचरैर्यदि संयुतौ ॥ तदा स्वल्पोदका वृष्टिर्जलयोगे महत्यपि ॥ ३२१ ॥

अब इसमें स्थित ग्रहका फल लिखतेहैं—जब दो आदि अर्थात् दोसे लेकर अधिक शुभग्रह वा पापग्रह एकनाडीमें स्थित होंय तब पण्डितोंको चाहिये कि, नाडीका शुभाशुभ फल विचारें. यदि पापग्रह अधिक होंय तो अशुभ और सौम्यग्रह अधिक होंय तो शुभ फल पण्डितोंने कहा है ॥ ३०४ ॥ चंडनाडीमें सब ग्रह होंय तो महापवन चले और वायुनाडीमें सब ग्रह स्थित होंय तोभी पवन चलता है और अग्निनाडीमें सब ग्रह होंय तो दाह होताहै और सौम्यनाडीमें सब ग्रह होंय तो जल वर्षताहै ॥ ३०५ ॥ और नीर नाडीमें होंय तोभी जलकी वर्षा होतीहै और जलनाडीमें होंय तोभी जल वर्षताहै और अमृतनाडीमें सब ग्रह होंय तो महावर्षा होतीहै ॥ ३०६ ॥ और अपनी नाडीमें बैठाहुआ अकेला ग्रहभी उसी नाडीका फल देताहै और मंगल तो सब नाडियोंमें बैठकर उसी २ नाडीका फल देताहै ॥ ३०७ ॥ और जब आर्द्रादि नक्षत्रोंपर सूर्य होंय तब एक उसी नाडीका फल होताहै और जिस दिन पापग्रह अथवा शुभग्रह वा दोनों मिले जुले ग्रह चंद्रमासे युक्त होंय तो उत्तम वर्षा होतीहै और मिश्रग्रह जबतक जलराशियोंके नवांशोंमें रहें तबतक वर्षा करते हैं ॥ ३०८ ॥ ३०९ ॥ और जबतक जलराशिके नवांशमें अकेला चंद्रमाही रहे तो थोडी वर्षा होतीहै और जो इन पाप तथा शुभग्रहोंसे चन्द्रमा विद्ध होय तो ॥ ३१० ॥ बहुत थोडा जल वर्षता है और अन्नका नाश होताहै और जिस ग्रहकी नाडीमें चन्द्रमा स्थित होय और उसी ग्रहसे युक्त होय तो ॥ ३११ ॥ वृष्टिदायक होताहै और क्षीणचन्द्रमा होय तो वर्षा नहीं होतीहै. चन्द्रमा अमृत नाडीमें स्थित होकर मिश्रग्रहोंसे संयुक्त होय तो ॥ ३१२ ॥ तीन,

चार, पांच, सात दिनतक बहुत अच्छी वर्षा करता है और मित्र-ग्रहोंसे संयुक्त चन्द्रमा जलनाडीमें स्थित होय ॥ ३१३ ॥ तो पांच दिनतक हररोज दोदो प्रहर अच्छी वर्षा होती है और मिश्र ग्रहोंसे संयुक्त चन्द्रमा नीरनाडीमें स्थित होय तो ॥ ३१४ ॥ तीन दिनतक प्रतिदिन दिनके तीन भागोंमें खूब वर्षा होतीहै. यदि सब ग्रह नीर, वा जल, वा अमृत नाडीमें स्थित होंय तो क्रमसे ॥ ३१५ ॥ अठारह, बारह, छह दिनतक बहुत वर्षा करतेहैं और यदि सब ग्रह सौम्यनाडीमें स्थित होंय तो तीन दिन वर्षा करतेहैं और चंड अथवा वायु वा अग्नि नाडीमें सबग्रह होंय तो महापवन चलताहै और घाम तेज पडतीहै ॥ ३१६ ॥ जिस नाडीमें शुभग्रह अधिक होंय वह निर्जलनाडीभी जलदायिनी होतीहै और जिस नाडीमें क्रूरग्रह अधिक होंय वह सजलनाडीभी निर्जल होजातीहै ऐसा पंडितोंने कहाहै ॥ ३१७ ॥ यदि सौम्यनाडीमें पाप-ग्रह स्थित होंय तो अनावृष्टि होतीहै और शुभग्रह जलराशिके नवांशकमें होंय तो स्वल्पवृष्टि होतीहै ॥ ३१८ ॥ यदि एकनाडीमें मंगल, बृहस्पति, चंद्रमा स्थित होंय तो बहुत वर्षा होनेसे समस्त पृथ्वी जलसे पूर्ण होजातीहै ॥ ३१९ ॥ यदि शुक्र, बुध, बृहस्पति एक नाडीमें स्थित होंय तो अचानक बहुत वर्षा होतीहै और जो चंद्रमा इन्हीं ग्रहोंके साथ होय तो विशेष वर्षा होतीहै ॥ ३२० ॥ यदि शुक्र, चंद्रमा पापग्रहोंसे संयुक्त होंय तो थोडी वर्षा होतीहै और यही ग्रह (जलयोग) जलराशिमें होंय तो महती वर्षा होतीहै ॥ ३२१ ॥

अथ शुक्रस्थितिवशाद्ग्रहयोगवशाच्च वृष्टिज्ञानम् ।

मघादिपंचधिष्ण्यस्थः शुक्रः प्रागुदितोनिशम् ॥ ३२२ ॥
वृष्टिकृत्पश्चिमाशास्थः स्वात्यादित्रितये स्थितः ॥ वैपरी-

त्यमितो यातो भृगुः कुर्यादवर्षणम् ॥ ३२३ ॥ कुर्वीते बहुलां वृष्टिं बुधशुक्रौ च संयुतौ ॥ समुद्रशोषणे शक्तस्त-योरंतर्गतो रविः ॥ ३२४ ॥ शुक्रात्सप्तमगश्चंद्रो वृष्टिदः स्याच्छुभेक्षितः ॥ मंदाद्वा द्यून ७ कोणस्थ ५ । ९ श्चंद्रमा वृष्टिकृत्तदा ॥ ३२५ ॥ ग्रहाणामुदये चास्ते राश्यंतरगमेऽयने ॥ संयोगे वाऽथ पक्षांते प्रायो वृष्टिः प्रजायते ॥ ३२६ ॥ उदये वाक्पतेर्वृष्टी राशिभांतरगे कुजे ॥ शुक्रे चास्तमिते मंदे त्रिविधेऽपि प्रजायते ॥ ३२७ ॥ भौमार्की एकराशौ चेद-न्योन्यं समसप्तगौ ॥ गुरुशुक्रौ कुजार्कौ वा विदुरावर्षणं तदा ॥ ३२८ ॥

अब शुक्रस्थितिवशसे और ग्रहयोगवशसे वृष्टिज्ञान लिखतेहैं- यदि मघादिक पांच नक्षत्रोंमें स्थित शुक्रका उदय पूर्वदिशामें होय तो लगातार वर्षा होतीहै ॥ ३२२ ॥ और यदि स्वात्यादिक तीन नक्षत्रोंपर स्थित शुक्रका उदय पश्चिम दिशामें होय तो वर्षा होतीहै और इन नक्षत्रोंसे अन्य नक्षत्रोंपर शुक्रका उदय होय तो वर्षा नहीं होतीहै ॥ ३२३ ॥ और बुध तथा शुक्रका योग होय तो बहुत वर्षा करतेहैं और इन दोनोंके बीचमें सूर्य होय तो समुद्रकेभी सुखा देनेमें समर्थ होतेहैं ॥ ३२४ ॥ यदि शुक्रसे सातवें स्थानमें चंद्रमा शुभग्रहोंसे दृष्ट होय तो वृष्टिदायक होताहै अथवा शनैश्चरसे सातवें, नौवें, पांचवें स्थानमें चंद्रमा स्थित होय तो वृष्टिकारक होताहै ॥ ३२५ ॥ ग्रहोंका उदय वा अस्त होय अथवा एकराशिसे दूसरी राशिपर गमन होय अथवा अयनपर गमन होय अथवा परस्पर ग्रहोंका संयोग होय अथवा पक्षकी समाप्ति होय तो प्रायः वर्षा होतीहै ॥ ३२६ ॥ बृहस्पतिका उदय होय वा मंगलका राशि और नक्षत्रपर गमन होय अथवा शुक्रका अस्त होय इसी प्रका-

रसे शनैश्चर होय अर्थात् शनैश्चरका उदय वा अस्त अथवा राशि वा नक्षत्रपर गमन होय तो वर्षा होतीहै ॥३२७॥ यदि मंगल, शनैश्चर एकराशिमें होंय अथवा परस्पर एक दूसरेसे सातवें स्थानमें होंय अथवा इसी प्रकार बृहस्पति, शुक्र और मंगल, सूर्य होंय तो वर्षा नहीं होतीहै ॥ ३२८ ॥

अथार्द्रादिरविनक्षत्रप्रवेशे स्त्रीपुंयोगादौ वृष्टिज्ञानम्।

स्त्रीसंज्ञानि दशार्द्रातो भानि प्रोक्तानि कोविदैः ॥ विशाखादित्रयं क्लीबं पुंसंज्ञानीतराणि च ॥ ३२९ ॥ रवेर्धिष्ण्यप्रवेशस्य काले चंद्रार्कयोरुभे ॥ धिष्ण्ये च यादृशे स्यातां विज्ञेयं तद्वशात्फलम् ॥ ३३० ॥ स्त्रीपुंसयोर्महावृष्टिरल्पा स्त्रीक्लीबयोः क्वचित् ॥ अभ्रच्छाया स्त्रियोः पुंसोः क्लीबयोर्वा न किंचन ॥ ३३१ ॥ तोयचारिविलग्ने च वृष्टियोगे यदा रवेः ॥ नक्षत्रस्य प्रवेशः स्यात्तदा वृष्टिस्तु शोभना ॥ ॥ ३३२ ॥ निशायामर्द्धरात्रे वा रवेर्ऋक्षप्रवेशने ॥ बहुतोया सुवृष्टिः स्यादन्यथा नैव जायते ॥ ३३३ ॥

अब आर्द्रादि रविनक्षत्रप्रवेशमें स्त्रीपुंयोगादिमें वृष्टिज्ञान लिखतेहैं-आर्द्रासे लेकर दश नक्षत्र पंडितोंने स्त्रीसंज्ञक कहेहैं और विशाखासे तीन नक्षत्र नपुंसक संज्ञक और शेष नक्षत्र पुरुष संज्ञक कहेहैं ॥ ३२९ ॥ जिस समय सूर्यके नक्षत्रका प्रवेश होय उसी समय चंद्रमाके नक्षत्रकी और सूर्यके नक्षत्रकी संज्ञा जानकर वर्षाका फल विचारै ॥ ३३० ॥ एक नक्षत्र स्त्री और एक पुरुष होय तो महावृष्टि और स्त्री नपुंसकका योग होय तो कहींकहीं अल्पवृष्टि और स्त्रीस्त्रीका योग होय वा पुरुषपुरुषसंज्ञक नक्षत्रोंका योग होय तो बादलोंकी छाया तथा नपुंसकनपुंसकका योग होय तो अनावृष्टि होतीहै ॥ ३३१ ॥ यदि जलचारीलग्नमें और वृष्टियोगमें सूर्यके नक्षत्रका

प्रवेश होय तो बहुत अच्छी वर्षा होतीहै ॥ ३३२ ॥ रात्रिमें वा अर्द्धरात्रिमें सूर्यके नक्षत्रका प्रवेश होय तो बहुतजलवाली सुवृष्टि होतीहै और अन्य समयमें सूर्यनक्षत्रका प्रवेश होय तो वर्षा नहीं होतीहै ॥ ३३३ ॥

अथ सूर्यर्क्षयोगे वृष्टिज्ञानम् ।

आर्द्रादिपंचकं पूभारेवत्यादिचतुष्टयम् ॥ पूर्वाषाढाचतुष्कं च चंद्रर्क्षाणि चतुर्दश ॥ ३३४ ॥ शेषाणि रविधिष्ण्यानि विज्ञेयानि मनीषिभिः ॥ सूर्येचंद्रर्क्षगे वृष्टिश्चंद्रे सूर्यर्क्षगे सति ॥ ३३५ ॥ पूफादिपंचके सूर्ये चंद्रे चंद्रर्क्षगेऽपि च ॥ उभौ चंद्रर्क्षगौ स्यातां स्वल्पा वृष्टिस्तदा भवेत् ॥ तावेव यदि सूर्यर्क्षे तदा वृष्टिर्न जायते ॥ ३३६ ॥

अथ सूर्यर्क्षयोगमें वृष्टिज्ञान लिखतेहैं—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, रेवती, अश्विनी, भरणी, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवणा, धनिष्ठा ये चौदह नक्षत्र चंद्रमाके हैं ॥ ३३४ ॥ और शेष नक्षत्र सूर्यके हैं ऐसा पंडितोंने कहाहै. सूर्य तो चंद्रमाके नक्षत्रपर और चंद्रमा सूर्यके नक्षत्रपर होय तो वर्षा होतीहै ॥ ३३५ ॥ पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा इन चार नक्षत्रोंमेंसे किसी नक्षत्रपर सूर्य होय और चंद्रमा अपने नक्षत्रोंमेंसे किसी नक्षत्रपर होय अथवा सूर्य चंद्रमा दोनोंही चंद्रमाके नक्षत्रपर होंय तो स्वल्प वृष्टि होतीहै और यदि दोनों ग्रह सूर्यके नक्षत्रपर होंय तो वर्षा नहीं होतीहै ॥ ३३६ ॥

अथ वर्षाकाले सद्योवृष्टिलक्षणानि ।

नभः काकांडभं गोहङ्कनिभं तित्तिरसंनिभम् ॥ प्रांत्येजला वा मेघा स्युर्गिरिकज्जलसन्निभाः ॥ ३३७ ॥ जलजंतुसमा-

कारा मूलाभ्रा सव्यगा अपि ॥ गिरयोंजनसंकाशाः सवाष्पशिखिनर्तनम् ॥ ३३८ ॥ शुकनेत्रनिभाः क्षौद्रसंनिभाः सलिलस्रुतः ॥ सन्निधौ परिवेषाढ्यश्चंद्रमाः शीघ्रवृष्टिकृत् ॥ ३३९ ॥ विकृतिर्लवणे बालाः सेतुबंधोद्यमाः पथि ॥ जले मीनोत्प्लवो रावो भेकानां नीरसं जलम् ॥ ३४० ॥ व्यालानां मैथुनं वृक्षाद्यारोहः प्रसवस्तथा ॥ मक्षिकाऽनलपतां यांति सांडाः स्युस्तु पिपीलिकाः ॥ ३४१ ॥ उत्सृष्टाश्च गृहाद्गावो नेच्छंति गमनं बहिः ॥ खनंति भूतलं श्वानो मार्जाराः पशवः खुरैः ॥ ३४२ ॥ यांति वल्यंकुराश्चोर्ध्वं शरटारोहणं तरौ ॥तृणाग्रवृश्चिकारोहो गवामूर्ध्वनिरीक्षणम् ॥ ३४३ ॥ पक्षिणां धूलिभिः स्नानं प्रदोषे मेघगर्जितम् ॥ अहिदंडाकृतिर्मेघः शीतः प्राचीभवो मरुत् ॥ ३४४॥ प्रत्यगिंद्रधनुः संध्यारागांधो मेघगर्जनम्॥ प्रागुदक्शैवदिग्जाता रक्तसौदामिनी तथा ॥ ३४५॥ मध्ये तीव्रा तपश्चाह्नो नरा निद्रालवो भृशम् ॥ विज्ञेया लक्षणैरेभिः सद्योवृष्टिर्घनागमे ॥ ३४६ ॥

अथ वर्षाकालमें सद्योवृष्टिलक्षण लिखतेहैं—आकाशका रंग कौएके अंडेके रंगके समान होय, अथवा गौके नेत्र,वा तीतरके रंगके समान होय, अथवा कोणोंमें भरेहुए जलवाले बादल अथवा पर्वत और कज्जलके समान अथवा जलजंतुओंके समान आकारवाले बादल होंय अथवा मुख्यमेघ दक्षिणभागको चलते होंय और पर्वतोंका रंग कज्जलके समान होजाय, आसुओं सहित मोर नाचने लगैं॥३३७॥ ॥ ३३८ ॥ अथवा तोतापपक्षीके नेत्रके समान वा शहतके समान बादल होंय, समीपमें जलका शब्द होय, परिवेषयुक्त चंद्रमा होय तो शीघ्र वृष्टिकारक होताहै ॥ ३३९ ॥ लवण पसीझने लगै, मार्गमें

चालक पुल बांधने लगें, जलमें मछली ऊपरको उछलें और मेढक शब्द करें तो नीरस जलकी वर्षा होतीहै ॥ ३४० ॥ सर्प मैथुन करें, अथवा वृक्षोंपर चढें, सर्पिणी अंडा देवे, मक्खियोंकी बढवार होय, अंडा लेकर चींटी चलें ॥ ३४१ ॥ जंगलमें चरनेके लिये छोड़ी हुइ गौएँ घरसे बाहिर जानेकी इच्छा न करें, कुत्ता, बिलाव, पशु अपने खुरोंसे पृथ्वीको खोदें ॥ ३४२ ॥ बेलोंके अंकुर ऊपरको चलें, वृक्षपर करकैटा चढे, (तृण) घास फूसके ऊपर बिच्छू चढें, गौएँ ऊपर आकाशको देखें ॥ ३४३ ॥ पक्षी धूलिमें स्नान करें, प्रदोषसमय मेघ गर्जे, आकाशमें सर्प और दंडाके आकार बादल होवें, शीतल पुरवाई चले ॥ ३४४ ॥ पश्चिममें इंद्रधनुष दीखे, संध्यासमय लाली अधिक होय, संध्यारागसे नीचे बादल गर्जें; पूर्व, उत्तर, ईशान दिशामें लालरंगकी बिजली चमके ॥ ३४५ ॥ मध्याह्नमें तीव्र घाम पडे, मनुष्योंको अत्यन्त नींद आवै तो इन लक्षणोंसे वर्षाऋतुमें जानना कि, शीघ्रही वर्षा होनेवाली है ॥ ३४६ ॥

अथोपश्रुतिशकुनाः ।

गणाधीशं प्रपूज्यादौ कार्यं तस्मै निवेद्य च ॥ साक्षतं सफलं तोयपात्रमादाय संव्रजेत् ॥ ३४७ ॥ उपश्रुतिर्महालक्ष्मीश्चांडालगृहवासिनी ॥ यन्मया चिंतितं कार्यं सत्यं वद सुरेश्वरि ॥ ३४८ ॥ भवत्या विदितं सर्वं शक्राकार्यं विशेषतः ॥ इत्युक्त्वा शृणुयाद्वाणीं शुद्धां वाक्यत्रयान्विताम् ॥ ३४९ ॥ प्रक्षिप्य च जलं तत्र समागच्छेत्स्वमालयम् ॥ तद्वाक्यस्यानुसारेण फलं ज्ञेयं यथार्थतः ॥ ३५० ॥

अब उपश्रुति शकुन लिखतेहैं-प्रथम गणेशजीका पूजन करे और फिर गणेशजीके सम्मुख अपने कार्यका निवेदन करके अक्षत तथा फलोंसहित जलपात्र लेकर चांडालीके द्वारपर जावे ॥ ३४७ ॥

और फिर वहां यह मंत्र पढे कि, हे सुरेश्वरि तुम उपश्रुतिनामकी महालक्ष्मीजी हो चाण्डालके गृहमें निवास करतीहो, मैंने जो कार्य विचाराहै उसको सत्य कहो होगा वा नहीं ॥ ३४८ ॥ आप सब कार्योंको जानतीहें. इंद्रके कार्योंकाभी आपको विशेष ज्ञान है इतना कहनेके पश्चात् उस चाण्डालीके तीन शुभ वचन सुने ॥ ३४९ ॥ तदनन्तर जलको वहीं पृथ्वीपर छोडकर अपने घरको चला आवे उस चांडालीने शुभ वचन कहे होवें तो कार्यका शुभफल और अशुभ वचन कहे होवें तो अशुभ फल जाने ॥ ३५० ॥

अथ वारविशेषे विशेषः ।

चांडालीभवने सूर्ये चंद्रे नापितमंदिरे॥ रजक्या मन्दिरे भौमे बोधने वैश्यमंदिरे ॥ ३५१ ॥ ब्राह्मण्या मंदिरे जीवे भार्गवे पण्ययोषितः ॥ दास्या द्वारि शनौ यायाच्छ्रोतुं चोपश्रुतिं शुभाम् ॥ ३५२ ॥

अब वारविशेषमें विशेष लिखतेहैं-शुभ उपश्रुति सुननेके लिये रविवारके दिन चाण्डालीके द्वारपर, चंद्रवारके दिन नाईके द्वार-पर, मंगलके दिन धोबिनके द्वारपर, बुधके दिन वैश्यके द्वारपर ॥ ॥ ३५१ ॥ बृहस्पतिके दिन ब्राह्मणीक द्वारपर, शुक्रके दिन वेश्याके द्वारपर, शनैश्चरके दिन चाण्डालीके द्वारपर जावे ॥ ३५२ ॥

अथ रघुवंशादि ।

शकुना रघुवंशस्य दुर्गाया निगमस्य वा ॥ पूजितं पुस्तकं पुष्पैरक्षतैश्च फलादिभिः ॥ ३५३ ॥ शनौ संस्थाप्य सूर्याहे प्रातरेव विलोकयेत् ॥ कुमार्योक्तप्रमाणेन निष्कास्य श्लोकमुत्तमम् ॥ ३५४ ॥ विज्ञेयाः शकुनास्तस्माद्यथार्थ-वचना हि ते ॥ अविसर्गांतपूर्वार्द्धस्तवर्गोत्तरपंचमः ॥ स्तुतिलिङ्वर्जितः श्लोकः शकुने च शुभावहः ॥ ३५५ ॥

अव रघुवंशादि शकुन लिखते हैं-शनैश्चरके दिन रघुवंश वा रामायण, अथवा दुर्गाकी, वा वेदकी पुस्तकको रखकर फूल, अक्षत, वा फलादिकोंसे पूजन करै और रविवारके दिन प्रातःकाल कुमारी कन्यासे पूछै कि, इसमेंसे कौनसा श्लोक निकालैं? तव जौन संख्यक श्लोकके निकालनेके लिये वतलावै उसीको देखै और उसी श्लोकसे शकुन पहिचानै क्योंकि, उक्त पुस्तकोंके श्लोक ठीकठीक फल कहदेतेहैं, यदि श्लोकके पूर्वार्द्धके अंतमें विसर्ग नहीं होय और श्लोकके पांचवें अक्षरसे पीछे तवर्ग होय तथा उस श्लोकमें स्तुति-संबंधि लिट् लकार नहीं होय तो ऐसा श्लोक शकुनमें शुभकारक होताहै ॥ ३५३ ॥ ३५४ ॥ ३५५ ॥

अथ सामुद्रिकपरीक्षा ।

विशालभालवक्राक्षिवक्षोवाहुकरांघ्रिकम् ॥ सुवृत्तमस्तकं नाभिगंभीरा नासिकोन्नता ॥ ३५६ ॥ स्निग्धदंतत्वचं केशाः श्यामाः स्निग्धाश्च कुंचिताः ॥ नेत्रप्रांत्यारुणं स्निग्धं विशालं कृष्णतारकम् ॥ ३५७ ॥ दक्षावर्तवपू रोमास्निग्ध-गंभीरनिःस्वनः ॥ सफेनमूत्रको धन्यो नरो. नोत्पल-पार्ष्णिकः ॥ ३५८ ॥ नरो मातृमुखो धन्यो नारी पितृमुखी तथा ॥ रक्तमोष्ठनखं पाणी पादयुग्मतलं शुभम् ॥ ३५९ ॥ औदार्यधैर्यगांभीर्यमहारंभयशः श्रियः ॥ प्रसन्नवदनो वंशाभिमानी प्रियसत्यवाक् ॥ ३६० ॥ नीतिमान्गुरुवाक्यस्थः शुचिर्दक्षोऽथ पापभीः ॥ इत्यादिगुण-संपन्नो नरो भवति भाग्यवान् ॥ ३६१ ॥ रेखा या तर्जनीं याता तिर्यक्साऽऽयुष्यसंज्ञका ॥ तर्जन्यंगुष्ठयोर्मध्ये तिर्यक्सै-श्वर्यसंज्ञका ॥ ३६२ ॥ मणिबंधतरैश्वर्यं रेखामूलं युनक्ति या ॥ सा रेखा पितृवंशाख्या त्वच्छिन्ना गेहसौख्यदा ॥ ३६३ ॥

सम्यग्भोगवती चैषा मातृवंशविवर्द्धनी ॥ आयुःकनिष्ठयोर्मध्ये रेखा कांतकलत्रिका ॥ ३६४ ॥ करभांत्यगता रेखा सा तु मातुलवर्गिका ॥ सूक्ष्मा मातृष्वसुः स्थूला मातुलस्यैवमन्यतः ॥ ३६५ ॥ अंगुष्ठमूलरेखाभिर्विज्ञेया संततिर्बुधैः ॥ सूक्ष्माभिः कन्यकाः पुत्राः स्थूलाभिश्च तथाविधाः ॥ ३६६ ॥ अच्छिन्नाभिन्नरेखाभिः संततिर्दीर्घजीविनी॥रेखा याऽनामिकामूले यशःपुण्याभिधा तु सा ॥ ३६७ ॥ धनरेखा तु सा याता मणिवंधात्तु मध्यमा ॥ स्याच्चेदखंडिता पूर्णा सोर्ध्वरेखा तु राज्यदा ॥ ॥ ३६८ ॥ गंभीराः सुंदराः स्निग्धाः शुभदा मधुपिंगलाः ॥ दक्षिणे तु करे पुंसां वामाक्षीणां तु वामके ॥ ३६९ ॥ अंगुष्ठांते यवो यस्य स भवेद्राज्यभाङ्नरः ॥ श्रीवत्साश्वरथादर्शध्वजस्तंभगिरिस्रजः ॥ ३७० ॥ हस्ती छत्रांबुजे कुंभः श्रीवत्सकुलिशांकुशम् ॥ भृंगारो व्यंजनं वीणा यवो मत्स्यादिकं तथा ॥ ३७१ ॥ करपादतले यस्य स भवेद्धरणीपतिः ॥ खल्वाटस्तु धनी विद्वान्दंतुरः संहतांगुलिः ॥ ३७२ ॥ धनाढ्योऽल्पवयःशूरो ह्युदारो विरलांगुलिः ॥ तिलः पादतले हस्ते नासायां दृष्टिगोचरः ॥ ३७३ ॥ हृदि प्रजनने भाले धन्यभाग्यप्रदो नृणाम् ॥ रेखाः करतले चेत्स्युरुक्ताश्चाप्यधिकास्तथा ॥ ३७४ ॥ रूक्षाः सूक्ष्माः सिताश्छिन्नास्तदा स्याच्च दरिद्रता ॥ स्थूलं प्रजननं दीर्घ वक्रं वानेकधारणम् ॥ ३७५ ॥ यस्य चेत्स दरिद्रः स्याच्छुभलक्षणवानपि ॥ दरिद्रः करयुग्मेन कंडूयति शिरस्तु यः ॥ ३७६ ॥

अव सामुद्रिकपरीक्षा लिखतेहैं-शिर, मुख, नेत्र, हृदय, भुजा, हाथ, पैर इतने अंग (विशाल) अर्थात् वडे होंय और मस्तक

गोल होय, नाभि गहरी होय, नासिका ऊंची होय ॥ ३५६ ॥ दाँत तथा त्वचा चिकनी होय और काले, चिकने, घुँघराले वाल होंय, नेत्रप्रान्त लाल होंय, नेत्रकी पुतली विशाल तथा चिकनी और काली होय ॥ ३५७ ॥ शरीरके रोम दक्षिणावर्त्त होंय, शब्द मधुर तथा गम्भीर होय, मूत्र फेन सहित होय, एडी कमलसी लाल होंय तो ऐसे लक्षणोंवाला पुरुष धन्य होताहै ॥ ३५८ ॥ माताके मुखके सदृश मुखवाला पुरुष और पिताके मुखसमान मुखवाली स्त्री धन्य होतीहै. होठ, नख, हाथ, पाँवका तल ये अंग लाल वर्णके होंय तो शुभ होतेहैं ॥ ३५९ ॥ उदारता, धैर्य, गम्भीरता, वडे कामका आरंभ, यशके काम करनेसे प्रसन्न, तथा प्रसन्न मुख, वंशाभिमानी प्रिय और सत्य वोलनेवाला ॥ ३६० ॥ नीतिमान्, गुरुवाक्यको माननेवाला, पवित्र रहनेवाला, चतुर, पापोंसे भय करनेवाला इत्यादि गुणयुक्त पुरुष भाग्यवान् होताहै ॥ ३६१ ॥ जो रेखा तर्जनी अंगुलीके समीप तिरछी होय सो आयुकी रेखा होतीहै और तर्जनी तथा अँगूठाके मध्यमें जो रेखा तिरछी होतीहै सो ऐश्वर्यकी रेखा कहातीहै ॥ ३६२ ॥ पहुँचेके मूलसमीप जो रेखा जुडी होतीहै सो ऐश्वर्यकी देनेवाली कहीहै और येही पितृवंशा नामकी है. पूर्ण होय तो गृहसौख्यकी देनेवाली है ॥ ३६३ ॥ और यहही रेखा अच्छे भोगोंकी देनेवाली मातृवंशकी वढानेवाली होतीहै. तथा आयुकी रेखा और कनिष्ठा अंगुलीके मूलके मध्यमें जो रेखा होतीहै सो कांत तथा स्त्रीकी कहाती है ॥ ३६४ ॥ पहुँचेसे लेकर कनिष्ठिका अँगुलीतकका जो भाग है उसके नीचेकी रेखा मातुलवर्गकी होती है. यदि वह रेखा सूक्ष्म होय तो मौसीकी और स्थूल होय तो मामाकी होतीहै ॥ ३६५ ॥ अंगुष्ठके मूलमें जो रेखाएँ होतीहैं वे सन्तानकी कहातीहैं, यदि सूक्ष्म होंय तो कन्या

और स्थूल होंय तो पुत्रोंको देनेवाली हैं ॥ ३६६ ॥ यदि ये उक्त रेखा कटी, टूटी नहीं होंय तो दीर्घजीविनी संतान होतीहै और जो रेखा अनामिकाके मूलमें होतीहै वो यश और पुण्यकी देनेवाली होतीहै ॥ ३६७ ॥ जो रेखा पहुँचेसे मध्यमा अंगुलीतक जातीहै सो धन रेखाहै; यदि वह अखंडित तथा पूर्ण होय तो ऊर्द्धरेखा कहातीहै और राज्यकी देनेवाली है ॥ ३६८ ॥ गंभीर, सुन्दर, चिकनी, शहतके समान पिङ्गलवर्णकी रेखा शुभदायक होतीहैं. पुरुषोंके दाहिने और स्त्रियोंके बाँये हाथमें देखे. अँगूठाके नीचे यवके आकारकी रेखा होय तो वह पुरुष राज्यभागी होताहै. श्रीवत्स, घोडा, रथ, दर्पण, ध्वजा, स्तम्भ, पर्वत, माला ॥ ३६९ ॥ ॥ ३७० ॥ हाथी, छत्र, कमल, कलश, श्रीवत्स, वज्र, अंकुश, सुवर्णका पात्र, पंखा, वीणा, यव, मत्स्य इत्यादिके चिह्न जिस मनुष्यके हाथकी हथेली और पैरके तलवेमें होंय वह पृथ्वीपति राजा होताहै और जो पुरुष चन्डुला होय अर्थात् जिसके शिरपर बाल नहीं जमैं वह धनी होताहै और जिसके बड़े बड़े दांत होठोंसे बाहिर निकल आयेहोंय वह विद्वान् होताहै और जिसकी अंगुली भिड़ी हुई होंय वहभी धनाढ्य होताहै और जिसकी अंगुली मिलानेपर (छिद्रसहित) छीदी होय तो वह थोडी उमरमेंही शूर तथा उदार होजाताहै जिसके पाँवके तलवेमें हाथकी हथेलीमें और नासिकापर तिल दीखता होय और हृदय, मेढ्र परभी तिल होय तो उसको लाभ होताहै और धन तथा भाग्यकी वृद्धि होतीहै. यदि हाथकी हथेलीमें उक्त रेखाएँ रूखी, सूक्ष्म, श्वेत, कटी टूटी अधिक होयँ तो दरिद्रता होतीहै और जिसका लिंग लंबा तथा टेढ़ा होय और मूत्रोत्सर्गके समयमें अनेक तरहसे धार निकले तो शुभ लक्षणवाला पुरुषभी दरिद्री होजाताहै और जो

पुरुष दोनों हाथोंसे शिरको खुजाताहै सोभी दरिद्री होजाताहै ॥ ॥ ३७१ ॥ ३७२ ॥ ३७३ ॥ ३७४ ॥ ३७५ ॥ ३७६ ॥

अथ स्त्रीणां विशेषः ।

शुभानि यानि चिह्नानि पुंसां प्रोक्तानि सूरिभिः ॥ तान्येव योषितां योऽत्र विशेषः प्रोच्यते तु सः ॥ ३७७ ॥ नटद्भ्रू विकटं भालं विशालं प्रोन्नतं तथा ॥ पादांगुलिद्वयं चांत्यं गमने न स्पृशेद्भुवम् ॥ ३७८ ॥ यस्याः सा विधवा नारी बह्वाहाराऽपि तद्विधा ॥ दीर्घस्फिग् हंति भर्तारं दीर्घभाला तु देवरम् ॥ ३७९ ॥ दुष्टा दीर्घोदरी नारी श्वशुरं हंति निश्चितम् ॥ स्वल्पगुह्या तथा शुष्कनितंबा पतिघातिनी ॥ ॥ ३८० ॥ कुलं दीर्घगला हंति निःस्वाऽतिह्रस्वनाभिका ॥ पृथुनासा भवेच्चंडी दुःखिता कमठोदरी ॥ ३८१ ॥ हसिते गर्त्तगंडा या दुःशीला सा प्रकीर्तिता ॥ मिलद्भ्रूयुगुलावर्त्त-केशभालाऽल्पभालिका ॥ ३८२ ॥ दीर्घरोमाचिता ग्रीवा विम्बोष्ठी विकरालिका ॥ इत्याद्यैरशुभैश्चिह्नैर्युक्तां नारीं परि-त्यजेत् ॥ ३८३ ॥

अब स्त्रियोंके विशेष लिखतेहैं–पंडितोंने जो शुभ चिह्न पुरुषोंके कहेहैं वेही चिह्न स्त्रियोंकेभी शुभ कहेहैं परन्तु यहांपर स्त्रियोंके कुछ विशेष चिह्नोंका वर्णन किया जाताहै ॥ ३७७ ॥ चञ्चल भौंएँ, ऊंचा, भयंकर तथा बड़ा मस्तक, पाँवके अन्तकी दो अंगुली चलते समय पृथ्वीसे न लगें ॥ ३७८ ॥ ऐसे लक्षण जिस स्त्रीके होयँ सो विधवा होजातीहै. इसी प्रकार बहुत खानेवाली स्त्रीभी विधवा होतीहै. लंबे कूलोंवाली स्त्री भर्त्ताका नाश करतीहै और लंबे ललाटवाली देवरका ॥ ३७९ ॥ और दीर्घ पेट

वाली स्त्री दुष्टा होतीहै, निश्चयही श्वशुरका नाश करतीहै. छोटी गुदावाली सफेद चूतडोंवाली स्त्री पतिकी मारनेवाली होतीहै ॥ ३८० ॥ जिसका गला लम्बा होय वह स्त्री कुलका नाश करती है. अति छोटी नाभिवाली स्त्री निर्धन होतीहै. मोटी नासिकावाली स्त्री क्रोधिनी होतीहै. कछुएके समान पेटवाली स्त्री दुःखित रहती है ॥ ३८१ ॥ हँसनेमें जिसके गालोंमें गड्ढा पडे वह स्त्री दुःशीला होतीहै जिसकी दोनो भौंहें मिली हों, ललाटपर भौंरी तथा वाल होंय, छोटा मस्तक होय ॥ ३८२ ॥ लंबेलंबे रोमोंसे ग्रीवा भरी होय, लंबे होठ होंय, भयंकर रूप होय. इत्यादि अशुभ चिह्नों- वाली स्त्रीका परित्यागकर देवे ॥ ३८३ ॥

अथ स्त्रीणां शुभचिह्नानि।

विशाललोचना तन्वी श्यामा मधुरभाषिणी ॥ कृष्णलंब-
कचा गौरी श्लक्ष्णगात्रा मनोहरा ॥ ३८४ ॥ हंसेभगमना
मृद्वी चंद्रवक्त्रा नितंबिनी ॥ सुचारित्रा मिताहारा गूढगुल्फा
कृशोदरी ॥ ३८५ ॥ लघुहस्तांघ्रिका कंबुग्रीवा वृत्तोन्नत-
स्तनी ॥ इत्यादिलक्षणोपेता सुभगा पुत्रिणी शुभा ॥३८६॥

अब स्त्रियोंका शुभचिह्न लिखतेहैं—बड़े नेत्रोंवाली, हलके शरीर- वाली, श्यामांगी, मधुर बोलनेवाली, काले तथा लंबे केशोंवाली, गौर वर्णवाली, चिकने शरीरवाली, मनकी हरनेवाली ॥ ३८४ ॥ हंस और हाथीके समान चलनेवाली, कोमल शरीरवाली, चंद्रस- मान मुखवाली, वडे नितंबोंवाली, अच्छे गुणोंवाली, थोड़ा भोजन करनेवाली, मांसमें छिपेहुए टकनोंवाली, पतले पेटवाली ॥ ३८५ ॥ छोटेछोटे हाथ पैरोंवाली, शंखके समान ग्रीवावाली, गोल तथा ऊंचे स्तनोंवाली इत्यादि लक्षणोंसे युक्त स्त्री शुभ होती और सौभा- ग्यवती तथा पुत्रवती होतीहै ॥ ३८६ ॥

अथ सामान्यतः शुभलक्षणानि ।

अर्चितं वचनं चेतश्चोन्नतं सुभगं वपुः ॥
पापभीरुमतिश्चोक्ताश्चिह्नैरन्यैश्च योषितः ॥ ३८७ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्त-
गणपतौ मिश्रप्रकरणश्चतुर्विंशम् ॥ २४ ॥

अथ सामान्य शुभलक्षण लिखतेहैं–श्रेष्ठ वचन, प्रसन्न चित्त, ऊंचा तथा सुंदर शरीर, पापोंसे डरनेवाली बुद्धि इत्यादि शुभ चिह्नोंसे युक्त स्त्री शुभ होतीहै ॥ ३८७ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञरावलहारिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ
श्रीयुतपंडितवर्यवेणीरामात्मजपंडितरामदयालुशर्म्मकृतभाषा-
टीकासमलंकृतं मिश्रप्रकरणं चतुर्विंशम् ॥ २४ ॥

अथ ग्रंथालंकारवर्णनम् । तत्रादौ राज्ञो वर्णनम् ।

गौडोर्वीशशिरोविभूषणमणिर्गोपालदासोऽभवन्मांधातेत्यभि-
रक्षिताद्यलभत ख्यातिं स दिल्लीश्वरात् ॥ तत्पुत्रो विजयी
मनोहरनृपो विद्योतते सर्वदा दानैर्येन च दानखंडविहितै-
र्विश्वेश्वरस्तोष्यते ॥ १ ॥ गांभीर्यप्रौढगौडान्वयकुमुदगणा-
नंदिचंद्राभिरामः प्रोद्दामस्वच्छकीर्तिव्रततिपिहितदिङ्मंड-
लीमंडनश्रीः ॥ भूयः सत्पात्रदानप्रणयशतगुणस्वर्णपूर्णा-
तिसार्थः सर्वार्थावाप्तिधन्यो जगति विजयते मानभूमीश्व-
रोऽयम् ॥ २ ॥ प्रीत्याऽपूपुजदीशपार्थिवतनूरावृत्तिभिः
कोटिशो योऽकार्पीत्कनकेन षोडशमहादानान्यथान्या-
न्यपि ॥ यो धेनूर्दशपर्वतांश्च विधिवत्प्रादाद्द्विजेभ्यो मुदा
सोऽयं गौडमनोहरो नरपतिर्व्वर्ति सर्वोत्तरः ॥ ३ ॥

अब ग्रंथालंकारवर्णन लिखतेहैं-तहां पहिले राजाका वर्णन लिखतेहैं-गौड़देशके राजाओंके शिरोविभूषणमणि राजा गोपालदासजी हुए, उन्होंने दिल्लीके बादशाहकी बड़ी सहायता तथा रक्षा कीथी; इसी कारणसे बादशाहसे उन्होंने मांधाताका (ख्याति) खिताब पायाथा. मांधाताके पुत्र मनोहरसिंह नामक विजयी तथा दानी होकर प्रकाशको प्राप्त हैं, जिन्होंने दानखंडोक्त दानकरके विश्वेश्वर भगवान्‌को प्रसन्न कियाहै ॥ १ ॥ गम्भीरतासे बड़ा जो गौडवंशरूप कुमुदसमूह तिसके लिये आनंद देनेवाले चंद्रमाके समान सुन्दर और अतिश्रेष्ठ तथा निर्मल कीर्तिलतासे छाई हुई दिशाओंमें सुशोभित लक्ष्मीवाले और फिर सुपात्रोंके दान मानसे सौगुणा जो सुवर्ण तिससे (अतिसार्थ) सजातीय समूहको पूर्ण करनेवाले और सब अर्थोंकी प्राप्तिसे अतिधनवाले, ये मानरूपभूमिके राजा जगत्‌में सबसे अधिक ऐश्वर्यवान् हैं ॥ २ ॥ जिन्होंने प्रीतिसे करोडों वार शिवजूके पार्थिव शरीरोंका पूजन कियाहै और जिन्होंने सुवर्णके षोड़श महादान तथा अन्य प्रकारके दान, गौएँ, अन्नके वश पर्वत ब्राह्मणोंके लिये विधिपूर्वक प्रसन्नतासे दियेहैं ऐसे ये गौड़देशके राजा मनोहरसिंह सबसे अधिक वर्त्तमान हैं ॥ ३ ॥

अथ राजकुमाराणां वर्णनम् ।

यो मूर्त्तः पुरुषोत्तमस्य तपसां पुण्यस्य पूरोच्चयो गौडप्रौढमनोहरेंद्रनृपतेरानंदकंदांकुरः ॥ राकानायकवत्प्रियः स्वसुहृदां नारीदृशां कामवद्राजत्युत्तमराम एष सुचिरं श्रीमान्कुमाराग्रणीः ॥ ४ ॥ शौर्योद्दामलसत्प्रतापतपनप्रौढद्विपद्व्रातहृत्सर्वार्थिव्रतकल्पवृक्षमहिमः कंदर्पतुल्याकृतिः ॥ गौडोर्वीशमनोहरक्षितिपतेर्वंशाब्जुजोद्योतकः श्रीमानुत्तमराम एष युवराट् भास्वानिव भ्राजते॥५॥शौर्यौदार्यसुतीक्ष्ण-

धीरधिषणागांभीर्यशास्त्रज्ञतादेवब्राह्मणसद्गुरुप्रणयितावश्यात्मतासंपदाम् ॥ एकं धाम निरीक्षितुं विधिरदाद्यं श्रीकुमाराग्रणीः सोऽयं श्रीपुरुषोत्तमान्वयमणेरुद्योत उद्योतते ॥ ६ ॥ श्रीशंभुपूजनसुधापरिपूर्णमूर्त्तेर्गौडाधिनायकमनोहरसिंधुसारात् ॥ पुण्यप्रकाशपुरुषोत्तमसिंहरत्नादुद्योतसिंह उदितोभ्युदयी विभाति ॥ ७ ॥ सौजन्यामृतसिंधुरिंदुमहिमासौहार्दरत्नाकरः सहित्यादिकलाकलापकुशलः शैवप्रभावोज्ज्वलः॥ गौडोर्वीशमनोहरेन्द्रनृपतेः सूनुः कुमारः प्रभोर्लक्ष्मीरामकुमार एष जयति प्रौढप्रतापोज्ज्वलः ॥ ८ ॥ आन्वीक्षिक्यां धिषणनिपुणो दंडनीत्यां प्रचंडो वार्त्तावृत्तौ सहजकुशलो धर्मधर्माधिगामी॥षाड्गुण्यश्च प्रकृतिविहितो पापचातुर्यधुर्यो लक्ष्मीरामः शिवपदरतः पूर्णकामो विभाति ॥ ९ ॥ तोषादेषां निखिलजनतानंदनं ग्रंथरत्नं ज्योतिर्दीप्तं प्रकरणगणैर्भूरिभेदैर्व्यधायि ॥ सारोद्धारं गणपतिविदा चारुगुम्फं सुवर्णैरंतःपूर्णसकलविदुषां कर्णयोर्भूषणाय ॥ १० ॥

अब राजकुमारोंका वर्णन लिखतेहैं-पुरुषोत्तम भगवान्‌कीसी मूर्तिवाले, तप तथा पुण्योंके प्रवाहराशिके समान, अपने मित्रोंके लिये चंद्रमाके समान प्यारे, स्त्रियोंके नेत्रोंके लिये कामदेवके समान श्रीमान् कुमारोंमें अगुआ गौड़देशके राजेन्द्र मनोहरसिंहजूके आनन्दकन्दांकुर पुत्र यह उत्तमरामजी बहुत दिनोंसे प्रकाशको प्राप्त हैं ॥ ४ ॥ उत्कृष्ट शूरतासे शोभायमान जो प्रतापरूप सूर्य तिस करके बड़ेबड़े शत्रुओंके समूहको नाश करनेवाले, सब प्रकारके अर्थोंवाले, व्रतरूप कल्पवृक्षसे सत्कार पानेवाले, कामदेवके समान आकृतिवाले, गौडदेशाधिप मनोहरसिंहजूके कुलकमलके खिलानेवाले श्रीमान् युवराज यह उत्तमरामजू सूर्यके समान प्रका-

शको प्राप्तहैं ॥ ५ ॥ शूरता, उदारता, भलेप्रकार तीक्ष्ण तथा धीरबुद्धि, गंभीरता, शास्त्रज्ञता, देवता और ब्राह्मण तथा सद्गुरुओंमें प्रेमता और मनकी वश्यता इत्यादि संपदाओंके एक स्थान देखनेके लिये जिसको ब्रह्मा देतेभये, सो यह पुरुषोत्तमजूके वंशरूपमणिके चमकानेवाले भूप यह कुमाराग्रणी उद्योतसिंहजूहैं ॥ ६ ॥ श्रीशिवजूके पूजनरूप अमृतसे परिपूर्ण मूर्त्तिवाला और गौडाधिपति मनोहरसिंहनामक समुद्रका सारभूत जो पुण्यप्रकाश पुरुषोत्तमसिंहनामक रत्न तिससे उद्योतसिंह नामी प्रतापी पुरुष उदय होकर प्रकाशको प्राप्तहैं॥७॥सुजनतारूपी अमृतसमुद्रकेलिये चंद्रमाकीसी महिमावाले, सुहृदताके समुद्र, साहित्यादि कलासमूहोंमें कुशल, शिवजूके प्रभावसे निर्मल तेजवाले, सामर्थ्ययुक्त, उत्कृष्टप्रभावसे उज्ज्वल यह लक्ष्मीराम नामक कुमार गौड़देशाधिपति मनोहरसिंहजूके छोटे पुत्रहैं ॥८॥ (आन्वीक्षिकी) तर्कविद्यामें निपुण बुद्धिवाले, (दंडनीति) अर्थविद्यामें तेजवाले (वार्त्तावृत्ति) आजीवन विद्यामें स्वाभाविक कुशल, धर्म कर्मके जाननेवाले, षड्गुणयुक्त (प्रकृति*) से शोभायमान, पापरहित, चातुर्यके धारण करनेवाले, शिवचरणोंके भक्त, पूर्णकामनावाले लक्ष्मीरामजू प्रकाशको प्राप्तहैं ॥ ९ ॥ इन सब राजा युवराज आदिकी प्रसन्नतासे गणपतिनामक ज्योतिर्विदने अनेक प्रकारके प्रकरणोंसे युक्त सब ग्रंथोंका सारोद्धाररूप, तथा सकलजनसमूहको आनंद देनेवाला ज्योतिषसे प्रकाशित, सुन्दर गुम्फित, सुवर्णोंसे भीतर पूर्ण यह ग्रन्थरत्न सकल विद्वानोंके कर्णभूषणार्थ बनायाहै ॥ १० ॥

अथ ग्रंथकर्त्तुः कुलपरंपरावर्णनम् ।

यो जज्ञे गुर्जरेषु द्विजकुलमहितोदीच्यजातिः सहस्रः
सच्छीलो रावलाख्यः सकलनृपतिभिः पूजितः श्लाघ्य-

---

* राजा, मंत्री, मित्र, खजाना, देश, किला, सेना ये सात राज्यके अंग हैं और इन्हींको प्रकृति कहतेहैं

लक्ष्मीः ॥ भारद्वाजस्य गोत्रे कृतविमलयशा ब्रह्मनिष्ठो वरिष्ठो ब्रह्मर्षिः ख्यातनामाऽपर इव भगवाञ्छ्रीवसिष्ठो गरिष्ठः ॥ ११ ॥ शरद्विमलचंद्रिकाप्रथितकांतिपूरोदयो यदीययशसां भरैर्दशदिशोऽभवन्नुज्ज्वलाः ॥ सुतं खलु यशोधरं कुलसुधांशुमस्यादरात्सदाततहरिदर्शनं बुधजना मुदावीवदन् ॥ १२ ॥ आसीत्तस्यात्मजन्मा निगमपरदृशां रामदासो निवासो यः प्रश्नादेशवाग्भिर्व्यरचदखिलकं भूपचक्रं वशे स्वे ॥ चूडारत्नप्रदीपैरवनितलभुजां द्योतमानाङ्घ्रिमूलो वृद्धत्वे भक्तिहृष्टो वपुषि परिणते प्राप्य काशीं विमुक्तः ॥ १३ ॥ तस्यांसीत्तनयोंबुधेरिव विधुः श्रौताहिताग्निः सदा शांतोदांत उदारधीः सुतपसा प्राप्तानुभावाग्रणीः ॥ काशीं प्राप्य विमुक्तिमाप खलु यो दैवज्ञतातत्त्ववित्स्वात्मज्ञो हरिशंकरो मुनिवरोऽद्वैतार्थयथार्थाभिधः ॥ १४ ॥ तस्यात्मजः सकलशास्त्रकलाप्रवीणो ज्योतिर्विदः श्रुतिविदश्च गुरोः प्रसादात् ॥ ग्रंथं मुहूर्त्तगणपत्यभिधं विधाय प्रीत्याऽर्पयच्छिवपदे गणपत्यभिज्ञः ॥ १५ ॥ भूरिप्रभेदसुमुहूर्त्तगणाधिपत्वात्कार्येषु विघ्नहरणाच्च गणेशतुल्यः ॥ विद्योतते गणपतिर्द्विजनिर्मितत्वाद्ग्रंथो मुहूर्त्तगणपत्यभिधस्त्रिधाऽयम् ॥ १६ ॥ विद्यारमासुतजयातिथिपूर्णकामो निर्व्यूढयोगकरणामृतसिद्धिचारः ॥ मौंजीविवाहगृहमंगलमंडनाद्यो पूज्यो मुहूर्त्तगणपत्यभिधो विभाति ॥ १७ ॥ ज्योतिर्विदाभरणभव्यवसंतराजज्योतिर्निबंधगणमंडनरत्नमालाः ॥ ग्रंथान्मुहूर्त्तपदपूर्वकतत्वदीपमार्त्तंडचिंतितमणिप्रमुकल्पवृक्षान् ॥ १८ ॥ सम्यग्विचार्यकृतिनां विदुषां मतेन श्लोकैः प्रसिद्धसुगमार्थपदैः प्रणीतः ॥ ग्रंथो मुहूर्त्तगणपत्यभिधो गुणज्ञैः प्रीत्या स्वचित्तसदने परिपूजनीयः ॥ १९ ॥ अत्रा-

गमांतरगतं खलु यद्रहस्यं तद्वर्णितं सुजनशिष्यदयावशेन ॥ नासूयकाय कुटिलाय च नास्तिकाय शुश्रूषया विरहिताय कदापि दद्यात् ॥ २० ॥ चूडाभूषाब्दकास्यो रविशशिनयनश्चायनद्वंद्वकुंभो मासैः सत्कर्णबाहुर्भगणकरणसद्योगसंक्रांतिमालः ॥ रत्नालंकारवस्त्रोपनयपरिणयोद्यन्मुहूर्तालिशुंडो यात्रादंतोथ मिश्रप्रकरणकुसुमोत्तंसदूर्वांकुरश्च ॥२१॥ वारंवारंप्रवृत्तातिथिकृतविजयानंदयोगादिसिद्धिर्यज्ञाधानप्रतिष्ठाजनिविधिमहितो नामसंस्कारकांतः ॥ वास्तुप्रासादशोभोद्धृतसृणिपरशुर्वृष्टिपातापवादः ख्यातो राजाभिषेकाज्जयति गणपतिः सन्मुहूर्तावलीनाम ॥ २२ ॥ नेत्रांभोधिधराधरक्षितिमिते १७४२ श्रीविक्रमार्के शके माघे मासि वसंतपंचमितिथौ चंद्रेऽथ मीनस्थिते ॥ सूनुःश्रीहरिशंकरस्य विदुषः श्रौताहिताग्नेर्मुदा शीघ्रं शंकरपूजनाद्गणपतिर्ग्रंथं समापूरयत् ॥ २३ ॥ शिवधामान्वितो ग्रंथः प्रत्यर्थं सन्मुहूर्त्तदः ॥ भुवनेषु प्रसरतात्सौरालोक इवोदितः ॥ २४ ॥ आहिताग्नेर्द्विजश्रेष्ठाद्धरिशंकररावलात् ॥ जातो गणपतिश्चाहं समाप्य ग्रंथमुत्तमम् ॥ २५ ॥ निवेद्य चित्स्वरूपाय शिवाय प्रार्थये चिरम् ॥ वरदोऽयं शुभोऽभीष्टः सर्वत्र प्रसरत्त्विति ॥ २६ ॥

अब ग्रन्थकर्ताके कुलपरम्परावर्णन लिखतेहैं—गुर्जर देशमें रनेवाले, ब्राह्मणकुलमें प्रतिष्ठित, सहस्रावदीचजातिके ब्राह्मण, शुशीलयुक्त, सकल राजाओंसे पूजित, लक्ष्मीसंपन्न, भारद्वाजगोत्रमें उत्पन्न, निर्मल यश फैलानेवाले, ब्रह्मज्ञानी, ब्रह्मर्षिशब्दसे विख्यात, रावलनामक श्रेष्ठपंडित इस प्रकारके हुए मानो ब्रह्मर्षि नामसे विख्यात गरिष्ठ दूसरे श्रीभगवान् वसिष्ठजीही थे कुलरूपीचन्द्रमावाले, शरत्कालकी निर्मल चांदनीसे

कांतिप्रवाहके समुद्रमें श्रीरावलजीके ऐसे पुत्र उत्पन्न हुए कि, जिनके उत्तम यशोंसे दशोंदिशाएँ उज्ज्वल होगईंथीं, जिनको सदैव हरिका दर्शन प्राप्त होताथा और पंडित लोग जिनको यशोधरनामसे बोलते थे ॥ १२ ॥ उन यशोधरजीके पुत्र रामदासजी ऐसे हुए कि, जो वेद वेदाङ्ग दर्शनशास्त्रोंके (निवासस्थान) जाननेवाले और जिन्होंने प्रश्नका पूरा समाचार बतादेनेसे सब राजाओंको अपने वशमें करलियाथा और राजाओंके मुकुटरत्नरूपी दीपकोंसे जिनका चरणमूल प्रकाशित रहताथा, बुढ़ापेमें हरिभक्तिसे प्रसन्न होतेहुए काशीमें जायकर शरीर छूट जानेपर मुक्त होगये ॥ १३ ॥ उन रामदासजीके पुत्र हरिशंकरजी ऐसे हुए जैसे कि, समुद्रके चन्द्रमा प्रकाशवान् और अग्निहोत्री, सदैव शान्त, दान्त, उदारबुद्धि, अच्छा तप करनेसे उत्कृष्ट प्रभाववाले, ज्योतिषतत्त्व तथा आत्मतत्त्वके जाननेवाले और अद्वैत विचार करनेसे यथार्थनामके मुनिवर थे ॥ १४ ॥ ज्योतिष तथा वेदोंके जाननेवाले उन हरिशंकरजीका पुत्र गणपतिनामकने पिताकी प्रसन्नतासे यह मुहूर्त्तगणपति नामक ग्रन्थ बनायकर प्रीतिसे शिवजूके चरणोंमें अर्पण कियाहै ॥ १५ ॥ अनेक प्रकारके मुहूर्त्तसमूहोंका अधिपति होनेसे और कार्योंमें विघ्नोंके हरनेसे और गणपतिनामक ब्राह्मणका बनायाहुआ होनेसे अर्थात् इन तीन कारणोंसे गणेशजूके तुल्य यह मुहूर्त्तगणपतिनामक ग्रन्थ प्रकाशको प्राप्तहै ॥ १६ ॥ विद्या, लक्ष्मी, पुत्र, जय, अतिथि इन्होंसे पूर्ण कामनावाला और स्पष्ट योग, करण, अमृत, सिद्धि इन्होंसे सञ्चार करनेवाला यह मुहूर्त्तगणपतिनामक ग्रन्थ यज्ञोपवीत, विवाह, गृह, मङ्गल, मंडनादि कार्यमें पूज्य होताहुआ शोभाको प्राप्त होताहै ॥ १७ ॥ ज्योतिर्विदाभरण, सुन्दर वसन्तराज, ज्योतिर्निबन्ध, गणकमण्डन,

रत्नमाला, मुहूर्त्ततत्त्वदीप, मुहूर्तमार्त्तण्ड, मुहूर्त्तचिन्तामणि, मुहूर्त्त-प्रभु, मुहूर्त्तकल्पद्रुम ॥ १८ ॥ इन ग्रन्थोंको सम्यग्विचारकर और सुकृती विद्वान् लोगोंका मत लेकरके प्रसिद्ध और सुगम हैं अर्थ तथा पद जिन्होंमें ऐसे श्लोकोंसे यह मुहूर्त्तगणपतिनामक ग्रन्थ बनायाहै. गुणज्ञ पुरुषोंको प्रीतिसे अपने चित्तरूपी स्थानमें इसका पूजन करना चाहिये ॥ १९ ॥ अच्छे शिष्योंपर दयावशसे इस ग्रन्थमें अन्य ग्रन्थान्तरोंका रहस्य वर्णन कियागयाहै. निंदक, कुटिल, नास्तिक तथा शुश्रूषारहित शिष्यके लिये इस ग्रन्थको कदापि नहीं देना चाहिये ॥ २० ॥ गणेशतुल्य इस गणपतिनामक ग्रन्थका चूडाकर्म आभूषण है और संवत्सरोंका वर्णन मुख है. सूर्यचन्द्रमा नेत्रहैं. दोनों अयन कुम्भस्थल हैं. बारह महीने कान और भुजाहैं. भगण, करण, योग, संक्रांति ये सब माला हैं. यज्ञोपवीत, विवाह, ये दोनों रत्नालंकार तथा वस्त्र हैं. अन्य मुहूर्त्त भौंरा तथा शुंड हैं. यात्राप्रकरण दाँत हैं और मिश्रप्रकरण कर्णफूल तथा दूर्वाकुरहै ॥ २१ ॥ तिथ्युत्पन्न विजययोग, आनंदयोग इत्यादिक योगही वारंवार प्रवृत्त होनेवाली सिद्धिहै. अग्न्याधान, यज्ञ, प्रतिष्ठा, जन्मविधि इतने मुहूर्त्तही महिमाहैं. नामकरण संस्कारही कांतिहै. वास्तुप्रकरणही प्रासादकी शोभाहै. वृष्टियोग, पातयोग, अपवादमुहूर्त्त येही सब तीक्ष्ण फरसा है. राज्याभिषेकप्रकरणही विख्यातिहै. शुभमुहूर्त्तावलियोंका यह (गणपति) गणेश विजयको प्राप्त है ॥ २२ ॥ विक्रमादित्यके सत्रहसौ बयालीस १७४२ संवत्, माघमास, वसंतपंचमीतिथि, मीनके चंद्रमामें अग्निहोत्री विद्वान् शंकरजीके पुत्र गणपतिने प्रीतिसे शंकरका पूजन करके शीघ्रही यह गणपतिनामक ग्रंथ संपूर्ण कियाहै ॥ २३ ॥ शिवजूके तेजसे युक्त प्रत्येक कार्यके शुभमुहूर्त्त देनेवाला

यह ग्रंथ भुवनोंमें इस प्रकारसे फैले जैसे कि, सूर्यके उदय होनेपर सूर्यका प्रकाश सकल भुवनोंमें फैलताहै ॥२४॥ अग्निहोत्री ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ जो हरिशंकररावलजी थे तिनसे मैं गणपति उत्पन्न हुआहूँ इस उत्तम ग्रंथके समाप्त करके ॥२५॥ चित्स्वरूप शिवजूसे यह प्रार्थना करताहूँ कि,यह शुभग्रंथ वरदायक तथा अभीष्ट होकर सर्वत्र फैले२६॥

अथ ग्रंथनिर्माणप्रयोजनांतरमप्याह ।

दानैर्विक्रमभोजकर्णनृपतींञ्छौर्येण वैण्यार्जुनान्गांभीर्येण सरित्पतिं तुलयतो नीत्या सुराणां गुरुम् ॥ सेनान्यं बहुसैन्यपालनगुणैर्भक्त्या च गौरीपतेर्लक्ष्मीरामविभोर्विभाकररुचेः कोऽन्यस्तुलां रोहति ॥ २७ ॥ श्रीमद्बौडमनोहरक्षितिपतेः प्रीत्या प्रतीत्याऽधिकः काव्ये काव्यकलासुधर्मकुशलो यः सर्वशास्त्रार्थवित् ॥ तस्यासीदिति कौतुकेन विदुषां प्रीत्या पुरः प्रेरणाज्ज्योतिःशास्त्रविचारणाय सुगमग्रंथोऽनुसंधीयताम् ॥ २८ ॥ इति नृपतनयाशयं विदित्वा सपदि तदीयमनोविनोदनाय ॥ अथ विविधमुहूर्त्तसत्प्रबंधो गणपतिरावलशर्मणा व्यधायि ॥ २९ ॥ वाणी यथा गणपतेः शिवयोगहेतुः काश्यां तथैव हरिशंकरनंदनस्य ॥ एषा मुहूर्त्तगणपत्यभिधप्रबंधप्रादुर्भवा भवतु भूमितले जनानाम् ॥ ३० ॥ आयुः प्रज्ञा यशः सौख्यं सौभाग्यं फलमक्षयम् ॥ अभीष्टं च पशून्पुत्राँल्लभतां ग्रन्थतत्त्ववित् ॥ ३१ ॥

इति श्रीमदग्निहोत्रिचातुर्मास्ययाजिसमासादितपुरुपार्थसारार्थदैवज्ञवर्यरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ ग्रंथालंकारप्रकरणं पञ्चविंशम् ॥ २५ ॥

अब ग्रंथनिर्म्माणप्रयोजनान्तरंभी लिखतेहैं—दानोंके करनेसे विक्रमादित्य, भोजराज, कर्ण इतने राजाओंको और शूरतासे पृथु तथा अर्जुनकी, गंभीरतासे समुद्रकी और नीतिसे बृहस्पतिकी और वहुतसे योधाओंके पालन करनेके गुणोंसे तथा शिवजूकी भक्तिसे स्वामि कार्त्तिकजीकी वरावरी करनेवाले, सूर्यकीसी कांतिवाले, लक्ष्मीरामजीकी तुलापर कौन पुरुष चढ़ सक्ताहै अर्थात् कोईभी वरावरी नहीं करसक्ताहै ॥ २७ ॥ उस श्रीमद्गौड़देशाधिपति मनोहरसिंहजूकी प्रीति और प्रतीतिसे काव्यमें अधिक तथा काव्यकला और सुधर्ममें कुशल और सर्वशास्त्रोंका जाननेवाला गणपति था इसी कौतुकसे विद्वानोंके सामने लक्ष्मीराम राजाके इसप्रकार प्रीतिपूर्वक प्रेरणा करनेसे कि, ज्योतिश्शास्त्रका विचारकरनेके अर्थ सुगम ग्रंथ वनाइये ॥ २८ ॥ राजकुमार लक्ष्मीरामजीका इस प्रकारका आशय समझकर शीघ्रही उनके मनोविनोदार्थ अनेक प्रकारके शुभमुहूर्त्तोंका ग्रंथ मुझ गणपति रावल शर्म्मांने वनाया है ॥ २९ ॥ जिस प्रकार काशीजीमें गणपतिकी वाणी शिवयोगका कारणहै इसी प्रकार हरिशंकरजीके पुत्र गणपतिकी यह मुहूर्त्तगणपतिनामक प्रबंधसे प्रकट होनेवाली वाणी मनुष्योंके लिये पृथ्वीतलपर कल्याणकारिणी होवे ॥ ३० ॥ इस ग्रंथके तत्त्वका जाननेवाला पुरुष आयु, वुद्धि, यश, सौख्य, सौभाग्य, अक्षय फल, मनोरथ, पशु, पुत्र इन सब वस्तुओंको पावै ॥ ३१ ॥

इति श्रीमदग्निहोत्रिचातुर्मास्ययाजिसमासादितपुरुषार्थसारार्थदैवज्ञवर्य्यरावलहरिशंकरसूरिसूनुगणपतिकृते मुहूर्त्तगणपतौ पंडितरामदयालुशर्मकृतभाषाटीकासमलंकृतं ग्रंथालंकारप्रकरणं पञ्चविंशम् ॥ २५ ॥

अथ टीकाकारकृतश्लोकाः ।

नृपतिविक्रमपङ्कजिनीपतेः शररसांकशशांकमितेऽब्दके ॥
सितदले मधुमासि कुमुद्वतीपतिदिने भुजगेंद्रतिथौ तथा ॥ १ ॥
गणपताविह सुन्दरभाषयाऽगमददास्तिलकं परिपूर्णताम् ॥
प्रणतिपूर्वकमर्थनमत्र मे इति बुधाः कृपया परिशोध्यताम् ॥ २ ॥
ग्रामेऽवसत्पंडितपूजितांघ्रिर्ढांडौलिसंज्ञे निगमागमज्ञः ॥
श्रीवेणिरामो निजपूर्णकामो गोविंदभक्त्या शुभमुक्तिमाप॥ ३ ॥
तस्यात्मजो रामदयालुनामा गोविप्रवृन्दारकवृन्दवन्दी ॥
मौहूर्त्तिकेऽहं गणनाथसंज्ञे ग्रंथे च टीकां सरलां व्यधां वै ॥ ४ ॥

(सैवया)

श्रीनृप विक्रम संवत पांच रु छैनवएक १९६५ प्रमाण सुहावन ।
चैत्र सुदी तिथि पंचमि वार निशाकरको जगमें मनभावन ॥
ता दिन पूरन कीन तिलक मुहूरत ग्रंथ इसी परपावन ।
बालनको उपकार विचारि सुपंडित रामदयालु दया मन ॥ ५ ॥

दोहा

श्रीयुतसेठ सुपेठमें, जेठे ठाठसमेत ।
खेमराज राजत जगत, जीवनहेत सचेत ॥ ६ ॥
तिनकी आज्ञातें छप्यो, मुम्बैविच यह ग्रंथ ।
श्रीव्यंकटेश यंत्रमें, सुन्दर अक्षरपंथ ॥ ७ ॥

समाप्तोऽयं ग्रंथः ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस,—बंबई.